

दिगंबर जैन

THE DIGAMBAR JAIN

नाना कलाभिरिविविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगुणैर्यथाभिः ।

संबोधयत्यप्रमिदं प्रवर्त्तताम्, देगम्बरं जैन-समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १९२६ वॉ. | वीर संवत् २४४८. पोप-माह विक्रम सं० १९७८ | अंक ३-४ था



जयसे छलनऊमें महासभा को निर्माण मित्र
था । तबसे छलनऊ महासभा की
छलनऊमें चर्चा बला ही जाती थी क्यों-
महासभा । कि महासभा के किननेक कार्य-
कर्ता भी का छलनऊ के माध्यमों पर
निर्वाह न था ! वे समझते थे कि नरा जने
छलनऊ के माई महासभा को छलनऊ छे जानर
इसकी दशा क्या माने कैसो कर डालेंगे इससे
किसी न किसी प्रकार छलन ऊमें महामभा न हो
तो ठीक । इससे दो तीन बार ऐसे २ विघ्न उप-
स्थित किये गये थे परंतु हमारे छलनऊ के मई
इतने सज्ज । सहनशील और महामभा की सेवा
और उत्थतिके लिये कटिबद्ध थे कि अंत में छल-
नऊ के माईयों को इस बार की महासभामें इतनी
सकलता मिली है कि जैसी किसी को भी आशा
थी । अर्थात् छलनऊ में भरतर्षीय दि० जैन
महासभा का २६वां वार्षिक अधिवेशन माघ सु०
१-७-८ को अतीव समारोह और सकलत के

साध हो गया । स्वागत समितिने ठहरने के लिये
ढेरे, दरी, इत्ती, पानी आदिका इतना उत्तम
प्रबंध किया था कि किसीको शिकायत न थी
तथा सेवा के लिये तीन चार सेवा समितिके स्वयं-
सेवकोंने रातदिन परिश्रम उठाकर सबकी सेवा
की थी । स्वागत समितिके समागति बच्च फते-
चंदजी, बाबू अजितप्रसादजी मंत्री, ना० बाला-
तीलछानी उपमंत्री, छाटा देवीदासजी आदि २ ।
छलनऊ के करीब सभी माई व्यापार घंटा छोड़-
कर डालीगंनमें हों आका उहरे थे और सबका
उत्तम स्वागत करते थे । हा० देवीदासजीने तो
अपने खर्चसे कई माईयों का नित्य मोजन साकार
किया था । त्यागियोंमें ब्र० शीतलप्रसादजी,
ब्र० ज्ञानानंदजी, ब्र० ठाकुरप्रसादजी, ब्र० चांद-
मलनी, मा० दीपचंदजी, ब्र० छोटेशालजी,
और ब्र० सुलानंदजी पधारे थे । माघ सुदी ९
और ९ को राधयात्रा उत्सव खूब धूपधामसे
निकला था तथा नित्य जैन गुंनके मंदिरमें पूजन
विधान हुआ करता था । सनसे बदतर महासभा के
अधिवेशनकी सफलताके भाव रभूत तो इसके
समापति थे । इसबार महासभा को ऐसे उत्तम,
विचारशील, अनुपवी, विद्वान्, परिश्रमी, शांत
स्वभावी, समान सेवा के इच्छुक और समझको

परिस्थितिके नानेबाजे यादू चम्पतरायजी
 बेरिस्टर हरदोई सभापति पदपर मिले थे कि
 महासभा का कार्य कुछ भी विघ्न न अते हुए
 अतीव सफलताके साथ पूर्ण हुआ था। हमें यहां
 तक कहना है यह प्रयत्न ही मौका था कि एक
 बेरिस्टरको यह पद मिला था। जब कि हमारे
 कितने ही पंडित तथा पुराने विचारधारे वाले
 यही समझते हैं कि अंग्रेजी पढ़े लिखे तो धर्मसे
 विमुख होते हैं और धर्मविरुद्ध चलते हैं आदि
 परन्तु उनके इन विचारोंको बेरिस्टर चम्पतरायजीने
 निर्मूलक कर दिया है और महासभामें नई ज्ञान
 पथा करदी है जिसके लिये महासभा निरकाष्ठ तक
 बेरिस्टर साहबकी रुकी रहेगी इस बार महा-
 सभामें प्रयत्नारिणी क० का चुनाव जो नियमसे
 होनेवाटा था उसको रोकनेके लिये अपना एक
 वर्ष प्रद करनेके लिये गई चाटवाजी प्रथमसे
 की गई थी परन्तु सुयोग्य और निष्पक्ष सभापति-
 त्वके सामने उचित ही व्याप हुआ और नवीन
 चुनाव इसी वर्ष हुआ है। इन बारके चुनावमें
 महासभा चुनाव सभापति का हुआ है अर्थात्
 वार्षिक अधिवेशनके सभापति ही सर्वपर अपना
 आगामी अविरोधन तक स्वयं सभापति रहेंगे
 इसमें बेरिस्टर साहब ही १ वर्षके लिये सभापति

‘गजट’ कार्यालयको देहली ले जावें और वहांसे
 अपनी निगाहोंमें गजटका प्रकाशन करावें और
 आप खुद अच्छी तरहसे संपादन करें तो ‘गजट’
 की दशा सुवरनेका अच्छा मौका है। कोपा-
 धरस बा० निर्मलकुमारजी नियुक्त हुए हैं जो
 बहुत ही योग्य हैं।

महासभाके सभापति बा० चम्पतरायजीका
 व्याख्यान बहुत ही विद्वतापूर्ण और छंपा था। यह
 ‘मित्र’में छपा रहा है। हो सकेंगा तो आगामी
 अंकमें हम उसका सार प्रकाश करेंगे। और
 महासभामें पास हुए प्रस्ताव हमने इसी अंकमें
 अध्ययन प्रवृत्त किये हैं उस पर भी यहां हम
 कुछ निवेदन करना चाहते हैं जो उभयुक होगा।

ऐसे तो १० प्रस्ताव हुए हैं परन्तु उनमें
 उल्लेख योग्य प्रस्ताव पर ही कुछ लिखेंगे। चौथे
 प्रस्तावमें सचनेट कमेट्रीमें पाव हुए प्रस्तावको
 परिवर्तन करनेका अधिकार साधारण सभाको
 दिया गया है जो युक्त हुआ है और इससे
 साधारण नाताका आदर रह है। पांचवां
 प्रस्ताव जैन-मान्य (ला) बानेके लिये एक
 कमेट्री नियुक्त होनेका है। इन कमेट्रीके सदस्यों-
 को संतोष परिधाय उनके प्रधान हो शीघ्र ही
 जैन कानून तैयार करके सरकारसे पास करा
 लेना चाहिये। इनके प्रेरित सदस्योंके लिये



रक्षित है। पारसी जैसी एक लाख-
प्राचीनवाली कौमका त्योंहार सरकार मानती
है तो क्या १२ लाखकी वस्तुवाली जैन कौमका
एक भी जाहिर त्योंहार सरकार न मनावेगी ?

सातवां प्रस्ताव-ईदर नागौरके शास्त्र मंडारकी
रक्षा करनेका है। इसके लिये ला० जम्हूपसाद-
जी और ला० देवीपसादजी तन मन धन लगाकर
कोशिश करेंगे तो अब सफ़रता हो सकेगी ऐसी
पूर्ण संभावना है।

१२वां प्रस्ताव-भरने आवरण दि० जैन धर्मा-
नुसार शुद्ध रखनेका है तथा इसमें रा० महास-
भाके अत्यंत स्पर्श आदि प्रस्तावका विरोध
शाखादिकूट किया गया है तो उचित ही है।

१५वां प्रस्ताव महासभाके धर्म कंडकी एक
ट्रस्ट कमेटी नियत करनेका है। यह प्रस्ताव
अतीव उचित हुआ है और अब इसके गंभी
बा० निर्मलकुमारजीको उचित है कि महान्तक
हो शीघ्र ही ट्रस्ट करा दें।

१९वां प्रस्ताव तीर्थक्षेत्र कमेटीकी लाग प्रति
वर्ष १) हर एक गृह पंछ देनेका है। इस
प्रस्तावके अमलमें लानेकी अतीव आवश्यकता है।
क्योंकि कई तीर्थोंका प्रबंध तीर्थक्षेत्र कमेटीको
करना पड़ता है, कई तीर्थोंकी रक्षाके लिये
हमारे रुपये खर्च करने पड़ते हैं तथा कमेटीमें
कुछ स्थायी पंड तो हैं नहीं परंतु सर्व तो
निष्पत्ता ही चाहते हैं और अभी महासभामें भी
अयोध्याजी, विसर्वा व काशीपुरके मंदिरोंका
प्रबंध तीर्थक्षेत्र कमेटीको करनेका है इस लिये
सभी जैन माद्योंका कर्न है कि वे तीर्थ रक्षा
कंडका एक २ रुपिया प्रतिवर्ष पहुंचाते रहें।

इस एक २ रुपयेसे हजारों रुपये ईकट्टे होते
रहेंगे और तीर्थ रक्षाका कार्य सुचारु रूपसे चालू
रह सकेगा।

२०वां प्रस्ताव-स्वदेशी वस्त्र और स्वदेशी
वस्तुके व्यवहारका है। आज सारे देशमें स्वदे-
शीका आंदोलन पूरे वेगसे चट रहा है जिसका
फल यह हुआ है कि सर्वत्र गांधी और चंदाके
सूत्रका प्रचार होनेसे अनेक गरीबोंकी आजीवि-
काका मार्ग निकल आया है। यदि इसी प्रकार
स्वदेशीका ही व्यवहार सदेगा तो हिंदुस्तानकी
आर्थिक उन्नति होनेमें देर न लगेगी। हम
जैनियोंको तो स्वदेशी गढ़ना ही व्यवहार इसी
लिये भी करना चाहिये कि वह शुद्ध है। चर्बा
मिश्रित मीठके कण्डका व्यवहार अन्
त्वाग देना चाहिये तथा जो २ वस्तु स्वदेशी
मिश्ती हों उनको ही खरीदना चाहिये चाहे वे
कुछ महंगी भी क्यों न हों।

अंतमें हम इतना ही कहते हैं कि महासभाके
महामंत्री अब यदि कोशिश करेंगे तो नये
संगठनके अनुसार अब महासभा को सर्वव्यापी
बना सकेगी। आगामी अधिवेशनके लिये कहींसे
भी निर्भ्रमण नहीं हुआ है इसका खेद है परन्तु
इसके लिये कोशिश करनेकी आवश्यकता है।
हमारे खयालसे अबके महासभाका महत्ता दक्षिण
या तो गुजरातमें होनेको आवश्यकता है। यदि
हमारे बंधुके माई कोशिश करें तो आगामी
महसिर मासमें रथ यात्राके समयमें बंबईमें
महासभाका अधिवेशन करा सके हैं। गुजरात
और दक्षिणके लिये बंबई स्थान अतीव उपयुक्त
है।



अभी ही काष्ण्ण सुदी ८ से १५ तक संग्रह करनेसे एक वर्षमें ४००-५०० व
हमारा अष्टाहिका पवित्र एक उत्तम पुस्तक तैयार हो सकेगी । इन
अष्टाहिका और पर्व वा रहा है और अंकने महात्मा दलज्जना दिग्दर्शन बावृत्तीने
हुतांशणी । साथमें मिथ्यास्वी हितक संशयमें अच्छी तरह दर्शाव है तथा 'देवेन्द्र'
और बंमस पर्व हुतांशणी नामका प्राग्निपत्र लेख देवेन्द्रकुमारको उद्देश
(होली) का भी आरहा है । अब भी हमारे कारके लिखा गया है जो अतीव पढ़ने योग्य है ।
कई भोले माई अष्टाहिका जैसे पवित्र पर्वमें इसका वार्षिक मूल्य ४) रु० है पण्डु छह २
होलीके दिनोंमें विषमस व्यवहार मासके दोदो रु० अग्रिम लिये जाते हैं। बी० पी०
काते हैं तथा होलीको पूनते हैं और करनेकी श्रेष्ठ बावृत्तीने नहीं रखी है पण्डु
उत्तमें श्रीकलं होमतें हैं तथा कृत्रिम मिनको ग्रहक होगा होवे २) रु० मनिपाईसे
धीमें बढ़ते हैं जो जैन धर्मसे बिरुद्ध विरुद्ध में, 'देवेन्द्र' उनके पास आता रहेगा । यदि
है । हम ऐसे माइयोंको इसलिये याद दिलाते हैं कि वे कितां भी अवस्थामें अब ऐसा पाप न
करें और आना समय धर्मस्थानमें बितायें ।

* * *

जैन साहित्येशी स्वर्गीय कुमार देवेन्द्रप्रसाद-
जी धाराकी (मृतिमें कुछ
'देवेन्द्र' का भी होनेके अतीव अव-
स्थागत । दक्षता भी और अतीव
हर्षके साथ प्रगट किया

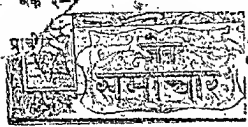
जाता है कि इसकी पूर्ति जैनसंस्थानके,
परम उताही और हमारे विद्वान् पण्डु मायु
अजितप्रसादजी जैन एम० ए० ए० ए०
बी० बकट एडजने की है। आगे 'देवेन्द्र'
नामका एक सप्तहिक पत्र जैन समाजमें प्रगट
कानेका प्रहस (इदप वर दिताया है जिसमें
आवृत्ती मितनी की प्रसंग की भाष कम है ।
इन सप्तहिक पत्रका प्रथम भंड अनिता ता०
१८-१-१९को प्रगट होचुका है जो ८४४४
है । बागन कई अतीव उत्तम है और इसके

जैसे प्रखर विद्वान् अपने तन मन और धनसे
इस पत्रके संपादनके लिये बलिबद्ध हुए हैं तथा
सारी जैन समानका कर्म है कि वह इसको उत्ते-
जन दें । हाएक जैन माइयो २) भेगकर इसका
माइक हो जाना चाहिये । पत्र व्यवस्थाका बता-
व्यवस्थापक-देवेन्द्र, अमिताभ-छतनज है ।

दि० जैन पुस्तकालयमें आया हुआ
पिलकुल नवीन ग्रन्थ ।

सहात्मा गांधी ।

करीब ९०० पृष्ठा सुाररी पक्षी मित्रता
म० गांधीजीका पृथक् जीवनचरित्र सचित्र ।
इमें गांधीजीके अनेक व्याख्यान भी हैं । मुद्रन
३॥) प्रको आदर पढ़ना चाहिये । यह दूसरी
परिवर्द्धित आवृत्ति है । मित्रनेका पत्र-
भेजेकर दि० जैन पुस्तकालय-ग्रन्थ



परिवार जातिकी मनुष्यगणना—अमरावती, निवासी हि० वनालाजी परिवारने हजारों रुपया खर्च करके परिवार, जातिकी मनुष्यगणना कानेका काम दो वर्ष हुए प्रारम्भ किया था। यह करीब २ वर्ष होने आया है। आपके मेनेजर राजेन्द्रकुमारने अभी इसका गोशवारा प्रवृत्त किया है जिससे मालूम होता है कि संयुक्त प्रदेश ७१७४, मध्य प्रदेश ५७८६३, राजपूताना और माडवा ७२८३, बंगाल बिहार उड़ीसा १३४, पंजाब अहता १२, बम्बई अहता १२ इस प्रकार कुल ४१६७२ मनुष्योंकी गणना हो चुकी है जिसमें २२०८६ पुरुष और १९५८६ स्त्रिय हैं। पुरुषोंमें कुंआरें ११०९८, विवाहे ८९८७ और विधुर २००१ है जब स्त्रियोंमें कुंआरी ५९६४, विवाही ८९६४ और विधवा ४९९९ हैं। इन विधवाओंमें सिर्फ २२१४ पढ़ी हुई हैं जब १७३५९ अनपढ़ हैं। अब भी किसी परिवार माईने अपना नाम इस गणनामें नहीं लिखाया हो तो वे क्रोर्म संग्रहक उसकी खानापुरी करके भेज देंगे। इस विषयमें पत्र व्यवहारका पत्रा—राजेन्द्रकुमार जैन मेनेजर परिवार डिरेक्टरी, अमरावती है।

दक्षिण महाराष्ट्र जैन समा—का १४ वां अधिवेशन स्वर्णनिधि पर गत मासमें ५० पासापर बुधवारके सप्ताहतिथिमें हो

गया। जिसमें उल्लेख योग्य प्रस्ताव ये हैं—
प्राथमिक शिक्षा मुफ्त व ज्वरन की जाय, स्वदेशी उद्योगको उत्तेजन देना, जैनोमें अंतर्जातीय रोटी बेरी व्यवहार करना, पठनक्रमकी पुस्तकोमेंसे हिन्दू धर्मके पाठ कम करने, बोर्डिंगोंमें उचित धार्मिक शिक्षा देने, और २२००० का वज्र पाठ करने आदि। उत्तम कीर्तनकार चोगडेको मुख्य पदक दिया गया था। महिला परिषद भी हुई थी।

सेठ ही० गु० धोडिंग—वर्धनी धर्मिक परीक्षा व० शीतलमसादजी द्वारा ता० २९-१२२ ने दिने छापेडा प्रश्न पत्रों द्वारा स्तनचरंड, द्रव्य संग्रह, मोक्ष शास्त्र अने सामार धर्माभ्युपनिषाई हती।

ललितपुर—की क्षेत्रपाल दि० जैन पाठशाला जो दो माहसे बन्द पड़ी थी अब ता० १५ फरवरीसे फिर प्रारम्भ होगई और अध्यापक प० शीतचन्द्र व्यासतीर्थ नियुक्त किये गये हैं। यहां विद्यार्थियोंकी आवृद्धिकता है।

कुंडलपुर—में धार्मिक मेला हो गया। ५००० जन संख्या थी। व० प० गणेशपसादजी, म० ज्ञानानंदजी आदिके धर्मिक व्याख्यान तथा वा० गोकुलचंदजी, भैयालाजी, चौ० दीपचंदजी आदिके अलहयोग पर जोशुली व्याख्यान होनेसे बहुतसे श्रीपुरुषोंने स्वदेशी काढ़े वापरनेकी प्रवृत्ति ली और विदेशी खपान दिये। मेलेका प्रभव दमोहकी सेवासमितिके किया था। जैन संस्थाओंकी व्यवस्था व देवद्वयके प्रवृत्तिके लिये एक कमेटी नियुक्त हुई है। सदन देनेकी मुचना प्रस्ताव हुआ तथा



सात प्रस्ताव यह हुआ कि यदि कोई परिवार पाई देश सेजके कारण जेठ जावे तो उनके छूटने पर उनके साथ कोई व्यवहार बंद न किया जावे परंतु शास्त्रोक्त शुद्धिके बाद सब व्यवहार चालू किया जावे ।

चारों (कोटा) -में रथयात्रा, तेरहवीं मंडल विधान व हाथौती प्रा० दि० जैन समा का अधिवेशन ता० ६-७-८ मार्चको होगा ।

कोटरमा-में विहार उड़ीसा प्रा० दि० जैन समा का अधिवेशन मी फा० सु० ७ से १० तक होगा । समापति सेठ लालचंदनी छिंदवाड़ा निवासी होंगे ।

येसरवाड़-जैन कन्या पठशाळा बडवाड़ का वार्षिक अधिवेशन माघ सुदी १९को हो गया । दिव्योंके व्याख्यान तथा कन्याओंके गायन, मनन आदिके बाद इनाम बांटा गया था ।

धीनाजी-में वार्षिक मेल हो चुका । १०० जन समुदाय था । चौदरी मिर्चारीछाटजीके समारंभमें समा होकर उदयछाट कासरीछाटके विषयाविज्ञाहमें समिष्ट होनेवाले रतनछाट, नन्हे-छाट ये दो मदाशन उपस्थित थे उनसे उचित दंड दिया गया ।

अहि क्षेत्र-पर संयुक्त प्रा० दि० जैन समा का प्रथम अधिवेशन भेष वरी ९ से १२ तक पूवधानसे होगा । यह महिषोप (रामनगर) बोगी स्थलसे ४ मील पर है । दहाने आदिश उचित प्रबंध किया गया है ।

आत्मवर्धन सम्मेलन-रा प्रथम अधिवेशन उत्तरांचलमें माघ सुदी ९ की गुरुको बापू अन्तर्यामी वेरीछर हटोईके समारंभमें हुआ

था । इसमें करीब १२ समाजद आये । १९० आदमी उपस्थित थे । एक अधिवेशन प्रहारे सर भी उपस्थित हुए थे । समापतिमीका 'आत्मवर्धन' पर उभय व्याख्यान हुआ था जो हम आगे प्रकट करेंगे । व्यवचारीनी शतश-प्रसादर्शन आत्मवर्धनके उद्देश पर व्याख्यान दिया और प्रस्ताव किया कि हर एक समाजदको (१) आत्मवर्धन अभ्यास करना, (२) मौनशौक छोड़ कर सादा जीवन बिताना (३) अहिंसा पर चरते हुए सब प्राणियोंसे प्रेम करना, (४) और आत्मवर्धनके सिद्धांतोंको दूसरोंको अच्छी तरह समझाना चाहिये । इसका समर्थन सेठ मूलचंदनी कारंडिया, हकीम परवाणामननीने किया था और पास हुआ था । अंतमें सेठ मूलचंदनीके इशारा पर नरर कई माध्योंने समाजमें आने नाम लिखाये थे ।

नजीबाबाद-में समा होकर सेठ पदमराजनी, दिगम्बरसिंहनी, म० भगवानदीनजी, पं० अर्जुनछाटनी सेठी आदि मो देशसेजके लिये जेठ गये हैं उनको धन्यवाद दिया गया था ।

भियानी-में फा० सु० ६से पंचास प्रा० संदेशवाट समा का अधिवेशन होगा ।

सोलापुर-के जीवदया ज्ञान म० मंडलको सेठ म. जेठपुर पालाचंद जीहरी बम्हईने ५१ दिने हैं ।

नेमगिरि क्षेत्र-निहाम राज्यमें रामगो निहामें जिनुरको पास नेमगिरि नामक परंतु पर बिशाष्ट जैन मंदिर है उसमें ८ अलग २ धीरे हैं । इनमें नेमनय स्वामीजी प्राचीन प्रतिमा ७ फुट उंची १८ अंश है तथा पीर मी

प्राचीन प्रतिमाएँ हैं । इस मंदिरके जीर्णोद्धारकी आवश्यकता है । मन्त्रपंथानीके यात्रियोंको इस अतिशय क्षेत्रका भी दर्शन करते जाना चाहिये । मन्त्रचक्र सेठ अंशदास नेमासा सावनी निवृत्ता (परमणी) हैं ।

परस्पर जातिमें संबंध-गुजरातवाला (पंजाब)में बीसा ओसवाल, दशाओसवाल, बीसा खंडेछवाल व दशा खंडेछवालका एक व्यवहार होकर ओसवालोंकी कन्या खंडेछवालोंको और खंडेछवालोंकी कन्या ओसवालोंको व्याही गई है । क्या गुजरातकी दशा-बीसा हुमड, मेवाडा आदि जाति इसका अनुकरण नहीं करेंगी ?

आगरा-के तारगलीके पं० दि० जैन मन्त्रिने माघ शु० २की गत्रिको बड़ी भारी चोरी हो गई और बदमाश लोग चंवर, छत्र, धातु रक्षावी आदि सब लेगये । रक्षकोंको खूब पारा पीस था ।

गोपाल-दि० मै० सि० विद्यालय-मोरेनाका वार्षिकोत्सव मघ शु० १-२ को सेठ पानाचंद रामचंद औरीके समापतित्वमें हुआ था । व० शीतलप्रसादजी, पं० मरखनशालजी, नवरे बकीट, ल० मुन्हीछाटजी, पं० नरेशिंघाजी, आदि पधरे थे । पंडितोंके तथा विद्वान छात्रोंके व्याख्यान हुए थे । समापतिने १०१ विद्यार्थियों व १० व्याख्यान देने वाले ५ छात्रोंको गेट क्रिये थे तथा ल० मुन्हीछाटजी कर्मन्वरने डच कोर्टके विद्वान बनानेको बीस २ रुपये मासिक तनकी तीन छात्रवृत्ति देनेकी स्वीकार किया था । मघ है ल० मुन्हीछाटजीके विद्याप्रेमको ।

आँसी-में बा० विश्वनाथाना गागड़िकी

१००) जुर्मना न देनेपर तीन माहकी सादी जैल हुई थी । इतनेमें गत ता० २२ नववारीको पुलिस उनके बचवन्त प्रेसमें जाकर ताछा तोड़कर तिजोरीमेंसे १००) निशान ले गई और वे ता० २५ को छोड़ दिये थे ।

साहित्य समा-ठखन्डमें माघ सु० ८ की रात्रिकी पं० माणिकचंदजी न्यायाचार्यके समापतित्वमें जैन साहित्य समा हुई थी जिसमें जैन काव्यके महत्वर तीन लेख पं० बनवारी-छात्रजी, पं० सतीशचंदजी और पं० अमितकुमारजीके आये थे उनमें प्रथम दो सुनाये गये और तीनोंको क्रमशः ५०) १०), और २०) ठखन्डकी स्वागत समारोह औरसे दिया गया तथा पद दायोंकी आवश्यकता पर भी तीन लेख पं० मधुतापसाद, पं० अजितमसाद और पं० बुद्धलाल श्रावकके आये थे उनको भी क्रमशः ५०) १०) और २०) इनाम दिया गया था । अंशमें समापतिनोका जैन काव्यके महत्वर पर उत्तम व्याख्यान हुआ था ।

नागपुर-में नागपुर प्रा० दि० जैन खंडेछ-वात्र समा द्वारा विशालव खूब चुका । १० विद्यार्थी प्रवेश हो चुके हैं । वेदिका भी प्रबंध है । प्रधानाध्यापक पं० शंतिराजजी न्यायतीर्थ हैं । छात्रालयमें मोरके लिये खंडेछवाल विद्यार्थीको प्रथम मौका दिया जाता है ।

जैन माला विश्राम-चतुष्टय, आरामके मान निर्माणकी नींव ग। माघ वशी ०) को विधिवत् रखी गई थी । आश्रममें आजकल ११ छात्राएँ हैं । उत्तम प्रबंध है । पं० चंदा-बाईजी आश्रमकी तन मन वनसे अर्पण सेवा कर रही हैं ।

ला० अमीचंद जेलमें—गोहाना (रोहतक) आश्रमके स्थान परिवर्तनका पक्का विचार हो चुका के लाटा अमीचंद जैन रईस जो कि कॉलेज में । वः ज्ञानानंदजी, अविष्टता ।

वमेरीके समाप्ति थी, गत ता० १८ को पकड़े गये और आपको छ माह तक वैदकी सजा हुई है । जेल जाते समय आपने अपनी यातासे कहा कि—हे याता ! जब तुम्हारा एक पुत्र बलावा-निह ७ वर्षमें अमेरिकासे L. J. B. नाम काके आये हों तो मेरे विषयमें भी यह संमझ ले कि मेरा पुत्र अमीचंद देशको दास्य समुद्रने पार उतारनेके लिये तीर्थकी यात्रा करने गया है अदि । मराने भी आरको अआन दिश और उनकी कैदसे आने कुछका गौरव समझ । गोहाना निवासियों आरको परगना देह कुंवाला पहनाई थी । शिरागपनिह ।

अष्टान्दिकामें उत्तराय-आगामी ता० सुदी ८ से १५ तक अष्टान्दिका वर्षमें हस्तिनापुरमें ८ दिन तक मेला होगा । ते-हरीप मंदलविचन व नयत्रा होगी तथा इन बार प्र० प्रत्यर्थ अश्रमके व्यवस्थाकोंने उत्तराय विदेश प्रग्न किया है । एषी प्रदेशावासी, वः 'मिन्ध्या-दासजी, वः गोकुलमनारी आदि ज्ञात पत्रा-नेशक हैं । आश्रमने नये विद्यार्थी भी इसी समय भर्ती किये जावेंगे । व्यवहारिक विद्याके लिये अभी डाकुरप्रसादजी एम० ए० निपुण किये गये हैं जो २-० दिनोंमें आनारोने तथा वहां धर्म व साहजकी उर्गसे उंची तीर्थ व साखीय वीथ बहाओं तक टिपे भी साबन सज्ज हो गया है । मिन्ध्याट रमिन्ध्याटकी गठरागु आनो है और बर्तमानमें बहुत कुछ सुधिर होगी है इन्धिये बर्तमानमें जाने ही

विरोध—पं० अर्जुनलालजी सेठी आनकठ सागरकी जेलमें है वहां उनको नवान इंडे और वीथकी लेनेका प्रयास उनकी मरनी विरुद्ध किया जाता है जो जैन धर्मके विरुद्ध है इस पर लाहोरके महावीर जैन ऐशोशिप्रसादने गत १९ ता० को सभा करके सरकारकी इन नीतिका खेर विरोध किया है और अन्य स्था-नोंको ऐसा प्रस्ताव करनेकी सूचना की है और प्रस्तावकी नकल ना० वापरोयकी भी भेजी है। स्वावडा (मेःठ)—में फरगुन बदी ९ को नृभर्त्से दो जिन प्रतिमा निहली हैं जिनमें एक पश्चात्पकी शुरु वर्ष प्रतिमा २ फुट उंची है उपर 'मृत्तेश्व' आदि लिखा है ।

५०००) का दान श्री कुंजगिरिज० आ-श्रमको सोटापुर निवासी सेठ हीमचंद नेमचंदके पुत्र सेठ बालचंदजी को दूकटने ५०००) स्थायी कोषमें दिये हैं । आरका यह दान अन्य भनिहोंको अनुकण्णीय है ।

'परवार यन्त्रु'—नामक धर्मिक पत्र परवार मातिका जोरते पत्र माममें प्रकाश करनेका प्रबंध हो रहा है । संपादक हैं पं० तुलसीदासजी ग्यायनःपं दि० जैन हाईस्कूल बटौर (मंड) बर्तक नू० १॥) होगा ।

स्वायस्में पं० महात्ममा—आगर (म-अने) में नवीन नशियां नोमें बरी पठिछा प्रदेव मायमें है उनी मौके वा वहां मायन० दि० जैन मंदिरकट महात्ममा दूना अभिज्ञान प्रदेव सुदी १ से ५ ता होना निश्चित हो चुका है ।



प० अर्जुनलालजी सेठी बी० ए०

(देशसेवाके लिये जेलका दुःख सहन करनेवाले निडर वीररत्न)

जैन 'विजय प्रेस-मूल' ।



शरीर रक्षार्थ आवश्यक्रीय कार्य ।

शरीर रक्षाके लिये प्रतिदिनके कार्योंका नियमित होना अत्यावश्यक है । प्राकृतिज मगत्पर दृष्टि डालनेसे सर्वत्र देखा जाता है कि एक नियमके अनुसार ही प्रकृतिके समस्त कार्य चल रहे हैं । निधम विरुद्ध जीवनेके लिये वलेश रूप है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि सम्पूर्ण पुरुषार्थोंका मूल जीवन है । और उस जीवनका मूल उत्तम स्वास्थ्य है । अतएव शरीर और मन जिससे उत्तम प्रकार स्वस्थ रहें इस विषयमें विवाधपूर्वक कार्य करना, मनुष्य मानका कर्तव्य है । स्वास्थ्य रक्षाके लिये दिन २ नियमोंका पालन करना चाहिये और कौन २ से पदार्थ हमारे लिये किंग प्रयोजनीय हैं इन विषयका सबको अच्छे प्रकारसे ज्ञान होना उचित है । नीचे कुछ साधारण नियमोंका उल्लेख संक्षेपसे किया जाता है ।

हमारे शरीरका प्रतिक्षण क्षय होता रहता है । इस उठना, बैठना, चलना, फिरना आदि जो कुछ कार्य करते हैं उन सबसे हमारे शरीरका प्रतिक्षण क्षय होता रहता है । और हम प्रतिदिन जो कुछ खाते पीते हैं उसके द्वारा क्षयकी पूर्ति हुआ करती है ।

अब हमारी जीवन रक्षाके लिए अत्यन्त आवश्यक्रीय पदार्थ है । मनुके बिना हम बहुत समय तक कदापि जीवन धारण नहीं कर सकते । मनु हमारे शरीरके पोषणमें विशेष रूपसे सहायता करता है—और रुधिरको सञ्चाल करता है ।

शरीरके भीतरी भागों रहनेवाले दूषित पदार्थोंको बाहर निकालनेके लिये जठकी हमें प्रतिदिन विशेष आवश्यकता होती है । इसके सिवाय शरीरके बाहरी भागोंको घोंनेके वास्ते और भोगनादिके तयार करनेके लिये भी हमें नित्य प्रति जठका व्यवहार करना पड़ता है । हमारे शरीरके तीन भागोंमें दो भाग जठ और एक भाग दूसरे पदार्थ हैं । रुधिरके प्रायः तीनों भागोंमें नब्बे भाग जठ और शरीरकी हड्डियोंमें भी प्रायः तीनोंमें दस भाग जठ है । पसीना, मूत्र, फेक इत्यादिके रूपमें प्रतिदिन प्रायः तीन सेर जठ हमारे शरीरसे बाहर निकलता है । पिपासाके लगने पर हमें शरीरमें जठका अभाव महसूस होता है हमारे भोजनके पदार्थोंमें कुछ जठका भाग कम होने पर भी हमें प्रतिदिन तीन सेर जठ ग्रहण करना चाहिये ।

भोजनके एक घंटे बाद जठ पान करने एवं शयन करनेसे पहले और प्रातःकाळ शयन स्थानके पश्चात् एक मिठास मनु पान करनेसे शरीरका बहुत उपकार होता है । भोजनके समय अति जलपान करना कदापि उचित नहीं है । क्योंकि इससे पाकस्थली निर्बल हो जाती है और 'जठान्नि मन्द' हो जाती है । थोड़ा या अल्पमात्रामें जलपान करनेसे शरीरका वल्लेद, अच्छे प्रकारसे नहीं निकलता इस कारण उससे कोष्ठवद्धता होकर अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होनाते हैं ।

हमें शरीर स्वच्छ रखनेके लिये प्रतिदिन स्नान करना भी उचित है । हमारे शरीरका समस्त वल्लेद (मेल) पसीनेके रूपमें रोंगड़ोंके भागोंसे शरीरके बाहर निकलता है । इस

कारण रोमकुपोंके वस्त्र (मेड) से बन्द हो जानेपर शरीरके भीतरका वस्त्र (मेड) बाहर नहीं हो सकता और उसके द्वारा स्वभा संवेधी अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होनाते हैं। फुफ्फुस और मूत्राशयके बहुतरे कार्य स्वभा के द्वारा सम्पन्न होते हैं। इस कारण रोमकुपोंके द्वारा बंद होने पर फुफ्फुस और मूत्राशयको अधिक कार्य करना पड़ता है जिससे कि वह शीघ्र दुर्बल होकर अनेक रोगोंके कारण बन जाते हैं। इस कारण हमें रोमकुपोंको उत्तम प्रकारसे स्वच्छ रखना आवश्यक है। हमें प्रतिदिन स्नान करना चाहिए। साधारणतः शीतल नरुते ही स्नान करना श्रेष्ठ है, किन्तु शीत ऋतुमें दुर्बल मनुष्यों को और विशेष कि शीतल मत्से स्नान करना अनुकूल नहीं पड़ता उनको गरम मत्से स्नान करना चाहिये। किन्तु पूर्ण मोहन करने और अधिक शारीरिक परिश्रम करनेके पश्चात् स्नान नहीं करना चाहिए। स्नान करनेसे पहले तेजका मटना बहुत अच्छा है। साबुन अदिका लगाना भी सुगम नहीं है।

प्रतिदिन दाँतोंके स्वच्छ करनेके लिए नीबू वगैर आदिकी दाँतोंन कानी चाहिये। क्योंकि हम जो कुछ खाए वगैरे हैं उनके कितने ही बुरा प्रादः हमारे दाँतोंमें लग जाया करते हैं और उनके मटनेसे दाँतोंका विशेष अनिष्ट होता है। दाँतोंके चारों ओर मेड जमाया जाता है। उनसे दाँतोंकी चर्मा जलित बन है वर दन्तदुःख अदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

अस्वस्थ दाँतोंन अपना स्वस्थ करने आदिके द्वारा दाँतोंको प्रतिदिन स्वच्छ रखना चाहिए।

स्नाने पकानेके वास्नानोंको खुद स्वच्छ रखना चाहिए, और उनको धोनेके लिये भी स्वच्छ मल व्यवहार करना चाहिये। मर्तनमें जूझन लगी रहनेसे अनेक प्रकारके शरीरमें विचार पैदा होसकते हैं। नित्यमति खानेके शाकोंको खुद स्वच्छ मत्से चोकर काममें लाना चाहिए। कारण कि-शाकोंके ऊपर अनेक प्रकारके कीट रहा करते हैं। विशेषकर पत्र शाकोंमें सुक्ष्म कृमि अचिन्तासे प्राप्त करते हैं। उसी प्रकार फलोंको भी मत्से बोलना चाहिए।

मोहन हमारे जीवन चारके लिये समस्त आवश्यकतम कार्य है। मोहनके द्वारा हमारे शरीरका उत्तम रीतिसे पोषण होता है। और हमारे शरीरका जो प्रतिक्षण क्षय होता है उसकी पूर्ति होती है। हमारे नित्यमतिके मोहनमें सब ही प्रकारके शरीरोपयोगी पदार्थ होने चाहिये। जिससे शरीरका उत्तमरूपसे पोषण हो और जो स्वभावके विरुद्ध न हों ऐसे ही पदार्थ प्रायेक मनुष्यके मोहनोपयोगी होसकते हैं। प्रत्येक मनुष्यको देश, काठ, मट, वायु, अवस्था, प्रकृति और उपयोगिता समझ कर जो मटगमें हन्म हों ऐसे पदार्थ ही मोहनके लिये लेने चाहिये। विशेष कर देना जाता है कि- प्रोटिड Proloids (पौष्टिक) आदिके मोहनके पदार्थ हमारे शरीरके अंगोंको संगठित करने और शक्ती पूर्ति करते हैं। स्नेह त्रिकके पदार्थ Exalty हमारे शरीरकी गर्मीरी रखा करते हैं और हमारे शरीरमें स्नेहकी शक्ति करते हैं। रेशमदार व आदिआदिके पदार्थ स्नेह आदिके पदार्थोंके समान शरीरको गर्मी व ठंड

की रक्षा करते हैं किन्तु स्नेह जातिके पदार्थोंकी अपेक्षा बहुत कम । उच्च ज्ञातिके साध पदार्थोंके द्वारा अस्मि प्रसूत होती है और पचन क्रियामें सहायता मिलती है । हम जो कुछ प्रतिदिन भोजन करते हैं, सब उसकी सप्लत शरीरमें बहाकर फैला देता है और शरीरके दूषित पदार्थोंके बाहर निकालनेमें सहायता करता है । भोजनके परिमाणका सब मनुष्योंके लिये कोई नियम निर्दिष्ट नहीं होसकता । व्यक्तिगत परिश्रमके अनुसार ही भोजनकी आवश्यकता होती है । जो किसी प्रकारका कठिन शारीरिक परिश्रम नहीं करते उनके लिये अधिक भोजनकी आवश्यकता नहीं है । वृद्ध मनुष्योंकी अपेक्षा युवकोंका भोजन कुछ अधिक परिमाणमें होना चाहिये । साधारणतः सब मनुष्योंको दो बार भोजन करना चाहिये । बार बार अधिक मात्रामें भोजन करना हानिकारक है ।

जीवनरक्षाके लिये हमें खुली हुई और शुद्ध वायु आवश्यक है । मनुष्य आदरके बिना बहुत दिनों तक जीवित धारण कर सकता है और गड़के बिना भी कई दिन तक बच सकता है, किन्तु वायुके बिना कुछ क्षणोंमें मृत्यु हो जाती है । दूषित वायुमें रहनेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होसकते हैं । और शुद्ध वायु अनेक रोगोंको दूर करती है । इसलिये हमें वायुकी उपयोगिता पर विशेष ध्यान देना चाहिये । मन्द स्थानोंमें और जहाँही वायु दूषित हो ऐसे स्थानोंमें हमें कभी नहीं जाना चाहिये । नित मकानमें बहुतसे आदमी एक जगह शयन करते हैं वहाँ नहीं रहना चाहिये । बहुतसे मनुष्योंके श्वासोच्छ्वासके मिचनेसे वायु सहन ही दूषित हो जाती है । साइके दिनोंमें घाँसे गरम

रखनेके वास्ते अग्नि जलाकर घरके किनाड़े वगैरह बिठकुठ बंद न करने चाहिये । कारण कि वहाँ की वायु शीघ्र दूषित होकर पहा अनिष्ट कर सकती है । यहाँ तक कि—इससे मृत्यु भी हो सकती है ।

स्वास्थ्य रक्षाके लिये कुछ व्यायामकी भी आवश्यकता है । व्यायामके द्वारा शरीर बलवान तथा उत्तम प्रकारसे संगठित होता है । खुली हवामें ही व्यायाम करना अच्छा है । व्यायाम करते समय ऊपकुसरी तयारता अधिक पड़ जाती है । और उस समयके श्वास प्रश्वासके साथ कारबन (कार्बोआक्सीजन) हमारे शरीरमेंसे बाहर होती है और उसके परिवर्तनमें विशुद्ध वायुके साथ (ऑक्सीजन—आक्सीजन) हमारे शरीरमें प्रविष्ट होता है और हमारे शरीरकी पुष्टि करता है । जो अधिक मस्तिष्क सम्बन्धी कार्य करते हैं उनके लिये व्यायाम करना अत्युपकारी है । प्रति दिन सभी मनुष्योंको व्यायाम करना आवश्यक है । अधिक व्यायाम करनेसे शरीरका अनिष्ट होता है इसलिये अपनी शक्तिके अनुसार ही व्यायाम करनेका नियम करना चाहिये । जो लोग बहुत कमजोर हैं उनकी समेरे शाम एकाव मील खुली हवामें भ्रमण करना ही उत्तम व्यायाम है । खुली हवामें भ्रमण करनेसे फेफड़ोंमें बल और परिष्कार शक्तिकी वृद्धि होती है ।

जो मनुष्य नित्य अधिक शारीरिक परिश्रमका कार्य करते हैं उनके लिये और किसी दूसरे प्रकारकी व्यायामकी आवश्यकता नहीं है । वे जो कुछ दिन पर काम करते हैं उसीमें उनकी सस्ती व्यायाम हो जाती है ।

स्वास्थ्य-शास्त्र के लिये विश्राम और निद्रा की भी आवश्यकता है। जिस अवस्थामें हमारा मन और शरीर सम्पूर्ण रूपसे विश्राम करते हैं उस अवस्थाको निद्रा कहते हैं। हम दिन भर जो परिश्रमके कार्य करते हैं उनसे जो शरीरका क्षय होता है, निद्रा व विश्रामके द्वारा उसकी पूर्ति हुआ करती है। अवस्था, परिश्रम और अम्यासके अनुसार निद्रा कम ज्यादा हुआ करती है। निद्राका अधिक जाना अच्छा नहीं है। इससे परिश्रमकी व्यर्थता प्रपट होती है।

निद्रा हमारे शरीर रक्षाका प्रधान उपाय है। भोगनके स्वभावसे हमारी इतनी हानि नहीं होती गिनती कि निद्राके अपावसे होती है। परिश्रम द्वारा जाना गया है कि कुत्ता प्रायः तीन सप्ताह तक भोगनके बिना शिमीतरह सकता है परन्तु निद्राके बिना वह पाँच ही दिनमें मर जाता है। बाइकोंके लिये अधिक निद्राकी आवश्यकता है। युवक मनुष्योंके लिये छे घंटा पूरा और दुर्बल मनुष्योंके लिये छह अधिक निद्राकी आवश्यकता है।

भोगन करनेके पश्चात् तुरन्त ही नहीं सो रहना चाहिये। निद्रकुल गुप्त कर कर नहीं सोना चाहिये।

एक घण्टेमें बहुतसे मनुष्योंके साथ नहीं शयन करना चाहिये।

शयनका स्थान अधिक साफ सुखा होना चाहिये और उसपर विशेष रूपसे इस बातका ध्यान रहना चाहिये कि वहाँ वायुवा अच्छे प्रकार संचार हो। देशः—बी० पृष्ठ० बम्बई।

स्वास्थ्यरक्षाकी पचास बातें

(गत वर्ष अंक १० से आगे)

१४ बहुत सवेरी उठकर कुछ देर तक शरीरों शुद्ध वायु छानेसे विटक्षण स्फूर्तिका संचार होता है। रुत्रिमें शयन करनेके पहले एक बार शरीर, और हाथ पाँवोंको मछनेसे रक्त संचालन अच्छे प्रकारसे होता है।

२१ पहननेके कपड़े मौतमके अनुसार थोड़े होने चाहिए। शीतकालमें भी अत्यन्त गरम और चुस्त वस्त्र पहनने ठीक नहीं हैं; कारण उनसे रक्त संचालनकी क्रिया उत्तम प्रकारसे नहीं होती और व्यर्थ मार सहन करना पड़ता है। गर्म और वर्षाकालमें चौबीस घंटे शरीर पर कपड़े छोड़े रहना ठीक नहीं है। उष्ण ऋतुओंमें एक मध्यम या हल्के गाड़ेका कुर्ता या कुर्मा रहना पर्याप्त है।

२६ मिनको केवल मानसिक परिश्रम करना पड़ता है उनके लिये प्रविदिग नियमसे कुछ शारीरिक परिश्रम करना भी बहुत जरूरी है। और जो केवल शारीरिक परिश्रम करते हैं, उनके लिये प्रतिदिन १०-१५ मिनट अवकाश या १ घंटा मानसिक परिश्रम करना अच्छा है। साहित्यिक पुस्तक या गद्य अवकाश समाचार पत्रोंको पढ़नेसे मन प्रमत्त होता है। जो लिखता, पढ़ता नहीं जानते, उनके लिये दूसरोंके पास बैठकर रामायण, मारवादि धार्मिक ग्रन्थोंका सुनना अच्छा है। यह श्रवणबैचित्र्य शरीर और मनके लिये प्रबल श्रवण और विश्रमका देने वाला है।

२७ जूना हल्का और ढीला पहनना चाहिए । गरमीके मौसममें टाट या कपड़ेका जूता पहनना भी अच्छा है ।

२८ स्नायविक दुर्बलतासे उत्पन्न हुई शिरकी पीड़ा धीरे ९ थोड़ी देर तक माथेकी त्वचाकी पकड़ कर खींचनेसे दूर हो जाती है ।

२९ बात रोगसे पीड़ित रोगी कुछ देर तक धूपका सेवन करनेसे आरोग्य हो जाते हैं । सूर्यकी किरणें छगते ही बातका वेग कम होकर रोग नष्ट हो जाता है ।

३० शरीरमें पीड़ा या क्लेश मालूम होनेपर तत्काल उसका कारण जानकर उपाय करना चाहिए । रोगकी उपेक्षा करना कभी ठीक नहीं है ।

३१ सर्वदा अपनेको स्वल्प समझते रहना चाहिए । कभी रोग होगा, इस चयसे कदापि भयभीत नहीं होना चाहिए । इच्छा शक्तिकी क्षमताकी सीमा नहीं है । प्रकट इच्छा शक्तिके द्वारा अनेक रोगोंके व्याकरणोंको दूर कर आत्म रक्षा करनी चाहिए । यह अत्यन्त शक्तिशाली रोगनाशक उपाय है । जो सर्वदा अपनेको रोगी समझते हैं, वे ही तदा बीमार रहते हैं ।

३२ विद्याध्ययन करनेमें यदि रसस्थय नष्ट होजाय तो वह विद्या निष्फल है । आरोग्यता होने पर विद्योपार्जन करना ठीक है ।

३३ शिक्षक लोग इस बातका सदा ध्यान रखते कि विद्यार्थियोंकी मानसिक उत्पत्ति ज्ञान ही उनका एकमात्र मार्ग नहीं है किन्तु विद्यार्थियोंके शरीर आरोग्य रखने और उनके चरित्रकी वृद्धिके लिए भी वे ही प्रतिभू हैं ।

३४ बहुतसे आदमी जल्दते समय सामनेको धुककर चलते हैं, इससे उनकी पीठमें कुचड़ापन हो जाता है और दोनों कंधे गोठ हो जाते हैं यह रोगका लक्षण है अथवा इसका परिणाम रोग है । इस घुरे अभ्यासको छोड़नेके लिए सामने को नेत्रोंके सममात्र होनेकी अपेक्षा ऊँची वस्तुओंकी ओर दृष्टि रखकर चलनेसे कुचड़ापन दूर हो जाता है । यदि रास्तेकी सड़क पर बड़ी ढाला गिरनी या ऊँचा मंदिर हो तो उस पड़ी भगवा मंदिरके शिखरकी ओर दृष्टि लगाकर चलना अच्छा है । मंदिर या गिरनेके न होनेपर उप ताहकी दूसरी ऊँची वस्तुकी तरफ निगाह रखनी ठीक है । किन्तु गाड़ी, घोड़े, मोटर आदिसे भी पूरी तौरसे बचाव रखना चाहिए ।

३५ सायंकालको भोजन करनेके पश्चात् किसी प्रकारका मानसिक या शारीरिक भ्रमसाध्य कार्य नहीं करना चाहिए । भोजनके पश्चात् और सोनेसे पहले किसी पृष्ठकको पढ़ना अथवा एकाग्र हास्यजनक वार्तावाच करना अच्छा है ।

३६ एक ही समयमें एक साथ फल, शाक, दाल, भात, मिष्ठान आदि पदार्थ नहीं खाने चाहिए ।

३७ प्रतःकालके साय पदार्थोंमें फल अधिक होने चाहिए ।

३८ स्नाहमें एक दिन केवल फल खाकर रहना बहुत अच्छा है इस अभ्यासका उत्तम फल शीघ्र ही प्रत्यक्ष हो जाता है ।

३९ नितना भोजन सहजमें हज्म हो सके, उतना ही खाना चाहिए । उससे ज्यादा नहीं खाना चाहिए ।

४० जो मनुष्य अपने स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए सदा यत्नवान् रहता है, उसको कभी भी डाक्टर या वैद्यके पास नहीं जाना पड़ता ।

४१ खूब ठूंस ठूंसकर खाना, गुराकी (भारी) पदार्थोंसे खाना और उत्तम प्रकारसे मोहनको चनाकर न खाना, इन्हीं कारणोंसे विशेष कर रोगोंकी उत्पत्ति होती है ।

४२ नेत्रोंके चारों तरफ लाले रंगरी रेखा दीख पड़े तो समझना चाहिए कि यह स्वास्थ्य खराब होनेकी सूचना है । तभीसे इसके प्रतिहार करनेकी व्यवस्था करनी चाहिए ।

४३ जहाँ पर व-यु न आ प्राप्त होता हो, उस स्थानमें नहीं रहना चाहिए । यदि किसी प्रकारकी बाधा होनेसे ऐसे घरमें रहना ही पड़े तो नितना क्षण उस घरमें रहा भाग उत्तम ही अच्छा है । अन्तर्पूर्ण स्थानका वायु भी स्वास्थ्यकर नहीं होता ।

४४ बाटक यदि रोषे तो उसको ताड़न न कर उसके रोनेका कारण जान उसके उसको दूर करनेका उपाय करना चाहिए । बाटके रोने पर उसकी जानकी देख कर या उसे मित्रार्थ देख कर जयवा भीठी १ बाँवे करके उसको मुश्तकी घेरा करना ठीक नहीं । इससे बच्चोंकी तरकूब इच्छा शीघ्र होनेपर भी रोनेका आसक्ति कारण दूर न होनेसे उसका कष्ट अच्छा नहीं होता ।

४५ जिससे अपने शरीरका अन्ध होना जान पड़े वह अस्वस्थ ही उत्तम प्राय न हो न हो उसको बर्दाश्त नहीं करना चाहिए । भोजनमें छोटी गोश्त ही अच्छा है ।

४६ बीच बीच में एकत्र दिन उखास करनेसे शरीर बहुत अच्छा रहता है, इस प्रकार करनेसे अनेक रोगोंके आक्रमणसे भी रक्षा होती है ।

४७ काम करते २ यदि मजबूत माछम हो तो काम बन्द करके विश्राम करना चाहिए । आत्म शक्तिसे अधिक कार्य करना विचारसंगत नहीं है ।

४८ शयन करनेका कमरा खुला रहना चाहिए । विदासिताके कारण उसको हमेशा पर्व या निक आदि द्वारा ढका रहनेसे अनिष्ट होता है । उसमें अनेक रोगोंके बीजाणु आश्रय पाताते हैं ।

४९ रोगी मनुष्यको सदा प्रसन्न रहनेकी चेष्टा करनी चाहिए, किन्तु उसप्रवृत्तिसे उसकी कोई सानि न होगी हो, इस पर भी ध्यान रखना चाहिए ।

५० जोरी, डकैती, हिंसा, और मिथ्या भावकी संपान शरीरका अस्वस्थ रहना भी एक पाप समझना चाहिए । जिससे उस भावका प्राप्ति न होना पड़े, इस पर प्रत्येक मनुष्यको वक्ष्य रहना चाहिए ।

जैन इतिहास

दूसरा भाग तैयार है ।

इसमें ११वीं तीर्थंकर श्रीविपश्चक्रायसे लेकर २०वीं श्री मुनिगुप्तनाथ तक अर्थात् ९ तीर्थंकरों का इतिहास प्राप्त भागमें तैयार करने कायम है । विपश्चक्रोंको तो अतीत उपयोगी है ।

१० १८० पृ० (१) अक्षय मंगल ।

मैनेजर-दि० जैन पुस्तकालय-धरम

गृहस्थ जैन स्त्री पुरुषोंके लिये आवश्यक काम

ॐ धार्मिक कर्त्तव्य । ॐ

(१) सुस्योदयसे पहले उठकर हाथ पैर धो, मनकी ग्लानि मिटा थोड़ी देर ध्यान, सामायिक, जप व मायना द्वारा अपनी आत्माको रागादि विभाव, ज्ञानावरणादि ८ कर्म, शरीरादिसे भिल-शुद्ध ज्ञाता दृष्टा जननदमई स्वभावभारी विचारना चाहिये ।

(२) मन व इन्द्रियोंको वशमें रखनेके लिये व ज्ञातृको नीतनेके लिये २४ घंटोंमें क्या १ काम करना है सो सोचकर २४ घंटोंके लिये पाँचों इन्द्रियोंके भोगोंकी सीमा नियम द्वारा बांध लेना चाहिये ।

(३) शुद्ध रखते नित्य स्नानकर श्री जिनन्द्र देवकी शान्त वीतराग प्रतिष्ठित प्रतिमाका दर्शन ले अरुहंत व सिद्धका स्तवन पढ़ना तथा जलादि वाठ द्रव्योंसे पूजन करके भावोंमें निर्मलता बढ़ाना चाहिये ।

(४) मुनि महागाम जयता अन्य त्यागी महात्मा व विदेषज्ञ शास्त्रज्ञाताके द्वारा पवित्र जिनैवाणीका धर्मावृत रस पीना चाहिये ।

(५) अपने ज्ञानके बढ़ानेके लिये नित्य स्वयं जैन शास्त्रका स्वाध्याय थोड़ी देर अवश्य करना चाहिये । बिना दो गिनट भी शास्त्र पढ़े भोजन न करना चाहिये ।

(६) जैन त्यागी मुनि व श्रावकको व श्रद्धावान गृहस्थ स्त्री य पुरुषको भक्तिसे व दयामावसे भुक्तिको भोजन देना चाहिये । अपने धनको विद्या, औषधि, अमम व अन्न दानमें लगाकर परलोकके लिये पुण्यकी कमाई बांध ले जाना चाहिये ।

(७) अपने यहां जिन मंदिरका सुप्रबन्ध रखके वार्षिक आमद व खर्चका हिसाब प्रगट कर देना चाहिये ।

(८) बालक व बालिकाओंको धर्मज्ञान देनेके लिये जैन पाठशाला व कन्याशाला अवश्य खोल देना चाहिये ।

(९) शुद्ध पानी छानकर, व शुद्ध भोजन ताना शास्त्रकी मर्यादाका खाना चाहिये जिससे उत्तम धार्मिक बुद्धि रहे तथा शरीर रोगोंसे बचे । हाथका पीसा आटा व घाका दूध भी वर्ज्य चाहिये ।

(१०) जुआ खेलना, आकुरुता बर्द्धक सट्टेका व्यापार, चोरी, कुशील, झूठ बोलना, परबीड़ा आदि पापोंसे बचकर शुभ आचार व परोपकारसे जीवन बिताना चाहिये ।

सामाजिक कर्त्तव्य ।

(१) बालक, बालिकाओंको विद्यावान बनाकर बीस २० वर्षके पहले पुत्रका व १५-१६ वर्ष पहले पुत्रीका लग्न न करना चाहिये ।

(२) अपनी पुत्रीको कुमार युवा पुरुषको ही विवाहना चाहिये । यदि कुमार न मिले तो अन्य युवान पुरुषको देना चाहिये । पैसेके लोभसे अयोग्य वर बनाना पुत्रीके साथ घोर अन्याय करना है-इस महापापसे बचना चाहिये ।

(३) वैश्या नृत्य, आतशबानी, आदि कुरीतियोंकी मिटाकर व पंचायती नियम कम खर्चके बनाकर थोड़े खर्चमें विवाहादि काम निबटाना चाहिये ।

(४) विवाहादि सब मंगलीक कार्य जैन धर्मकी पद्धतिसे करना चाहिये ।

आर्थिक कर्तव्य ।

(१) भारतवर्षके गरीब भाई बहनोंके हाथका बना हुआ मोटा महीन जो शुद्धस्वदेशी वस्त्र मिले उनको ही पहनना चाहिये । मिलोंके कपड़ोंके बननेमें गनों चरबी खर्च होती है तथा ये टिकते भी कम हैं ।

(२) घरोंमें चरखा कातने व कपड़ा बुननेका रिवाज बढ़ाना चाहिये ।

(३) किसानों आदिको चरखा देकर उनके खेतीसे बचे समयको काममें लगाना चाहिये ।

(४) कपड़ोंके सिवाय हरकोई वस्तु गृहांतक मिले अपने देशकी ही बर्तनी चाहिये ।

(५) उपयोगी पशु रक्षार्थ चमड़ा हड्डी न बरतो न विदेशी शकर खाओ ।

राजनैतिक कर्तव्य ।

(१) भारत देश पहले समृद्धिवाली था अब यह अन्य देशोंके मुकाबलेमें तन्दुरुस्त, घन व शिक्षामें हदसे ज्यादा गिरा हुआ है । इसके उच्चाके शांतिगई व न्यायपूर्वक उपायमें अपना मन बचन काय व धन लगाना चाहिये तथा भारतकी सेवा अहिंसागई भारतसे करते हुए यदि उत्सर्ग पड़े तो उनको प्रसन्न मनसे सहना चाहिये । किसीपर क्रोध का भाव भी न लगाना चाहिये ।

पढ़िये

“जैनमित्र”

साप्ताहिक पत्र

हर एक जैनीको जैनमित्रका माहक (१॥८०) मासिक मूल्य भेनकर पत्र जाना चाहिये । महीनेमें ४ रूफ जैनमित्र द्वारा मासिक न लौकिक समाचार व अनेक उपदेश प्रगट होते हैं । यह पत्र अपने नमूनेका एक ही है । इसमें पाठकोंके बहुत लभ होगा । एक वर्ष पत्र घर देंगे । जैनधर्ममुपलक्ष्य म० सीतलचमपादनी परोपकार बुद्धिमें इसका सम्पादन करने हैं श्री प० व० दि० जैन मा० सम्राटी जी०से प्रारम्भके हर एक मूल्यवाली प्रकट होता है ।

मित्र गणनेका पत्र-मृत्युचंद किमनदास कापाड़िया,

प्रकाशक “जैनमित्र” बंदागाड़ी-मुरादाबाद ।

मक्खियोंके कर्म ।

यूरोपमें जब युद्ध होते हैं और सेनाओंके पड़ाव पड़ते हैं तब बहुधा वहां पर छत्रोछत्रे रोग अपना फैलने वाली बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं । उन रोगोंसे सेनाका ऐसा संशार होना है कि ऐसा शत्रु की गोछा-बारूदसे भी नहीं होता । पहले लोगोंने विचार किया था कि पानी द्वारा ही ऐसे रोगोंकी सृष्टि होती है । परन्तु जब १८९८ ईसवीमें स्पेन और अमेरिकासे युद्ध छिड़ा था तब डाक्टरोंकी खोजसे निश्चित हुआ कि ये बीमारियां पानी से नहीं—मक्खियों द्वारा उत्पन्न होती हैं । उन्होंने कई प्रकारसे इस बातकी जांचकी । एक घंटेके मर दुबने एक मक्खीको ढाला और फिर उन दुबका निरीक्षण किया तो उसमें हजारों जीवाणु पाये गये । सब द्रव्यों वा बेतों हुई मक्खियोंको उड़ाकर देखा गया कि रोटियों पर लाखों जीवाणु उपस्थित हैं । इतना होने पर भी डाक्टरोंने मक्खियोंकी यह कस्तूरी संसारमें प्रकाशित नहीं की । जिस समय दक्षिण अफ्रीकामें युद्ध हो रहा था उस समय भी नाश प्रकाशके रोग फैले । वहाँके डाक्टरोंने भी खोज द्वारा मक्खियोंका कारण ही निश्चित किया । फिर तो मक्खियोंके ऊपर भड़ापड़ ट्राट, फ्लाई और लेट प्रकाशित होने लगे । प्रत्येक देशके डाक्टरोंने इस खोजका समर्थन किया । स्पेनिश ग्रंटियोंमें गडगड मक्खी और गडगडा कृमि इस ओर आकर्षित किया गया । यूरोपके कई देशोंमें कुछ दिन तक मक्खियोंपर और आंदोलन होता रहा । मक्खि-

योंको दूर करना और मार डालना ही एकमात्र उपाय निश्चित होनेके कारण, नानाप्रकारके संहारक उपाय तत्परोज किये गये । उनमेंसे यहां पर कुछ उपायोंका उल्लेख किया जाता है ।

(१) एक प्रकारके कागजोंकी सृष्टि हुई कि जो सदैव चिपकते रहते हैं । उनको चिपचिपे कागज भी कहा जा सकता है । उन कागजोंको दीवारों पर आधपीनोंसे लगाया गया और जब हजारों मक्खियां उन पर चिपक गईं तो उन कागजोंको उतार कर जला दिया गया ।

(२) टेनिस की गेंद खेलेके भैसे दस्ते होते हैं वेसे ही दस्ते बनाये गये और उनको हाथमें लेकर गेंदकी तरह मक्खियों पर अक्रमण किया गया । इस प्रकार मक्खियोंको मारा गया ।

(३) छोटे २ जल बनाये गये कि जिसमें रोटी, मिठाई और गोदके टुकड़े रखे जाते हैं । एक तरफसे लाख लुआ रहता है, जो मक्खियोंके लिये आकाश कम देना है । जब बहुतसी मक्खियां इकट्ठी होनाती हैं सब जाहको बंद कर पानीमें डुबो देते हैं ।

(४) रातके समय छत्तोंवा ही मक्खियां मत्ता करती हैं । अतएव लोगोंने कमरेके दरवाजे बंद करके, गरम तबों पर 'प्रेचम पाउडर' नामक दवा डली कि जिसके जहरीले धुएँसे मक्खियां मारकर गिरपड़ें ।

(५) फारमडन का सल्फ्यूरन मक्खियोंको मारनेके लिए निकाला गया । बाजारमें यह दवा बिकती है । शीशियोंमें प्रतिशत पानीमें पाकीस रिल्लन सल्फ्यूरन मिश्रणर बेचा जाता है । उसको पाँच भाग पानीमें मिश्रकर और कुछ

शकर व दूध डाल देनेसे उस दवाका स्वाद और रंग बदल जाता है । शकरके सनसते मक्खियां आना चाहती हैं । उस दवाको प्रातः और सायंकाल रक्तावियोंमें भरकर रखते हैं । विचारी मृत्ती, प्यासी मक्खियां ज्योंही उसे पीती हैं त्योंही छोट पोट होकर मरजाती हैं । इस दवामें बहुत लोग रोटीके टुकड़े मिगोकर उनको इधर उधर ढाल देते हैं ।

मक्खियोंके विषयमें सफाईके महकमों और म्मुनिसौषधियोंमें दो प्रकारके सिद्धांत स्थिर किये हैं । मक्खानोंकी सफाई और कूड़ा फराटकी नवीन दृष्टिसे हिकमत ।

मक्खानोंकी सफाईसे मक्खियोंमें कमी होसकती है । पालाने आदि में साफ रखाने चाहिए और बाधा उनको घुलाना चाहिए ।

कूड़ा फराटना जताना सबसे अच्छा है । परन्तु हमसे 'साध'में कमी उपस्थित होगी । अतएव शहरका कूड़ा फराट आबादीसे दूर पहुँचाया जाय । यह अच्छा उपाय है ।

अपना कूड़े उठा कुछ ऐसी दवायां डाठी जायें कि निम्नो मक्खियां उस पर न बैठने पायें । कूड़े फराट ही से उनकी उत्पत्ति और उत्पत्ति होती है । कूड़े फराट पर कभीस का पानी या महीन ठेठ छिड़कना अच्छा है । कभीस का पानी मक्खानोंमें भी छिड़कना चाहिए । मक्खियोंकी उत्पत्ति कूड़े फराट ही होती है और प्रायः शहरके बाहरसे मक्खियोंके दड आसदीने आना करते हैं । यदि सड़ी गली चोटीको नष्ट दिया जाय, यमें पूर्ण सफाई राखी जाय और चोटीकी छीन, गोबर एवं

कूड़ा फराट किसी बंद स्थान पर जमा करके, फिर गाड़ियों द्वारा शहरके बाहर भिजवा दिया जाय और वहाँपर ऐसे उपायोंसे छुरेकी रक्षा की जाय कि भिजसे मक्खियां उत्पन्न न हों तो अन्ततः पूरा लाभ पहुँच सकता है । कभीस के पान के सिवाय यदि साढ़े तीनसेर पानीमें आध सेर सुहागा मिलाया जाय और पात्र पर सोडियम आरसीनियट ढाँचा जाय तो इससे दम सेर कूड़ा शुद्ध होसकता है । साढ़े तीन सेर पानीमें सेर मा नमक मिला दिया जाय तो यह आठ सेर कूड़ा फराट साफ कर सकता है ।

यूरोपमें फ्लोरेडा नामक एक रियासत है । वहाँके सफाईके कार्याध्याने एक विज्ञापन बाँटा था । वहाँ पर उन विज्ञापनका अनुवाद दिया जाता है ।

“फ्लोरेडा के सफाई और तन्दुरस्तीके महकमे द्वारा आप लोगोंसे प्रार्थना की जाती है कि निम्न-लिखित कारणों पर ध्यान पूर्वक विचार करनेके बाद आप लोग स्थिर करें कि मक्खियोंकी मात्रा जाय या नहीं । यदि उनको मारनेकी आवश्यकता नहीं है तो उनसे बचनेके लिए कौन २ से उपाय स्थिर करने चाहिए । प्रमाणित हुआ है कि—

- (१) मक्खियों द्वारा फैलने वाले रोग उत्पन्न होते हैं ।
- (२) मक्खियोंसे उनकी उत्पत्ति और उत्पत्ति होती है ।
- (३) खाने, पीनेकी वस्तुओं पर मक्खियां, मीठाचुर्नीको छोड़ा करती हैं ।
- (४) हर सोटमें प्रत्येक मक्खी १५० बीट्स



देती है । प्रति दूसरे सप्ताह अंडे, मरखी वन जाते हैं ।

(५) नित नममें मक्खियोंकी जखिन्ना होगी उस घरके लोगोंकी सफाई वसन्तगी शोचनीय समझी जायगी ।

(६) मक्खियों द्वारा हवा साफ होती है । परन्तु, यह काम तभी तक अच्छा है कि गन वे घरके बाहर रहें ।

(७) रोगियोंके घूममें नाना प्रकारके जीवणु होते हैं और उन घूमों पर मक्खियां एकदम दूध पड़ती हैं । अतएव सर्वत्र घूमना उचित नहीं है ।

(८) स्टेसन, होटल और घरोंमें उगाढानोंका प्रोना आवश्यक है और उनको दब कर रखना और भी आवश्यक है ।

(९) मक्खियां जीवाणुओंको लायाती है वस्तु उनको कोई बंध नहीं होता है और वे अपने पाखाने द्वारा जीवाणुओंको बाहर निकाला करती हैं । अतएव जहां मक्खियोंसे बचाव करना उचित है वही उनके भेजेसे भी ।

(१०) मक्खियोंके सुले भेजेसे इस कारण उदासीन न होना चाहिये कि भेजेके साथ ही साथ जीवाणु भी सुल गये होंगे । वे यों नहीं सुलते हैं और पोढ़ीसी नमी पाकर पुनः सजीवता प्राप्त किया करते हैं ।

(११) सुले और हरे कल पहाये नहीं जाते हैं, इस कारण उनको अच्छी तरह धोकर और छीछ कर खाना चाहिये । पकी हुई वस्तु जीवाणुओंसे बचताती है ।

(१२) वस्त्रोंको प्रतिदिन घूममें सुखाना चाहिये

और जालीदार मसहरीमें सोना चाहिये ।

(१३) रोगीकी कै, दस्त और घूरु जलाना चाहिये और उसे मसहरीमें सुखाना चाहिये ।

(१४) खाद्य पदार्थों पर जाली होनी चाहिये ।

(१५) दूधको पराकर व्यवहृत करना चाहिये ।

(१६) उन जीवोंकी रक्षा होनी चाहिये कि जो मक्खियोंको खानते हैं ।

पाठक ! आरको मालूम होगया कि मक्खियोंके द्विये कैसे ९ दण्ड निश्चिन किये गये हैं और बताया गया है कि इनके द्वारा प्रतिशत ९० सफाया हुई है । पर हमारी रायमें उक्त उपाय अधिक लाभकारी नहीं हैं ।

संसारमें सुख और दुःख दोनों हैं । इसी कारण इस दुष्टमें सुखदायक जीव भी हैं और दुःखदायी भी । दुःखदायक जीवोंमें मक्खियों और गच्छड़ोंकी भी गगना को गई है । मक्खियोंकी हितक जीव भी कह सकते हैं । मारतवर्षमें प्रशाने समयमें भी इस प्रकारके जीवोंसे पचनेके उपाय निर्धारित किये गये हैं । मक्खी अधिक गलानत पसन्द है । जहां पर नितनी गलानत होगी वहां पर जतनीही मक्खियोंकी अधिकता होगी और जहां पर नितनी सफाई होगी वहां पर जतनी ही इस जीवकी कमी होगी । क्योंकि भेजेसे ही इसकी उत्पत्ति होती है और जतनीसे उत्पत्ति होती है । पानेके लिए तो यह जीव अच्छा और घुरा दोनों तरहके द्रव्य खाता है, परन्तु इसकी स्वामाविक प्रवृत्ति गलानत ही अधिक होती है । सबसे पहले पत्तीका स्वाद कीजिये । चढ़े २ शहरोंमें प्रत्येक घरमें पाखाने होते हैं । पोढ़ों, बैटोंकी कमी नहीं होती है ।



यूनटखाने भी होते हैं और लोग मांस खाते हैं। अल्पताओंमें रोगियोंकी मार होती है और नालियोंमें पेशाब, यूर, कूड़ा और करकट पड़ा रहता है। सड़क पर निरुद्धने पर दुर्गन्धि की कमी नहीं रहती है। इस प्रकारकी आवादी में महिलाओंकी उत्पत्ति और उन्नति होना सम्भव है। अतीत कालके प्रकृतिसेवी भारतवासी इतनी घनी आवादी कभी न बनाते थे। उनके छंटेर गांव और घर साधुओंकी कुटियोंकी तरह होते थे। प्रत्येक घर छोटा और साफ होता था। प्रायः नित्य ही उनमें जीवा-पोशी हुआ करती थी। पक्षानोंके कहीं नामोनिशान भी न थे। दूर गंगामें नदीके किनारे लोग फरांगत होने जाया करते थे। इसके सिवाय प्रातः और सायंकाल अग्निहोत्र द्वारा मानसिक सुख उत्पन्न करते थे, वायुको शुद्ध करते थे और मच्छर गंधिलों जैसे जीवोंकी उड़ाया करते थे। मरी म मांस था न मछली। न पालाने और न पुराना। मजिदगो भाषे तो किश्रु छिये। पतनान समयमें रहनेका रोग दुषित है। घनी और अधिक म-संरुभ पुन नगर निर्माण पद्धति ही बीसों प्रकारके रोगोंकी उत्पत्ति करती है। परन्तु इस समयके और औद्योगिक युगमें अतीत काठरी सम्पदा नहीं आसकती है। गुनार होने पर और उती आदर्श पर पहुँचने पर संप्रदायी काया पट्ट होतछनी है। अनपेक्ष्य दर्शनान अरुणामें मजिदगोसे इसे श्रुतकाय वादा जाहता है। इस विषय पर विचार करना आवश्यक है। हमारी रायमें कूड़े कचरा पर औद्योगिकोंका छिड़का जाना अधिक इच्छित भी

सम्भव नहीं है और इस रम-लीन समयमें हम लोग अपने आवश्यक कार्योंको छोड़ कर मजिदगोके प्रति आन्दोलन भी नहीं कर सकते। इसके साथ ही-कमसे कम हिन्दू जाति-प्रातः और सायंकाल रोटमें नहर मिटाकर मजिदगोकी हत्या भी नहीं कर सकती है और न टेनिसके बल्बसे उाकी गेंद, खेड सकते हैं। हमारी रायमें कोई जाति ऐसा करनेका आवश्यक नहीं रखती है। कूड़ा करकट गड़ा देना भी उचित नहीं है। ऐसा होनेसे कुपिदार्थको चरका पहुँचेगा। फलतः, सम्भव विषयों पर अ.छो.व. नागरिक दृष्टि रखकर उपायोंकी योजना करना समयावकूल कर्तव्य है। हमारी रायमें-

(१) जो लोग शहरमें रहनेके छिये विवेक न हों वे शहरमें न रहें।

(२) लैम्पेज और मुहल्लान जाति एवं माता-हारी हिन्दू लोग मांस खाना बंद कर दें।

(३) जब तक मांसाहार कम हो तब तक यूनटखाने शहरसे एक मील, दक्षिणमें बनवाये जायें। क्योंकि उधारेसे एका बहुत कष्ट पड़ा करती है।

(४) घरे को छामामें क्यापि न रखना चाहिये। मजिदगोके सिवाय उत्तरे एका भी गन्दी होती है। शहरके बाहर मैदानमें उसे इस प्रकार फेंका कर खाना चाहिये जिससे रोगरा सुख जाया नरे। इनसे न तो मजिदगोको कष्ट देनेकी सुविधा होगी और न शहरमें दुर्गन्धि उत्पन्न होगी। दस्तानके दिनोंमें कूड़ा करकट गड़ा देना चाहिये या गेजोंमें सुरक्षित रखना चाहिये।

(५) प्रातः और सायंकाल अपने घरमें नगरके

ऊपर नी, मेवा और सुगन्धियुक्त खाद्य द्रव्य नष्टने चाहिये । ऐसा करनेसे हवा भी अच्छी रहेगी और मच्छड़ वा मक्खियाँ भी माग जायेंगी। इस क्रियाका कोई आधुनिक नाम भी रखा जा सकता है ।

(६) खाद्य द्रव्योंको खुल न रखना चाहिये। दूधवाले हलवाई और फल बेचनेवालोंको एवधान करना चाहिये और खोमचेवालोंको भी इस विषयमें सतर्क करना चाहिये ।

(७) अस्पताल भी शहरसे बाहर बनाये जायें।

(८) किसी भीरुको न मरना चाहिये । प्रकृति की ओरसे कई जीव मक्खियोंके शत्रु हैं । जैसे गिण्टि, छरकड़ी, मकड़ो, तीता, बटेर, बत्तक, मुर्गी आदि ।

... एक प्रकृति सेवक ।

अतीव सस्ते नये २ ग्रन्थ ।

भद्रयात्रा संग्रह-४. ११८ इसमें मारोमें उपयोगी सभी पूजाओंका संग्रह संस्कृत व माया दोनोंमें अभी ही बड़े-छात्रोंमें प्रकट हुआ है । मुख्य अत्यल्प सिर्फ आठ आने ।

नित्यपूजा => द्रव्यसंग्रह सान्ध्यापथ्य => छायाला संग्रह => विनती संग्रह =>

दानकथा => दर्शनकथा => शीलकथा => स्वामी कार्तिकेयानुप्रेक्षा टीका सजिह्व ।।)

ग्रन्थत्रया माया टीका ।।।) चारित्र सार २)

सुखसागर भजनावली ।।=>

धर्मचर्चा संग्रह ।।)

इन छुटपुट ग्रन्थोंको ही अब संग्रहित ।

मैनेत्र, दि० मैने प्रेसमालय-सुरत ।

विचार-वैचित्र्य ।

(ले० नाथूराम सिंघई ललितपुर)

दीन हीन तथा दुःखित जनोको पुण्य करना यह एकका काम नहीं किन्तु प्रत्येकका काम है । इसका अभ्यास प्रत्येक नरनारीको वचनसे ही करना चाहिए । अवसर पाकर दूसरेकी सहायता करना भी एक प्रकारका पुण्य कार्य है । दुनियामें ऐसा कोई भी अशक्त तथा अतर्पण पुरुष नहीं जो अक्सर अपने पर अपने पड़ेसीकी सहायता न कर सके । जो दुःखियोंका दुःख अवहरण नहीं करसकता उसे चाहिए कि वह मूल्योंको बर्णोदेश दे जो रोग-ग्रस्त मनुष्यकी तीमारदारी नहीं कर सकता, उसे चाहिए कि वह चारित्र हीन मनुष्यको सुवारे । जो स्वयं किसी काममें अधिक माग नहीं ले सकता उसे चाहिए कि वह उन मनुष्योंको उत्साहित करे जिनसे उस काममें अधिक सहायता मिलनेकी आशा है । विषवा स्त्री जो अपनी फूटी-कोड़ी भी कोपको देगी और निर्धन मनुष्य जो पासिको शीतल गऊ पिना-एगा तो ये दोनों व्यक्ति अपने पुरस्कारको अवश्य ही पाएंगे ।

एक बड़े आदमीका कहना है कि मैं अपने मस्तिष्कको व्यर्थकी बातोंका गड़ा नहीं बनाना चाहता किन्तु ज्ञान-मण्डार बनाना चाहता हूँ । मैं किसी प्रकारके लेने देनेका व्यापार नहीं करना चाहता किन्तु ज्ञानका व्यापार करना चाहता हूँ । मैं केवल अपने लिए ही ज्ञानका अभ्यास नहीं करना चाहता; किन्तु उन लोगोंके

लिए ज्ञान प्राप्त करता हूँ जो अज्ञानी और मूर्ख हैं । मैं उन मनुष्यों से ईर्ष्या द्वेष नहीं करना चाहता जो मुझसे ज्ञानमें बहुत बड़े बड़े हैं, किन्तु जो मुझसे कम जानते हैं उनका मुझे बहुत खेद है । अपने ज्ञान-अभ्यासके कारणमें दूसरोंको नसीहत नहीं देना चाहता और न इस आशयसे उनको उपदेश ही देना चाहता हूँ कि ज्ञानसे मोक्ष ज्ञान और बढ़ जाए किन्तु इस अभिप्रायसे उन्हें शिक्षा देना चाहता हूँ कि ज्ञानसे उनमें ज्ञानकी वृद्धि हो यदि मुझे दुःख है तो केवल इस बातसे कि जिस समय में मैं पाऊँगा उस समय में मैं ज्ञान मेरे साथ ही नष्ट हो जाएगा वह मैं अपने परमप्रिय इष्ट मित्रोंको नहीं सौंप सकता—

मित्रता अधिक प्रेमकी माया पशुपतिर्षीमें होती है उसकी मनुष्यमें नहीं होती—परन्तु इस प्रेमका कारण मित्रता वह वास्तविक मनुष्यको होता है उसका उनको नहीं । इसका प्रमाण कारण यह है कि जैसे ही उनके बच्चे अपने आर दाना पानी खानेके लिए समर्पण होता है जैसे ही उनके बाइसेनोंका प्रेम करते कम हो जाता है । फिर वे उन्हें पिच्छुर ही छोड़ देते हैं । नहीं उनका भी चारता है वहीं बड़े होते हैं । यदि अस्वभाव उनके बच्चों पर कोई अप्रति आवड़े और वे अपना पारा पानी खानेमें अनवय हो जाएँ तो उनके बाइसेन कि उन्हें फिर दाना पानी पहुँचाते हैं । उनका वास्तविक प्रेम पुरस्त्त होमाता है । इसी कारण स्वयं जैसे विद्विषादा दया अना दानागनी खानेके योग्य हो जाता है तो फिर विद्विषा उसे मत्ते पोंछते

बाहर भगा देती है । परन्तु यदि वे किसी जाड़ या कहरमें फस जाते हैं तो विद्विषा फिर उनकी सहायता करने लगती है ।

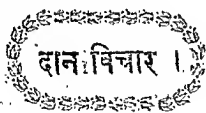
यदि भलाई करनेसे किसीको बच पड़ुंछे तो वह सम्मानके योग्य है । यदि अमाग्यवश उसे दुःख हो तो वह पश्चातापके योग्य है । यदि धुरे कामोंसे दुःख हो तो वह अपमानके योग्य नहीं । क्योंकि जो अपराध करने किया है उसका प्रतिकर शायद वही हो मो उससे उसे मिला है ।

कछा कुशल मनुष्य जो प्रशंसनीय और अनोखी वस्तुओंको तैयार करते हैं वे सब उसके निम्न परिश्रमका ही फल हैं । परिश्रमके द्वारा ही मनुष्य पदार्थोंसे बड़े २ शुभवन और मीनार तैयार कर देता है और बड़े २ शहरोंको नहर द्वारा सम्बंधित करा देता है । यदि कोई मनुष्य बराबर गेंती करता रहे तो फावड़ेसे उस मिट्टीको अच्छा करता रहे तो एक दिन यह होगा कि जिस दिन वह सारे पर्वतों को तोड़कर समतल भूमि बना देगा । अविघ्नान्त परिश्रम द्वारा मनुष्य सृष्टिको भी बाँध सकता है । तारांश यह कि परिश्रममें एक महत् शक्ति छिपी हुई है ।

एक व्यक्तिचा रंग एक ऐसा रंग है जिसको हम कभी विस्मरण नहीं कर सकते । हाएक यात्रको महंम पट्टी पाँच बार अच्छा कर लगे हैं प्रायः दुःखको हम मूँछ ना मछने हैं परन्तु पट्टी ऐसा बिट्ट दुःख रूपी चंद है जिसको हम किसी प्रकार भी भुलना नहीं कर सकते । यह कंच मंदैर हवे पाद भाग रहता है और

અકાન્તમાં જીવકે કારણ અધિક પીડા હોતી છે ।
 પેસી ધજ-હૃદયા કોઈ મી માતા ન હોગી જો
 અપને પ્રિય પુત્રની મૃત્યુકે કારણ દુઃખ ન કરતી
 હો ઔર એવા એક મી પુત્ર નહીં જિસે અપને
 માતા પિતાકે મરને પર દુઃખ ન હો ।

સંસારમાં જરાસી હિંમતકે હાર પાનેલે મનુષ્યકી
 સારી બુદ્ધિ નદ્ર ધ્રુપ હોજાતી છે । વદૂતસે
 મનુષ્ય અપને કાચરપનકે કારણ મેદ નમં આમ્ર
 કામ નહીં કર તરતે । યદિ ચે હિંમતકે સાથ
 કામ કરના પ્રારમ્ભ કર વે તો એક દિન સંસારમાં
 વે વિહવાત દુરુપ હોનાઈ । અરુ નાત યહ છે
 કિ ઘડિ થોઈ આદમી કિસી અચ્છે કાર્યનો
 કરના કાહતા હૈ તો ડલે પિર કીસી મી કાતલે મય
 ન કરના પાહિય । નિશંક હોકા ડસ કામમાં જગ
 જાન પાહિય ઔર ડસકો તકરતા પૂર્વક સમસ
 કારતા પાહિય । કિસી ડરૂ કાહરકા વહના હૈ
 કિ "હિંમતે મર્વા, મદતે છુડા" ।



દાન વિચાર ।

લેહરે ।

નાના ભાંતિ દાન ને, દેવાએ સંસાર;
 ઉત્તમ કે કનિષ્ઠ છે, વર્ણવું પરી વિચાર.
 શાસ્ત્રસે આતિ છે ગહન, અવગ્રાહ સમુદાય,
 અર્થ સહિત વર્ણન કરે, સમજાના સંસાર.
 પદાસી અંધુએ !!!

દાન શબ્દ સંસ્કૃતના ના (સી) ઉપરથી થયો છે.
 ના એટલે દેવું કે-આપવું-તે સાથે ન આવવાથી
 વિજ્ઞાન એ-સ્વર્ગ-પદ્ધતિ-સત્તાએ અદા સહિત
 આપવું જૈન ગાય છે.

દાન એ શબ્દ આપણે ધારીએ છીએ તેટલો
 સહેલો નથી. મુખ્ય એ બે અધરના ચોક રૂપમાં
 અનેક અમત્કારિક બોલો સમાવેલા છે.

દાન આપનારે દાન લેનારની યોગ્યતા પૂર્ણ-
 પણે તપાસવી જોઈએ. નહિ તો દેનાર અને લેનાર
 બંનેની અસદ્ગતિ થઈ દોષેલા દાનનું ફળ પાપ
 સ્વરૂપે ફરી નીવે છે. માટેજ સમગ્ર મનુષ્યનું
 દર્શન્ય છે-કે-દાન આપવાની વિધિ જાણવા પછી
 જ દાન આપવું આજ દિવસને સંપૂર્ણપણે-સમ-
 જાણવા આ ત્રિપલ લખાયો છે.

દાનના પ્રકાર.

૧ આહારદાન, ૨ ધાર્મિક દાન, ૩ અભાષદાન
 ૪ અભાષદાન. દાન આપનારે પાત્રનો વિચાર કરવો
 જોઈએ.

પાત્રના પ્રકાર.

૧ ધર્મપાત્ર ૨ જોગપાત્ર ૩ વશપાત્ર ૪ શૈવાપાત્ર.
 ધર્મપાત્રના લેહ.

૧ ઉત્તમ ૨ મધ્યમ ૩ કનિષ્ઠ.

ઉત્તમ પાત્ર ડેને કહેવાય.

જે અત્યુચીત મૂળ શુદ્ધી યુક્ત હોય, જેણે
 વ્રત પાળેલાં હોય, સર્વ પરિમદ છોડેલા હોય,
 સર્વને સમા કરેલી હોય, શીત ધારણ કરેલું હોય,
 મિત્ર અને ગુરુને સત્કામ મનિલા હોય, ધ્યાન અંગી
 સ્વાધ્યાયમાં તાપર હોય-અને નિત્યમ ધારણ
 કરેલાં હોય તેજ મનુષ્ય ઉત્તમ પાત્ર ગણાય છે.

મધ્યમ પાત્રનાં લક્ષણ.

જેણે કલ્યાણ ધારણ કર્યું હોય. જે ગૃહ-
 સ્થનાં વેપાર જેવી આદિ કર્મોથી રહિત હોય,
 અને અશ્વ પરિમદી હોય. તે મધ્યમ પાત્ર
 કહેવાય છે.

કનિષ્ઠ પાત્ર ડેને કહેવાય !

જે સમ્બરહીન સંસારી આપકને આયોર
 અને શ્રદ્ધાથી યુક્ત હોય, અને ગર્વ
 રહિત હોય, તે દાન આપવાને કનિષ્ઠ પાત્ર
 કહેવાય છે.

જોગપાત્ર.

જો પુત્ર મહેન-આદિ સગાંસગાંથી જન
 જોગપાત્ર ગણાય છે.



સગોસંબંધી જન સંસારમાં એકમેકથી સંપમાં રહી મુખમાં વધારો કરનારાં હોય, તેમને શક્તિ મુખ્ય અસંકાર વત્સાદિતું ધર્મશુદ્ધિથી દાન કરવું તે જોગપાત્ર દાન કહેવાય છે.

યશપાત્ર.

પ્રાંદાણ-ભાટ-જોશક વર્તમાન સમયમાંના કેટલાક દ્રવ્ય પિપાસુ ભદ્રાચાર્યો વિગેરે યશ પાત્ર ગણાય છે. તેઓ દાન આપનારની કીર્તિના ગાન કરે છે.

એકમેકની હરિશાપમાં હવેની જ્યાં કીર્તિનાં માન જવાનાં હોય એવા આત્મામાં દાન કરેલું તે પશુ યશ દાનજ ગણાય છે.

કીર્તિ સિવાયના માણસનું જીવન વ્યર્થ છે ને મનુષ્ય માત્રને કીર્તિ મેળવવાનું દુઃખ થવા કરે છે. મન દુઃખી થવાથી આર્તધ્યાનનો ખંધ થાય છે. જેથી સદ્ગતી થઇ શકતી નથી, માટે હરી મનુષ્ય માત્રે કીર્તિ મેળવવા અવરુદ્ધ વશદાન કરવું જોઈએ ?

પુતતો ગાયકા.

માટે હરી માથ અને તેની સંતવિને શુદ્ધ બાવે ધાસ ચારો અવરુદ્ધ હરી નાંખવો જોઈએ ?

‘જ્યારે ભારત વર્ષમાં ગાયોનું સન્માન થશે.

જ્યારે ભારતમાતાના વતુએ હિંદ માતાને અસંક દિંતવંમાં કાવી શકશે ?’

દાનનું ફળ.

વર્તમાન કાળમાં અવહારિક રિતે દાનનું ફળ કિર્તિજ મનાય છે. પણ કાલોમાં તેના જેટલું જુદા ભેદ જતાવેલા છે. તે શ્રીમંત ભદ્રારુદ્ધ શ્રી ૧૦૮ શ્રી સોમશેનજી કૃત ત્રિચરુ ચારના આધારે આવી ટાંકી જતાવું છું.

—શાહીલ—

પાને વર્મનિરુદ્ધવનં તદિતરે શ્રેષ્ઠ દવારુપારકં ।

મિત્રે પ્રોતિવિચર્યનં રિપુનંવૈષણપહારસમ્ ॥

મૃત્યે મત્તિસારાવતં નરપતૌ સન્માનસમ્પાદકં ।

મટ્ટદૌતુ વશાકરં વિતરણં નક્કવ્યં હો નિગ્ગહમ્ ॥



કુદન.

કન્યા, હાથી, સુવર્ણ, ચેરો, ગાય, દાસી, વંશ, રથ, ભૂમિ, અધિપુ, ધર, એટલાં કનિષ્ઠ પ્રારના જાન કહેવાય છે. તે મનુષ્યોએ નહિ કરનાં જોઈએ. વ્યવહારમાં કનિષ્ઠ પાત્રને કનિષ્ઠદાન રેતી વખતે ચેરપાથોઅપનો સંપૂર્ણ પૃથે વિચાર કરવો જોઈએ.

કેટલાંક કુદાન તે સુદાનજ ગણાય છે ? જન-મંદિરની રચાવના કરતાં એટલે કે તૈયાર કરતાં કરોડો, જીવોની વિશા ધના સંભવ છે. પણ તે તૈયાર થએલા મંદિરમાં પ્રતિષ્ઠા કર્યા પછી તે મંદિરનો લાભ કેટલો જીવો, સ્વર્ગ ધર્મ સાધન કરશે ! તે વાત કલ્પના બંધાર છે, માટે તેમાં પ્રપ્રાપ્તિ, દ્રવ્ય સુદાનજ ગણાય છે. મંદિરની પ્રતિષ્ઠા કરાવવી, આવેલા ભોગોને દ્રવ્યદિથી સંતોષિત કરના, મંદિરની પૂજા નિત્ય નિર્વિરૂપ આલે માટે ભરતન-ગામ વિગેરે આપવાં, દુધથી અભિષેક કરવા-ગાય આપવી, વિગેરે કાર્યો. સુદાનમાં અમનાદ કરનાં અધીપતિશાય પથ તત્ત્વજાનોની દૃષ્ટિએ જોતાં પાપના અંશ કરતાં પુન્યનો અંશ વધારે પ્રમાણમાં બંધાતા સંભવ હોવાથી તે સુદાનજ ગણાય છે.

ધર્મ પર શ્રદ્ધા રાખનારા, પાપથી રહિત એવા શ્રાવકના પુત્રને તેના ધર્મ આલમ માટે તેના શરદ્ધાશ્રમને અગ્રતા માટે કન્યાદાન આપવું. કૌમર પતિ પતિનાં જોડકા સિવાય શરદ્ધા ધર્મ આલે નહિ, અને પાછળ ગતિ પથ થાય નહિ, માટેજ તેની પૂજા કરા તેને કન્યા સ્વર્ગ્ય કરવી જોઈ કરી આવી રીતે આગેલી કન્યા તે સુદાનજ ગણાય છે.

શ્રાવનાતર નિષેડકે દિગ્ધિ કર્મયોગતઃ ।
સુવર્ણદાનમાહવાત્ તસ્માદાચા હેતરે ॥

જિં ૦ અં ૬ શ્લોક ૧૨૨

કાંઈ શ્રાવક નિત્ય દ્વિયામાં ઉત્સુક હોય માત્ર પૂર્વ કન્યા ઉદયથી તે દરિદ્ર હોય તેમજ તેના વહેવાર બધું ધર્મ ગણે હોય તો તેને તેના વહેવાર આલમ માટે દ્રવ્યદાન કરવું જોઈએ, અને તે સુદાનજ ગણાય છે.

વહેવાર અપ્રત્યી કાંઈ ગરીબાપ્રત્યી કન્યા સિવાય રહી જતો હોય, કાંઈ ગરીબાપ્રત્યી માત્ર વહેવારથી અપ્રત્યી પડ્યો હોય તો તેને કન્યા આપી વહેવાર આલમો કરી આપવો તે અલોદાન ગણાય છે. વળી

નિરાવારાય નિરસ્વાય ધાવકાત્મા રસિણે ।
પૂનાદાનાદિકં કર્તુ મુદ્ધવાં પ્રકીર્તિતમ્ ॥

જિં ૦ અં ૬ શ્લોક ૧૨૦

કાંઈ શ્રાવકને શરવાને ધર્મ ન હોય, પૃથુ ધર્મ કાર્ય કરવામાં કાંઈક દરિદ્રી જોશ્યાવકાના આચાર માળતો હોય તો તેની પૂનાદિક દિયા સાતી રીતે આલમ માટે તેને મુદ્ધવાન કરવું તે પૃથુ યોગ્ય દાનજ ગણાય છે. વળી

વૃદ્ધ્યાં ગન્તુમશક્તાય પૂનામંત્ર વિવાયિને ।
તીર્થક્ષેત્રમુપાજાયે રથાથ દાનમુચ્યતે ॥

જિં ૦ અં ૬ શ્લોક ૧૨૧

જે પગે આલવાને અસમર્થ હોય પણ તીર્થ યાત્રા કરવી હોય, પૂજા સાંભળવી હોય તો તેને તે મામ માટે રથ, અથા વિગેરે દાન કરવું તે પૃથુ યોગ્ય દાનજ ગણાય છે. વળી-

દુષ્ટે વિકટે માંઝે જલાશ્રવિવ્રજિતે ।
પ્રપાસ્વાને પરં કુર્યાદ્ઘોષિતેન સુવારિણા ॥

જિં ૦ અં ૬ શ્લોક ૧૨૬

જે જગ્યાએ પાણી ન મળતું હોય એવાં કદિન અને જંગમના માર્ગ પર ગાયેલા પાણીની પરબ-જોડાણી તે પૃથુ યોગ્ય દાનજ ગણાય છે. વળી અલસત્રે વપાશક્તિ પ્રતિપ્રાપ્તિ નિવેશયેત ।

શીતકાલે મુપગ્રાય વચ્ચદાનં સ્તુત્ય મ્ ॥

જિં ૦ અં ૬ શ્લોક ૧૨૬

પ્રત્યેક મામમાં યોવાની શક્તિ પ્રમાણે અલસત્રે અગર સદામર ગોઠવનાં અને ઠંડીની સ્થામાં સુખાં જોઈ વચ્ચદાન કરવું તે પૃથુ સુદાનજ ગણાય છે. ઉપરનાં કેટલાંક દાનને નિત્ય દાનમાં ગણેલા છે છતાં તે દાનને ઉપરની રીત પ્રમાણે આપાય તો તે સંતોષે દાન અને ઉત્તમ દાનજ ગણાય છે.



देवपुत्रा गुरोपास्ति स्वाध्याय संयम स्तपः
दानं चेत्ति गृहस्थानां पट् कर्मणि दिनेदिने ॥

अथ पूजनं, उर भक्ति, स्वाध्याय, अनानिग्रह
(मतादि), तप (साध्यायक) अने दान-जे ७ इहो
इहो आचरते प्रतिदिन करवा जेष्ठये. जे भायुस
प्रतिदिन व्यापारिक प्रवर्तिमां भउये. २६
असंभय लभो मेजयवा जता इरीशना कर्त्तव्यमां
जेष्ठ पथ किया इरी नकतो नथो; ते मतुप्य नदि
पथ भउप्य पर्यायमां जनेतो पोरिजे छे.

प्रांता। दानं पथुं न पुरे पुरे करवा जेसी
जे तो पोर्यानां पोर्या जराध लय, जेथी संपाद-
ल जेठ्या आपदां पथुं अयथाय जेथी
आरक्षेथी जेष्ठ करवा पडे छे. प्ररु भारी
तपीयत सारी इरी तो इरी इरीथी दान आप-
माथी पथेय असमां जाय किया दानथी सुभा
थ्या छे तेनां रसभयां इरीतो रज्जु करीय.
समाय जेठे-तेपार छे पथुं तपीयत नाइ-
इरी होयने. लपि सपी सज्ज नदि होयथी
आ. साधेय सपी सउये नथी. पथ भारा आ
सुभायथी जेष्ठ प्रभाव प्रदेवे जराथी या
आइ सजाय पोर्याने रसभयां साउथ छे जेभ
आनी बरी, तोल लपेमा संगाररस, दारयरस,
पेशयरस उपरीत जुतां जुतां रसभय सायथी
सुभायरेखा इरीतोपरी जुरी नयय कयाय आन-
पनारा रज्जु करीय. दाने वती तो प्रजु आपने
समायमां प्रवृत्ति करे। जेभ प्रवृत्ति आ लप्याय
पथ करे छे. आ साति। साति। साति।
सी० इ० छे दानेयरीने। ५५५५.
जेष्ठ दुपणी उदय.

स्वाध्यायोपयोगी ग्रंथ ।

हरिवंशपुराण [जैन महाभारत] ४)
पांडवपुराण हिंदीभाषा १॥
बर्मा समाधान धार्मिक प्रश्नोत्तर २॥
जैनसिद्धांत संग्रह [१०१ ग्रंथों का संग्रह] २)

मैनेजर, दिगम्बर जैन पुस्तकालय,

पदापात्री-सूत्र ।

व्याख्यान-

वावू फतेहध्वन्दजी ओसवाल जैन,

सभापति-

स्वागत समिति भारत दि० जैन महा-
सभा २६वां अधिवेशन-लखनऊ ।

जैन धर्म प्रतिपालक और प्रचारक महाबारी-
तण, विद्वद्गुरुद्वय प्रतिष्ठित श्रेणीवागे, भ्रातृवार्ग
गया महिला मंडली ।

इस भारत वर्षीय दिगम्बर जैन महासभाकी
२६ वर्षकी अवस्थामें यह पहला अवसर है कि
इसने अवध देश और उसकी राज्यधानी लखन-
णपुरीमें पदार्पण किया है । अवध देशके महत्त्वसे
जैन शास्त्र परिपूर्ण हैं । मैं लुब्ध बुद्धि उस पवित्र
भूमिका गौरवमान किन शब्दोंमें कर सका हूं ।
महां व्रतगात्र चौबीस तीर्थंकरोंमेंसे सात तीर्थंकरोंने
ध्वनने पवित्र जन्मसे इस क्षेत्रको पावन किया है ।
श्री क्रोधमदेव प्रथम, क्षमितानाथ द्वितीय, श्री
अमिनन्दनाथ तृतीय, श्री सुभतिनाथ पंचम तथा
श्री अनन्तनाथ चौदम, इन पांच तीर्थंकरोंने श्री
अयोध्यानीमें, श्री संवत्तनाथ तीसरे तीर्थंकरने
महराजच निठेकी श्रवस्तो नगरी उर्क सहेड महेड
में तथा श्री धर्मनाथ पंद्रह तीर्थंकरने केनाबादके
निष्ठ श्री रत्नपुरीमें जन्म प्राप्त किया है । ये
साठों ही तीर्थंकर द्वात्रिंश कुटुंबी रीतिके अनुसार
न्याय मार्गसे प्रवृत्त पावन कर, अन्तमें संसार
अज्ञानसे वैराग्यवान हो परम निर्मल्य दिगम्बरी दोहा
धम्म का आरम्भपात्र रूपी तर्क द्वारा कर्मवन्ध
काट किञ्चन प्रवृत्त करके परम स्वाधीन परमा-
त्मा रूपे हैं, उन महात्मा आत्माओंकी स्तुतिसे यह



क्षेत्र जगमगा रहा है। श्री अपोज्याजीका क्षेत्र तो था। हुसैनानाद मतानिद, नमक आदि कई स्थान ऐसा पवित्र है कि इन क्षेत्रको हर एक उत्सर्पिणी ऐसे ही दर्शनीय हैं। यहाँके अजायबघरमें अवसर्पिणीके चौबीसों तीर्थकर रहते सदा ही अपने मथुराके कंकारी टोलेसे लई हुई २००० वर्षकी जन्मसे सकल करते हैं। अनेक अवसर्पिणी कालके प्राचीन मूर्तियोंके खंडित भाग हैं। यह नगर पीछे जब हुंदावसर्पिणी काल आता है तब ही कुछ चिकन, गंटे, किनारी, सलमे, सितार, मिट्टीके तीर्थकरोंका अल्पजन्म होता है जैसा कि वही मान हुंदावसर्पिणी कालमें हुआ।

यह अवध प्रांत इत्यादि कुछके प्रसिद्ध जैन सखीम राजाओंसे अति दीर्घकाल तक शासित रहा है। मारा चकार्ती मिनके नामसे यह भारतवर्ष प्रसिद्ध है इसी स्थानमें अपना मुख्य राज्यरत्न रखते थे। गुवंश तिलक श्रीरामचंद्रजी और उनकी जन्ममान्य पतिव्रता स्त्री सीताने इस भूमिको सम्पन्न किया था—रामके पाम स्नेही बंधु आठवें नारायण श्रीरक्षमजीके नामसे अवधकी राजधानी यह कश्मण्डी प्रसिद्ध है। आज भी इस सत्त्वज्ज्वल गोमती नदीके तट पर कश्मण्डीश आनी प्राचीनताको चमका रहा है।

आज स्वर्णनाथ पदार्पण इस समय गिरा गगरमें हुआ है यह नगर भारतवर्षमें बहुत प्रसिद्ध है। हर एक इपदेशी या विदेशी प्रवासी जब भारतवर्षमें आता है तब इस पवनज शहरका अवध निरीक्षण करता है। स्वर्णनाथी समयमें यहाँ बड़े २ समयमें यहाँ बहुतसे मिन मंदिर थे—तबके उदार भित्त नाथ-योग शासक हो गए हैं। उनमें फासे उनकी मूर्तियोंको चौके मंदिरजीमें विमान जवाय आसिफुद्दौला बहुत मजदूर हैं जिन्होंने ममान किया गया है—अब यहाँ १ मंदिर व १ दुर्गछके समय प्रवासी सहायता सुंवानेके छिटे बरमाध्य दे। चौके मंदिरका सारस्वती भग्ना गोमती तट पर आनी शिराकलासे बड़े २ दुर्गछ दर्शनीय है। मिनमें १०० व १०० वर्षके इतिवृत्तोंको बलि बरनाउठे इमानादेको बन तिलिप ग्रन्थ मौजूद हैं।

बाबा था। उन समय मतिवित्त पनेदा मनुष्य यद्यपि यह नगर दर्शनीय है, तथापि हय भी राजिको मिट्टी बहुत द्रव्य इस नगर के अतिमोकी संख्या यहाँ अब बहुत मोड़ी है। काके

प्रभावसे यहां अब न कोई विशेष घनाढ्य हैं और मैं निमंत्रण दिया गया—हर्ष है कि आप सज्जनों ने न कोई जैन विद्वान है । अग्रवाल व खंडेलवाल हमारा मान रखकर हमारी तुच्छ प्रार्थनाको स्वी-
कारिते करीब १०० घर दिग्जैनी हैं । ओस-कार किया और आन हमें यह सौभाग्य प्राप्त है
वाल आतिथ एक मेरा घर दिगंबरी है शेष ४० कि हम महात्मके समाप्तों व प्रतिनिधियों के
घर खेताम्बर हैं । जैनीयोंमें धर्म व जातिकी दंगन करके अपने जीवनको सफल मान रहे हैं ।
उत्तमिका विशेष ध्यान न होते हुए भी यहां एक आप सज्जनों ने जो अनेक दूरदर्शी स्थानों से
जैन पाठशाळा, एक जैन औषधालय, एक जैन यात्राके अनेक खेद सहनका यहां पवानेका
पत्राधिक लाजिरी चल रही है । जैन धर्म प्रवर्द्धिनी कष्ट उठाया है उसके लिये हम आपके हस्त-
समाचक्षुत क्योंसे स्थापित है जिसके स्मार्गवासी कुनन हैं । हम खलनक निवृत्ती अत्र संख्यक
मुयोग्य मंत्री छात्र दामोदरदासके उद्योगसे व माई आपका स्वागत, विनय, भक्ति व सेवाकारनेके
उत्तके पोछे उनसे उत्साही पुत्र बरातीलाके प्रय-
त्नसे आतसनाजी, कुटवाड़ी भट्टील गीत, कन्द-
मूल व विशुद्धा सेवन, वेदयन्त्र आदि कुरीतियां
बंद हैं । वक्षोपचीतका प्रचार हुआ है व जैन पद्ध-
विसे विवाहकी तरफ भी लोगोंका झुकाव हो चला
है । खंडेवाल भाइयों ने खण्डेवाल आतिथ समा-
भी स्थापित की है जिससे कुछ कुरीतियां दूर
गई हैं ।

यहांकी जैन आतिथी बहुत बड़ी है
तथा इस अवसर प्रांतके १००० भाई अविवाहे
और अश्वकारमें लिप्त हैं, अपनी उत्तमिकी और
बहुत कम उत्साही हैं—इन सबकी उत्तमिकी पर
आरुह होनेके लिये इस बातकी बहुत आवश्यकता
थी कि यहाँ एक दफे भी भारत वर्षीय दिगम्बर
जैन महात्माका शुभागमन हो । यद्यपि पहले एक
दफे उद्योग किया गया था परन्तु वह किसी भिन धर्मका प्रकार हो तथा अहिंसा तत्त्व
कारणवश सफल नहीं हुआ—योंकि यह अवसर प्रांत
नगरमें फैले ।

नेपाल व गोरखपुरके नीचे तक है और दिग्जैनी आप विद्वान, विचारवान, शिरोमणि पुरुषोंके
इस उषर छिटके हुए हैं उन सबको महात्मा सम्मुख हम कुछ अपने विचार दर्शाये यह बात
झापा धर्म स्मृति प्राप्त हो इसीसे गत वर्ष कांनपुर शोभासंग न होगी तथापि अब हम आपकी

सेवामें खड़े हैं तब दो चार शब्द कहना अनुचित भी जैन अध्यापकोंके अभावसे नहीं खुल सकती न होगा—

श्री अयोध्याजीका सुप्रबन्ध । लिखा धर्मका व अपने कर्तव्यका ज्ञानकार होना प्रथम में आपका ध्यान श्री अयोध्याजीके उचित हैं। इसकी पूर्ति जैन शिक्षकों द्वारा प्रत्येक गौरवपूर्ण क्षेत्रपर दिजाता हूँ-यद्यपि यह स्थान स्थानमें जैनशाळाओंके चलनेसे ही हो सकती है। तीर्थक्षेत्रोंकी सन मन्म नगरियोंसे शिरोमणि है महासमाके समासदोंको इस प्रश्न पर विचार करना तथापि वर्तमानमें यहांकी व्यवस्था बहुत शोचनीय चाहिये ।

है । यह क्षेत्र उत्तरीमें आये इस लिए हम भारत समाजमें ऐसे परोपकारी जनताके सेवक भी वर्षोंय दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटीको मिलने अस्तक बहुत ही कम क्या नहीं हैं जिनकी मान्यता पार-द्वार उत्त नहीं दिया है तथा सर्व जैन समाजको सियोंके दादाबाई नौराजी, महाराष्ट्रोंके माननीय भी जो इस क्षेत्रपर विष्कृष्ट ध्यान नहीं देते हैं, मोलले व लोकमान्य तिलक व पंजाबीयोंके लाला इस ओर विशेष प्रयत्नशील होनेके लिये आग्रह लानवताप व गुनरातियोंके महात्मा गांधीके तृप्य करते हैं—हमअवध वासी अकेले इस क्षेत्रकी यथो-हो—यही कारण है कि सावाण जनताका नहीं केत व्यवस्था नहीं कर सके जिसका हमको खेद कहीं नाम दिया जाता है तब भारतीय, सिख व दूदी ।। आदिके साथ जैनी गिने मोते हैं क्योंकि धर्मका-

समाजमें विद्या प्रचार ।

जैन समाजमें विद्याका प्रचार बहुत ही कम है। धर्माभिमानी विद्वानोंके लिये भी आवश्यक समताता जैन विद्वानोंकी कमी अभी भी बहुत है । पूर्वीय है कि एक जैन जातिय काकेन अवश्य होना और पश्चिमीय दिवाओंके मिश्रित शांताओंकी चाहिये । मैं महासमाके विचारके लिये यह विषय आवश्यकता है जो कि वर्तमानकी एक विषयकी छोड़ता हूँ । मेरा मान्यता है कि जैन समाजके भिन्न सत्त्ववादी आदर्शोंकी एकाग्र कर जैन श्री और प्रकृत विषयमत्त हों । इसकी कोई शास्त्रोंमें पहले हुए गुह दत्तोंको दुनियाके सामने योचना महासमा काममें लाने तो दिगम्बर जैन विद्वानकी रीतिसे दिसलाकर जैन धर्मके गौरवको समानकी उपतिष्ठ अवसर आपका है ।

प्रकृताकी जरूरत । समाजमें एकताका बना रहना विद्या प्रचारके है । जैन धर्मके उपदेशार्ता उग्रलिपोंमें मिलने आधीन है । ज्ञानके निर्मल न होनेसे ही बात समान हैं । तब कि मर्याद इतनी है कि प्रति बातमें कोय विषय मते हैं और समाजमें दो तड़ प्राप्त प्राप्तमें एक एक शांताता बला योग्य होन कर लेते हैं—आप १-में ऐसी तदे देखनेमें आती कारिद-विद्वान अध्यापकोंकी कमीसे जैन पाठशा हैं जिससे धर्मके कामोंमें बहुत बाधाएं बढ़ती ज्ञानोंकी संस्था बहुत मोड़ी है । ज्ञानका है । दुनियामें सब जीव अलग २ रहे तब तक



विचार तब विषयोंमें एतसे हो जावे ऐसा होना हम जब दोनों पूनक हैं तब परस्पर एक दूसरेकी कठिन है—कुछ मतभेद हो सकता है—ऐसा होने मक्तिमें विघ्न डेरना व हम महे तुम छोटेके पर हमें परस्पर धनैश्य न कर लेना चाहिए किन्तु प्रश्नको जाना केशव रागद्वेष बढ़ाकर कर्म बंध मिलकर धर्म व जातिकी उत्पत्तिकी तरफ उद्यम करना है । हम सर्व जैन समाजके मुखिया भङ्ग करना चाहिये । जैनजातिमें फूट और द्वेष बहुत घोंसे कहेंगे कि वे हम वर्तमान युगमें जब दीखानेमें आता है । इसमें कारण सहनशीलताका सुसलमान हिन्दू भी मित्र गये हैं, जब उनमें भी व योग्य मन्त्र वर्तिका न होना है । एकता बिना गोरक्षके सम्बन्धमें एकता हो गई है तब क्या वे जैसे तिनकोंके बने रहसं दूट जाते हैं, वैसे ही वीतराग अरहंत भगवानके उपासक होकर परस्पर समाजके लोग अनैक्यतासे दूट दूट का छिन मिश्र एकता नहीं कर सकते ? हम आशा करते हैं, कि हो जाते हैं तब समाज अति निर्वह हो जाती है महा मा इस प्रश्न पर भी ध्यान देगी ।

और तब उससे विरोधी समाजोंके अकण्ठोंसे कुरीति और व्यर्थव्ययका निषेध । कृपलना पटता है तथा एक दिन वह समाज मृ-युकी शय्यापर सो जाती है इसलिए हमारी मन्त्र भावना है कि जैन समाज एकताके सुत्रमें धँबी रहे इसका योग्य उपाय अवश्य यह महासभा विचार करेगी । वास्तवमें ज्ञानक्री निर्मलताके बिना अपना मल या गुण मलुपको नहीं सुजता है । यही कारण है जो बहुत आन्दोलन होने पर भी बाल पद अनमेष्ठ विवाह कायाविक्रय येश्यानृत्य विवाहादिकोंमें बहु खर्चकी प्रथाएं अभी तक बंद नहीं हुई हैं । इन कुरीतियों और व्यर्थव्ययोंके कारण समाज दिन पर दिन संकुचमें, चउ वीर्यमें, धनमें व वर्गावरणमें गिरती हुई चली जाती है । यह देखकर जो जैन धर्मका प्रेमी होगा उसके दिलको पार कष्ट होगा । किसीको मरते हुए देखना ऐसा शोकदायक है वैसे जैन समाजकी मरणके सम्मुख देखना शोकदायक है । यदि मेरा अनुमान ठीक है तो महासभाका कर्तव्य है कि हम जैन समाजके लिए ऐसे प्रौढ उपाय दूट निकालें जिससे इसकी दशा जो आज मृ-युकी ओर हो रही है वह बन्द होकर सजीवित रहनेकी अवस्थाकी तरफ होती चली जावे ।

जैसे दिगम्बर जैन समाजमें एकताभी जरूरत है वैसे दिगम्बर श्वेताम्बर तब जैन समाजमें एकताकी आवश्यकता है—हमारी आम्नायोंमें भेद होनेपर भी हम परस्पर एक दिल होकर रहना चाहिये तब ही जैन समाज अन्य समाजोंके सामने अन्य लोगोंके द्वारा पहुँचाए हुए धर्म व ज्ञान पर ध्यानगणको निशरण कर सकती है और दुनियामें खरानी सत्ता कायम रख सकती है । जिन तीर्थों पर हमारे तीर्थक्षरोंने मोक्ष प्राप्त की है व जिन क्षेत्रको दिगम्बर श्वेताम्बर दोनों पुजते हैं उनके सम्बन्धमें परस्पर प्रेम न रहना व परस्पर युद्ध कर घन सोना व बट सहना देखकर हमें बड़ा दुःख होता है । वे क्षेत्र उन्हीं महात्माओंके स्थाविक हैं जिन्होंने उनको प्राप्त किया था व्यापार और धनमें शिरोमणि थी । परन्तु अब

आर्थिक उन्नति ।

कोई समय ऐसा था कि भारतमें जैन जाति ही व्यापार और धनमें शिरोमणि थी । परन्तु अब



इसकी बहुत ही नदशा हो गई है । कारण यही है न स्वीकार कर नो जैनियों के साथ उपयोग व्यवहार कि वाणिज्य कला को हम खो बैठे । पहले हम किया है उसका घोर प्रतिवाद करके उस अल्प अपने देश में पैदा होनेवाली रुई, सन आदिसे लेखको निम्न तरह हो बटाना चाहिये और स्वयं भारतीय शिल्पकारोंसे ब्यादि बनवाकर जैनियों का एक दायमाग मान्य करना चाहिये । जिसे स्वदेश और परदेश में बिक्री करते हैं इसीको जैनियों के घनका विभाग उनके दायमाग के प्रयोजन ही वाणिज्य कर्म कहते हैं—आज हम परदेशी अनुत्तर हो । ऐसा महासभा को करना उचित है ।

महासभा को व्यवहार कर करके अधिक अवनतिके घोर गर्भमें पहुंच गए । हमारे श्री सोनागिरजी, जेवस्वामी, चौरासी, मधुग, श्री गिरनारजी, श्री केशरियाजी पुटेय, समपुरा दिहरी, जैपुर व सांगाने के विशाल दि० जैन मंदिर व अति प्राचीन पुरोरा और धाराशिवजी प्रसिद्ध गुफाओं के दि० जैन मंदिर तथा आयु के जैन मंदिर इस बातके प्रमाण है कि अनेक कोटघर के घनी जैन भोग हैं । हम जैनियों को चाहिए कि अपने देश के प्राचीन वाणिज्यको उत्तेजित करें—स्वदेशमें बर्तने योग्य माठ बनवायें और स्वदेशी वस्त्रादि वस्तुओं का ही व्यवहार करें । स्वदेशी कलाकौशलकी वृद्धि करें—और ऐसा उद्योग करें कि यहां के निवासी स्वदेशी हाथों के बन ब्यांसे ही अपने तनको दें । इससे हन कलों के पतनने में नो पशु-कोंड़ी बरकी आदि काममें आती हैं उस हिस्से में बन सकेगे । हम वाणिज्य वृद्धि वा हन महा-सभा का ध्यान दिखते हैं ।

टा० गौड़का अस्तव्य लेख ।

अब हम आप सज्जनों को टा० गौड़के कथाय लेखन प्रतिभोद करने की ताकत सुनाते हैं । की तरहसे आपका यथोचित स्वागत व सम्मान के साथ सद्गुरु अभूषित रहे व गोपी पूर्ण वर मन्त्रों के कारण सशरीर पापना जाता और पवित्रीय विज्ञानों की सम्मतिवा कृत भी माननीय मार्ग जन्मनरायजी पारिष्टर विचार न कर, जैनियों को स्वतन्त्र प्राचीन परंपरा की कोई निवासी के छिंदे निवृत्त भय जैन दासी न छिप कर व उनके भी दादमादके प्रत्य हैं ऐसा हमें प्रसिद्ध है व जो जैन धर्म की समबनारा

महासभा का योग्य संगठन ।

हो यह भी कहना चाहिये कि जो समास्य और प्रतिनिधिगण यहां उपस्थित हैं उनको इस महासभा को वास्तविक मात्रतर्फीय दि० जैन महासभा बनाना चाहिये । यह सर्व भारत के दि० जैन पाँचों की श्रद्धास्पद और माननीय हो जावे, सर्व जैन समास्य प्रांतिक समास्य स्थानीय समास्य इसके संगठनमें हो जावे, इसका कार्यलय वास्तविक कार्यलय हो, उससे अहर्निश प्रयत्न जारी रहे, इसके समास्य और प्रयत्न बनाने साधन काम करते रहे इसकी प्रवृत्त कारिणी समा वर्षमें कई दफे बैठकर कार्य संगठन पर विचार करती रहे, इसकी निदमरक संशोधित हो इसादि बातों का ऐसा योग्य प्रयत्न किया जाय जिससे यह समा उत्पतिक मार्ग पर सम गमन करती रहे ।

जैने कुछ अपने विचार आप सज्जनों की सेवक आभार पाकर रख दिए हैं—इनमें से जो योग्य मान्य हों उन पर कार्य ध्यान देवेगे ऐसी आशा है

मैं अवसर मी व समास्य लखनऊ वासी मादमों

समीप उपयोग कर रहे हैं प्रार्थना करता हूँ कि वे समापतिके पदको सुशोभित करें। आपको यहाँकी स्थापित समाने तथा महासभाकी प्रबन्धकारिणी समाने अन्य सर्वाओं व प्रतिष्ठित महोदयोंकी सम्पत्तिके अनुसार समापति निर्वाचन किया है। आपके शुभ आसन ग्रहणसे हम सर्वोत्तम चित्त प्रकटित और आनन्दित होगा।

श्री छाया प्यारदात्री जोहरी नसीराबाद

” ” लखमीचन्दनी बपरा

प्रस्तावक-समापति ।

सर्व सम्पत्तिसे प्राप्त ।

प्रस्ताव नं० ४-विषय निर्धारिणी सभा द्वारा

निश्चित प्रस्तावोंको स्वीकार करना व करना व

किसी प्रकारके परिवर्तन करनेका अधिकार साधारण

सभाको होगा ।

प्रस्तावक-भा० अभितपसादनी ।

समर्थक-पं० लखनपदनी कानपुर ।

बहु सम्पत्तिसे प्राप्त ।

प्रस्ताव नं० ५-वर्तमान समर्थन वि० जैन

आगमालुसार जैन कायदे प्रवेक्षित होनेकी वही

आवश्यक है इसलिये जैन कानूनको तैयार करने

और सरकारसे प्राप्त करानेके लिये यह मा० दि०

जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि नीचे लिखे

महाशायोंकी सवनेसठ बमेटी चुनी जावे ।

कमेटीकी प्रेरणा की जावे कि मितनी भी अच्छी

हो सके जैन कानून जिसमें धर्मांतर और स्नान-

कनासी संप्रदाय संबंधी प्रमाण भी सम्मिलित हो,

बाबू चम्पतरायनी बे० हरदोई

पं० वामुदेव शास्त्री बाराभती

पं० बंशीधरनी शास्त्री सोलापुर

पं० बलादादाजी कासरीबाळ बम्बई

मा० जुमैदराबाळ बेरीस्टर सहारनपुर, मंत्री

मा० लखनपदनी बकील मेरठ

मा० अभितपसादनी बकील टखनी

लखनऊ महासभाके प्रस्ताव ।

लखनऊके भारत दि० जैन महासभाके २६वें

विधिवेशनमें नीचे लिखे प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं-

प्रस्ताव १-मा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव

करती है कि वीर सं० २४४७ का रिपोर्ट और

हेताव जो अभी सुनाया गया है प्राप्तकिया जाय ।

प्र० समापति । सर्वसम्पत्तिसे प्राप्त ।

प्रस्ताव नं० २ मा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव

करती है कि लखनऊ अधिवेशनके लिये ११

महाशायोंकी सवनेसठ बमेटी चुनी जावे ।

प्र० समापति ।

प्रस्ताव नं० ३-श्री मातवर्षीय दि० जैन तैयार करके

महासभा नीचे लिखे महाशायोंकी असापेक्ष रिपोर्ट महासभाको भेजती रहे ।

संग्रह पर शोक प्रगट करती हुई उनके छद्मियोंके

प्रति संवेदना प्रगट करती है । इस प्रस्तावकी जगहमार देवीदास चपर वकील अनीठा

नगर इनके छद्मियोंको भेती जावे ।

श्रीमान् ला० सोहनदादाजी अवाला

” ” चमंड छाठनी मुनपफानगर

” ” होराछाठनी सार्क पठा

” ” रामदादाजी कोदरपल

” ” मुदरदास पठा



ए० पी० चौगुले वकील बेलगाम
 बा० प्यारेलाळजी वकील देहली
 पं० नरसिंहदासजी चावली
 पं० नानुलाळजी मयपुर
 पं० माणकचन्दजी न्यायाचार्य मोरेना
 पं० दौबळी जिनदास शास्त्री अरणचेशमोदा
 पं० प्यारेलाळजी अलीगढ़
 पं० मेवारानजी धुर्गा
 पं० पनाळाळ न्यायदिशकर फिरेनाबाद
 छा० जम्भूपसादजी सहारनपुर
 ज्योतिपरान पं० निपाठाळजी फर्रुखनगर
 बा० प्यारेलाळ बेरिस्टर मेरठ
 पं० काळारामजी शास्त्री देहली, सहायक मंत्री
 छा० नानुवळजी देहली, सहायक मंत्री
 नोट-मेमियॉको अधिकार है कि वे आवश्यक
 अनुसार समासद बना सकते हैं ।

प्रस्तावक-छा० जम्भूपसादजी रईस, सहारनपुर
 समर्थक- " हुड्डासरायजी रईस "
 अनुमोदक- " जगजीपलजी दिछी "
 सर्वात्मतसे पास ।
 प्रस्ताव नं० ७-ईदर नागौर आदिके सरस्वती
 ग्रंथमंडारोंमें बड़े २ प्राचीन दि० जैन पुन्य ग्रंथ
 बंद हैं, जिनके स्वाध्याय दर्शनसे हमें भविष्य हो
 रहे हैं । और उनकी अवस्था बहुत जीर्ण हो रही
 है अतएव महात्मा प्रस्ताव करती है कि उन ग्रंथों
 की रक्षा करनेके लिये उचित प्रयत्न किया जावे,
 और उन ग्रंथोंका जीर्णोद्धार किया जावे । इस
 कार्यके संपादनके लिये छा० जम्भूपसादजी सा० और
 सा० देवीसहायजी सा० नियत किये जाते हैं ।
 प्रस्तावक-जी० मुसद्दीलाळजी अमृतसर ।
 समर्थक-छा० जगजीपलजी देहली ।
 सर्व सम्मतितसे पास ।

प्रस्तावक-पं० गौरीलाळजी शांखी नोट-हर्ष है कि आपने (छा० जम्भूपसादजी
 सा०-जैन धर्मभू० में शीतलप्रसादजी सा० व छा० देवीसहायजी सा० फीरोजपुर) ने इस
 सर्व सम्मतितसे पास । कार्यको करना सहर्ष स्वीकार भी कर लिया है ।

प्रस्ताव नं० ८-मा० दि० जैन महात्मा प्रस्ताव नं० ८-किसीर प्रांतके जैनी व्यास-
 प्रस्ताव करती है कि मध्यमा सुदी १४ (अर्धरात्रिदिने मृत्युसे अपने संभाव्यकृत विद्यादि संस्कार
 चतुर्दशी) का दिन दिगम्बर जैनियोंका सातवर्षीया सप्ते अतः उस प्रांतके जैनियोंमें विहा-
 रपोहार (पर्व) है । इस दिन सारे दिगम्बर जैनी हादि संस्कार जैन पद्धति अनुसार कर्मानके लिये
 मन और उत्साह-युक्त हैं । और अपने कारबारको उस प्रांतके जैनियोंको मेला की भांवे ।
 छोड़कर धर्मग्राममें रहते हैं । यद्यपि निमी १ प्रस्तावक-पं० काळारामजी शास्त्री
 प्रांतमें इस दिनकी छुट्टी रहती है परंतु सा समर्थक-पं० माणिकचन्दजी शास्त्री मेरठ
 बगह नहीं होती । अतएव महात्मा मातत गर्व- १ विरोध मतसे पास ।
 मेटका पगान १५ दिनकी पवित्र छुट्टीके करनेके प्रस्ताव नं० ९-मा० दि० जैन महात्मा
 लिये आविर्भूत करती है । इसके लिये गर्वसे प्रस्ताव जाती है कि निम्नलिखित नियमावली
 वर व्यवहार किया जावे । पास की जावे । मा०-ममावति ।

- प्रस्ताव नं० १०-यह मा० दि० जैन महा- १७ का० जोरावरमल्लजी हापरस
समा संकट निवारण ट्रस्ट फंडके मंत्री महोदयसे मंत्री महाविद्यालय
मेरणा करती है कि वे २५०) जैन छात्रानेके १८ पं० कर्मैयाकावजी वैद्य कानपुर
स्वर्चके लिये जैनमित्र मंडल देहलीको दे देवे । मंत्री पुरातत्व विभाग
प्रस्तावक-संभाषति १९ का० रामेश्वरपणी रस रानपुर
प्रस्ताव नं० ११-मा० दि० जैन महासभा मंत्री शाखा समा विभाग
प्रस्ताव करती है कि महासभा प्रबंधकारिणीके ११ २० पं० प्यारेलाकजी अकीण्ड मंत्री स्वाध्यायवि०
समासद व कार्यकर्त्री नीचे लिखे अनुसार नियत ११ का० हुलासरायजी रईस सहारनपुर
किये जाये- मंत्री सरस्वती मेडार
१ नावू चंपतरायजी बेरिह्टर हर्दोई संभाषति २९ सेठ चुनीलाह हेमचंदजी
२ रा० बा० सर सेठ हुकमचंदजी इंदौर ३५ महामंत्री, तीर्थक्षेत्र समिती
३ दा० रा० बा० सेठ कल्याणपलजी ४१ ५० दुर्गापसादजी कानपुर मंत्री संयुक्त प्रांत
४ जैनमू० श्रीमंत शेट मोहनकांछनी खुई २४ का० गोविंदपसादजी गोरेनाले जलनौ
५ का० जन्मपसादजी सहारनपुर मंत्री खजवा प्र० समा
६ रा० बा० सेठ टीकमचंदजी अनमेर २५ का० साधिकाचंदजी पैनावा मंत्री केम्पई प्रान्त
७ जैनसाहिबपणी का० यगनागदासजी बड़नगर २६ गुजरातीकापजी अवाका पैनावाप्रान्त
८ पं० अमोलकचंदजी इंदौर स० महामंत्री २७ मासूर राजकुलजी काठा मप्रप्र
९ पं० छाछारामजी दा रही देहली सहायक २८ सेठ नवलपार वसीदास थर वकील अकोटा
महामंत्री व सहायक सहायक जैन गजद मंत्री, मध्य ब्राह्म प्रान्त
१० नावू निर्मलकुमारजी रईस आरा कोषाध्यक्ष २९ सेठ वधैरमैथानी मैसूर मंत्री मैसूर प्रांत
११ सेठ गोबाली रूपचंद बड़नगर कोषाध्यक्ष बालकंड ३० सेठ सुंदरकाठजी मंत्री हाडौती प्रांत
१२ पं० सुभाषदासजी सरनौ संपादक जैनगजद ३१-३२ तक ३१ समासद इनमें जैनवर्म मू०
१३ पं० गोरीकाठजी दिल्ली मंत्री विद्या विभाग म० शीतलपसादजी, सेठ हीराचंद हेमचंद सोका
(परीक्षाध्य) पुर, सेठ मूलचंद कितनदास कापडिया आदिके
१४ म० ज्ञाननंदजी मंत्री नीरदया विभाग नाम हैं ।
१५ का० गुजरातीकाजी हापरस-मंत्री-उपदेशक साता प्रस्तावक-मा० निर्मलकुमारजी आरा
१६ नावू मिश्रीकाठजी सोगानी हापरस सपर्यक-का० जगदीपलजी दिहडी
१७ मंत्री उपदेशक वि० १८ रा० बा० नावू द्वारकापसादजी

प्रस्ताव नं० १२-जैनियोंके आचरण-दि० जैन अंतर्गत तीर्थंकरोंकी नियत जन्म भूमि है तथापि वर्मानुसार ही होने चाहिये और उसीकी हद्दताके इस क्षेत्रकी व्यवस्था बहुत शोचनीय है अतएव छिये दिगम्बर जैन धर्ममें वर्ग व्यवस्था स्पष्ट महासभा तीर्थक्षेत्र व मेटीका व अवध प्रांतिक समा-ज-संस्था विषयका पूर्ण रीतिते विचार रक्खा है। का ध्यान आवर्धित करती है कि इस क्षेत्रकी स्पष्ट अस्पष्टके भेदको मिटाना जैन धर्मसे सर्वमा शीघ्र ही योग्य व्यवस्था कराई जावे।
विरुद्ध है।

अहमदाबादकी कांग्रेसमें जो स्वयंसेवकोंके प्रति-
ज्ञापनमें आठ नियम नियत हुए हैं, उसमें ५ प्रस्ताव १४-वित्तवामें एक प्राचीन जैन मंदिर
वा निःसम है। है जिसमें विशाल मनोहारी प्रतिमाएं मौजूद

यदि मैं जैनी हू तो मैं मानता हूँ कि छत्ताछ्त्रकी ई उनकी पूजा प्रस्तावका कुछ प्रबंध न देखा
बुराईको दूर करना आवश्यक और न्याय युक्त है श्री मा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है
और मन मन्त्र अक्षर व्याख्या में अक्षर आसियोंके कि दि० जैन अवध प्रांतिक समा शीघ्र इसकी
साथ मंदिर जुड़ना तथा उनकी सेवा करनेका मुख्यव्यवस्था करें।
प्रदान करेगा।

स्वयं सेवकीता यह नियम जातीयता
तथा धार्मिक शिक्षाके विषयके विरुद्ध
है इस छिये यह मा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव प्रस्ताव नं० १५-पा० दि० जैन महासभा
करती है कि कांग्रेसके स्वयंसेवकोंके आठ नियम प्रस्ताव करती है कि मा० दि० जैन महासभा
मोमेंसे १५ नियम जैन धर्मके विरुद्ध है इसछिये भोज्य कंबके द्वंद्वकी रक्षा और मुख्यव्यवस्थाके छिये
कोई भी जैनी स्वयं सेवक इस विषय पर मंजूरी मण्ड दूट व मेटी नीचे छिते महासभाकी कार्य
देवे क्योंकि इस नियमको मंजूर करना धर्मको मंजूर की जावे।

देना है और कांग्रेसमें भी अनुरोध करती है कि
कांग्रेसवा उद्देश धार्मिक विषयका नहीं है। ऐसे
निषेधोंसे समाके धार्मिक विषय बाधे जाते हैं और
अनेकताका नीम उग जाता है इस छिये ९ वें
नियमको समित साँपा निकाल दें।

प्रस्तावक-१० बलाचालमी बंई। प्र० समाप्ति।
समर्थक-१० श्रीमच्छमदादमी। प्र० नं० १५-यह मा० दि० जैन
प्रस्ताव ११-भी अयोध्याकी इस कारण भी महाराजा सोरको पन्थाद देनी है जो
अवध प्रभृति ९ तीर्थंकरोंकी जन्म भूमिके सिवाय हज़रतीमें जन्मे राजवंश दशरथ पर होनेवाले

प्रस्तावक-३० शीतलधरसादमी

समर्थक-४० फतेहचंदमी हसनो

प्रस्ताव १४-वित्तवामें एक प्राचीन जैन मंदिर

है जिसमें विशाल मनोहारी प्रतिमाएं मौजूद

यदि मैं जैनी हू तो मैं मानता हूँ कि छत्ताछ्त्रकी ई उनकी पूजा प्रस्तावका कुछ प्रबंध न देखा

बुराईको दूर करना आवश्यक और न्याय युक्त है श्री मा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है

और मन मन्त्र अक्षर व्याख्या में अक्षर आसियोंके कि दि० जैन अवध प्रांतिक समा शीघ्र इसकी

साथ मंदिर जुड़ना तथा उनकी सेवा करनेका मुख्यव्यवस्था करें।

प्रदान करेगा।

प्रस्तावक-हकीम करुणानारायणो

समर्थक-४० शिशिरचंदमी हसनो

प्रस्ताव नं० १५-पा० दि० जैन महासभा

करती है कि कांग्रेसके स्वयंसेवकोंके आठ नियम प्रस्ताव करती है कि मा० दि० जैन महासभा

मोमेंसे १५ नियम जैन धर्मके विरुद्ध है इसछिये भोज्य कंबके द्वंद्वकी रक्षा और मुख्यव्यवस्थाके छिये

कोई भी जैनी स्वयं सेवक इस विषय पर मंजूरी मण्ड दूट व मेटी नीचे छिते महासभाकी कार्य

देवे क्योंकि इस नियमको मंजूर करना धर्मको मंजूर की जावे।

देना है और कांग्रेसमें भी अनुरोध करती है कि

कांग्रेसवा उद्देश धार्मिक विषयका नहीं है। ऐसे

निषेधोंसे समाके धार्मिक विषय बाधे जाते हैं और

अनेकताका नीम उग जाता है इस छिये ९ वें

नियमको समित साँपा निकाल दें।

प्रस्तावक-१० बलाचालमी बंई। प्र० समाप्ति।

समर्थक-१० श्रीमच्छमदादमी। प्र० नं० १५-यह मा० दि० जैन

प्रस्ताव ११-भी अयोध्याकी इस कारण भी महाराजा सोरको पन्थाद देनी है जो

अवध प्रभृति ९ तीर्थंकरोंकी जन्म भूमिके सिवाय हज़रतीमें जन्मे राजवंश दशरथ पर होनेवाले

आदि पशुओंके बंधको सदाके लिये बंद कर दिया मेजना चाहिये । यह मा० दि० जैन महासभा है, तथा जिन रमणियोंमें अभी यह प्रथा जारी उसको पुनः श्रुत करती हुई प्रत्येक पंचायतसे है-उससे प्रार्थना करती है कि वे भी इस अवधि अखरोब करती है कि इस प्रस्तावकी अवश्य निर्देश प्रथाको धार्मिक उत्सवमें बंद करें तथा इस पारवरी की जावे ।

प्रस्तावकी नकल उक्त महाराज सीकर व उन राजाओंकी सेवामें भेजी जाये जहां वह प्रथा बंद नहीं हुई है । प्र० सेठ हरनारायणजी स० ला० मिश्रीलालजी सोगानी पं० मखनलालजी देहली

प्रस्तावक-ब्र० शीतलप्रसादजी समर्थक-मिश्रीलालजी सोगानी मा० दीपचंदजी परवार प्रस्ताव २०-भारतवर्षकी आर्थिक उन्नतिके हेतु यह मा० दि० जैन महासभा अपने कानपुर अधिवेशनके स्वदेशी वस्तु व्यवहारके प्रस्ताव नं०

प्रस्ताव १७-भारतवर्षीय दि० जैन महासभा २ को पुनः श्रुत करती हुई संपूर्ण जैन संप्रदायसे तीर्थक्षेत्र कमेट्रीकी अधिकार देती है कि वह श्रीमान् अखरोब करती है कि स्वदेशी वस्त्र और स्वदेशी सेठ परमेदीदासजीकी ताक जो एक बड़ी रकम वस्तुओंको ही सर्वदा व्यवहारमें लाया जावे ।

तीर्थक्षेत्र कमेट्रीकी वकाया सेनी निरंकुश रही है प्रस्तावक-वैद्य कन्हैयालालजी कानपुर उसको और न चामाता कारवाई करके वस्तु की समर्थक-सेठ मुळचंद किसनदास काण्डिया मुरात जावे । प्र० शीतलप्रसादजी ।

प्रस्तावक-बाबू हरनारायणजी, कानपुर । समर्थक-का० हुजरासायजी, सहायपुर । लखनऊमें महिला परिषद् ।

प्रस्ताव १८-काशीपुरका श्री मंदिरनी बहुत भारत दि० जैन महिला परिषद्का ११ वां शीर्ष हो रहा है उसमें पुनः प्रस्तावनका कुछ प्रवेश धार्मिक अधिवेशन लखनऊमें जैन बागमें मांघ सुदी नहीं है इन पर खेद प्रकट करती हुई यह मा० ७-८ को चट्टे सवाहोके साथ श्रीमती ललिताबाई दि० जैन महासभा तीर्थक्षेत्र कमेट्रीको प्रेरणा करती (नम्र) के समापनतिथिमें उस्ताद पूर्वक हुआ या ।

है कि इसकी शीघ्र सुगमवस्था कराई जावे । १०० खिपे उपस्थित होती थीं । पं० चंदाबाई, प्र० का० मुलाकीदासजी लखनौ । पं० मगनचंद, प्रभापतीबाई आदि सात पवारें य स० पं० मखनलालजी देहली । और ९००) का चंदा भी हुआ था तथा खिपोंका

प्रस्ताव १९-मा० दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेट्री एक मासिक एक प्रकट करता-निश्चित हुआ या टीके उक्त प्रस्ताव नं० २ को जो बीर सं और नचे लिखे प्रस्ताव प्राप्त हुये थे । २३४४में हुआ है कि प्रायेक स्थानकी पंचायत-प्रस्ताव १-चूंकि जैन श्री समानमें शिक्षा और

तक अपने यहांसे प्रतिगृह प्रीष्ठे १) तीर्थ रक्षा-विद्योकी सत्यन्त कमी है अतएव यह मा० १० कृष्णके लिये समुक्त करके प्रति वर्ष तीर्थक्षेत्र कमेट्रीमें दि० जैन महिला परिषद् प्रस्ताव करती है कि

जैन जनितानुक्त पर्येक तगरमें एक १ कन्या पाठ-ग्रह छोटी २ श्रीशिक्षा सम्बन्धी पुस्तकें उपाकर
शाळा अवश्य खोली जाय। लागतके मूल पर सर्व साधारणमें प्रकाशित करें,
और प्रत्येक प्रान्तमें एक ३ आश्रय स्थापित और श्रीशिक्षाका प्रचार करें। इस विभागके लिए
किए जाय निम्नमें पढ़कर बहिनें योग्य गृहचारिणी श्रीमती प्रभावतीबाई मन्त्रिणी नियत की जाय
एवं योग्य अध्यापिकाएं बन सकें।

प्र० सौ० सरलादेवी छत्रनड । योग्य रीतिसे संचालन काके अधिवेशन पर रिपोर्ट

स० कस्तूरीबाई आरा ।

मुनावे और हिमाच साफ करें।

प्रस्ताव २-मा० दि० जैन म० परिषद

प्र०-कस्तूरीबाई सोलापुर ।

प्रस्ताव करती है कि एक उपदेशक विभाग

सं०-पं० मंगनबाई चम्पई ।

स्थापित किया जाय जिससे दो तीन उपदेशिकाएं

सं०-प्रभावतीबाई चम्पई ।

घूम २ कर देश १ की बहिनोंको धार्मिक एवं

लौकिक उपदेश दें, उपदेशिकाओंको परिषदकी भेनसमाप्तकी श्रियोंमें अपनी धार्मिक और लौकिक
ओरसे ही बैठन दिया जाय तथा ये लोग नो उन्नतिकी ओर उत्तेजित करनेके लिये एक मासिक

चन्दा करें वह परिषद फंडमें ही जमा सर्वप्रथम निकाश जाय व सम्पादिकाका काम श्रीमती

भाय । इस एकत्रित हुए दायको परिषदके पंडिता चन्द्राबाई और उपसम्पादिकाका काम

धार्मिक अधिवेशनमें विभाग काके अन्याय तथा श्रीमती छछिताबाईजी करें और प्रकाशक सेठ

श्रीमं दे सकती है। मूठपन्द किसनदास कारदिया-छुरत रहें। यह पत्र

प्र०-पं० पं० देवाबाई आरा, सं० राधुबाई सोलापुर महिषा परिषदकी समाप्तोंको १॥ तथा ग्राहकोंको

प्रस्ताव १-मा० दि० जैन म० परिषद प्रस्ताव १) धार्मिक मूर्ख पर दिया जाय।

करती है और संयुक्त प्रार्थना करती है कि सब प्र० सरलादेवी छत्रनड सं० रामदेवीबाई देहली

बहिनें स्वदेशी वस्त्रोंको काममें लायें। एवं विदेशी

वस्त्रोंका साथ हृदयसे त्याग करें। गाथा और

परस्पर सुनना जना हुआ कदा पढ़ने, जिससे

देशका चन बने और अपने नेताओंकी आज्ञाका

पालन हो। प्र०-सौ० विनयदेवी बाराबंकी ।

प्र०-कस्तूरीबाई आरा । प्रस्ताव ४-मा० दि० जैन म० परिषद प्रस्ताव करती है और साधारण प्रार्थना करती है कि एक

विद्वत्पं पंडितमंवर जयचंदजी छत्र-

सर्वार्थसिद्धि-भाषा ।

इय मंथरी हमें कुछ इनीगिनी प्रतिपाद एक

भाईके पाससे मिली हैं। मंथ-शास्त्रका है।

पृष्ठ संख्या करीब ८२५ मुख्य सिर्फ ५)

शीम मंगा छीमिये नहीं तो फिर ५०) खर्च

करते भी १ प्रति संपादक न होगी।

संतेजर, दिगंबर जैन पुस्तकालय,

बदायणी-छुरत ।

जातीय गान ।

(महात्मा के २६ वें खण्ड के अधिवेश में भवित वचन १)

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

सप्त सप्त संनन नाथ निरंजन, संत साधु सुर नर मन रंजन ।

कय कष्ट कारक के गंजन, अमर अमर अखिलेश ॥ १ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

अष्ट अवष्ट हो पूरण दाता, साता दाता सुखद निवाता ।

सुप्त ही नग जीवन के प्रता, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ २ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

अक्षय अनुरम सुमरी पाया, अखल हुआ जो शरणे आया ।

पशुओं तक को स्वर्ग पठाया, दे का सत् उपदेश ॥ ३ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

सर्वे शांति के जन हरियाने, हम जाने दिन दिन सुरमाने ।

हम में हो गये नाना बाने, काये सारे केश ॥ ४ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

संनने निन निन शण्ड बनाये, हम उरटे नीचे को आवे ।

हो कर के बीरों के नाये, क्यों हैं कायर मेव ॥ ५ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

फूट हृदय से दूर हठाने, सीर नीर सप्त सप्त मिळ जावें ।

नाम पूर्वजों का चपकावें, रहे द्वेष नहि केश ॥ ६ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

शीघ्र समय सतगुरु का आवे, भटल अहिंसा बहूँ दिशि आवे ।

जैन ध्वना फिरसे फहरावे, चकित होय विदेश ॥ ७ ॥

नमहुँ प्रथमहि पारस परमेश ।

धर्म शांति उन्नति पथ पावे, सुख ऐक्य जशी वस नावे ।

‘शिल्लर नंद’ नित यही प्रनावे, हो सतत यह देश ॥ ८ ॥

पं० शिखरचन्द्रात्मज स्वरूपचन्द्र जैन ‘सरोज’ कानपुर ।

સતિ અંજનાસુંદરી ।

(નારદનો એક ભાગ-હતુમંત જન્મ.)

(રથજ-એક ભયાનક યુદ્ધ.)

પાત્રો-અંજના (હતુમંતની માતા-પરવન-વયની સ્ત્રી.)

વસંત-અંજનાની સખી (પરવનવયનાં મિત્ર પ્રદક્ષિતવતી ગ્રેમ ભયેતમાં બેચાએથી સુધીય સ્ત્રી.)
 વસંત-અંજના (હતુમંત.)

અંજના-સખી, દેવે મારું શું થયે, શું કહે મને આમ દુઃખી કરવાનું જન્મ આપ્યો દરો, હા, મારું શું થયે.

(મૂર્છા ખાય છે.)

વસંત-(સાવધ કરી) બહેન, ગમરાધ્યા નદિ, પરમાત્મા દરેક જન્મને સદાય કરેજી ભગ છે. નથી તેજે આ પત્રકું કંઈક સામ કરાજી બંધુ દરો; બહેન, ધીરજ રખે.

અંજના-અહીં, ધીરજ તો કેટલી રાખું ! પરજીવાન પતિએ ત્યાગ કરી, જાણીસ વેળે રિવકારી, તે આમ મુખપત્રે અને કલંકિત કંવા ! હાવ ! શું મુખ જગારીય ! વસંત મારાંની આ ભયાનક રંજમાં ધીરજથી રહી શકાવું નથી ? હાવ ! સખી !

વસંત-સાંજા ! કાલક આવવું દોષ તેમ જન્માય છે !

અંજના-આ અમાઝીયા પુત્ર તેના પિતાને ઘેર રૂપજ થયો દોષ તે કવો જીતવું થય રહ્યો દોષ ! હાવ, પૂર્વ ! અત્યારે તેમનું કશું મારાંની થય કાવું નથી. તું દોષ આવવતીની કહે જન્મશે દોષ, તો કારે પાવ ?

નારદમુનિ-(પ્રવેશ કરી) પુત્રી ? તે અમાઝીયા નથી, પણ અરમ કરીસી, પુણ્યદન-અને કુલ દુકાર નરવત છે. તું તેને વતપૂર્વક સંભાળ ?

અંજના-મદાન ! નરસાર કી મું.

નારદ-પ્રતી, તોમ-અધેય રહે !

અંજના-પ્રથમ સ્વરૂપ મદાન ! આ અમાઝીયા સ્વરૂપને કશું તરફથી પધારી હસન આપ્યાં છે. પ્રભુ ! મારાં-ક્યાં દુઃખોના પ્રવારે, મારે પતિ વિરહે કુશલું પડે છે. વળી મારાં ક્યાં ક્યોને સહ મારે સમાજમાં કલંકિત થવું પડ્યું ?

નારદ-પુત્રી ! અધીરી ન થા ? તારા પૂર્વ કર્મના કંઈક શુભોદયથીજ તું પરવનવય જેવા પતિને મેળવવા આમશાળી થઈ છું. પૂર્વ જન્મમાં વારે હાથે જે વેર આપાયાર થઈ ગયેશે છે, તે તું સાંભળ ?

રાગે મનહર.

પ્રથમના જન્મમાં દત્તી તું રાજની રાણી, અગિયારે ચઢી તેં તો પ્રતિમાને કારી છે. હાર પાસ વાપી એક વેદમાં પઝારી તેં તો, હાથ પડીમાં તેને બદાર તો નિકાલી છે. તુજ પાસ આવી એક ચતુર ભક્તાણી જાણ, ઉદ્દેશ તેજે તને વિધ વિધ લીધા છે. પૂર્વના પુણ્યોએ કરી રાજની તું રાણી જની, રૂપ પણ અધિકું તેં પ્રાપ્ત તો કાઢ્યું છે. સંસાર સમુદ્રમાં છત્ર ચઢ્યું થાય તેમાં, મોરાથી જે ગતિ પ્રથુ આગમે તો રહી છે. સંસારમાં કુઝળ જે દેખાય છે માનવીમાં, પાપનું છે રૂપ સદુ એમાં નદિ ફેર છે. સુખ અને દુઃખ જેદ દરેક પડે જન મદી, પુણ્યના સંમય તણી તેદ તો નિચાની છે. મારેજ દે મેન મુજ કામ ન તું કર આવું, છતી આંખે પડે જેમ દોરો થઈ ફેરે તું. દેવ ગુર દાઝ વણી જિનવ લે નાથ પામે, કુઝળ પડ્યું પાખી તેથી નકામાં જવાય છે. દબીય મુખી તેં તો મર્મ ધન પાપું મરે, પુણ્યના સંમય કરી સર્જ તો સિધાઈ છે. કુઝળ પડ્યું મોઝી પડી આવી તું આ અવતિમાં, મારેજ વપ પ્રેદ મદાનના પેરથી. પુણ્યના કડવે રહી પરવનવય સમ પતિ, સીધાન-મુજવાન-નવાપો પધારે છે. પ્રતિમા વાપીમાં દરો હાથ પડી તો જેથો, તેજવન વર્ષ વારે વિરેજે તો મારો છે.

પ્રભાતથી પ્રતિભાતો અવિરત્ય કરવાથી,
પુત્રહિત બની બેઠેન સામ્રાજ્ય નસાડી છે;
મરેજ છે બેઠેન પહેરે પાશને વસ્ત્ર પ્રેમ,
સાંસારમાં તેજનીથી ક્ષય થયું પામશે.
અન્ના—પ્રભુ? ત્યારે મારા શરીરથી બહાર
થયેલો આ છત્ર કાઢો છે? અને તે કેવો થશે
તે કૃપા કરી બચાવે?
નાદ—પુત્રી! તેનાં પ્રતિશ્ચિત્ત કર્યાં કયા
સામ્રાજ્ય.

રાગ. મનહર.

જેનું તાગ દીપમંડી શેખીએ છે સારો એક,
અરતોને સેવે છે કાંઈ નિવંધાર્ય ગિરીએ;
નસાર છે અદ્ભુત જેની શોભાના તો પાર નહિ,
પાપ સુહર્ષક નામે તેજનો તો ધણી છે;
કનકમાલિકા નામે રાણી તેની સુખદાઈ,
ઉપજ્યો કુખ તેની શિલ્પકોહન બાઈ છે;
શુદ્ધિત શુભવંત કળાવંત ધર્મવંત,
શીકમંતો પાર નહિ જસાં પુખ્ત લીધે છે;
રાજ્ય પ્રાપ્ત અનુ દાન શોભને વેશગય થયે,
હરને તો રાજ્ય અખી સંમોહિતે ધારી છે;
મુક્તિ એક ધારથીર લક્ષ્મી તિલક નામ,
કિમ્બ જતી તેવનાં ને જાનિ હાન અગ્રી છે;
પરં નિજ દલ પહી તપ તો વિશ્વવંત બહુ,
રામમાં તે હો થયે સુખ ધણું પામે છે;
મોક્ષ સુખ મેળવી રીઝી અન્નાની કુખ આવી,
સુખનો સમુદ્ર તેણે ઠામોઠામ રેશે છે;
પુન્યવંત ધણો જેથી જાને આજ આપતારે,
ચિત્તનારી વર જાડી નિઝ્યા સુખ પ્રમથે;
અદ્ભુત સંપત્તિ પાછી રામચંદ્ર કિમ્બ બની;
માત તાવ ઉમમતા કુળને તો સારને;
બેઠેન નિશ્ચિત થા એના હારણ તારા ઉદય થશે.
અન્ના—પ્રભુ? મારો અપરાધ ક્યારે મર
થશે? અને દુ સંબંધી જનને કેવા મળશે?
નાદ—પુત્રી! યોદ્ધાજ સમયમાં તને તાગ
એક સંબંધીયા મેળાય થશે, તે તને તપા વસા
પ્રભુભને આરાધ આપશે. તેમના હારણ તારે
બાંધેલ્ય હર થઇ હું પરાજયથી પ્રેમપત્ની
બની બચાવે!

(નાદ મુનિ અંતર્યામી થાય છે.)

અન્ના—અહો! દુનિયા પર આ શરિર
પાપ અને પુણ્યનો ઢંસ થઈ કરવાનું સમકથાન
છે, તે મેં આજે સંમોહ્યું. હું મનુષ્યના
મનુષ્યમાંથી શિર અમુની રહે છે તે તો હું પ્રમ
મરીજ નાથી સુસ્તી હતી. મો અંગર નંદોત્રી કે
મેં આવા અવગોષ કર્યો હતો, પ્રભુશય પ્રભુના
વાર્ષા કાપીજ તેમના તરફ પૂજ્યમાય ઉપજ
કરને છે. મારા જોડા મોટા અપરાધિન પપ
ગ્રહ કરો મારા પરિશ્ચિત્ત પુન્યના કે પતિદેના
પુણ્યના પ્રમાણે કરી પમ્મ હું એના પૂજ્ય અપારાને
પામી છું, તે એક મારા બાગવંત છે. સખી!
દવે મારાથી આ નિરદ વ્યથા અને અંધનક
પ્રાણીઓ યુગ આ અપવચ્ચમ્મ સદન થઈ થકેતી
નથી. દવે તો હરપત પતિદેવથી મેળાય થાય તોજ
આ લેખિય બનેલું હવે શાંતિ પામે?

વસંત—બેઠેન! પ્રભુ કૃપાએ સર્વ સાધવ
થશે. જો દુનિયાપર પાપ અને પુણ્યનો બલો
ન મળતો હોય તો લોકો એક વરતો રિંકાર
કરેન નહિ. વાસ્તવિક રીતે કુરવ તરફથી મનુ
બને શિર બે મુખ્ય કરમે મામેલી હોય છે.
જેની કે—(૧) પોતાનું પોતાના અત્મા તરફનું
કર્તવ્ય (૨) બીજા અત્માઓ તરફનું કર્તવ્ય.
આ બે કર્તવ્યોને સુકી મનુષ્ય જે કંઈ કામ કરે
તેજ તેના પાપ અને જે કંઈ તે કર્તવ્યોને
ધરણ કરી કરે તેજ તેનાં પુન્ય.

બેઠેન! પુન્ય અને પાપ એ શરીર અં
પુતળાં નથી પણ કુરવથી જોવાએથી વિશે
પજા છે. વ્યવહારમાં પુન્ય અને પાપ કંઈ હાય છે
અને હસ દાય જે એ મહાવાક્યને અંદર પાડતા
મનુષ્ય માત્રા સ્થૂળ દેહ સાથે જોવાએથી રહે છે.
તે નથી કદી બિન વંતા કે નથી કદી દ્રવ્યમાન થતાં
પરંતુ તે પેકી એકદ વસ્તુ તરફ મનુષ્ય પુત્રી
પડે છે. જો તે પાપ તરફ જાય છે તો લોકો
તેને નીચ નમરથી નિહાળે છે. જો તે દુઃખિન રહે
છે, અને દુઃખિતી રીતે રહે છે એના કુતો પશુ
કરી બેસે છે તથા કરી તેનાં માં નિદ્રાનગતા
હલકિતનાં રૂઢવા અને નીચતા આવે છે. તેજ
તેને નરમી સોડી તરફ લાઇ જતાં જો મોરચકાર

વસંત-ખડેના પ્રભુ મર્યાના બેલી છે; કુદરતનાં સર્વે કાર્યો વિચાર પૂર્વક જ થાય છે. હવે આપણે નંદીથી માતાની સંધાયે જવું જોઈએ ?

(વિમાનમાં સર્વે બેસે છે)

(ઘોડેકે દુર ગયા પછી પુર નીચે પડી ગયું છે)

(એક સોલાસ પડેલાં સિલાનાં ડુકડે ડુકડા યથા જગ છે)

(વિમાન નીચે ઉતારી પ્રવિશતી પુત્રને ઉચ્છ્રી સુખન કરી અન્નનાતે આવે છે)

પ્રતિમુખ-ખડેન, આ રત્ન તો કોઈ ગરમ સંદેશોન માલગ પડે છે; તેના વજનમાં સરીરથી આ સિલાનાં સહસ્રાં ડુકડા થયે ગયાં-પણ સાણેજનો વાંધા સારખો વાંકો થયો નંદી વહી; સાણેજ હનુમંત.

વસંત-મામાથી, આપ તેવા સેટા હોય એમાં સું આશ્ચર્ય છે.

(અન્નનાં સારખે નીચું જુએ છે)

(વિમાન ચાલે છે)

પાકગણુ-આ શેક વિમાન. માત્ર આપે છે, પણ પ્રતિગત્તાત આપું અન્નનાં સુદેરી નાટક આપની સેવામાં રજુ કરીશ. આટલા યોગ વિમાનમાંથી પચ સખજી વાંચકો સાર મડચ કરી દોષને ત્યાગ કરી પેતાનાં શુભ-અવદારને ધર્મમાં રૂપાવશે, એમ આસાં રાખતો લખનાર હું છું. આપ સર્વને દિવ્ય સ્નેહસાગરમાં ક્રાંતા બેવાને ઉત્સુક-

મોહનલાલ મથુરાદાસ શાહ-કાપીસા.

જાહેર, કોશર અને વિલાયતી કાપડમાં વપરાતાં અપવિત્ર વસ્તુઓ.

(માણુના તાલમાના રહેનારીઓનાં સુંગદી મંજી (સુંગદ કાટ એપેલો રડી, દાડ બીહાન-રેશના સેરેટરી મી. કેવલલાલ નગીનદાસ શાહ નીચે પ્રમાણેની એક ધર્મપ્રેમી બહુની સહીની કાપેરી ખનિશ પ્રગટ કરવાની વિનંતિ સાથે મોહલી

આપી છે. એમાં દર્શાવેલી હમીદતરી સચવાઈ માટે રા. રા. કેવલલાલ અને ધર્મપ્રેમી જી. ખનિશ છે.)

ખાંડ શા માટે ન વાપરવી-નંદનવરોના હાકલો જવાં કે ગાય, બગદ, સુખર, માણુને ઇલાહિ પ્રાણીઓના હાકલોનાં કયનાથી વિલાયતી ખાંડને સાફ કરી સફેદ રૂપ જવા રંગની સાફ બનાવવામાં આવે છે; એવાંત ધણી માણુ સોનાં જાનુંના બહોર નથી; તે સિવાય લોહી (જલક એલ્યુમેન) થી વિદેશી ખાંડને સાફ કરવામાં આવે છે.

વિલાયતમાં રૂધાં ધણુ જ મોંઘું વેચાય છે. એક બાટલી રૂધની દોઢ રૂપીઆથી ઓછી કીમતે મળી શકતી નથી. આપણુ દેશમાં મીઠાઈ બનાવનારાઓ દંદાઈઓ અને હલનાઈઓ ખાંડ સાફ કરવા માટે તેની ચાસણી ચલાવી તેમાં રૂધનો છંટકાવ કરે છે, જેથી ખાંડની અંદરનો મેલ છૂટે પડી ચાસણી ઉપર તરી આવે છે, તેને ઝરી વટે વહે કાઢે છે-વિલાયતમાં ખાંડ સાફ કરવા માટે તેવીજ રીતે ચાસણી બહારી રૂધને બહાર લોહીના છંટકાવ કરવા કષ્ટાણખાનાઓમાંથી લોહી મળાથી ચાસણીમાં છાંટવામાં આવે છે. તે ઉપર તરી આવેલા મેલ અલગ કરી ખાંડને સાફ કરે છે. આ રીતે ગાય અને હુકરના લોહીથી સાફ થયેલી ખાંડ કુત્રેવ મંદિરામાં, નાત જાનના નમણવી-રેશ, અક્ષોજાનમાં, દેવપિતૃકર્મમાં અને ઓછી-લોહીની દરગાહમાં લાણી પડે ચાવવામાં તથા ખાવામાં નહીં અડકવા સાયક અપવિત્ર વિલાયતી ખાંડને આપણે કિંદુ મુસંદમાન બાકીના છુટી ઉપયોગ કરીએ છીએ જે ધણુ શાયતીય છે. આ સોના ધર્મ રસાવન જનક મેહુ છે, તેના ધર્મની અને દયાની ખામંસા કરાવનારે તરતજ વિચાર કરવો જોઈએ અને જેમ જેને તેમ જલ-દાસી અપવિત્ર ખાંડનો ત્યાગ કરી પાવન થવું જોઈએ તે બિલકા માટેજ ખાંડ વાપરવી એ કાલપણુ દિન્દીનો ધર્મ નથી. એનસાકસેગિયા વિદ્યાવિધાન ખાંડને સાફ કરવાની રીત નીચે પ્રમાણે આપી છે જે બધે અશ્વરૂપ નીચે આપીએ છીએ તેથી ઉપરની દરેક ખાતી યથ જરી



तैयार થવી નથી ? તેના ખુલાસા કર મારજો તું
ઉપર જાણવેલા ઉચ્છેદ પ્રાપ્તિના ૧૪ માં પેશમાં
અને તે શિવાયના ધર્મ પેશમાં જુદી જુદી
જગ્યાએ વિસ્તાર પૂર્વક વિવેચન કરેલું છે.
In fact is the concrete facts of ani-
mals its composition being solid
fat and oil. વિલાયતી કાપડની બનાવટને
કમતી અપવિત્ર પદાર્થનું કહેવું આપના પડી
વિલાયતી કાપડનો ત્યાગ કરવા હરેક ધર્મગ્રંથો
હી-દાને પ્રાર્થના કરી. અને, વીરમીએ જીએ.

ધર્મ ગુરુઓને-સોઢાને મુજબજીમાં ગાળી
દેનારી મોટી મોટી વાતો કરનારા હવે વખત
ઓછો છે, તે ઉપરની જાણનો કે જે મનુષ્ય જીવ-
નને ખાસ ઉપયોગની છે તેના રસોમાર કરી
તમારા ઉપર આપાર વાળતા સમુદાયને સન્માન
પાળવાની કરજી અથવા કરવા અરેથી પ્રાર્થના
કરનામાં આવે છે.

“ ગુજરાતી ” તા. ૧૨-૨-૨૨.

નોટ-અધિકાર ધર્મનું પાતનનો દર્શો કરનારા
અસાધ જૈન ગ્રંથમાં ઉપરોક્ત વેળામાં આપના પડી
કરજી પેશ, વિલાયતી કાપડ-ખાંડ, બેઝલેકાણું
અર્થાત્ વિલાયતી કેસર અને અરપણ વસ્ત્રોના
સંસ્પર્શથી તૈયાર થતું વિલાયતી કાપડ વાપરનારું
હોય છે કે નહીં ? આ સેખાંતને તો જી. ગ્રંથે ન
વાપરવાની ચર્ચો કર્યા પ્રતિવા છે અને તેથી સારી
રીતે ચાલી રાકે છે. રસ્તેથી ખાંડ અને પવિત્ર
કાશ્મીરી કેસર વિલાયતીથી કેશ્મીરી રીતે મોંઘા
આપાય છે પણ દેશી ખાંડ ગંગપંજમાં થતું હોવાથી
તેમજ કાશ્મીરી કેસર-યુગ્મ ને રંગમાં વિલાયતીથી
અતિ અધિક હોવાથી આખરે તે સર્વજન પડે છે
તેમજ રસ્તેથી કાપડ તો પુરતા ગયામાં વિલાય-
તી કરતાં ટકાઉ હવે દિલમાં મળે છે મારે વિલાય-
તી કાપડને તો હવે પૂર્વ વિલાયતી આપી
રસોથી કાપડજી વાપરુંજી જોઈએ અને તેમાં પેશ
બધાં સુધી બને ત્યાં સુધી-દુધે કાલેજ ને દાણે
પરેલું અર્થાત્ યુદ્ધ અને ટકાઉ કાપડજી વાપર-
વાની પ્રતિવા ભેડી જોઈએ તોજી ધર્મ બને રહેતો
ઉદાર ધર્મ રહેશે.

(લેખક-વીરભનંદ મેન-અવલોકી)

કાલગુરુ એતકા મમ્સ હૈ । મોતમમે તમવીલી
હો મઈ હૈ । વક્ત્રના મેજા મી હોગવા । પૂર્વો
ઘોર ત્વતાઓને મો અવની મદરી નિન્દાકો ત્યાગા ।
ઘોર અવને આવકો સુવન મલનલકે મૂરન મહ-
રંગકી રાની । વાગોમે મી દુઠ નઈ મહાર । બાને
લગી । પૂર્વોને મી સર્વજનુદો જાતે હુદ દેલ કર
લુછી મનઈ । ઘોર ફલને પૂરને લગે । ગામ
કલ પ્રાતઃકાલકી પરન મી વધા । અનર મહાર
દેતી હૈ । દમાગોકો તર વ તાન્ત । કમતી હૈ ।
૨૫ મસરી વડાને લોગોકે દિલોકો મી મગાયા ।
ઘોર પ્રાતઃકાલ હવાલોરી (સેર) કે લિયે બગાદા
કિયા અર્થાત્ તૈયાર કિયા ફત્ત-લિયે સુર્ય નિરુ-
છનેતે શરહે હી ધર્મસ્વરૂપ ઘોર રામલાલ
નાપકે દો મિત્ર અપને ૨ પર્વોતે નિરુછે-ઘોર
સૈકે લિયે જાગરી ઘોર જા રહે હૈ । અમે ૨
રામ હૈ ઘોર પંછે ૨ વર્મ સ્વરૂપ । ધર્મ સ્વરૂપ-
ને નિરુદ્ધ આઠા રામલાલકો અવાગ વી ।

ધર્મસ્વરૂપ-જયો મારી, લહે હી રહોગે વા
કમી જાનોગે મી ?

રામલાલ-ભાગ્યે સાહિબ, -વગ્ન મગ્ન જો
આકે દર્શન હુદ । મેં તો જાતકા વાસ હૈ
લડનેકી જાતને મહી મુનાઈ ।

ધર્મસ્વરૂપ-મિયર, વદિ જાપ લહે ન હોતે,
તો પ્રતિદિન-મુલે મી તો બસને સાપ સૈકે
લિયે બુદ્ધા લિયા કરતે । કહી આવકો વૂર
જાતા પડ્યા હૈ ।

समझाए-समा कीजिये, आगेकी अवस्था मुक्त लिया बल्हेगा ।

धर्मस्वरूप—(नागमें पहुँचकर) देखिये न ! क्या बहा है । क्या नहीं यह तो स्वर्गका नमूना है । वहीं धमेष्टीके मुहावरें फुल हैं तो कहीं मोक्षियाकी बहार है, कहीं गुणवक्त्री पुष्प-धित आ रही है तो कहीं गैडा खिटा हुआ है, वहीं नागकी पेड़ हैं तो कहीं अनार खूब बहार दे रहा है । बाह २ । आग तो पवन भी खूब घीमी घंमी चर रही है । खीर छो-गोबो-वागकी सैर करनेके लिए शौक दिला रही है । अर्थात् सैरका खूब ही मग है । आओ भई कहीं बैठ बैठ और लुनक उठाये ।

रामदास—जैसे क्षात्री मर्मा बलिये । वह स्तब्ध पड़ा है वहाँ बैठिये ।

धर्मस्वरूप—(वहाँ आकर) अच्छा साहित्य, फर्माये आग क्या तागा सार है ।

रामदास—और तो कुछ नहीं । अभी रास्तेमें मेरे मित्र का० महावीरमत्ता मिले थे । उन्होंने कहा है कि आन सत्तेके ६ मने विराद्रीकी भीटिंग इन्दरके अलाहेमें होगी । और कौमकी उत्तमिके प्रस्ताव प्राप्त भिये गये ।

धर्मस्वरूप—सर्पोंकी समयके सेवकमें उन्होंने क्या कहा है—कि समय देखी होगा कि अंगरेजी ?

राम—वह भी क्या समय भी दो प्रकारका होता है ।

धर्म—जी हाँ, अंगरेजी समयका वह महत्त्व है कि जब नियत समय पर काम शुरू किया जाये और देखी समय वह कश मरता है—कि नियत समयसे १ घंटा १५ मिनट की देर

शुरू होता है ।

राम—भाँने जो कुछ कहा है—ठीक है । अंगरेजी समय हो भी कैसे सकता है । समयकी पंचदी दो प्रकारसे ही हो सकती है—एक शौकसे और दूसरे डरसे ।

धर्म—हैं यह कैसे ? जरा साफ २ तो बताइये ।

राम—एक लडका फुटबालका बड़ा खिलाड़ी है । यदि उसको यह पता लग जाये—कि कल मग पर और कल समय फुटबालका मैच होगा तो वह लडका पड़ता लडका होगा जो नियत समयसे भी पहले वहाँ हागा हो जावेगा । यह क्यों ! केवल इस लिए कि उसका दिल उन कामोंमें ही लगा हुआ है । उसको उन कामोंका ही शौक है । क्यों जी आप का० धनीरामभी साहुकारके पुत्र दौलतपुरको भूख मरे हैं । जो हथोरे महोमें रहता है । माताकाउ—ताँसे दो पहर निश समय देखो—जेरते ही देखोगे हसी भक्ति धार्मिक कार्योंकी भी समझिये । कई माइयोंको धार्मिक कार्योंमें हिस्सा लेनेका बड़ा शौक है । मित खान ठेकदार हुआ साइ हासल, गढ़ा सतसंगत हो वहाँ सरसे पड़े और दूसरे समय पर काम हो सकता है—डरसे । डर भी तीन प्रकारका दिखानोंमें फर्किया है—१ आर्थिक डर (२) बदलाह अर्थात् हाकनका डर (३) विवाहसंगत डर । विवाहियोंका शाउ मात मानते हैं । यदि पाउदाहा-दन बने मासक होती हो—तो उसके अन्तर्गतके डरके बारे में बनेसे पहले बंदूक-माथे । कपहरीमें हासलके डरके बारे में लोग नियत समय पर पड़े पड़ेमें बैठे जाते हैं । आर्थिक डर भी बड़ा



हर है और विगदरीके हाथे लोय दारते रहते हैं ।

धर्म स्वरूप-शास्त्र शास्त्र शास्त्र । तुमने बड़ी अच्छे तरह देखी और आगेगी समयका मतलब मतलबा और मो कुछ कहा है भी ठीक छिछा, आज हम चत्तर देखेंगे-कि विगदर की सीटिंग किस तरह होती है परन्तु हमें समयकी पावनी छाननी है-ऐसा न हो कि वहाँ आगेगी समय हो जवे-और हम देशी समयके स्थानमें रहकर नीटिंग की दार बाई न देख सकें ।

रामदास-अच्छा साहिब, मैं ठीक बौने नौ जे आपकी मुठा लूँगा-और नौ बने य कि-के निगत स्थानपर पहुँच जाऊँगे ।

धर्म-स्वरूप बाओ । रूप देर हो गई है ।

बेनो उठकर वपम य जाते हैं-और जुग होत समय जय निमेष फते हैं ।

२

शामरा रमा है । सुर्दा इमेयो है । लंग शापका खाना खने जा रहे हैं । ऐ लो ! तम स्वरूप और रामदास भी आता कामकान जोड़कर रोनी खाते जा रहे हैं । घड़ीन ८३ बना दिये परन्तु अभी दोनोमें एक भी पन घड़ीमें नहीं आया । जरा धीमन बरिदे-एलो-बस दोनो हट जा रहे हैं-और इसके अल देरी ओर पास लठये जा रहे हैं ।

इंद्रका अजडा पुर सना हुआ है । एक बड़ा गरी शमिशाना सडा है । नीति २ के माले च (watch) उगे हुए हैं । जरापर रामगरी दरियो विजयी हुई है । एक ओर मंग कुम्भी

हमी है मेजपर एक मेजरोश है-जिमपर तिछेका काम हो रहा है जोरीका हाशिया खुब महार-दे-रहा है । उमपर दो सुंदर गुच्छरोंसे बान पड़े हैं-जिनमें रंगारंग और भावि २ के पूछ अपनी बहार दे रहे हैं-और सारे मंडाको सुगन्धित कर रहे हैं-शमिषानेके चारों कुँों पर चार गैस लगे हुए हैं-और इस बदर रोशनी (उजाला) हो रही है-कि सुई भी गिरी हुई दूटी जा सकती है । एक तर्क एक बड़ा क्लोक लगा हुआ है । रामदास और धर्मस्वरूप वहाँ पहुँचते हैं ।

धर्मस्वरूप-साह माई ! खुब आनंदकी जगा है । गडा सनायेवाडेने कमाउ कर दित पा है । अब मे ९ बना दिये परन्तु वहाँ पहुँच तो करा बिछो भी न नहीं मा ती ।

रा डाह-दिगाई देता है कि देशी समय होगा । जरा उदरिये शागद पांच दम मिनिट घड़ी अगे हो ।

धर्मस्वरूप और रामदास दोनो महबमें फिते हैं और हरेक पाटोमको पढ़ते हैं-किमी पर आगेजमें लिखा है "Be Punctual" समयके पानद बनो । किसी पर यह छिता था- "धर्मके काममें गर नान भी जाय तो जाने दो" विमीपर यह उद्देश लिखा था "श्री महावीर के सपुत्रो ! गर चोकी मटद करो और गिरे हुएको उठार उठाओ-और किसीपर यह लिखा है कि "सब पर दया करो और परोपधारी बनो" यह मोटोन पढ़ने जने है और इनकी प्रशंसा काव जने है, इनमें रामदासने घड़ी देनी और कहा कि यह तो सारा नौ बन गये हैं कोइ भी नहीं आया ।



या में नफा नहीं तिष्ठ मान,
प्रगट हानि है-शैल समान ॥
यह विवेक बुद्धि हिरदे धरो;
ऐसी मान भुल पत करो ॥
इतनी विनती वै हठ गहे,
गोह उदय त्याग न गहे ॥
तासों मेरी-कृत्य न साथ,
उसी लेप न मारो जाय ॥
दोहा ।

सरलचित्त सुनि भेद यह, तजे आप सों आप ।
हठमाही हठ गहिरहै, जिके पोता पाप ॥
इसी प्रथम प्रति यह वचन, सर्व अकारण जाय ।
ज्यों कपूको मेटिये, कुरंग सुख मांय ॥
भुवादास मन सों कही, यही यथार्थ बात ।
सुहित नाम हिरदे धरो, कोप करो मत बात ॥
सबहीको हित सोल है, जाति भेद नहीं काय ।
अथत पान जो कोई करे, ताहीको सुख होय ॥

(रतनछाव जैन कुल्लेराद्वारा 'अहिंसा'
में प्रकाशित)

विद्वद्भ्यः पंडितपवर जपचंदजी कृत-

सर्वार्थसिद्धि-भाषा ।

इस मंत्रकी हमें कुछ इतीमिनी प्रतिपां एक
पाईके पाससे मिली हैं । ग्रंथ शास्त्राकार है ।
एक संख्या करीब ८२५ मूल्य सिर्फ ५)
गिन मंगा लीजिये नहीं तो फिर ५०) खर्च
रतने भी ? प्रति तैयार न होगी ।

मैनेजर, दिगम्बर जैन पुस्तकालय,
चंदावाडी-सुरत ।

शिक्षा समस्या ।

(लेखक-श्रीधुत धनकुमार जैन 'विद्व', उपरपाड़ा)

गरीबकी बात घासी होने पर फलती है ।
नर यह फलती ही है, तब हममें अविश्वस
करना बुरा है । परंतु आश्चर्य है, तब भी लोग
इसे मानना नहीं चाहते । लोग नाहि माने या न
मानें, बात तो सची है-इसमें कुछ संदेह नहीं ।
जब उसकी बात फलेगी; तब तो इच्छा न होने
पर भी, वह माननी ही पड़ेगी । अश्वि तो यदि
अग्नि न माने; तो वह छोड़ नहीं देती उस
हाथ देते ही वह अपना स्वरूप जता ह
देती है ।

* * *
कूट कहो कालेन कहो, मदारी, घ विद्यालय
कहो, ब्रह्मवर्षाश्रम कहो, ऐसे ही जो भीमें
जाने; वह कहो, अपने शिक्षाव्यवस्था जो कुछ
नाम कहो, उसमें जो कुछ विषय सिखाओ,
जैसे मने वैसे उसे चलाओ, कोई भी बाधा
नहीं । परंतु एक बात हमें सबसे पहिले याद
रखनी चाहिये कि, विद्यार्थियोंको तुम अपनी
समस्त शिक्षाएं देकर उन्हें कौनसे आदर्शमें
गढ़वा चाहते हो; मान लो, वह गृहस्थ बन कर
रहना चाहते हैं; तो उनको कौनसी शिक्षा
प्रणालीसे शिक्षा देंगे, बैसा बचनेके लिए तुम
उनको किस बातका अभ्यास काओगे ?

* * *
इसका उत्तर एक ही बातमें दिया जा सकता
है, और आचार्योंने दिया भी है । वे ऐसे होने

दूसरेके लक्षणोंका निरूपण किये हम उनका दोषादि नहीं बतला सके अतः उनके द्रव्यकी अप्रमाणता विन सिद्ध टकिये हम अपनी ही द्रव्यको सर्वथा प्रमाणता है यह भी नहीं कह सके, तथा ।

वृत्ते तमांसि द्युमणिर्मणिर्वा विना न काचैः स्वगुणं व्यनाक्ति ।

अघकारके विना सूर्य और काचके विना मणि अपने गुणको प्रगट नहीं करती है उभी प्रकार विना अपन (मूत्र) द्रव्य लक्षणके हमारा सम्यक् द्रव्यलक्षण भी अपने विशद लक्षणकी महत्ताद्योतक नहीं । इसी आशयका अश्रय लेकर परिकरित कुछ द्रव्योंका लक्षण और साथ रही उनकी अप्रमाणता भी बताते हैं ।

'क्रियावत् गुणवत् समवायि कारणं द्रव्यलक्षणं' यानी क्रिया और गुण युक्त जो समवायी कारण हो उसे द्रव्य कहते हैं । यह द्रव्यका लक्षण वैशेषिक, योग मानते हैं किन्तु इनका यह मानना भी ठीक नहीं है ।

क्योंकि वैशेषिक लोगोंने लक्षणका लक्षण असाधारण धर्म वचन, असाधारण (विशेष) धर्मका जो कहना उसे लक्षण कहते हैं ऐसा माना है ।

और इस लक्षणके लक्षणानुसार उक्त द्रव्यका लक्षण घटित नहीं होता क्योंकि ये द्रव्यका लक्षण पृथिव्यादिकों नौही में जाता है अतः असाधारण नहीं कहा जा सकता । असाधारण एक ही जगह रहता है यदि असाधारण बहुत जगह रह निकलें तो असाधारणत्व की हानि होती है तथा ऐसे असाधारण और साधारणमें कुछ भेद भी नहीं कहा जा सकता जब कि असाधारणत्वका नाश होनेसे असाधारण कुछ चीज ही सिद्ध नहीं होगा तो 'यह गुण है साधारण होनेसे' ऐसे साधारण हो हेतु दिये जायेंगे और इस तरह साधारण हेतु देनेसे अतिशयसि दोष बाधेगा अतः किसी भी पदार्थकी व्यवस्था नहीं घनेगी यदि यही दोष जैनियोंके यहां भी मिल जाय यानी जैनियोंने ऐसे 'सद्रव्यलक्षणं' ये द्रव्यका लक्षण माना है और जीवादि द्रव्यमें वे उस द्रव्य लक्षणकी अनुवृत्ति करते हैं अतः उनके यहां भी तो द्रव्य लक्षण नहीं बनसकता ऐसा आरोप नहीं कर सकते क्योंकि जैन दर्शनानुसार लक्षणका लक्षण असाधारण धर्म वचन नहीं है युक्ति बाधित होनेसे । एकहीके सम्बन्धसे मनुष्यको भी कभी २ लकड़ी कह दिया करते हैं लेकिन लकड़ी यह मनुष्यका असाधारण धर्म न होनेपर लक्षण माना जाता है अतः जैन दार्शनिक असाधारण धर्मको लक्षण नहीं मानने अतएव उक्त दोष उनके ऊपर नहीं आसकता बल्कि उन्हींके ऊपर अता है जो कि असाधारण धर्मको लक्षण मानने हैं । दूसरे, जैनियोंके द्वारा स्वीकृत द्रव्यका लक्षण नहीं नहां र दिया जायगा वहां वहां द्रव्यत्वका निश्चय कर देगा ।

दिगंबर जैनः

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्तुगोवपगाभिः ।

संबोधयत्यनमिदं प्रवर्तताम्, दिगम्बर जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १९ वॉ. ॥ वीर संवत् २४४८. चैत्र विक्रम सं० १९७८. ॥ अंक ६५

विक्रमहिक कष्ट ।

(छे० पं० गोरेठाळ पत्रांत)

माईयो, हम वक्त हमको एफता की चाह है ।
किंतु हमारे बुनारोंको कुछ नहीं पचाह है ॥
वे तो पुरानी रूढ़ियोंके बने पक्के दांस हैं ।
किंतु हम उन रूढ़ियोंसे भोगते अति ब्रास हैं ॥१॥
हमको हमारे बाप दादोंने बताया है यही ।
जो बरे आगाध कुछ बह भाति खारिन हो सही ॥
बेह खारनीय प्रप्ताव हमरे चम दादोंने किया ।
कर उसे स्वीकार हमने अमर उतपर कर लिया ॥
किंतु अब बह अपलदारी वष्टमद हमको बनी ।
जो कभी अमृतमयी थी आन बह विषधर बनी ॥
आगाध मर कुत्र लोग जो खारिन हुए हैं नातिसे ।
उने माईयोंने स्वयं इक फिरका किया हर मारिसे ॥
जाति लहरीभेन उस किकेका सार्थकनाम है ।
मानो हुई तैयार ए नखेन जाति विंगम है ॥
यह जाति उत्तलि मारो पर, बढी गई टन्साहसे ।
है मुसल कान एक इश्रा जो चारिं अपने ॥
जातिके घनवान पुत्रोंने मंताया है हम ।
देखो कैसा रसायनमें पड़ाया है हमें ॥
हम हीसो पुत्रोंने अपनी सार्थनाके मन्ते ।

जातिमें उत्पन्न कर दी रूढ़ियां बहु तापसे ॥
इस समय हमारे सिधईजीका पुत्र है दश सालका ।
पटना छिलाना दूर है है सोच उसके कंशाहका ॥
सम्पन्न इस जाटमें कंसते नहीं हैं ज्ञानकर ।
जो व्याहदे पुत्री इन्होंके पुत्रको अज्ञान घर ॥
इनके चरावर जो घनी यहि होय इन्के भावका ।
तो व्याह पुत्री देय इनके पुत्रकी यहि चावका ॥
यदि हो नऐसा तो इन्हें फिर खोजना है तिजोडियां ।
निर्घनोंके निकट रूस्योंकी लगवें डेरियां ॥
कुत्र लोग ऐसे हैं बने जो रोटियोंके दाप हैं ।
दलछांके इनका नाम इसमें करें पूर्ण प्रगत हैं ॥
राजसौ या भजन अपनी जेबमें पहिने घरे ।
फिर दश सत्तोंके पैलियां के निर्घनोंका मइ मरे ॥
निर्घनी फप लोभमें दिखसे नहीं कुत्र सोचने ।
रास रूपोंकी नि खसर धर्मसे दिख मोचने ॥
हे ! लोभ तेरा हो बुरा तूने हमें अंया किया ।
हम पुत्रियोंको देने हैं । तू ने अपना किया ॥
इस तरह घनवान, पुत्रोंने विशाहे पुत्र है ।
यह रूढ़ि बाल विवाहकी घनकोंने की सर्वत्र है ॥
अप धौर भी घनवान पुत्रोंकी बया कुछ बन रही ।
तिमके कपन कानेको मेरी छेलनी अति कर रही ॥
पर बांर कर साहम निबर हो छेलनी तैयार है ।

लिख रही अन्न और धनियोंकी कथाका सार है॥ सन्तोष धा संपन्न ग्रहोंगे युद्ध भी अति हममें ॥
 इन धनी प्रहरीके यदि पुत्रो विवाहिक योग है। फिर न-कोई प्रहरी लहरीसेनमे पुत्र पायेंगे।
 तो धनीके ही घर विवाही जाय नहँ सुख योग है॥ जातिकी संख्या दिनोंदिन वे बढ़ाते जायेंगे।
 धनवानका यदि पुत्र चाहे मूर्ख पौरुष हीन हो। नाति प्रभुत होंगे न-कोई पाप मारग जायेंगे।
 पुत्री विवाहोंगे उसे वह देहसे भी हीन हो। धर्मसे कर प्रीत बोही सद्गुरुस्य कहायेंगे॥
 निर्धनोंके पुत्र चाहे सर्व गुण सम्पन्न हों। हे! माईयों अपने हृदयकी भावना तुमसे कही।
 सुन्दर स्वस्व शरीरबद्ध अरु हृष्टमहान हों॥ अब वेद करता लेख यह मग लेखनी भी शक रही।
 किन्तु उनके यस्तै कोई न देवे पुत्रियां। बाँवकर यह लेख मे॥ जातिकी जय बोलदो।
 धनवान कैसे व्यर्थ दे उन निर्धनोंको पुत्रियां॥ कहें 'गोरुआल' बगहक फंड भरदी खोले दो।
 यदि निर्धनोंसे यह यहाँ पुत्रियां तुम व्याह दो।
 तो कहेंगे प्रथम हमरी पैटियां तुम व्याह दो॥
 पांचसौ या हजार कोई मांगते दिख खोलेके।
 कोई मानो मांगते हैं लड़कियोंके तौठके॥
 निर्धनोंके पास नाही मरी है तीनोहियां।
 जो खोलकर देवें उन्हें अरु व्याह लेवें लड़कियां॥
 इस हेतु ही तुत निर्धनोंके व्याहसे वैचन रहें।
 अरु व्याहसे मुख मोड़कर वे ब्रह्मचारी ही रहें॥
 बहुतसे इन जाति ही को स्वागत देते अंतमें।
 जाति लहरीसेनमें निग व्याह करते अंतमें॥



आगामी ज्येष्ठ सुदी ९ को हमारा श्रुतपंचमी
 पर्व आ रहा है। यदि
 श्रुतपंचमी हमारे शत्रुओंकी समाल
 आती है। और विनय करनेवा कोई
 पवित्र दिन है तो यही

श्री श्रुतपंचमी पर्व है। श्री भूवर्द्ध और अर्द्ध-
 बलिने जिनशानीकी कैप्री मक्ति की थी तो
 पाठक याद करेंगे तो मात्स्य होगा कि जिनशानी
 का महत्त्व और उपयोगिता किन्तु है परंतु
 यहाँसे फिराते रहनेवा भी हमारे अनेक शा-
 स्र मेंदार साठोंमें बंद पड़े हैं, उनके उद्धारका
 कोई निमित्त कारण है तो वह यही श्रुतपंचमी
 पर्व है। हरएक स्थानवा यह पर्व मानना चाहिये
 अर्थात् हरएक मंदिरके शास्र में से पंचमी का
 मुनज्जि का पौरोषी पर विवाहपन उनके
 पुत्रा पढ़नी चाहिये, दानदान होने का

યવાશક્તિ શાસ્ત્રદાન મી કરના ચાહિયે । વેદનો-
મે શુદ્ધ ગાદેતા હી ઉપયોગ હોના ચાહિયે ।

હમારે પાઠક જાનતે હોમે કિ મદરાસકે ઓયુન
સી. એમ. મહિનાયની

દેવેન્દ્ર પ્રેસ એક ઉત્તાહી ધર્મપ્રેમી
કંપની । મુશક હૈ જો આજકલ

અંગ્રેજી 'જૈન મેજેસ્ટ' મા-

સિકકા કાર્ય ઉત્તમતાસે સંપાદન કર રહે હૈ
ઔર હાલસે વિશેષ 'આપને એક પ્રેસ કંપનો' નિ
કાલનેકા પ્રવંચ કિયા હૈ । સ્વર્ગીય કુમાર દેવેન્દ્ર
પ્રસાદનીકી સ્મૃતિમે પ્રેસકા નામ 'દેવેન્દ્ર
પ્રિન્ટિંગ એન્ડ પબ્લીશિંગ કંપની' રજા
હૈ । ૧૦) કે ૧૦૦૦૦ ગો નિકાલે હૈ, કિત્તસે
૧૦૦૦૦) કી રચ્ય હોતી । ટોરે 'દશ હાયે
મી પાંચ હપ્તેસે મરનેકા હૈ । પ્રેસકા ઉદ્દેશ જૈન
સાહિત્યકે ગ્રન્થ, પત્રાદિ છાપકર પકટ કરનેકા
તથા પ્રાચીન જૈન ગ્રંથોંકી રક્ષા વ ઉદ્ધાર કરનેકા
હૈ । સવકો એક ર ટોર લેના ચાહિયે ।

પત્રવ્યવહારકા પતા-સી. એમ. મહીનાય,

મૈનેજા જૈન મેજેસ્ટ ૨ । પેરીશ વેકટ ચાલ

બાપર સ્ટ્રીટ-નંદરામ ।

ગુજરાતની જગજગીસીએ ચડેવા છડરની ગાદીના
કહેવતા બ. વિનયકર્તિ

છડરની પચને (હૈં મોતીલાલજી) અ-
ચુરના,

મહાવાયી પશ્ચાત્તાન કરી

વડનગરમાં રહેલા અને

નિરોધક મોરે રોગથી એક મામ થયાં કાળે

વશ થયા છે એવી ખાતરી અમને રોક લાડુઆઈ

જેમીયર દુરા મળી હતી, પણ આ ખાતર છડર

એ મોમળ લખવા છતાં કંઈ સમાચાર મળ્યા

વાથો એ ખાતર શંકા ઉભી થવાથી અમે લાંબા
રોકાવન લખેલા જોનો ઉત્તર સા. રેવચંદ હેમચંદ
તરફથી એવો મળ્યો છે કે " બ. વિનયકર્તિ"
વડનગર છે પણ તેઓ મરણ પામ્યા નથી, કારણ
કે તેઓ એકાદ અઢવાડીયા ઉપર ગામ જંગલ-
ના આપણી મેમના બાઇઓના જોવાયા આવ્યા
હતા એમ તેઓ કહેતા હતા" આથી અમેને
દરુપણ એ ખાતર શંકા રહે છે માટે કાંઈ બાઇ
ચોક્કસ સમાચાર લખી મોકલશે તો આભાર થશે.

નવે છડરના બાઇઓને અમારે એજ નિવેદન
કરવું કે તમે તે એને પદબ્રષ્ટ કરી ચુક્યા છો
પણ હવે પછી કાંઈ ખીબના લોભમાં વળી કસાગો
નહિ અને સોથી પ્રથમ કર્તવ્ય છડરના શાસ્ત્ર
બંડારનો ઉદ્ધાર કરવાનું કરજો. બ્રહ્મચારીજી
શીતલપ્રસાદજી અમને લખે છે કે આ 'પણે' જો-
છડર કે નાગૈરના બાઇઓ શાસ્ત્ર બંડારનો
ઉદ્ધાર કરવાની કબૂલાત સાથે આમંત્રણ કરે તો
એ બેભાથી એક રજા મારો વિચાર ચાલુમાં
કરવાનો છે તો આ સોરેરી તક છડરના બાઇ-
ઓએ જ્યાં દેરી જોઇએ નહિ અને તરતજ પ'ણે
એક જ અર્થ બ્રહ્મચારી શીતલપ્રસાદજીને છડરમાં
એમાંજ દરરોજ આમંત્રણ કરવું જોઇએ. આમ-
ત્રણમાં શાસ્ત્ર બંડારનો ઉદ્ધાર કરવાની કબૂલાત
તો લખવી જોઇએ. અમે ખાતરીપૂર્વક કહીએ
છીએ કે બ્રહ્મચારી શીતલપ્રસાદજી જો છડરમાં
ચાલુમાં કરે તો છડરના બાઇઓને અને શાસ્ત્ર
બંડારને અપૂર્વ માન થયા વગર રહેશે નહિ.

અમારા ગુરુજીના વીશાખેવાડા બહુઓનો

લગભગ સોળગણો સોળગણો

સોળગણો લગભગના બાંસ છે અને એક

દિવસે નહિ પણ દે.

સને પુનેમ સુધી છુટા છુટા લખો મનાર છે એ

બહુ અમે ખુશી થયા છીએ પણ વિશેષ ખુશી

તો ત્યારે થાય કે જ્યારે એ બધા લગ્નો

મિલવારી રીતથી ન થયા જોત વિધિથી થય

જેન લગ્ન વિધિનું ગુજરાતી પુસ્તક પણ મોદન-



लाव अथुदास काशीसावागाणे प्रकट करेखु छे ते जेवु छे के सामान्य भावस पथु आ विधि कराने शक्यो. वणा आ लगनगाणा प्रसंगे जीवु कंठ नहि गनी शके तो ओटहुं तो अवरस्य थवुंज जेधये के पथे भणा आण सगार्ध अटकाववानो इरज्यात इस्य करवो जेधये अर्थात् नानी उभरमां छोकरा छोकराओनी सगार्ध करी देवानो रिवाज इरज्यात अथ करवो जेधये. ओभां ओछाभां ओछा इस वर्पनी उभर थया वयर छोकरांनी अने ओछाभां ओछा १४ वर्पनी उभर थया वयर छोकरांनी सगार्ध न करवो अने जे कंध करे तो तेने भारे धवो भारे अंकुश सुभो जेधये. शुभरातमां भेवाडा डोम डेणवछीमां आगण पडतो आंग लक्ष रवी छे तो आणसगा-धनो दानिकारु रिवाज शुं हजु पथु नदी अथ करे! आशा छे के आ लगनगाणा प्रसंगे आ भाधयो ग्याति सुधारना उभयोगी इस्यो ज्यर करवो.

भारतके हस्तलिखित

जैन ग्रन्थकी सूची ।

मान्यवर सहचर्मा बंधुगण ।

कलकत्ताकी श्री जैन साहित्योद्धार समिति सं-स्त मयात्रपके हस्तलिखित जैनग्रंथोंकी सूची तैयार कर रही है । अनेक ग्रंथोंकी सूचियां प्राप्त हो गई हैं । आपके स्थानके हस्तलिखित जैन शास्त्रोंकी सूचीकी अति आवश्यकता है । क्याशा है आपकी अनेक ग्रंथोंकी सूची तैयार करके मेमनेकी कृपाकर धर्मके कार्योंमें सहायता पहुंचायेगें । आपके थोड़ेसे परिश्रमसे नीचे कितने अनेक लाभ होंगें—

(१) आप जानते हैं कि किसी स्थानमें एक ही ग्रंथकी १०-२० प्रतियां हैं और दूसरे

स्थानमें उसी ग्रंथकी एक भी प्रति नहीं है । वह सब जगहकी सूची एक साथ लिख जानेसे मूल्य हो जायगा ।

(२) कहीं कहीं ऐसे ग्रंथ भी हैं जिनकी प्रतियां बहुत ही अल्प हैं ।

(३) किसी किसी स्थानमें ऐसे भी ग्रंथ हैं जो और कहीं भी नहीं हैं ।

(४) कहीं २ अति प्राचीन ग्रंथ हैं जिनकी प्राचीनता सुनने मात्रसे मइयोंकी दर्शन करनेकी इच्छा होती है ।

(५) कितने ही ग्रंथोंके नाम तो मिटते हैं पर ग्रंथ नहीं मिटते ऐसे ग्रंथोंके भी दर्शन हो सकते हैं ।

(६) कितने ही ग्रंथ जैनियोंके अजैनोंने खोरी करके बर्तिका और ग्रंथखाना नाम बदलकर अपना दिये हैं वे पकड़े जा सकते हैं ।

(७) कितने ही शास्त्र जो अभी तक अधूरे हैं वे पूर्ण हो सकेंगे ।

(८) हमारी शिथिलताके कारण हमारे छात्रों शास्त्र स्नेहकोंके हाथमें चले गये ।

(९) सारा संसार इस बातको जानता है कि जिस जातिके साहित्य बड़ा (बहुत) है वह जाति दिनोदिन उन्नति करती है ।

(१०) हमारे जैन साहित्यसे बढ़कर संसारमें और कोई भी साहित्य बराबरी नहीं कर सकता ।

(११) हमारे जैन आचार्य आशा दे गये हैं कि जैनसाहित्यकी रक्षा तथा प्रचार, तन मन धनसे करो । जो जैनसाहित्यकी प्रपादना करता है पास्तम्ये वही धर्मात्मा है । कभी हमारे जैनी माई शास्त्रगान करते हैं पर नहीं एक शास्त्री

१० प्रतिष्ठा मौजूद हैं वहा एक प्रति और दान करनेसे इतना लाभ नहीं हो सकना जितना कि उस जगह देनेसे, जहाँ उस ग्रन्थकी एक-भी प्रति मौजूद नहीं है ।

हमारे पास जर्मनी, इटली, फ्रान्स, अमेरिका, छंदन आदिके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी सूची है जिसे देखकर हृदय दुःखित होता है पर उपाय कुछ भी नहीं है । अब हम लोग यह बंदोबस्त करना चाहते हैं कि उन पुस्तकोंमें जो अक्षय्य पुस्तक हैं उनकी नक़्क़ करवाकर भगवा ली जाय ।

हमारा साहित्य (शास्त्र) अनेक तो लेप हो गया और अनेक होता जाता है अब हम भैरवोंका कर्त्तव्य है कि जिस तरह तो हमको अपने बच्चे हुए साहित्यकी रक्षा करनी चाहिये जिससे हमारे सत्य धर्मकी भी रक्षा हो सके ।

जो सूची हम बना रहे हैं इससे सारे जैन मईयोंका लाभ होगा । हमारे धर्मकी रक्षा भी होगी, हमारे शास्त्र नष्ट होनेसे बच जायेंगे इत्यादि ।

अतएव आपका कर्त्तव्य है कि इस कापको जितना जल्दी हो सके आप पुस्तक हमारे पास सूची बना कर भेज दें ।

सूची इस प्रकार बनानी चाहिये—

ग्रन्थका नाम, ग्रन्थ कर्त्ता या टीकाकारका नाम, अध्याय संख्या, विषय, मूल्य, लिपि, ताद्वय या कागज पत्रसंख्या, इच्छितसंख्या और ग्रन्थका सत्य, उम्मुक्त सम ग्रन्थोंका पत्राग्रको अतिपत्रमें मिल जायगा ।

सूची भेजनेका पता—मोटेलाल जैन ।

पोस्टबक्स नं० ६७१६ काठमांडू ।

समाचार-सूचनाएं ।

महावीर केवलजान जयती हमारे धर्म पृथ्वी अंतीम तथ्यपर और महावीर प्रभु की वैशाख शुक्ल १० को वैभवजान हुआ था तब उस समयके लोगोंको उनके ज्ञानसे बहुत लाभ हुआ था तो ऐसे शुभ दिवसको स्मरणमें रखनेके लिये महावीर केवलजान जयती वैशाख सुदी १० को माननेके लिये प्रचलन मनन करने का नियम लेना चाहिये और तथा करके वैभवज्ञानके फल पर आश्रयान होनेकी आराधना है ।

हीराचंद मल्लवर्मा कक-मोलपुर ।

रोहतकमें वेदी । प्रतिष्ठा-देवताकी प्रतिष्ठामें रोहतकमें एक चाँदी की प्रतीति प्रतिष्ठा के लिये भेजी गई है उनको वेदी पर विराजमान करनेके लिये रोहतकमें वैशाख सुदी १२ में १५ तक रथोत्सव होगा जिसमें बड़े १ विद्वान व उपदेशक भी पढ़ावेंगे ।

दिगंबर जैन पुस्तकालय-सूची का नवीन सूचीपत्र अभी ही तैयार हुआ है जिसके ४८ पृष्ठ हैं हिन्दी, गुजराती, अंग्रेजी तथा संस्कृत भाषाओंमें जैन तथा सामान्य बौद्ध ५०० ग्रन्थोंका मूल्य सा हेत परिचय है । यह सूचीपत्र कांटे डिप्लोमा विनीतमित्र मित्रा है ।

मेनेमा, दि० जैन प्रत्यक्ष-सूचन ।
यात्रानो सध अने धर्म पलायन-पेक्षा निवासी सधरी छात्रावास हरिभानी विषय-अध्ययनार्थ अ सुरेन्द्राणि साथे निवासे पाक्षीताशुनी यात्रानो सध मद्रो दत्ता, जे इच्छान सधे पाक्षीताशुनी भोगे रथोत्सव भोगे दत्ता ते

पछी ३१ अगस्त १ ने दिने संघ आननगर आरती
 पंचे उत्तम स्वागत कथुं हतुं. त्यां पद ४८ दिने
 संतोषभूतेन जैन पाठशाळाभा सेवापदो। करवाभा
 आग्यो हतो न समये अथवा माधमे पोताना
 पातनी यादमां जैन सुद ३ ने दिने मेलापदो करी
 माणकोते धनाम वेचवा ३. ७५) रथापी तरीके
 आग्या दना तथा आननगर धोवाभा ३५ भागुं
 ह्दाणु कथुं हतुं. तेमज भठोलीवाणा पशोतम
 दास तरुथी ह्दाणु अथुं हतुं तेमज संधना
 भाग्योमे पक्ष ३. ४०) धनाम ५३ भां अपां हतो।
 वगी सर्वे संधने गेड भगवान ७७ ने ७७ अथ
 आग्युं हतुं. धोवाभा पक्ष संधने साशे सत्कार
 भग्यो हतो।

लहलुभाध नरेत्तमदास धामी.

महासभा-क मधुग। विद्यालयकी प्रवक्त
 कमेठी चौरासी मधुरासे आप द वदी १ को
 मिठनेवाली दे ।

व्याचरमें-वेदी प्रतिष्ठा और मरत० दि०
 जैन सण्डेवडा महासभाका दूसरा अविवेशन
 ज्येष्ठ सुदी ९ को होगा । यह स्थान अनमेरके
 पास ही है ।

स्था० महाविद्यालय-काशीमें वैशाख
 सुदी १ से देठ माहकी छुट्टी हुई है और आपद
 नदी १ को विद्यालय खुलेगा । नवीन प्रवेश
 होनेवाले छात्र हप्तसे कम लेवें ।

सुमतिवाल, मंथी ।

भैयालालजी चौधरी-का स्वर्गवास हो
 गया । आपने योगसे परवार समाज और छि
 दवाड़ा दमोकी जननको बड़ी सति पहुंची है।
 आपके स्मरणमें दमोहके बगानोंने ता. १९-
 ४-२२ को निष्कार प्रभाव किया है कि हम
 लोग अपने स्वर्गीय नेता श्री० भैयालालजी चौ-
 धरीकी वादगारमें यह प्रग करते हैं कि नम तक

रा० महामयौ हुरुम न देगी विदेशी कपड़ा
 नहीं मगावेंगे । कोई मंगाया तो उनसे १०१)
 या विशेष दंड लिया जायगा ।

शोकजनक मृत्यु-पं० उदयलाल काम-
 लीवालको जैन समाज अच्छी तरहसे जानती है
 क्योंकि आपने बहुतसे संस्कृत ग्रन्थोंका हिन्दी
 अनुवाद करके प्रसट किया है तथा बम्बई जैन
 साहित्य प्रचारक कार्यालय भी निकाश है तथा
 अभी गोंधो हिन्दी पुस्तक मंडार भी निकाश
 है और हिन्दी साहित्यके कई ग्रंथ निकाले हैं ।
 प्रथम आपकी प्रतिष्ठा जैन समाजमें बहुत थी परंतु
 जबसे आपने विवाह विवाह पर लिखा आपकी
 प्रतिष्ठा जैन समाजमेंसे घट गई थी यहाँ तककि
 आप शक्तिच्युत किये गये थे व बम्बईमें मंदिर
 व्यवहार भी बंद (जो कि अनुचित था) किया
 गया था और अभी खबर मिठी है कि आपका
 देहांत हो गया जिससे साहित्य संसारको बड़ी
 क्षति पहुंची है । हम आपके आत्माको शांति
 चाहते हैं ।

दायभागके ग्रंथ चाहिये-जैन दायभाग
 तैयार करनेके श्रिये दायभागके ग्रन्थोंकी आव-
 रकता है । १ मद्रवाहु संहिता, २ अर्हन्तीति,
 ३ वट्टेपान नीति, ४ श्वेद्वन्दि गिन संहिता,
 ५ एक संधि संहिता इन ग्रन्थोंकी आवश्यकता
 है । जहाँ २६ भंड १ में ये सब या कोई भी ग्रंथ
 होवे उनकी सूचना हमें देना चाहिये । हमारा
 पता-सुभाषदास जैन गु० सरनउ पो० नौई-
 (पृष्ठ)

स्था० महाविद्यालय काशी-वा १९
 वां वार्षिकोत्सव म० गणेशमादमी न्यायाचारक



समापतित्वमें ता० २९-२६ अपैलको होगया ।
 त्र० शीतलप्रसादनी स्नातः पधरे थे, और
 काशीके बहुतसे अध्यापक व विद्वान पधरे थे ।
 विद्यार्थियोंने संस्कृत व हिंदीमें स्नातक, पुरुषार्थ,
 परोपकार, पदद्वय आदि पर मनोहर व्याख्यान
 दिये थे । रिपोर्टमें बताया गया कि छात्राश्रम
 १०००) की लागतका बन गया है जिसमें
 २०००)की घड़ी है । दूरे दिन १० ३०
 द्वाकाप्रसादनीके समापतित्वमें अम समा हुई
 थी जिसमें ५० सतीशचन्द्रने स्नातकमें 'जैन धर्म-
 की महिमा' पर, अन्य छात्रोंने भर्ष, सुष,
 एतत्ता, तथा जैन इतिहास पर व्याख्यान दिये,
 बादमें पद रानकुमार शर्मा ने 'अहिंसा' पर
 कहा, यहाँ गणेशप्रसादनीने जैन सिद्धांतपर कहा
 और व शीतलप्रसादनीने आ-म वर्ष बनरो
 कार, देश सेवा व स्वदेशी वस्तु व्यवहारपर
 प्रभावशाली व्याख्यान दिया था । इन व्याख्या
 नोंका काशीमें बहुत प्रभाव पड़ा है । विद्यार्थ्य
 को १८६) की सहायता भी मिली थी ।

देवरान-में नैतिष्ठके समय जोअलखें व
 समा तथा स्त्री समा हुई थी जिसका हाठ अगे
 प्रकट होगा ।

यम्हरमें सरस्वति भवन-संलग्नाट-
 के ऐडफ पालाअल जैन सरस्वति मा'की शाखा-
 वर इस न मका बड़ा मरी सस्वति मयन वस्व-
 इमें सेठ सुख नदनीकी वर्षश्रामे न्येष्ठ सुदी
 ५वी प्रात काठ 'व'धेर्वक खुलेगा ।

कंपिलनी-में दि० जैन चंदगवाल समाप्त
 अधिप्रेक्षण हो गया । रेशमी बज्जा बहिष्कार
 यदि प्रस्ताव हुए तथा मैतपुरीका जैन नदक

भी हुआ था ।

जिन मंदिर व्यवस्था फंड-नम्बरमें
 ता० २-३ अपैलको मारा दि० जैन तीर्थक्षेत्र
 कमेटीकी जनरल मीटिंग हुई थी जिसमें श्री-
 जैन माइयोकी सुननातुनार तीर्थोंक झण्डेका
 निर्देश करनेके छिये अपनी ओरके २० महा-
 शय निष्पुक्त किये गये थे तथा मंदिर और प्रतिमा-
 ओंकी अविव्य रोकनेके छिये "श्री जिन
 मंदिर व्यवस्था फंड" खोलनेका प्रस्ताव
 हुआ और उसमें तुरंत दी १९०१) ला० देवी
 सहायनी किरोनपुरने और १९०१) ला० जम्बू
 प्रसादनी सहारनपुरने देना स्वीकार किया है ।
 अन्य श्रीमानोंको भी इस फंडमें सहायता देनेकी
 चाहिये ।

आवश्यकता-तीर्थक्षेत्र कमेटीको इन्तपे-
 कटों, सुनोमों और पुनारियोंकी आवश्यकता
 है । प्रार्थनावस्त्र-चन छात्र हेमचर, महामजी,
 हीमार्ता । वम्हर ४ को भेजना चाहिये ।

यम्हर आश्रितश्रम-में ता० २४-
 ४-२२ से ता० ६-१-२२ तक नम्बरोंकी
 तुली हुई है ।

त्यागी मन्नालालजीका स्वर्गवास-
 हमारे पाठक-ज्यागी मन्नालालजीको अच्छी तर
 हसे मानते हैं । प्रत्यय दिनोंमें आप सुखक
 वेधमें रहे थे और आपकी मान्यता खूब थी
 मरतु पछेते पाव सात वर्षोंमें आपकी मान्यता
 इस छिये घट गई थी कि आप परिग्रह रखने थे
 और आपने अपनेमें अपनेको दर्शन प्रतिमावारी
 बनाया था । खेद है कि आपकी ६०
 वर्षकी आयुमें चटकने वत मासमें स्वर्गवास हो



गया । आप महारौनी (झांसी) के निवासी थे और आपके कुटुंबी भी अमी हैं । हम आपके आत्मको शांति चाहते हैं ।

कुंयलगिरी-के कुम्भपूजा त्र०० अश्रमों आम्कट ७९१ छात्र शिष्या पा रहे हैं । रहने, भोजन आदिका उत्तम प्रबंध है ।

पटनगर अनाथालय-दि० जैन समाजके असाहाय अनाथ बालकोंकी रक्षा शिष्याका उचित प्रबन्ध करनेके उद्देश्यसे दि० जैन माटवा प्रा० समूहकी ओरसे पटनगर (माटवा) में १५ परीषदारी संस्थाकी स्थापना हुई है । अभीतक ९८ अनाथ प्रवेश हो चुके हैं ।

प्रवेश समय अनाथोंकी दशा अति शोचनीय थी, कई धर्मका नाम भी नहीं जानते थे, कई पेटे हुए पहिने कूट शरीर, अज्ञा विहीन, रोगोंसे अत्यन्त दुखी थे । स्मृष्ट और चिकित्सा द्वारा उनका शरीर निरोग किया और स्वाभगन, धर्मोप उत्तम प्रबंधादिया गया । धार्मिक और बौद्धिक शिक्षा का प्रबंध इस कुरीसे किया गया है

विनामूल्य पवित्र औषधियां-यहांसे हैजा, प्लेग, इन्फ्लूएंजा, पक्षाघात, मृगी, सर्प विष आदि कठिन व अनेक साधारण रोगोंकी औषधियां पेटेंट पेकिंग स्वयं प्राप्तसे विनामूल्य मेजी जाती हैं । भारतमें १८२३ शाखाएं खुल चुकी हैं । आफ्रिका आदि देशोंमें भी प्रचार हो रहा है । यहांकी औषधियोंसे की मरी २० के हिसाबसे हजारों रोगियोंको कायदा पहुंचा है जिनके अनेक प्रशंसापत्र मौजूद हैं । ऐसी उपयोगी औषधियोंका प्रचार वर्ष २० में करके सब साधारणके प्रांग वन समेकी रक्षा करना चाहिये और बन सके जिन प्रकार सहायता पहुंचा कर इस महत्व पुण्य कार्यमें सब कंधुओंको भाग लेना चाहिये ।

मेनेजर, शुद्ध औषधाध्य-पटनगर (माटवा) महावीर जयंती-कारनामे पुरे बकी उनके समानतित्वमें उत्सव हुआ था । महान्त बकीलेन व्याख्यान दिया था और ५००-६०० आदमियोंको फकाहार दगयो था । बोधोनामें मुनन, मनन, रपय ना, रौशनो आदि पु

पदद्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धि । (गतांशसे आगे)

प्रतिपक्षी (शङ्काकार)—जैनियों के यहां जैसे जहां ९ द्रव्यका दृश्य रहेगा वहां वहां द्रव्यत्वका निश्चय करा देगा उसी तरह हमारा भी द्रव्य दृश्य जहां २ रहेगा द्रव्यत्वका निश्चय करा देगा ।

(जैनी)—आप ऐसा नहीं कह सकते क्योंकि आप तो द्रव्यका दृश्य द्रव्यसे सर्वथा भिन्न मानते हैं, यदि अभिन्न मानेंगे तो स्वसिद्धान्त हानि होगी ।

(प्रतिपक्षी) द्रव्यत्वके योगसे हम द्रव्य सिद्ध कर देंगे ।

(जैनी) ऐसा करनेसे तो उपचारसे ही द्रव्यकी सिद्धि होगी क्योंकि—“ मुख्यामावे सतिमयोनो उपचारः द्रव्यते ” मुख्यके न होनेपर और मयोननके होनेपर उपचारकी प्रवृत्ति होती है ।

अस्तु एतत् दुर्जनः न्यायसे आपका द्रव्यदृश्य सिद्ध भी मान लिया नाय तथापि पृथ्वी, अप, तेज, वायु, मनमें ही उपर्युक्त द्रव्य का दृश्य जाता है । आकाश, काल, दिशा आत्मामें नहीं जाता अतः पक्षव्यापक होनेसे द्रव्य दृश्य आदर्शनीय नहीं कहा जा सकता ।

(प्रतिपक्षी) आकाश, काल, दिशा, आत्मामें गुणवत् समभाविकारण यह द्रव्यका दृश्य संघटित हो जायगा अतः हेतु पक्षः आप नहीं हुआ ।

(जैनी) ऐसा करनेसे दो दृश्य द्रव्यके सिद्ध हो गये एक “ क्रयवत् गुणवत् समभाविकारण ” दूसरा “ गुणवत् समभाविकारण ” ।

अब दो दृश्य सिद्ध हो गये तो द्रव्य पदार्थों ही इन दो दृश्योंसे सिद्धि होनी चाहिये अतः पुनः द्रव्यका दृश्य निर्दिष्ट नहीं कहा जा सकता, जिनसे कि पृथ्वी आदि नव द्रव्योंकी सिद्धि हो सके और फिर—“ समभावसम्बन्धावच्छिन्न गन्धस्वादच्छिन्न धेरा निरूपिताधिरण तावत्त्वं गन्धस्वत्वं ” इत्यादि पृथ्वीका दृश्य नहीं हो सकता । क्योंकि उदय द्रव्यकी बिना सिद्धि किये दृश्य नहीं बन सकता ।

सांख्य अर्थ क्रिया कारित्व ही वस्तुका दृश्य मानते हैं—

इनका कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि मुक्तजीव नो कर्म मलावरणसे सर्वथा मुक्त हो गये हैं उनके क्रियाके अभावसे अवस्तुताका प्रसंग आता है । कोई कहे कि हम मुक्तोंमें भी क्रिया मान लेंगे तो उसके मतमें मुक्त जीवको कर्मपापका ही उच्छेद हो जायगा क्योंकि समस्त क्रियाकार है सकर्मक है नैस । जो जो सकर्मक होते हैं वे ही क्रियावन्ते होते हैं जैसे कि रथयात्रा में इस अनुष्ठानमें सकर्मक और क्रियावान्ता आपसमें अविनाभाव सम्बन्ध बनाया है । मुक्तोंमें सकर्मकत्व हेतु न रहनेसे क्रिया नहीं मानो जा सकती, यदि

कोई ऐसी शक्ति करे कि मरण पश्चात् जीव दूसरी गतिको जाता है उस समय इसके कोई कर्म नहीं होते हैं तब पि दूसरी गतिके लिए गमनरूप किया करता ही है, यह भी ठीक नहीं क्योंकि विग्रह गतिमें जीवके कार्पाणकाययोग रहता ही है । किया अक्षेयण अवक्षेयण, आकुक्ष, प्रमारण, गमन इत्यादि पांच प्रकार बतलाई गई है । मुक्तोंमें उक्त पांच क्रियाओंमेंसे कोई भी क्रिया नहीं देखी जाती अतः मुक्त सक्रिय नहीं हो सके हैं और निष्क्रिय होनेसे अवस्तुताकी आपत्ति अती है अतः वस्तुका लक्षण अर्थक्रिया-कारित्व भी नहीं मानना चाहिये । वैशेषिक 'वस्तुका लक्षण सत्तारूप है' ऐसा ही मानते हैं, उनका यह लक्षण मानना भी मनुचित नहीं है क्योंकि सत्तासे उनमें महत्सत्ता मानी है और उस महत्सत्ताको वे नित्य ही मानते हैं अतः सिद्ध नहीं हो सकी ।

सम्यग् महोदय ! पूर्वोक्त कथनमें द्रव्यके लक्षणकी परीक्षा करनेके लिए द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह तर्क कसौटी पर चढ़ाया गया है । अब अगाड़ी मुझे आपके सामने यह और पेश करना है कि द्रव्य कितनी है और किस किसने कितनी मानी है ।

यह बात मजी मांति विदित होगी कि पदार्थको प्रत्यक्षगत करके ही तुलना की जाती है । उससे पदार्थका जितना विशद ज्ञान होता है उतना अनुमानादिसे नहीं होता । तुलनाको हमें कभीसेकभी द्विष्ट अरथ्य मानना चाहिये क्योंकि तुलना बिना पदार्थत्वके नहीं होती, जैसे कि काठे रूख रहनेसे ही शूकर रूखी महत्ता या अन्वयकारके रहनेसे प्राश-शकी, रात्रिके होनेसे दिनकी, मूर्तसे विद्वानकी, तैयार द्रव के सम्यक् लक्षणकी भी द्रव्य-लक्षण मात्तोंसे महत्ता है और द्रव्यलक्षणकी महत्ता भी तभी प्रमाणत को प्राप्त होती है जब कि द्रव्यमैल्यमाप्त (होती द्रव को संस्था) हो अतः दा. पर कहीन द्रव्यसंस्थाको लिखकर और उसका लक्षण बरके स्वयं भी जैनियोंके द्वारा कहीन संस्थाके सिद्ध करनमें यही तात्पर्य है ।

जिब तरह द्रव्यकी द्वारा स्वीकृत द्रव्यके लक्षण भिन्न २ होने पर भी द्रव्यत्व को नहीं प्राप्त होने है उसी तरह अन्य महाशयों द्वारा निर्धारित द्रव्यकी संस्था भी ठीक २ प्रतीत नहीं होती । निन्ही २ की मानी हुई संस्था किसी न किसी भेद पर प्रतिष्ठित और निन्ही २ केने उन द्रव्यकी संस्था पृथक् छिद्र पृथक्को भी दोष नहीं माना है ।

द्रव्याधि रणवृत्ति सत्ताभिन्न नादिमवद्रव्ययैः लक्षणं ॥ इस द्रव्यके लक्षणको स्वकार करने के लिये वेने पांच सात पदार्थ द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, सव्यय और अभाव मानते हैं । यहां उनका स्वयं सिद्धान्त बनाकर पुनः ये जैनियोंके द्वारा कहीन संस्थाकी तुलना काता हुआ येने पेशों की अभिरथ्य द्रव्य संस्थाकी निर्धारिता बतलें । ।

वैशेषिक, संसारमें पदार्थ दृष्टसे हम देखते हैं तो हमें सात पदार्थ ही ज्ञात होते हैं जो कि ऊपर वर्णित हैं।

दाहकाकार—आप लोग शक्तिको अर्थात् पदार्थ क्यों नहीं मानते यदि आप कहें कि शक्ति वस्तुभूत नहीं है तो परीक्षा प्रयत्नी हम आपके वचन मात्रसे यह नहीं मान सकते, शक्तिके साधक प्रमाण निर्देश और सबूत हैं अतः शक्तिको अर्थात् पदार्थ मानना चाहिये। हम देखते हैं कि अग्निका प्रतिबन्धक कोई कारण मन्वक नहीं मणीय जाता अग्नि बग़र अपना दहन करना कार्य जारी रखती है। प्रतिबन्धके मणि आदिके आमाने पर उनकी शक्ति विष्ट हो जाती है और कि। वह दाह नहीं करती अतः यह बात सुस्पष्ट या मन्व है, कि शक्ति पदार्थान्तर है। यह शक्तिकारकी शक्ति भी अविचारित ही है। क्योंकि दाहकाय कार्यके लिए अग्नि कारण है लेकिन वायुमान्तर रहित या हितके द्वारा वायुन साधक कारण कार्योत्तरात्तिके लिए मन्वक नहीं किया जा सकता ?। यहां जो मणिके सद्भावसे अग्निकी दाहकत्वका अभाव हुआ तो यहां अग्निके दाहकत्व कार्यके लिए उत्तेजकाभाव विशिष्ट मण्यभाव कारण है जब कि मणिके सद्भाव होने पर उत्तेजकके अभावसे विशिष्ट मणि अभाव रूप कारण ही नहीं तो कार्य कैसे हो सकता है। अतः शक्ति कोई पदार्थान्तर नहीं है।

(दाहकाकार) अस्तु, शक्ति पदार्थान्तर नहीं है ऐसा हम भी मानते हैं किन्तु आपने जो द्रव्यके पृथ्वी, अप (जल), तेज (अग्नि), वायु (हवा), आकाश, काल, दिशा, आत्मा, मन ये ९ भेद माने हैं उनमें आपको अन्वकार भी एक १० वीं द्रव्य मानना चाहिये क्योंकि नील तमः चउति ? यहां पर अन्वकारमें आपकी द्रव्यकी लक्षण अच्छी तरह परित हो जाता है। आपने द्रव्यका लक्षण " क्रियावत गुणवत समवायि कारण द्रव्य लक्षण " ऐसा किया है। चउति (चउता है) इस क्रियाका आवार होनेसे अन्वकारमें क्रियावत विशेषण रह ही जाता है तथा नील तमः (नीला अन्वकार—अन्वकारकी बहुसमुन्नतदशा)। ऐसा कहनेसे गुणों विशेषण भी परित होही जाता है अतः अन्वकारकी द्रव्य मानना ही चाहिये और उत्तेज ९ द्रव्योंमें इसका अन्तर्भाव भी नहीं है। आकाश, काल, दिशा, आत्मा, मन, ये रूप रहित और अन्वकार सरूप हैं। अतः इनमें उनका (अन्वकारका) अंतर्भाव नहीं किया जासकता। अन्वकार मन्व रहित है अतः मन्वमाली पृथ्वीमें अन्तर्भावित नहीं हो सकता तथा अन्वकार शीत गुण विशिष्ट भी नहीं है अतः नट्ट, उष्णगुणसे भी रहित है अतः तेजमें नहीं हो सकता ?। अब मन्व कि अन्वकार तक नौ द्रव्योंमें अन्तर्भाव भी नहीं होता, और

द्रव्यका लक्षण इसमें घट ही जाता है फिर भी अन्वकारको द्रव्य न माननेमें सिवाय तीन भी इसके और कोई कारण नहीं कहा जा सकता ।

यह सब उक्त शङ्काकारका न गूनाल मात्र ही है । क्योंकि अन्वकार तेनके अभावके सिवाय कोई भावान्तर नहीं है ।

(शङ्काकार) यदि ऐसा ही है तो फिर अन्वकारका अभाव ही तेन द्रव्य हो जायगा । अन्वकार ही को मान लीजिए । तमको तेनका अभाव होनेसे न मानना और तेनको तमका अभाव होने पर भी मानना यहां विद्वेषातिरिक्त क्या कारण कहा जा सकता है ?

(उत्तर दाता) यदि तेन द्रव्यको अन्वकारका अभाव मान लिया जाय तो अभावमें सर्वानुभूत उष्णत्व नहीं रह सकता, और फिर उष्णत्वकी आधारा रूप कोई अन्य द्रव्य माननी पड़ेगी ।

द्वितीय, अन्वकार चङ्गता है यहां द्रव्यका लक्षण भी संघटित नहीं होता । क्योंकि नील रूपको जो यहां प्रतीति होती है वह भ्रांत रूप ही है । अतः द्रव्य ही माननी चाहिये न ऋषित और न कय । इस सबके माननेवाले वैशेषिकके मतमें द्रव्यकी एकता सिद्ध नहीं हो सकती क्योंकि द्रव्य को ९ भेदाष्टा माना है और द्रव्यको एकता न माननेसे सात पदार्थोंकी सिद्धि नहीं हो सकती, क्योंकि स्वतंत्र नी द्रव्योंको एक द्रव्य सिद्धि होनेपर द्रव्य रूप, रस, गंध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अधात्म, गुरुत्व, द्रव्याव, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अवर्म और संस्कार इन २४ गुणोंमें ऐतय सिद्ध होनेसे एक गुण, लक्षणेदि पूर्वोक्त पांच क्रियाओंमें एकता सिद्ध होनेसे एक क्रिया, पर-अर दो साधन्योंमें तथा निरय द्रव्यमें रहनेवाले अनन्त विशेषोंमें एकत्व सिद्ध होने पर एक सामान्य व एक विशेष, प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अत्यंताभाव, अयोन्याभाव इन चार अभावोंमें एकता सिद्ध होनेसे एक अभाव, एक समान्यके समान सिद्ध होवे तो सात पदार्थोंकी सिद्धि होती लेकिन उक्त द्रव्य गुण कर्मादिकोंमें एकता सिद्ध नहीं हो सकती अतः पदार्थ सात हैं यह कहना श्रयमात्र है । द्रव्यत्वके योगसे एक द्रव्य माना तो उपचारसे ही एकता सिद्ध होगी परमार्थतः सिद्ध नहीं हो सकती ।

(शङ्काकार) द्रव्य एक पदकी सामर्थ्यसे द्रव्यके सब भेद, प्रभेद ग्रहण कर लिये जायेंगे अतः द्रव्यमें एकता और गुण कर्मादिमें भी इसी तरह एकता आनेसे सात पदार्थकी सिद्धि हो जायगी, उक्त—

विस्तरणोपदिष्टानामर्थानां तत्त्वानिभ्यः ।

समासेनाभिधानं यत्समग्रं स विदुर्मुखाः ॥

अर्थ—विस्तारपूर्वक विन पदार्थोंका तत्त्वनिर्धारण कर दिए उपदेश दिया जाता है ।

उनका जो संश्लेष कहना है उसे संग्रह कहते हैं। अतः संग्रहण की अपेक्षासे एकता सिद्ध हो जायगी अतः सात पदार्थ मानना चाहिये।

उक्त कथन भी समुचित नहीं है क्योंकि एक पद वाच्य होनेसे एकता की ही प्रतीति होती है, ऐसा नियम नहीं है क्योंकि सेना वन आदि एक पद वाच्य अनेक पदार्थ देखे जाते हैं। यहाँ ऐसी शंका करना कि सेना वनादि एक पद वाच्यसे संवेग विशेषयुक्त एक की ही प्रतीति होती है। वह सम्बन्ध संयुक्त संयोगात्पीयस्त्व लक्षणवाद्या कहा जाता है।

संयुक्तका जो नैऋत्य सम्बन्ध यानी संयुक्तका जो निऋत्यवर्तिव सम्बन्ध उसे संयुक्त संयोगात्पीयस्त्व कहते हैं। यह कहना भी युक्ति सम्पन्न नहीं है। क्योंकि सेना वन आदि शब्दसे सनका ज्ञान मनुष्य गोड़ा आदिमें ही होता है। वन शब्दके कहनेसे प्रयक २ पेड़ोंमें ही होता है। सम्बन्ध विशेषमें जो आप ज्ञान बताते हैं तो नहीं होता अतः एक पद वाच्य होनेसे एकताकी सिद्धि नहीं होसकती। अतः एक पद वाच्य होनेसे यदि एकताकी सिद्धि की जाय तो एक गोकुल द्वारा वाच्य जो ११ शब्द हैं उन सभीकी एकता माननी चाहिये।

उक्त च-वायु, वारि, पशौ, भूमौ, दिशि, लोम्नि, पचौ, दिवि।

विशिखे, दीधितौ, दृष्टाद्येकादशसु गोर्भतः॥

गोशब्द वचन, पानी, पशु, भूमि, दिशा, रोप, वज्र, आकाश, वाण, किरण और किरण इन ११ अभिधेयोंमें हैं।

एवं एक य शब्दके वाच्य त्याग, नियम, यम, वायु, घाता, पाता रक्षण इन छहोंमें भी एकता होनी चाहिये।

(शङ्काकार) वचन पशु आदिका वाचक गोशब्द, त्याग, नियम, यम आदिका वाचक य शब्द मिल भिन्न ही हैं फिर एक पद वाच्यत्व ही यहाँ नहीं रहता तो एकता कैसे।

(उत्तर) यह भी आपका कहना ठीक नहीं, ऐसे हम भी कहते हैं कि पशुओ नेत्र आदिका वाचक अलग अलग ही द्रव्य शब्द है अतः एक पद वाच्यता न होनेसे एकता नहीं हो सकती।

संग्रह किये जाय अनेक पदार्थ जिस शब्दसे ऐसा सार्वभौमिक संग्रह और एक प्रत्ययसे अनेक पदार्थ ग्रहण किया जाय ऐसा प्रत्ययार्थक संग्रह और अर्थार्थक इन तीनों संग्रहोंसे द्रव्यकी एकता सिद्ध नहीं की जासकती। द्रव्यकी ९ संख्या मानना भी संख्याभास है क्योंकि इन ९ द्रव्योंका बीच पदार्थमें अन्तर्भाव हो जाता है।

पृथ्वी, अप, तेज, वायु, मनका स्पर्श, रस, गन्ध, रूपवाले होनेसे पदार्थ द्रव्यमें अन्तर्भाव हो जाता है क्योंकि जो जो स्पर्श रूप रस गन्धवाले होते हैं वे पौष्टिक होते हैं जैसे आलू।

वायु और मनमें रूप न मानना भी न्यायसंगत नहीं है क्योंकि वायुरूप युक्त है स्पर्शवाली होनेसे। इस अनुमानसे वायुको रूपता सिद्ध ही है। वायुका रूप देखनेमें नहीं आता अतः उसे मानना भी नहीं चाहिये, यह कहना भी न्यायपरम्य नहीं है क्योंकि जो जो देखनेमें नहीं आवे उन उनका अपात्र, यदि आप ऐसा कहेंगे तो तुम्हारे देखनेमें परमाणु नहीं आसकता अतः उसका भी अपात्र कहना चाहिये। या तुम्हारे देखनेमें अपने नावा परावा आदि भी देखनेमें नहीं आते अतः वे हैं ही नहीं ऐसा ही कहना चाहिये।

(शङ्काकार) - परमाणु परावा आदि यद्यपि, प्रत्यक्ष नहीं है तथापि वायुसे कारणका अनुमान होता है। इस न्यायसिद्धांतानुसार कार्य जो मकान आदि उनसे कारण परमाणु आदिका और पिता है अतः परावाका हय ज्ञानकरलेगे। लेकिन वायुके रूपका कोई वायु नहीं जिससे कि कारण स्वरूप रूपाका ज्ञान किया जाय।

(उत्तर) - ऐसा भी नहीं कहसकें क्योंकि स्पर्शरसकी रूपरसवाले साधन्यासि प्रसिद्ध है अतः जहां जहां स्पर्शरस होगा रूपरस वहां अवश्य मानना पड़ेगा।

मन दो प्रकारका होता है द्रव्यमन और भावमन। द्रव्यमन अन्तरकमण्डलमें रहता है और तदाकार जो आत्माके प्रदेश हैं उसे भावमन कहते हैं। चक्षु ही तत्त्व ज्ञान और उपयोगका कारण होनेसे मन भी रूपादिवाला है, भावमनका अन्तर्भाव आत्मामें हो जाता है।

(शङ्का) आपने जो ज्ञानोपयोगवत् हेतुसे मूर्तिमत्त्वकी सिद्धि की तो ठीक नहीं है क्योंकि ज्ञानोपयोगवत् हेतु शब्दमें भी रहजाता है जो कि विषय है। यानी मूर्तिमत्त्व साध्यों विरुद्ध है अतः अनेकान्त्रिक दोषसे दुष्ट हेतु होनेके कारण साध्य सिद्धि नहीं कर सक्ता।

(उत्तर) यह आपकी शङ्का तर्कपूर्ण आगहीसे माग्य हो सकती है क्योंकि द्रव्य ही पौष्टिक होनेसे रस मूर्तिमान् मनवे ही है।

(शङ्काकार) यदि शब्द पौष्टिक होता तो अल्प १ पदार्थके समान दिग्दश देना लेकिन जब शब्द दिग्दश ही नहीं देता तो मूर्तिमान् कैसे सिद्ध हो सकता है।

यह शङ्का भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि मकानके मुहाने निरुद्ध देवी पशुपत प्रायस्से और दूर देश स्थित प्रसन्न अनुमान पर दानी मुक्त पर रई आदि हस्की बस्तु

संसार मान सक्त है। दूसरे, यदि शब्द पौद्गलिक न होता तो इसका पौद्गलिक मनुष्य के द्वारा व्यापार नहीं हो सकता था लेकिन व्यापार होता हुआ देखते हैं। तथा शब्द पौद्गलिक है तभी तो मनुष्य जो कि उमादा ठोकापीशीका काम किया करता है और या कुछ काम सुननेवाला होता है। मरी शब्दको पुनरुक्ति गमिणियोंका गर्म-गिर जाता है। यदि शब्द पौद्गलिक न होता तो मूर्तिमान् कान की आदिको व्यापार न पहुँचाता। इससे ज्ञात होता है कि शब्द पौद्गलिक है और पौद्गलिक होनेसे मूर्तिमान् है, यदि शब्द पौद्गलिक न होता तो हवासे हवा उपर मी नहीं उड़ सकता। दिशाका आकाशमें अन्तर्भाव हो जाता है अतः द्रव्यकी ९ संख्या मानना संख्यायास है। क्योंकि इन नीचाही जीव-पुद्गल इन दो द्रव्योंमें अन्तर्भाव हो जाता है अतः ९की अपेक्षा जीव-पुद्गल ये दो ही द्रव्य मानना चाहिये किन्तु इतना मानने पर भी धर्म अवर्ग आकाश काष्ठ ये ४ और द्रव्य माननी चाहिये क्योंकि इनका उक्त जीव पुद्गल दोमें अन्तर्भाव नहीं है अतः इस प्रमाणसे यह सत्य ज्ञाते यह समझा चाहिये कि आकाशकी आकाशके सिवाय जीव-पुद्गलमें सभी द्रव्यसंख्या अन्तर्भाव हो जाती है लेकिन तो मी लोहगत सभी पदार्थ उसमें नहीं आते। धर्म अवर्ग ये दो द्रव्य याकी वच ही जाती हैं और जीव अमीधर्म तो आकाशी तथा धर्म अवर्ग ये मी सब अन्तर्भाव हो जाती हैं अतः आकाशी द्रव्य संख्या सत्यक् नहीं मानी जा सकती क्योंकि तदामास होनेसे।

अब नैयायिकोंने कितने पदार्थ माने हैं यह सुधतः लगेगे। नैयायिक उक्त ७ पदार्थोंके अतिरिक्त और मी सोलह पदार्थ मानता है। वे ये हैं-प्रमाण, प्रमेय, संतप, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, फल, विजण्डा, हेतुभास, छत्र, निग्रह, जाति, किन्तु यह भी पदार्थ संख्या ठीक नहीं है क्योंकि प्रमाण प्रमेय इन दोमें ही सबका अन्तर्भाव हो जाता है।

सांख्यमनसाले प्रकृति, महान्, बृहन्, पांच तन्मात्र (शब्द, रस, रस, रस, गन्ध) पांच इन्द्रियां (श्रोत्र, स्पर्श, रस, मित्रा, घ्राण) पांच कर्मेन्द्रिय (वक्त्र, पाणि, पाद, पाशु, उपस्थ) पांच भूत (आकाशी, वायु, तेज, अग्नि, पृथ्वी) एक पुरुष इत्येक २४ पदार्थ मानते हैं। सांख्यके विचारमें बहु वक्तव्य है लेकिन लेख बृद्धि मयसे सत्य ही नहीं है उक्त जो पदार्थोंकी व्यवस्था है वह भी ठीक नहीं है क्योंकि जब कापिलिक प्रधान (प्रकृति) को ज्ञाता कर्ता मानते हैं तो कि पुरुषके माननेकी क्या आवश्यकता है।

(कापिलिक) कर्ता ज्ञाता प्रकृतिको मानकर मी सोचा द्रव्य अवश्य मानना चाहिये।

(जैन) प्रकृति करने वाली नहीं हो सकती, भोगनेवाली न होनेसे। जो जो भोगनेवाली नहीं है वह करनेवाली भी नहीं है जैसे मुक्तात्मा कर्पक के अभावसे कुछ भोगने वाले नहीं है अर्थात् वे कर्ता भी नहीं हैं। प्रकृतिको धारण न भोगनेवाला माना ही है अतः उसे कार्य वर्तु भी नहीं माननी चाहिये क्योंकि मोक्षवर्तु के अभावकी वर्तुत्वके अभावके साथ व्याप्ति है। "

यहां कोई मनचटा अदमो यह कहे कि मसोइया कर्ता है लेकिन भोक्ता नहीं है, मोक्षा मांलिक है यह उसका कहना केवल हास्यके लिए ही हो स्क्। है क्योंकि पाचक जो कुछ प्रश्न करता है उनका फल यानी भोग रुपया आदि लेकर अवश कर्ता है। " अवैतनिक काम करनेवाले भी दश आदि स्मरण करके स्वरूप कार्यके फल भोग ही लिया करते हैं और यदि वर्तुको मोक्षासे सर्वथा भिन्न मानेंगे तो सुख प्राप्तसे कर्तामें प्रत्यय होकर जो मोक्षा शब्दकी सिद्धि होती है वह नहीं हो सकती। "

हास्योत्पादक बात तो यह है कि प्रकृतिको तो सांख्योंने मुक्तदाना माना है और इस उपकारके लिए पुरुषको मोक्ष इच्छुक पूजते हैं। यह सिद्धान्त इस बातकी सिद्धिके लिए पुष्ट साधक होगा कि " भोजन अन्य ही करे और पेट दुबरेका ही भरे " अतः सांख्यके द्वारा स्वीकृत अर्थ स्वरूपा भी ठीक नहीं है क्योंकि उनके स्वीकृत चौबीसों पद यौक जीव अमीषके अन्दर ही अन्तर्भाव हो जाता है।

अब कुछ बौद्धोंके विषयमें और कहेंगे मैं इस प्रकरणको समाप्त करता हूं। बौद्धके चार भेद हैं-१ माध्यमिक, २ योगचार, ३ सौत्रातेक, ४ वैपाषिक, इन चारों भेदोंका प्रथम २ सिद्धान्त बाल्य देनेसे बौद्धमत पर्यार्थ संरक्षक वर। दांचा है यह अच्छी तरह रमणमें आ जायगा।

सुखो माध्यमिको विवर्तिमग्निल शून्यस्य मेने जगत्।

योगाचारमते तु मन्ति मेतयः तासां विवर्तोऽग्निलाः ॥

अथोऽसौ क्षणिकस्त्वसायनुमिता बुद्धयेति सांघान्तिकः।

प्रत्यक्षं क्षणभंगुरं च सकलं वैभाषिको मापने ॥

प्रत्यक्षके द्वारा अनुमित पदार्थको ही मानता है और वह पदार्थ क्षणस्थिति शीघ्र (क्षणिक) है ऐसा कहता है।

“सौत्रान्तिकेन प्रत्यक्ष ग्राह्योऽर्थो न बहिर्भूतः” सौत्रान्तिका (नास्तिक) केवल प्रत्यक्ष वस्तु ही को मानता है।

यद्यपि बौद्ध सामान्य पनेसे प्रत्यक्ष अनुमान दो प्रमाण मानते हैं किन्तु बौद्ध भेदान्तर्गत सौत्रान्तिक केवल प्रत्यक्ष पदार्थको ही मानता है। वैभाषिक संपूर्ण पदार्थको प्रत्यक्ष और क्षणमञ्जुर मानते हैं।

“अर्थोऽज्ञानान्निः वैभाषिकेण बहुगम्यते” वैभाषिक ज्ञानान्वित पदार्थको बहु ज्ञान मानते हैं” यह मुख्यतः बौद्धोंकी पदार्थ कल्पना है।

बौद्ध पदार्थको क्षणिक मानते हैं। वे कहते हैं कि “सर्व क्षणिकं सत्त्वात्” सब पदार्थ क्षणविनश्वर हैं स्त होनेसे। यह अनुमान ठीक नहीं है। क्योंकि सत्त्वरूप जो हेतु है उसे यदि आप स्वभाव हेतु मानेंगे तथापि नहीं बन सकता। क्षणिकके विनश्वर होनेसे हेतुकी ही प्रवृत्ति ही नहीं होती। क्योंकि प्रत्यक्षगोचर पदार्थमें ही हेतुकी प्रवृत्ति होती है। पदार्थोंका क्षणमग्न्युत्तरता स्वभाव भी नहीं है।

(शङ्काकार) सब ही पदार्थ एक क्षणतक रहनेवाले हैं। विनाशके लिए दूसरोंकी अपेक्षा न करनेसे, जैसे कि कार्योंत्पादके ठीक एक समय पहिलेकी सामग्री कार्योंत्पत्तिमें किसीकी आवश्यकता नहीं रखती है।

दुनियामें घटादिकता मुद्रादिकसे नाश होता है, ऐसा कथन सिर्फ स्पष्ट बुद्धि-वालोंका ही है। पदार्थ स्वविनाशी हैं। मुद्रादिदिन उत्तका विनाश नहीं करते।

करना काहिए कि यदि मुद्रासे घाका विनाश किया तो घासे भिन्न किया अभिन्न। यदि भिन्न कहेंगे तो घाकी स्थिति बनी ही रहनी चाहिये। यदि अभिन्न नाश किया तो मुद्रासे घाको बना दिया।

सत्त्वरूप हेतुकी विपक्षवृत्ति नहीं है अतः साधु है, क्योंकि सत्त्वार्थ क्रियासे उत्पन्न है, अर्थ क्रियाक्रम यौगव्यसे उत्पन्न है, नित्यमें क्रम यौगव्य नहीं रहते, अर्थ क्रिया भी नहीं रहेगी और अर्थ क्रियाके न रहनेसे नित्यमें सत्त्व भी नहीं रह सकता, अतः निर्वोन सत्त्व हेतु क्षणिक पदार्थकी सिद्धि करता ही है।

यह बौद्धोंका कहना भी शौमाको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि क्षणिक सिद्धिके लिए जो हेतु दिया या वह सर्वथा सदेव है। घटरादि पदार्थ, विनाशके लिए दूसरोंकी अपेक्षा रखते ही हैं और पदार्थोंको बिना स्वभावका क्षणिक रूपसे नहीं मानी जासकी। उच्च-

समुदेति विलयमृच्छतिभावो नियमेन पर्यायनयस्य ।

नो देति नो विनश्यति भावनया लिङ्गितो नित्यम् ॥

अर्थ—पदार्थ पर्यायनयकी अपेक्षासे उत्पाद विनाशको प्राप्त होता है । दृग्गार्थिक

नयकी अपेक्षा पदार्थ नित्य ही है ।

दूसरे जो यह हेतु दिया था कि सत्त्व अर्थ क्रियासे व्याप्त अर्थ क्रियाक्रम योग-
पथसे क्रम योगपथ नित्यमें रहते नहीं अतः सत्त्व रूप हेतु विपक्षमें न रहनेसे साधु है सो
हम इसका उल्टा भी कह सकते हैं यानी सत्त्व अर्थ क्रियासे व्याप्त है, अर्थ क्रियाक्रम योग-
पथसे व्याप्त है और क्रमयोगपथ क्षणिकमें रहता नहीं अतः विपक्षके समान पक्षमें भी हेतु
नहीं रहता । इस लिए हेतु असिद्ध दोषसे दूषित है क्योंकि "अमत्सत्ता निश्चितोऽसिद्धः"
यानी जिसकी सत्ताका अपाव हो या सत्ताका निश्चय न हो उसे असिद्ध कहते हैं सो यहां
सत्त्व हेतु पक्षमें न रहनेसे असिद्ध है ।

इस प्रकार वैशेषिक, नैयायिक, सांख्य, बौद्ध, इनकी 'पदार्थ-संख्याका' खंडन
किया । अब जैनियोंके स्वीकृत जीवादि ६ पदार्थोंका क्या क्या सामान्य विशेष स्वरूप
है और कैसे सिद्ध है यह बतलाते हैं ।

गुणलात्मक संसारमें निरपेक्षः दृष्टिसे हम देखते हैं तो संसारका सार गुण ही
दिखलाई देता है । जहां देखते हैं गुणकी ही मरमार है । गौण या मुख्य; स्त्री-पुरुष,
पुत्र-पुत्री, लड़का-लड़की, सम्यक्त्व-मिथ्यात्व, एकान्तवादी-अनेकान्तवादी, उल्टा-सीधा,
मला-चुरा, ऊँच-नीचा जिस तरह इन गुणोंका आविर्भाव है उसी तरह संसार दो ही
पदार्थ दिखलाई एक जीव है और द्रव्य अजीव । इसे गुणमें संसारके सभी गुण आवर
भिष्ट जाते हैं ।

"जीव शब्दकी व्युत्पत्ति 'जीवति-प्राणत् चारपति' जो प्राणोंको चारण करे इस
प्रकार की गई है" जिस तरह जीवद्रव्य संसारो मुक्तावना इन दो भेदवाला है उसी तरह
अजीवके पांच भेद हैं—१ प्रकट, २ धर्म, ३ अवर्ण, ४ आकाश, ५ काष्ठ ।

अब क्रमसे पहिले जीवकी सिद्धि करते हुए प्रद्वयवादीकी आवश्यकता और
सिद्धि निरूपण करेंगे ।

जीवद्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धि ।

जीवके पूर्वोक्त दो भेदोंके अतिरिक्त और भी एकेंद्री, दोहेंद्री, त्रैहेंद्री, चौरेंद्री,
पंचेंद्री ये पांच भेद हैं । एकेंद्रीके पृथ्वीरूप, अपूर्णा, वायुरूप, तेजस्वरूप, अनादिद्रव्य
भेद हैं । द्वायेंद्रीके दो भेद हैं—साधारण, प्रत्येक, प्रत्येकके परातिपक्ष

प्रत्येक० अप्रतिष्ठित प्रत्ये० ये दो भेद हैं। पृथ्वीके १ पृथ्वी, २ पृथ्वीकाय, ३ पृथ्वीका-
यिक, ४ पृथ्वीजीव इस प्रकार ४ भेद हैं इसी तरह अप आदिके भी भेद जानने चाहिये।

सभी जीवतत्त्वको स्वीकार करते हैं किन्तु कुछ आधुनिक सुक्ष्म कोटिमें अप-
नेको सर्वोत्तम माननेवाले जीवके कुछ भेदोंको नहीं मानते यानी मनुष्य वशु आदिमें जीव
मानते हैं, पृथ्वी जल आदिको जीवरूप नहीं मानते और इनसे भी बड़ी बड़ी सम्पत्तावाले
पार्वीक जीवतत्त्वको ही नहीं मानते, पृथ्वी जल आदिमें जीव न माननेवाले महाशय वन-
स्पतिमें भी अभी तक जीव नहीं मानते थे लेकिन कुछ दिनों पहिले डाक्टर वसुने बहुत
प्रसन्न होकर और अपने श्रमकी सफलता मानते हुए यह प्रकाशित किया था कि वनस्पतिमें
भी जीव है। डाक्टर वसुना कहना था कि जिस वनस्पतिमें जीव सिद्ध करनेके लिए मुझे
अपनी सारी शक्ति लगानी पड़ी और बहुत समय व्यय करना पड़ा उस जीव सिद्धिको
जिनाचार्य हजारों वर्ष पहिले अपने ग्रंथोंमें लिख गये हैं और इतना ही नहीं बरिक्त उस
जीवकी आयु वर्ण जाति आदि सूक्ष्म २ बातोंका भी वर्णन कर चुके हैं। जिसको सिद्ध
करनेके लिए बड़े बड़े विज्ञानवेत्ताओंकी भी बहुतसा समय शक्ति तथा जीवन समर्पण कर
देनेकी आवश्यकता है। यह जिनाचार्यके क्षोषशम, ज्ञानशक्ति, तथा सदाचारका ही
फल है।

जब कि मृततत्त्व वादियोंकी दृष्टि भी जीवसिद्धिकी तरफ झुकती जाती है और
सफलता भी प्राप्त होती जाती है तो आशा होती है कि यदि और अधिक सूक्ष्म रीतिसे
गवेषणा की जाय तो पृथ्वी अप आदिमें भी जीवकी सिद्धि हो जायगी। पार्वीक मतानु-
यायी जीवको नहीं मानते हैं अतः उनके कुछ सिद्धांतका निदर्शन कराके मैं जीवसिद्धि
करूंगा।

पार्वीक मतानुयायी कहता है कि पृथिव्यादि चार भूतत्वोंमें मो कि देहके
आकारमें परिणत है चैतन्यकी उत्पत्ति होती है।

जैसे कि मदराके कारणोंसे मादक शक्ति उत्पन्न होती है और जब ये मूलतत्त्व
अज्य २ हो जाते हैं तो पृथिव्यादि रूप ओ चैतन्य वह विनष्ट हो जाता है। अतः सिद्ध
अनादिकाठीन कोई जीवतत्त्व नहीं है। क्योंकि हमारे मतमें एक प्रत्यक्ष प्रमाण ही
मान्य है क्योंकि अनुमानादि अल्प तत्त्वको ग्रहण करते हैं अतः उन्हें प्रमाणता नहीं

वेदानुयायी ब्राह्मणोंमेंसे कोई कर्मचण्डकी प्रशंसा करते हैं और कोई ज्ञानकांडकी,
यह सब अपने २ स्वार्थवश कोई किसी ताहका कोई किसी ताहका अर्थ निराशते हैं
तो ठीक नहीं है।

नरक, स्वर्ग, मोक्ष मानना युक्तिरहित होनेसे सर्वत्र चोतक है। क्योंकि प्रत्यक्षसे न नरक ही दिखता है और न स्वर्गादि ही, फिर अश्रयकी बात है कि इस अंध-परंपरा पर लोगोंका कौनो विश्वास होता आ रहा है। उक्त—

अत्र चत्वारि भूतानि भूमिवाधिनलानिला-

चतुर्भ्यः खलु भूतैर्म्यथैतन्यमुपजायते ॥

भूमि, वारि (जल), अनल (अग्नि), अनिल (वायु) ये ४ ही पदार्थ हैं, इनसे ही जीवका निर्माण होता है।

किण्वादिभ्यः समेतैर्भ्यो द्रव्येभ्यो मद शक्तिवत् ।

अहं स्थूलः कृशोऽस्मीति सामानाधिकरण्यतः ॥

अर्थः—जैसे किणु आदिक मदोत्पादक कारणोंसे मद शक्ति उत्पन्न होती है, उसी प्रकार चार भूतोंसे चैतन्यकी उत्पत्ति होती है। देह और चैतन्य भेद मानना सर्वथा मिथ्या है क्योंकि मनुष्य जो कुछ अधिक मोटा होता है कहता है कि मैं मोटा हूँ और इससे जो प्रतिपत्ति है वह अपने आपको कहता है कि मैं बहुत पतला हूँ, यहाँ मैं इन शब्दोंसे मोटा शरीर और पतला शरीर इसका ही ग्रहण होता है। देहके सिवाय किसी अन्यका ग्रहण नहीं होता जिससे अदृश्य जीवकी वरूपना की जाय।

देहः स्थूलत्वादि योगाच्च स एव आत्मा न चापरः ।

सम देहोऽयमित्युक्तिः सन्भवे दौषचारिकी ॥

अर्थः—मेरा यह देह है, मेरा शरीर स्थूल या कृप है इत्यादि भेद प्रतिपादक वचन उपचरित ही हैं क्योंकि देहको छोड़कर आत्मा कोई देहो नहीं है।

याचज्जीयं सुखं जीयेत् नास्ति मृत्योरगोचरः ।

अस्मीभूतस्य जीवस्य पुनरागमनं कुतः ॥

अर्थः—प्रश्नकर्ता कि जीवन है आनन्दसे जीना चाहिये क्योंकि सब हीका नाश नश्यत्वाकी है और नाश होनेके बाद पुनः जीव आना नहीं जिससे कि फिर सुख मिल सके।

तथा नीच स्वर्ग मोक्ष आदि किसीकी भी सिद्धि नहीं होती। पुनः जो ब्राह्मणादि श्रीशक्तिका उपदेश देते हैं वे अपने स्वार्थदर्श होकर ही देते हैं।

ततश्च जीवनोपाय ब्राह्मणैः विहितस्त्वह ।

मृत्तानां भेतकामाणि न त्यज्यच्छिद्यते फलित ॥

अर्थात्—धूर्त ब्रह्मण गणने अपने जीवनोपाध के लिए नाना क्रियाओंका कथन किया है। यह उनका कथन है कि मनुष्यके मानेके बाद प्रेतकार्य करने पड़ने हैं, क्योंकि बिना प्रेतकार्य किये मनुष्य स्वर्ग सुख कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता।

त्रयो वेदस्य कर्तारो भण्डधूर्त निशाचरा ।

जफरीतुफरीत्पादि पण्डितानां वचः स्मृतम् ॥

अर्थ:—वेदके तीन ही मुख्य कर्ता हैं—मण्ड, धूर्त, राक्षस, क्योंकि जफरीतुफरी आदि वचन धूर्त, मण्ड, राक्षस पण्डितोंके वचन ही हैं। इस तरह जब जीवजी ही सिद्ध नहीं होती तो फिर अजीव किम ताह सिद्ध होगा, क्योंकि जो जीव नहीं उसे अजीव कहते हैं। अजीव जीवका प्रतिषेध रूप है, प्रतिषेध हमेशा विधि पूर्वक होता है। जन कि मुख्य जीव अजीव ये पदार्थ ही सिद्ध नहीं होते तो जीव पुद्गलकी गति स्थितिके सहायक धर्म, अधर्म द्रव्य, अवगाह देनेवाला आकाश, तथा इनको वर्तनेवाला काल ये कैसे सिद्ध हो सकते हैं। और जीव अजीवके बन्व निर्जरा मोक्षादि कैसे सिद्ध होंगे।

इस तरह जीव, धर्म, अधर्म, आकाशादि किसीके सिद्ध न होनेसे चार्वाकमत सिद्ध हो गया और उसीका सब लोगोंको आश्रय लेना चाहिये। सांख्य मतानुयायी जीवको मान करके भी कूटस्थ नित्य मानते हैं। मीमांसक अकिञ्चिन्कार मानते हैं, नैयायिक जीवको जड़ रूप मानते हैं, और ब्रह्मानुयायी ज्ञान सन्तान रूप ही मानते हैं। इत्यादि सिद्धांत माननेवाले परमार्थनः सत्य सिद्धांतसे बहुत दूर पड़े हुए हैं।

प्रथम चार्वाक मतका सण्डन किया जाता है—पृथ्वी, अग्नि, वायु, और अग्निसे यदि जीव बनता होता तो पृथ्वी आदिके गुण उसमें अवश्य पाये जाते चाहिए क्योंकि कारणके धर्म कार्यमें अवश्य आया करते हैं, यदि ऐसा न हो तो मिष्ट गुणके द्वारा बनी हुई चीज़ कहुई भी लगनी चाहिये। और विषके द्वारा मनुष्यको नशा भी नहीं आना चाहिये इत्यादि तथा ऐसा होनेसे पदार्थ व्यवस्थाका व्यावहारिक हो जायगा। अतः कार्यमें कारणके धर्म अवश्य आना चाहिये।

जन कि पृथ्वीका गन्धवत्त्व काठिन्य गुणात्मकता आदि गुण, जड़का द्रव्यत्वादि, वायुका ईरणादि, अग्निका दाहकत्वादि गुण चैतन्यमें पाये ही नहीं जाते। कभी भी यह बातें मान्य नहीं हो सकती कि जीव चार भूतोंसे बना है। अन्यथा जैसे कि कारणके धर्म कार्यमें अवश्य रहने चाहिये उसी तरह कार्यके धर्म भी उसके कारणमें अवश्य रहने चाहिये। नहीं तो यह कार्य इन्हीं कारणोंका है इसका निश्चय कैसे हो सकेगा।

चैतन्यका पृथ्वी आदिमें कोई धर्म भी नहीं पाया जाता। मनुष्यको जो ज्ञान होता

है, स्मृति होती है, प्रत्यभिज्ञान होता है, सुख दुःख का अनुभव होता है, यह सब पृथ्वी आदिमें नहीं पाये जाते ।

(शाङ्खाकार)-अलग अलग पृथ्वी आदिमें ये धर्म नहीं पाये जाते किन्तु जब पृथ्वी आदि सब मिल जाते हैं तब इसमें इन सब धर्मों का उत्पाद हो जाता है । जैसे कि मलसन (स्फोटक द्रव्यविशेष) को आप अलग चाहे जितनी बारीक पीस सकते हैं और उसी तरह पटासल (स्फोटक द्रव्यविशेष) को भी बहुत बारीक पीस सकते हैं लेकिन यदि आप उन दोनोंको एकत्रित करके पीसना चाहें तो पीसनेकी बात तो दूर रहे आप उस मिली हुई मलसल और पटासलकी धूलिके ऊपर स्वरूप आपात भी नहीं कर सकते क्योंकि उन दोनोंके मिलनेसे उनमें दाहकत्व शक्ति आ जाती है । यहां जिस तरह अलग २ दाहकत्व शक्ति नहीं भी थी लेकिन मिलाप होनेसे आगई । दृष्टांत दृष्टांत यह भी दिया जा सकता है कि जैसे तानी दहीमें स्वतंत्र जीवके शीघ्र पैदा करनेकी शक्ति नहीं है और मिर्गोड़ों (दाहके बने हुए) में भी स्वतंत्र शीघ्र जीव पैदा करनेकी शक्ति नहीं है, लेकिन उन दोनोंको मेल करनेसे कुछ समय बाद ही या मेल करके मुंह तक लेगाते ही जीव पड़ जाते हैं । उसी तरह द्रव्य पृथ्वी आदिमें अलग २ ज्ञानादि उद्घाटनकी शक्ति नहीं है किन्तु संयोग होनेपर हो जाती है ।

यह कहना भी अविचारितारम्य ही है क्योंकि आपने जो दृष्टांत दिये वे दोनों ही दृष्टांताभास हैं । आपने जो यह कहा कि जैसे अलग २ परसल पटासनमें दाह करनेकी शक्ति नहीं है लेकिन मिलनेसे होजाती है यह सर्वथा असत्य है । आपको उन दोनोंमें प्रयत्न २ भी अवश्य दाहकत्व शक्ति माननी पड़ेगी, क्योंकि निम्नमें प्रयत्न २ ही शक्ति नहीं होती उनमें इकट्ठे होने पर कैसे आ सकती है । जिस नींबू, कंभीर, बिप, हलाहलमें प्रयत्न २ माधुर्य शक्ति नहीं है तो मिलने पर भी नहीं आ सकती । यदि आप ऐसा कहे कि प्रयत्न २ पृथ्वी आदिमें भी ज्ञानादि शक्तियाँ रहती हैं तो पृथ्वीसे निर्मित वर भी ज्ञानवान् होना चाहिये । इसके द्वारा गनी हुई नर्क भी ज्ञानवती होनी चाहिये अतः पृथ्वी आदिमें ज्ञानादि शक्ति न होनेसे पृथ्वी आदिके द्वारा ज्ञानवान् जीवकी कदापि उत्पत्ति नहीं मानी जा सकती और जो व्याप (वार्तिक) यह कहते हैं कि "जीव नहीं है" तो यहां जो जीवको ज्ञानवादा है और नास्तिस्वको साध्य बनाया है । पर हमें यह प्रसिद्ध हुआ करता है कि जो जीव जब आपके यहां माना ही नहीं जाता तो प्रसिद्ध नहीं हो सकता, और प्रसिद्ध न होनेसे जीव पर कोटीमें नहीं छाया जा सकता फिर उसे पस बनाना क्याप है ।

(शाङ्खाकार) आप जैनी लोग तो जीवको प्रसिद्ध ही मानते हैं अतः हम आपके द्वारा प्रसिद्ध भी जीव है उक्त निवेद कर देंगे, अब आप यह नहीं कह सकते कि

हुपने (चार्वाक) विना प्रसिद्ध जीवको पक्ष बना लिया । हमने जीवकी प्रसिद्धता आपसे जानली और प्रसिद्ध होनेसे उसे पक्षकोटीमें रहकर नास्तित्व काध्य दिया ।

(जैन) आपने जो हमारे जाने हुए प्रसिद्ध जीवको माना सो प्रमाण रूपसे या अप्रमाण रूपसे । यदि कहोगे कि प्रमाण रूपसे माना तो फिर नहीं कह सकते कि आप किस बुद्धिमत्ता से उसका खण्डन कर रहे हैं । यदि अप्रमाण रूपसे माना तो वह आपके लिए अप्रमाण ही है फिर आप उस अप्रमाणको अप्रसिद्ध होनेसे कैसे पक्ष बना सकते हैं ।

यदि आप कहें कि हम अनुपलब्धि हेतुमे जीवका अभाव सिद्ध करेंगे सो आप ऐसा भी नहीं कह सकते हैं क्योंकि आप अनुमान तो मानते नहीं और साधनसे जो साध्यका ज्ञान करना है उसे ही अनुमान कहते हैं ।

यदि आप कहें कि हम व्यवहारके लिए अनुमान मानते ही हैं तो हम आपसे यह पूछते हैं कि आपने जीवके अभावको अनुपलब्धिसे जाना तो आप करें कि आपने अनुपलब्धिवी किससे जाना । यदि कहेंगे कि अभावसे तो अन्यो-नाश्रय हो जायगा क्योंकि जीवका अभाव सिद्ध अनुपलब्धिसे हो और अनुपलब्धि अभावसे सिद्ध हो ।

तीसरे अनुपलब्धि का हेतुकी अभावके साथ व्याप्ति ही नहीं है क्योंकि कारण आदानानुपलब्धि ' या ' स्व-क्षुपा प्रत्यक्ष उपलब्धि ' रूपसे ग्रहण करना उपलब्धि कहा जासकता है या अपनी चक्षुसे प्रत्यक्ष करना टाला जा रहा ना सकता है और उसको अनुपलब्धि किन्तु परमाणु न तो हमसे ग्रहण किया जा सकता है और न चक्षुमे प्रत्यक्ष ही किया जासकता अब अनुपलब्धिका उक्त दोनों अर्थोंमेंसे कोई एक अर्थ करनेसे या दोनों ही अर्थ करनेसे परमाणुमे अनुपलब्धि हेतु रह जाता है लेकिन परमाणुका अभाव तो है नहीं क्योंकि यदि परमाणुका अभाव हो जायगा तो परमाणुका समूह स्वयं नहीं मिल सकता और स्वयं न मिलनेसे समारको सर्व शून्यताही प्राप्त आ जायगी ।

चतुर्थ दोष यह है कि अनुपलब्धि का हेतु प्रसिद्धता ही अस्ति है । क्योंकि जीवका स्वतत्वेदनेसे प्रयत्न होता ही है । स्वतत्वेदना भी सुख-दुःखादि स्व मवेगनेसे प्रसिद्ध ही है ।

(शङ्कर)—ज्ञान अन्वर्त विदित होने है वय होनेसे । जो जो वेदनेमें है वे वे अस्वतत्वेदित होने हैं । जैसे किष्कान्देय है (उल्लय) अतः अस्वतत्वेदित है (निगमन) और न कि ज्ञान अस्व तत्वेदित है तो उसके द्वारा जीवकी किसतरह सिद्धि की जासकती है ।

ऐसा कहना भी प्रचार मात्र है । क्योंकि ज्ञानकी स्वमविदितता प्रमाणमे प्रसिद्ध है । ज्ञान स्वमविदित है । जबमामर्श अपनेसे अतिरिक्त कारणान्दरोही अस्वतत्ता अभाव होनेसे वहाँ हेतुधे अस्ति कहनेकाश भी सम्भाषी नहीं कहना सक्ता क्योंकि उक्त हेतु

सिद्ध ही है, कि ज्ञान अपने प्रकाशनके लिए अपनेसे भिन्न कारणान्तरोंकी अपेक्षासे रहित है। प्रत्यक्ष स्वर्णका गुण होते हुए अदृश्य। अनुयायिकाण होनेसे प्रदीपके समान जैसे दीप अपने आपको तथा दूसरे पदार्थोंको प्रकाशित करता है।

दूसरे यदि ज्ञानको दूसरे ज्ञानसे वेद्य मानोगे तो दूसरा ज्ञान तीसरे ज्ञानसे वेद्य मानना पड़ेगा। ज्ञान होनेसे इसी प्रकार तृतीयादि ज्ञान अन्य अन्य ज्ञानोंके जाननेमें ही लगे रहेंगे तो प्रकृत पदार्थके जाननेसे वञ्चित ही रह जायेंगे।

तृतीय दोष यह है कि परोक्षज्ञानके द्वारा पदार्थोंका प्रकाशन भी नहीं हो सकता। यदि परोक्षज्ञानके द्वारा भी पदार्थोंका प्रकाशन हुआ करे तो दूसरे व्यक्तिका ज्ञान भी हमारे लिए परोक्ष है अतः उस ज्ञानसे भी पदार्थोंका ज्ञान होना चाहिये।

अपने परोक्ष ज्ञानसे पदार्थोंका प्रकाशन होता क्योंकि वह ज्ञान समवाय सम्बन्धसे अपनी आत्मामें रहता है और दूसरेके परोक्ष ज्ञानसे पदार्थ प्रकाशन नहीं होसकता है क्योंकि वह ज्ञान अपनी आत्मामें नहीं रहता। यदि ऐसा कहेंगे तो यह आपका कहना भी विचारशून्य है क्योंकि आत्मा ज्ञानको आत्मासे सर्वथा भिन्न मानते हैं।

चार्वाक तो उक्त कथन कदापि कर ही नहीं सकता क्योंकि वे आत्मा समवाय आदि कुछ नहीं मानते हैं सिवाय पृथ्वी आदि ४ भूतोंके।

उक्त सर्व कथनका सार यह है ज्ञान स्ववेदन मानना चाहिये और उस स्ववेदन ज्ञानसे जीवकी सिद्धि हो ही जायगी।

और भी देखा जाता है कि उसी समयका उत्पन्न पाठक बिना किसीके उपदेशसे अपनी माताके स्तनसे दूध पी निकलता है। पाठकके दूध पीनेकी अभिलाषा बिना प्रत्यभिज्ञानके हो नहीं सकती और प्रत्यभिज्ञान बिना स्मरणके नहीं होता, अतः पूर्वाभ्यास अवश्य ही मानना चाहिये। कोईर भूत आदि हो गते वे किसी न किसी आदमीके ऊपर आकर अवश्य बोझो हैं कि मैं पहिले वह था “ अब वहां हूं आदि तथा कोई कोई बच्चा वृद्ध सुख दुःख भी अपने पूर्व मरकी सन पाठ बतादिवा करता है। यदि ४ भूतसे जीव बने होते तो शरीरके नष्ट होनेके साथ साथ ही जीव भी नष्ट हो जाता लेकिन दूसरे पक्ष तक ज्ञान सम्बन्ध जाता है तो ज्ञान होता है कि पार भूतसे जीव नहीं बना है।

उक्त— तदहंजनेस्तनेहातो रक्षोदृष्टेः भवसृष्टेः।

भूतानन्ययानस्मिन्ः प्रकृतिज्ञः सनातनः ॥

उसी दिनेके उत्पन्न हुए पाठककी स्तनमें स्तनः दृश्य होनेसे, राक्षस रूप में किसीके देखनेसे, पूर्व मरकी स्थिति होनेसे और पारभूतोंका अन्वयन होनेके कारण जीव अनादिसिद्ध मानना ही चाहिये।

મુંબઈ પ્રાંતિક સભા અને ગુજરાતના માઈઓ

આપણા ગુજરાતના દિગંબર જૈનોમાં અનેક નીતિઓ છે જેની કે દશાહુમક, વીશાહુમક, નરસાંકપરા, ધોગેરે દરેક સાતિના બાધઓ નજીકના દરેક કે મુંબઈ દિગંબર જૈન પ્રાંતિક સભા થું છે ને થું કામ કરવા ધારે છે. તેની એક લગભગ દરેક વરમે યામ છે, કરાવે યામ છે, તેના જૈન મિત્રમાં તથા દિગંબર જૈનમાં સાતિ સુધાર વીગેરેના લેખો આવે છે. જૈનમિત્ર વખતે કેટલાક ગામોમાં નહિં આવતું હોય તો તે ગામવાળાએ એક કે વધે અને પૂતની મદિર ખાતે તો અવસ્ય મંગાવરીજ નોમીએ. આ પછી દારા ગુજરાત પ્રાંતના મંત્રી કેટલીક બાબતો ઉપર વિવેચન કરવા છટ્ટા રાખે છે, માટે દરેક સાતિના શુભ ચિંતકોએ પોતાની સાતિમાં જે કંઈ ખરામ વિવાજ શીકાવાન હોય તેના મંત્રી ઉપર મોકલી આપના કે જેથી તેના ઉપર લંબાણથી રીક્ષા કરી લોકમત ફેગવવાનું કાર્ય સરજ થાય. વધારા વખતથી એકની એક બાબત ઉપર વધારે રીગ કાય છે, લોકમાં ચર્ચાય છે તો પછી લોકમત અનુકુળ થઈ જાય છે માટે ગુજરાત પ્રાંતના મંત્રી તરીકે મારી ફરજ છે કે પ્રાંતિક સભાને મદદે દરેક દરેક દિગંબર જૈનના ઘેર પહોંચાડવો. એ કાર્યમાં સરજતાને આધાર આપણા બાધોની મદદ ઉપર છે માટે જેની છટ્ટા હોય તેણે ખુલાસાવાર રીત રિવાજ, કંઈ જરૂરીઆદ, વીગેરે બાબત ઉપર, ખર વ્યવહાર કરવો.

હમણાં જે બાબતો ઉપર આપણું લક્ષ્ય છે એવા ધારે છું. એક નિરાધાર કુટુંબને મદદ પહોંચાડવાની યોજના માટે છે. બીજા નીચીની માણસોને ધંધામાં પેતાની મદદ કરવા માટે છે. ત્રીજી દિગંબર જૈન ગુપ્ત મદદ ફંડ. શ્રીમાન મમોવત્સલ સુદિસાગર દયાનિધાન મહાશયજીના શેઠ સાહેબ, જેઓ વિનવો કે આપણુ મળે તે આપણુ

પાછલા બનના મહાન પુણ્યે કરી જૈન ધર્મ મળ્યો છે. આપણા તીર્થંકર ભગવાને ગુરુત્ર દશામાં રાજપાટ, કરોડોની લોકલ અને રાજ્યવૈભવ પોતાના અને બીજાના કલ્યાણ માટે તજ દીધો છે, આવા દવાના ભંધાર જીનેશ્વર ભગવાનના આપણે સેવક છીએ, આપણે સુક્રમ છત્રી કાંથી જેવા મોટા છત્ર ઉપર દયા બતાવીએ છીએ. આપણે જૈનો પાલ્લરોળ, દવાખાનાં, બોર્ડિંગો, મદિરા જેવા ખાતા નમાવનારા તરીકે આખી દુનીઆમાં પ્રખ્યાત છીએ, પણ આપણી સમાજમાં એક બાબતની ખામી છે અને આ બાબત તરફ સખી ગૃહસ્થોનું ધ્યાન ખેંચવા રમ્મ લડે છું. આ દુષ્ટ કાળે કરી કેટલાંક કુટુંબમાંથી દમાનાર મુખ્ય પ્રુરુષ બધારે મરણ પામે છે ત્યારે પાછળ વિધવા અને નાના બચ્ચાં વિવાહ કરતાં રહે છે, સગાંબાંબાં અલગત તેમની બરસાથ લે છે, પણ કેટલાંક કુટુંબ એવાં પણ હોય છે કે જેને કાંઈતો પણ આધાર નથી. એ સિવાય આજની બધાંકર મોંઘવારીમાં કેટલાક બાધોને પણ ઉદરોપાય કરવું મુશ્કેલ થઈ પડ્યું હશે તેવા કુટુંબને મદદ કરવી એ સાતિમાઇઓની પહેલી ફરજ છે. આપણે ધરમાં મિજાન ખાધએ અને નિરાધાર કુટુંબના બચ્ચાંને ખાવા કણ્ઠી સરખી પણ ન મળે એ જાણી કે તે દયા ન ઉપજે ? બચ્ચાં અને મા ધરમા એહાંએહાં હુમ્કો મેરે એ જાણી કોની આંખમાંથી આંસુ નર્ધ આવે ! આ વાત નમરે જોમલી છે. અરે એથી પણ વધારે દુઃખદાયક રમીતિ તમે કહાચ જોઈ કે સાંભળી હશે. આં સુધી આના નિરાધાર માટે મદદ ન થાય ત્યાં સુધી આપણે મિઠાન નમવું આપણને શોભા બરેહુ નથી. આપણા જેતાં તેમજ પ્રુરુષ જાહેર મજુરી કે સકાતાં નથી તેમ કે.કને મોઢે દુખ જાહેર પણ ખેરતાં નથી એટલાજ માટે આવા ગુપ્ત મદદની અતીસય જરૂર છે એમ આપણા ધ્યાનમાં જરૂર આવશે. આને માટે મોટા ફંડની કંઈ જરૂર નથી. નીચે લખેલી કક્ષો પ્રમાણે આ શેઠના અમલમાં મુદાય તો કાર્ય સરજ થાય.



૧ સાતિવારે જ્યાં વરતી વધારે હોય તે ગામમાં કમીટી નીમાઈ આ જોજના અમલમાં મુકવા વળવીજ કરે.

૨ દરેક ગામદીઠી તીરાધાર કુટુંબની જરૂરી આતો નક્કી કરવી અને કેટલા પૈસાની જરૂર છે તેનો અકસરો કાઢવો.

૩ દર વરસે આપ કેટલી રકમ પ્રથમ પાંચ વરસ સુધી દર વરસે આપી શકશો તે નક્કી કરી મંત્રીને લખી મોકલવી.

૪ જે ઘેર મદદ પહોંચાડવાની હશે ત્યાં તે ગામના એક ગૃહસ્થને કમીટી લખી જણાવે એટલે તે પોતાના ગામમાંથી પૈસા ઉધરાવી અનાજની થુણ વીગેરે મજુર મારફતે ગુપ્ત રીતે પહોંચતી કરે અને કમીટીને લખી જણાવે.

૫ પોતાના ગામની મદદ પુરતી ન હોય તો કમીટીને લખેથી ખીજા કોઇ ગામની ફાજલ પડતી રકમ મોકલો આપશે.

૬ કમીટીએ પૈસા ગામદીઠી ઉધરાવી એકા કરવાની જરૂર નથી પણ એકંદરે આંટડો નક્કી કરી તેની પત્રદ્વારા જાહેર કરે એટલે નાણાંના જોખમદારી વેડની પડે નહિ. અજુમરે એક દાય નહિ.

૭ પોતાના ગામમાં કોઈને મદદની જરૂર ન હોય તો કમીટી લખે ત્યાં પૈસા ઉધરાવી પહોંચતા કરવા.

૮ દર વરસે માઠા સુદી પુનેમ સુધીમાં આ વાર્ષિક રકમ આપી શકાય એવી સમગ્ર દરેક

સ્વાદી અને ગુજરાત.

સમગ્ર ભારતનું ગૌરવ ગળવનાર હિંદના હીરા મહાત્મા મોહનદાસ કરમચંદ ગાંધી જોજનારએ જતાં સમગ્ર દેશને ખાદી પહેરવા અને રેડીઓ ચલાવવાનો છેવટનો સંદેશ આપી ગયા છે. અને તે પછી દરેક ઠેકાણે મહાત્માજીના એ સંદેશને ધણા હર્ષથી વધાવી લીધે છે.

રાષ્ટ્રીય સપ્તાહમાં ખાદી પ્રચાર કરવા મોટા વેપારીઓ અને દેશ મેળાઓએ તન મન ધનથી અથાગ પ્રતિભાવ કર્યો છે.

દેશબંધુ દાસ, લાલા લખપતરાય, પંડિત મોતીલાલ નંદર જેઓ દેશ માટે જોજ ગમ્યા કરી રહેલા છે તેઓએ પણ પવિત્ર ખાદી વાપરવા હંમેશાં દહેલું છે.

આપણા જૈનધર્મજુષણ છંદ સીતલપ્રસાદજી તેમજ આપણી જૈન સભાઓ પણ આપણને પવિત્ર ખાદી વાપરવા બહામણ કરે છે તેમ હિંદી રાષ્ટ્રીય ઠાકોરનો દરાવ પણ ખાદી પહેરવાનો છે અને સમગ્ર દેશનેતાઓ પણ ખાદી પહેરવાનો સંદેશો દઈ રહેલા છે તેજ પ્રમાણે આપણે પવિત્ર ખાદી વાપરવી જોઈએ તેને બદલે અપમાન મુજરાતના કેટલાક જૈન બ્રાહ્મણો લખ જોવા મળે છે. યશગીમાં વાપરવા સાર પહેરી દાપડ ખરીદે છે છતાં!



હમારા કેટલાક જૈન બાઈઓ પરદેશી કાપડ પહેરો આખા ગુજરાતના નામને કલકિત કરવા તેવાર થાય તેનાથી નીચું વધુ પાપપ્રધુ હેઠળ શકે ?

આપણે આપણા દેશ પ્રત્યેનો આપણો ધર્મ સમગ્ર પરદેશી કાપડ ખરીદ કરી આપણા પૈસાનુ પાણી કરવામાં (આખર અને શ્રીમતાઈ બતાવના કન્તા) અને પરદેશી કાપડ પહેરવામાં પાપ સમજવું જોઈએ અને ગુજરાતનું ગૌરવ વધારવા ગમે તેવા સારા પ્રસંગોમાં પણ ખાદી સિવાય બીજા કાપડનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ નહીં પણ પવિત્ર ખાદી વાપરો આપણી પવિત્રતા સાબીત કરવી જોઈએ. આપણા પવિત્ર જૈન મંદિરોમાં ચડવા તેમ શાસ્ત્રો બાધવામાં દેશભી કુપર્યાનો ઉપયોગ કરતા હતા પણ આપણે દેશમ વાપરી મહાન દિસાવા ભાગી બનીએ છીએ કારણકે દેશમ છીડાઓમાંથી ઉત્પન્ન કરવામાં આવે છે અને તે છીડાઓને મારી નાખીને દેશમ કાઢે છે ખાદે એ દેશમ વાપરીએ તે તો મહાન હિંસા ગણાય ત્યારે આપણા મંદિરોમાં પણ ખાદી વાપરવાથી હિંસા કરેલી અપવિત્ર વસ્તુ હમેશ માટે નાશદ થશે. તેમ પિંડાચતી કાપડમાં મેરે ભાંગે કાંટામાં દાડકા જેવી અપવિત્ર વસ્તુ વાપરવામાં આવે છે એટલે આપણે અહિંસા વાદીએ અપવિત્ર વસ્તુ વાપરી દોષિત થવા કરતા પવિત્ર ખાદી વાપરવામાં આપણો ધર્મ સમજવો જોઈએ

ગુજરાતના ગામડાઓમાં આપણા જૈન બાઈઓ વ્યાપારમાં અમરધાન ધરાવે છે અને આપણે ખાદી પહેરી તે કંઈ નહીં વાંદ નથી. આપણને ખાદીનો પ્રથમથી સહવાસ છે તેમ ખાદીનો ઉપાડ પણ સારો થાય તેમ છે એટલે આપણા ગુજરાતના જૈન બાઈ પોતાને ઘેર સાગી ગણી ખાદી બનાવના હમ્મ રાખે તો દેશને ધણો લાભ આપી શકે અને હાથવણાટના ઉદ્યોગને ખીલવવા ઉત્તેજન મળે તેનો તાજો દાખલો હાલ સર્વસ (પ્રતીજ) ગામમાં આપણા દિંબ જૈન બાઈઓ બાઈચંદ ગુલામચંદ ગાધી, વીરચંદ ગુલામચંદ મલી અને હમનજીસ સામંતચંદ કાંઈ એકો

ખાંદ અને મહેનતથી પોતાને ઘેર છ સાગી રાખી હાથવણાટની ખાદી મનાવે છે અને તેઓ પોતે ખતીલા હિંનાથી મજબુદ અને સફાઈદાર બનાવી શકે છે. ગુજરાતના દિંબ ૮૦ માં ઘેર સાગી રાખી હાથ વણાટના ઉદ્યોગને ખીલવવા બદલ તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે અને તેઓશ્રીનું અનુકરણ કરી હાથવણાટ ખીલવવા આપણા બીજા બાઈઓ હલ્લ આપશે, એવી આતા રાખીશું.

હેન્ટે આપણા ગુજરાતના એકેએક બાઈની ક્ષરણ છે કે આપણા દેશ માટે આપણા દેશના હમારા બાઈઓ જલ મહેલ નિવાસી થયા છે તેમને છોડાવવા અને ગુજરાતને કલકિત થતા અટકાવવા અપણે ખાદી પહેરીશું. આજે આપણા દેશમાં હમણે વેલસ્ટિયરો દેશનું કામ વગર પગારે કરી રહ્યા છે તો આપણે આપણા ગામના દરેક બાઈને ખાદી પહેરવ ને વીતવવા જોઈશે પ્રયાસ શું નહીં કરી શકીએ ?

શ્રી સેવક-ગુજરાતી જૈનબંધુ.

—○—

વનસ્પતિ.

બીજની ઉત્પત્તિ-આડ ઉપર કળા અર્થ છે. તે કળાની ઉપર લીલી જાન હોય છે. તે જાનને વળ કહે છે અને તે કળાની તીચે કુલ હોય છે. તે કુલને આપણે પાખડીઓ અથવા કુલમણી કહીએ છીએ. તે પાખડીની અંદર પુકેશ્વર અને શ્રી કેશર હોય તેમાં શ્રી કેશર પોસી હોય છે. અને પુકેશ્વર પોસી હોય નથી, તેના ઉપર પરામકેશ હોય છે. તે પરામ કેશને હવા લાગવાથી તેમાં બમરા, આખ વગેરે તેના ઉપર એમવાથી તે પરામકેશ અકિંચરતા બીજાથ અથવા ગર્ભાથમા અર્થ તેવું બીજ થાય છે. તે બીજ પાકુ થાય છે, એટલે તે વાતવાના કામમાં આવે છે.

વનસ્પતિનાં કારણો-હવા, પાણી અને



ખાતર. જે હવા ન હોય તો વનસ્પતિ પીળા પડે છે, અને સુકાઈ જાય છે. વળી જે પાણી ન હોય તો પણ વનસ્પતિ સુકાઈ જાય છે. અને જે ખાતર ન હોય તો વાવેલી વનસ્પતિ જેમજે તેવી થઈ શકતિ નથી. માટે વનસ્પતિને હવા, પાણી, અને ખાતરની ખાસ જરૂર હોય છે. વળી કોઈ વનસ્પતિ તો હવા અને પાણીથી થાય છે. તેને ખાતરની જરૂર પડતી નથી, તે વેલા અથવા નાના છોડવા હોય છે. તે ઝાડ થઈ શકતું નથી.

ઝાડની ઉત્પત્તિ-કેવી રીતે થાય છે ?

ખીજને જમીનની અંદર વાવવાથી તેનો ફુલગો થઈ ઉપર આવે છે. પછી તેને પવન લાગવાથી તે દિવસે દિવસે વધતો જાય છે. મોટે થાય ત્યારે તેને છોડ કહે છે, અને તે વધારે વધે તથા તેને ઝાળીઓ આવે ત્યારે તેને ઝાડ કહે છે.

વનસ્પતિ ઉગવાનાં ત્રણ પ્રકાર છે. - છોડ, અને વૃક્ષ.

છોડ એ ત્રણ હાથનો હોય છે, તે પાતળો સાંકડા જેવો હોય છે, અને તેનાં શીશીમાં જમીનની અંદર થોડું મોટાં હોવાં નથી. તે છોડ-કપાસ, શુભાજ, દળરીગણ, તુલસી, ડમરો, ડાંગર અને ઘઉં વગેરે અનેક જાતના છોડ હોય છે. તેમાં કપાસના છોડ ઉપર કેરી આવે છે, અને તે કેરીની અંદરથી ૩ નીકળે છે, તે ફળી અંદરથી કપાસીઆ નીકળે છે. તે કપાસીઆ ઢોલને ખચાવવામાં આવે છે, વળી એ રતું ઠાપડ વણાય છે. તે ઠાપડ માણસોને પહેરવાના કામમાં આવે છે.

વેલા જમીન ઉપર પથરાયેલા હોય છે, અથવા તે કોઈ ઝાડ અને ઘરના આધારે ઉપર ચડે છે. પરંતુ તેની મારફત આપે આપ વધી શકતા નથી. તે વેલા કારણ, કાકડાં, ટીંગાં, તુલસી અને શાકડી, વગેરેના વેલા હોય છે. ઉપર જે રંગ ફુલ બેસે છે તે ફળ લાભાનના કામમાં આવે છે અને કોઈ કોઈ વેલા ઉપર ફુલ થાય છે તે ભજવાનને ચડાવવામાં આવે છે.

કોઈ જોળને જમીનની અંદર વાતોળે તો

તેનો ફુલગો થઈ ઉપર આવે છે. પછી તેને પાંદડાં આવે છે, અને તે ઝાળીઓ ચારેતરફ ફેલાઈ મોટું વૃક્ષ બને છે. ફરી પાછાં તેને ફુલ આવે છે. તે ફળ ફુલને પક્ષીઓ જંગલ અથવા વગડાની અંદર લઈ જઈને ત્યાં બેસીને ખાય છે. તેનું પી ત્યાં પડી રહે છે. અને તેના ઉપર ચોખાસાની અંદર વરસાદ પડવાથી તે ખી પાંખું ઉગે છે. અને તેનું વૃક્ષ થાય છે. એવી રીતે જંગલ અથવા વગડામાં વૃક્ષ ઉગે છે. ત્યાં તેને કોઈ વાવવું નથી. વળી તે વૃક્ષ આંબો, મંડુકો, લીંબડો, સાગ, સુખડ અને ચંપા વગેરે અનેક પ્રકારનાં વૃક્ષ હોય છે.

વનસ્પતિ બે પ્રકારની થાય છે. એક સપુષ્પ અને બીજી અપુષ્પ થાય છે. જેને ફલ ફૂલ આવે તે સપુષ્પ વનસ્પતિ અને જેને ફળ ફુલ ન આવે તે અપુષ્પ વનસ્પતિ કહેવાય છે. જેમકે કાળો દંસરાજ, વિલાયતી ધાસ, લીલ, સેવળ, વગેરે અપુષ્પ વનસ્પતિ હોય છે. વળી લીંબડો, ચંપા, શુભાજ અને આંબો વગેરે સપુષ્પ વનસ્પતિ હોય છે.

વનસ્પતિનો ઉપયોગ :

જે વનસ્પતિ શાકા કામમાં આવે છે. ? અનાજ અને ધાસ તે વનસ્પતિની અંદર થાય છે. અને તેના ઉપર પ્રાણી માવતું જીવતર છે. જે તે અનાજ અને ધાસ ન હોય, તો પ્રાણી માત્ર જીવી શકે નહિ. વળી ચાક, બાજી, ફલ, ફુલ, વગેરે વનસ્પતિની અંદર થાય છે. બીજું વનસ્પતિ ચોખવાના કામમાં આવે છે. વળી કોઈ કોઈ વનસ્પતિ ઉપર પુખ્ત થાય છે તે પુખ્ત અપર બને છે. વળી તે વનસ્પતિ હવા શુદ્ધ કરે છે. અને તેનાં લાકડાં, કાંચલા, ચંદન અને દેશ વગેરે થાય છે તે દેશ ભજવાનની પૂજા કરવાના કામમાં આવે છે. અને લાકડાં, તથા કાંચલા ભજવાના કામમાં આવે છે.

વનસ્પતિ બે પ્રકારની હોય છે. એક પ્રત્યેક અને બીજી સાધારણ. જે વનસ્પતિના આપે કોઈ જીવ હોય તે પ્રત્યેક જેમકે ફળી, શાકડી,



લીંધુ', વગેરે અને જે વનરપતિના આશ્રે ધણા છવેા હોય તેને સાધારણ વનરપતિ કહે છે જેમકે ખટાકા, શકરીયા, આદિ વગેરે. વળી તે પ્રત્યેક વનરપતિ એ પ્રકારની છે. એક સપ્રતિષ્ઠ અને બીજી અપ્રતિષ્ઠ તથા સાધારણ વનરપતિ પશુ એ પ્રકારની છે. એક દત્તર નિગોદ અને બીજી નિત્ય નિગોદ. જે નિગોદની અંદરથી છવેા નિકળ્યા નથી તેને નિત્ય નિગોદ કહે છે, અને જે નિત્ય નિગોદમાંથી નીકળી પાછા નિગોદમાં પડે તેને ધવર નિગોદ કહે છે. એ નિગોદીઆ છત્ર ત્રણ લોકમાં અસંખ્યાત બનેલા છે. મારે એ સાધારણ વનરપતિની અંદર અસંખ્યાત છત્ર સમજી તેને તળવી તોષણે. વળી એ વનરપતિ મા ૧૦ લાખ પ્રત્યેક અને ૧૪ લાખ સાધારણ વનરપતિ છે. અને બંધી મળી ૨૪ લાખ વનરપતિ કાય છે. અને એને ચાર પ્રાચ હોય છે. ૧ રપર્ધન ઇર્ધ, ૨ દાયમજ, ૩ આયુ અને ૪ રસાસીરસાસ. વળી તે વૈર છે મરે છે, અને છવે છે. તેને ડુંખ મુખ માલમ પડે છે. વળી તેમાં ખતિ અને શ્રુતિ એ બે જ્ઞાન હોય છે.

ઉપર કહ્યા પ્રમાણે બીજની ઉત્પત્તિ થાય છે અને બીજની અંદરથી વનરપતિ થાય છે અને બીજની અંદરથી વનરપતિની ઉત્પત્તિ થાય છે.

નાનીબહેન ઉપરચંદ,
શ્રાવિકાશ્રમ-મુખ્ય.

પ્રેમ-પુણ્ય.

પ્રેમી,

અર્થ રાત્રિકા સમય છે । પર ટિમટિમાતે તારે મુકે રૂંધાં બેરે નેત્રોસે દેલ રહે છે । રાત્રિ કી અપૂર્વ શાન્તિ મી કમી ૨ ચૌકમ કુતોંકી મોં મોંસે વ્યથ હો ઉઠતી હે । તો મી મુનિય ।

સામારિક જ્ઞાન પરિમિત હૈ । રૂંધાં-દ્રેષ, પાન-સમર ઓર મોહ-મદકા નાશ થડા હુઆ હૈ । પર વહ (જ્ઞાન) જ્ઞાતગ્ય હૈ । ઓર તસ (જ્ઞાન) પર જમજ કરના મી યોગ્ય હૈ । પરંતુ

કલસોત । સમય આતે શીઘ્રગામી હૈ । વહ કિસી કી મી પ્રાચીસા નહીં કરતા । હપ કયોં જીવિત હૈં ? તુવા વહ જીવિત નીસત હૈ ? ' સંપારકી સંપૂર્ણ લક્ષ્મી થા સમરદાકા ચદિ મેં સ્વામી હોતા તો તસ અગાધ રસનરાશિકો મી વે ઢાલવા । મુક્તે કુઝ વર્ષોંકી-એક હી વર્ષે હી-અત્રી એક મહીનેકી નહીં રે એક મિનટકી હી અધિક પ્રાપ્તિ હો જાતી !' પરંતુ વહ અમિશ્રાશા નિરાશામય, કલહીન પ્રભાર માત્ર હૈ !

આતુ 'સત્યકી લોગ કરના ઉત્તમ હૈ । તનકો પ્રાપ્ત કરના મુશ્કદ હૈ । મનુષ્ય હરયકી વહ પ્રાચીનતમ પાવના હૈ કિ વનસે અઠ્ઠાઉત્તમ એવં મૂલ્યવાન જ્ઞાન હૈ । ઓર વહ વાસ્તવિકત્વપા એવં પાવનરૂપમે વર્ણ્ય હૈ । ગન કાલમે મનુષ્યકે વિપદાકાંસાઓંકા અવલોકન કરિદ, સર્વોંકા ઉત્થાન ઓર વતન દેલિદ, પ્રકાશ ઓર મર્મા ઓર પવનકા ઉદ્દેલ કરિદ, મનુષ્યકે સર્વોંપ એવં મૌલિક આવકારોંકા જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરિદ, મૃતિકે પવિત્ર મર્મમેસે અદ્ભુત એવં અલૌકિક શક્તિ રાશિકો નિહારિદ જિપકો ચતુર કારીઁ ગરને દૂર નિકાલા હૈ, સંસારકે એમે ૨ સ્પર્શોંકા મહાં પ્રકાશ અપને વિશુદ્ધગમે ચલતે હુર મી નહીં પહુંચ પાતા હૈ વર્ણન મુનિય, પ્રચુર મુગ્ધમય પદ્યવદાને વિચરિદ, ઓર પ્રાચીનકાલકે સ્વતંત્ર રાજ્યોંકે સાહસ પર્વકો કુન્વોંસે અપનેમે જીવન મરિદ, કિન્તુ ઇન નવ વર્ણવર્ણોંકે ઉદ્ભવેલે મધ્ય વહ ધ્યાન રમિર કિ કોવઝ એક દો વાતુ વર્ણાત સત્ય, વાત, અમર, અચલ, અવિનાશી ઇન સમારમે હૈ । પરંતુ ઉભીતી ઉપાસના કરિદ । શુદ્ધ હૃદયમે તસકો વરના-ઈદ જિસે મિથ્યામ્મપકા અંધકાર મય પરદા



आंखोंके अगाड़ीसे हट जाए और वस्तुकी यथार्थता दर्श जाए ।

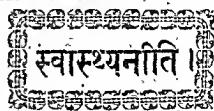
मनुष्यका सर्व प्रथम जीवनोद्देश्य अपने आपकी जानना है । और अपने आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर जनतामें अध्यात्मिक पवित्रताका प्रचार करना एवं जीवनके प्रत्येक कर्ममें उसकी छाप बैठाना है । संसार मिथ्या अविश्वासमें पड़ा हुआ है । संसारके साहसों बोर और उत्तम पुरुष सबकी भलाईके लिए अपनेकी जातिके उद्धारके लिए समर्पण करेंगे । संसारको चरित्रकी आवश्यकता है । साहस पूर्ण शत्रुओं और उससे भी अधिक साहसी कृत्योंकी आवश्यकता है । अस्तु जग जाए । संसार दुःखसे तप्त है । आप सो नहीं सके हैं । इस प्रेम-मेम्रोको रटिर जिससे स्वास्थ्य देवता हमारे भीतरका पुनीति देव जागृत हो जावे । इससे जीवनमें और क्या है ? तदनीर स्वयं आ जाती हैं । उनके बनानेकी आवश्यकता नहीं । वस निर्मादेश्य प्रातिके मार्गमें रत हो जाए ।' अस्तु:-

“ भटाईको न मूलेगे, सुशिलाको न छोटेगे ।
दृष्टिसे प्राण खोदेगे, प्रतिज्ञाको न तोरेगे ॥
बेगे प्रेमके पोषे, दयाके फूल फुटेगे ।
भरे आनन्दसे चारों, फलेके साध मूटेगे ॥ ”

वन प्रेम, प्रेम और फिर प्रेम ही एक शब्द है । तब हमसे हिंसा हो ही नहीं सकती । वन्य है पावन पुनीति प्रेम ! पवित्र मंगोंका अग्रपन एक विधिः वर्तमान है । उनको दृष्टिकोण करते हुए मने २ प्रेम-पताका फहराते हुए निर्मादेश्यभी ओर वसते गायु । विशेष कि ।

आपका बही-मेन पुनारीका पाममल-

कामनाप्रसाद जैन, परैली ।



प्रत्येक समय देशमें स्वास्थ्यरक्षा और रोगनिवारणार्थ स्वास्थ्यविभागका प्रबन्ध है । रोग उत्पन्न होनेके सामान्य कारणोंको दूर करना उक्त स्वास्थ्य विभागका कार्य है । नाडी, नाखे व सड़कोंकी सफाई, कूड़ा कचरा आदि पदार्थों को दूर करना दीन दुःखी व असमर्थ रोगियोंके लिए दातव्य चिकित्साध्य स्थापित करना, संक्रमक रोगोंके समय उनसे दूधनेके उपायोंको कार्यमें लाना, स्वास्थ्यको खराब करनेवाले कार्योंको रोकनेके लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी आईन बनाए नारी करना भी स्वास्थ्य विभागका कार्य है । वर्तमान समय जगतमें स्वास्थ्य विभागके द्वारा सर्व साधारणकी स्वास्थ्य रक्षा की जाती है । प्राचीन भारतमें स्वास्थ्य रक्षाका क्या प्रबन्ध था, यही बात इस लेखमें दिखायेंगे । हिन्दु सदा ही से धर्मभीरु हैं । दधपि पाश्चात्य सभ्यताके प्रकाशमें यह धर्मभीरुता कम होगई है तथापि यही समाजमें इस समय भी बहुत कुछ वर्तमान है । इस समय कानूनी कृपासे दलील, दस्तनत, साक्षी, रनिस्ट्री आदिके होनार भी सत्य असत्य होमाता है किन्तु पुराकालमें धर्म और साक्षीके प्रभावसे केवल गुप्तसे कहेनेसे ही सत्यकी रक्षा की जाती थी । उसी प्रकार धर्मकी दुहाई देकर स्वास्थ्यरक्षा भी सहजमें हो जाती थी । हमारी नियम वैमिशिक प्रत्येक किता स्वास्थ्यके उपाय अन्तर्भूत है । अस्तु गृहमें पा राखि

के अन्तिम पहरसे हमारा प्रातःकृत्य आरम्भ होता है । इन समय ब्राह्मणादि चारों धर्म ही निद्रा त्याग करके शय्याके उपर, उत्तरमुख, वा पूर्वमुख बैठकर अपने इष्टदेवता स्मरण करते हैं पश्चात् अन्य प्रातः स्मरणीय महात्माओंके नामोच्चारण करके शय्याको त्याग करते हैं । यही हिन्दुशास्त्रकी विधि है । ब्राह्मणद्वर्तमें उठना वैद्यक दृष्टिसे स्वास्थ्यके लिए अत्यन्त हितकारी है । पाश्चात्य स्वास्थ्य विज्ञान और चिकित्सा शास्त्रमें भी ब्राह्मणद्वर्तमें उठना स्वास्थ्यके लिए अत्यन्त हितकर बताया गया है । इस प्रकार आहिंस क्रिया द्वारा स्वास्थ्य साधन केवल शरीर विज्ञानके ही आधार पर समर्थित नहीं है किन्तु इसमें मनोविज्ञान भी सम्मिलित है । महात्माओंके नामोंका स्मरण और कर्तव्य करनेसे मनुष्यके मनोभाव गठित होते हैं । मनके साथ शरीरका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है । इन कारण मानसिक उत्कर्ष भी स्वास्थ्योन्नतिके लिए आवश्यक है ।

निद्रासे उठनेके पश्चात् मठ-मृग त्यागारी विधि है । ग्राममें घासे डेढ़ सौ हाथ दूर और शहरमें उससे चौगुनी दूर नैऋत्य कोणमें मठ-त्याग करनेके लिए स्थान निर्वाचित करना शास्त्रकी आज्ञा है । इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि निद्राम स्थानकी वायु जिससे दूषित न हो ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए । जेठ २ ग्रामोंकी अपेक्षा शहरमें मनुष्योंकी संख्या अधिक होती है । इस कारण वहां मच्छा अधिकता होती है । अतएव उस समय ग्रामकी अपेक्षा शहरमें

मठत्याग करनेकी व्यवस्था बहुत दूर थी । नैऋत्यकोणमें इन लिए मठत्याग करनेको स्थान निर्दिष्ट किया गया था कि नैऋत्य दिशाकी वायु बहुत कम बहती है और जो बहती है तो बहुत थोड़ी देर । मठ-मृग त्यागके समय मौनवृत्त्य होना अत्यावश्यक है । उस समय शुक्ता और ध्याम लेना भी निषिद्ध है । मठत्यागके समय पहरें हुए बघ्नको वमनके ऊपर फाटनेना चाहिए । खटाऊं पहन कर, खड़े हुए वा चलते हुए मठ-मृग त्याग करना निषिद्ध है । यह सब रीतियां स्वास्थ्यके लिए कितनी हितकर हैं, यह स्पष्ट ही मालूम होता है । उस समय केवल मनुष्योंके स्वास्थ्यको ही उत्तम रखनेकी व्यवस्था नहीं थी किन्तु पशुओंके स्वास्थ्य पर भी दृश्य रखनेका नियम था । यथा—“ सदैव गोव्रह्मण्यवनिह्वयान् न राजमार्गं न चतुष्पाथे च । कुर्वाणोत्सर्गमपीह गोष्ठ पूर्वी पण वैव समाश्रितां गाम् । ” अर्थात् देवता, ब्रह्मण, और अग्निके सामने, राजमार्गमें चौगहेमें, पशुओंकी गोष्ठीमें अथवा जिन स्थानोंमें गौयें विचरती हैं, उन स्थानोंमें मठ-त्याग करना निषिद्ध है ।

मृत्तिका—दुर्गन्धनाशक है । और इसमें क्षारादि पदार्थोंके होनेसे वह शरीरके कलेज और मलादिको दूर करता है । एवं मकरन्दको निवारण करती है । इसलिए यह हिन्दुशास्त्रके मनसे शीवके लिए वैधवा होती है । हिन्दुधर्मके साथ स्वास्थ्यका इनका घनिष्ठ सम्बन्ध है कि उस मृत्तिकाके भी शुद्ध होनेकी विशेष आवश्यकता

इयत्ता है। इसके विषयमें शास्त्रकार कहते हैं कि—नलमेंसे निकाली हुई, चूहेके बिलकी, अग्राह्य दूसरेके शौच कर्मसे बची हुई और ताँब की बाँधईकी मृत्तिका नहीं लेनी चाहिए।

इसके पश्चात् हिंदुशास्त्रमें प्रातः स्नानकी व्यवस्था है। प्रातःस्नानके नियम भी विधिबद्ध हैं। सूर्योदयसे पहले ही प्रातः स्नानका समय है। प्रातःस्नानके बिना देव राघनादि कार्य सम्पन्न नहीं होते। इस कारण धार्मिक हिंदुओंके लिये प्रातःस्नान करना परमावश्यक है। स्रोतके जलमें, स्रोतके सामने मुखकरके और बिना स्रोत वाले जलमें सूर्याभिमुख हो नाभिपर्यंत मण्डमें खड़े होकर दोनों हाथोंसे मुख, नासिका और कानोंके छिद्रोंको बन्ध करके डूबकी लगाकर स्नान करे। मलाशय दुर्भरेका हो तो स्नान करनेसे पहले इसमेंसे तीन या पाँच मृत्तिकाके पिण्ड निकालकर किनारे पर रखे और—“उत्तिष्ठोत्तिष्ठ पंकजस्य पुण्यं पापं च । पापानि विधयं चांति शान्ति देहि रुदा मम” इस मंत्रको पढ़े। यह भी स्वास्थ्य विमोक्षण कार्य है। प्रत्येक मनुष्य यदि प्रतिदिन स्नान करनेके समय तीन वा पाँच मृत्तिकाके पिण्ड मलाशय (तालाब नदी) मेंसे निकालकर फेंके तो उससे मलाशयवी रोगरक्षी प्रकाई सहजमें होसकती है।

आने स्नानके समय मलाशय वृक्षपत्र आदि अशुद्धियोंको मृत्तिकासे धोकर कानों की भी धुविधि है इसका कारण यहवही कहा जा चुका है। शिवायिणोंको तो अतीव उपयोगी है। मृत्तिका दुर्गन्धनाशक, अक्षोभारक और Disinfectant वा संक्रमणको निवारक होता है।

इसी प्रकार शयन, भोजन आदि प्रत्येक कार्यमें हिंदुधर्मशास्त्रकी जो क्रियायें हैं, वे सब ही उन्नति करने वाली हैं। सच्चता हिंदुधर्मका प्रधान अङ्ग है। रातके पहरें छुड़ या बिना धुले वस्त्रोंको पहन कर दैनिक पुननादि किया और भोजनादि करना हिंदुओंके लिये सर्वथा निषिद्ध है। यहाँतक कि बिना धुले वस्त्रोंको पहनकर भोजन बनाना भी ठीक नहीं कहा गया है।

तिथि, वार, मास और ऋतुविशेषमें जो भिन्न भिन्न प्रकारके खाद्य पदार्थोंका नियम किया गया है, उनकी संरक्षाके लिये ब्रह्महत्यादि महापातकोंकी दुहाई दी गई है। विरुद्ध भोजनके सामनमें भी ऐसा ही आदेश है।

नितसे घरमें कूड़ा—कचरा या मैला इकट्ठा न हो ऐसा उपदेश दिया गया है। नरको स्वच्छ रखना महापुण्यका कार्य बताया गया है। यह विधि भी स्वास्थ्यरक्षाके लिए उत्तम है।

इस प्रकार हिंदुओंकी प्रत्येक क्रिया—कलापमें शारीरिक व स्वास्थ्य साधनके लिए धर्मकी व्यवस्था की गई है।

“वैद्य”से उद्धृत।

जैन इतिहास

दूसरा भाग तैयार है।

इसमें १२वें तीर्थंकर श्रीविमलनाथसे लेकर २५वें

श्री गुणसुवर्णनाथ तकका अर्थात् २ तीर्थंकरों

का इतिहास सरल भाषामें सबको पढ़ने

के लिये लिखा गया है। इसमें १२ तीर्थंकरोंकी

प्रमुख कृतियाँ और उनके जीवनकाल

में जैन धर्मके प्रमुख सिद्धांत

❀ दिगंबर जैन. ❀

THE DIGAMBAR JAIN

नाना बलाभिविविधश्च ततः सत्योपदेशोऽस्तुगोपयाभिः ।

सबोधयत्ननिमिदं प्रवर्त्तताम्, दिगम्बर जैन समाज भाषम् ॥

वर्ष १९ वॉ.

वीर संवत् २४४८.

वैशाख विक्रम सं १९७८.

अंक ७१



हमारी परम पूज्य जिनव जीका माताका पूज्य
आदर कानेश यदि कोई
श्रुतपंचमी खास पर्व हो तो वह " श्री
आ गह्व । श्रुत पंचमी पर्व " है। इस प-
वित्र दिनको ही श्रोमद् भुज
बलि और अष्टबलि आचार्योंने बड़ो भक्तिसे
मिनवाणीकी पूजा की गईयो । और तबसे यह
पर्व मनाने लगा है । और अभी हो ज्येष्ठ
पुत्री ५ के दिन आ पहुंचा है ।

यह निश्चय है कि निमित्त कारण बिना का
यैनी उत्पत्ति नहीं होती इसी प्रकार श्रुतपंचमी
पर्वके निमित्तसे हमें मिनवाणी माताकी विनय
पूजा करनेका मौका मिलता है । क्योंकि उप-
देशकों, वर्तमानपत्रों, ब्याख्याकारों चिन्तिते २
बह यथे ती श्री अमोक्त हमारे रत्नों, जैन
अन्य अनेक मंत्रोंमें मन्त्रिणामे हो रहे हैं और
उनको कपो ध्यानक. नहीं दिवाई जाती यह

कितने बड़े खेदकी बात है । अब तो पंडितोंकी
भारमा हो रही है तब ऐसे समयमें भी शास्त्रों-
का जीर्णोद्धार नहीं होगा तो कब होगा । हमारी
महासभाने भी अभी ही दखतऊमें इसके लिए
(नागौर इतर, आदिके भंडारोंका उद्धार करनेके
लिये) प्रस्ताव किया है और बाला जम्बूपसा-
दनी व छाया देवसहायनीने इन कार्यको
अपने तन मन धनसे करना स्वीकार किया है ।
पन्तु अमोक्त उन्होंने इन विषयमें क्या किया है
कुछ प्रकट नहीं हुआ । अब इस श्रुतपंचमीके
दिनसे तो उनका कार्य है कि इस कार्यको
प्राप्त्य कर दें ।

यह श्रुतपंचमी पर्व हमें किस प्रकार मनाना
चाहिये उसका कुछ दिग्दर्शन यहां कियाजाताहै—

(1) दो चार दिन पहिलेसे हाएक मंदिरका
शास्त्र भंडार खोलना चाहिये और सब शास्त्रोंको
खोलकर धूममें रखना चाहिये । जिस किसीको
मन नहीं हो तो गले बनालेने चाहिये, और
वेष्टन तो यदि हाएक स्थान होंगे तो वैह रेशमी
ही होंगे परन्तु अब हमारे भई अच्छी तरहसे
जान गये हैं कि हमारी जीवोंकी हत्यासे उत्पन्न
होटा हुआ अतीव अशुद्ध रेशमका व्यवहार

हमें नहीं करना चाहिये इसलिये सभी रेशमी वेष्टनों, रेशमी चंदोवा, रेशमी तोरण आदि हो तो बदलकर सब विशुद्ध गाढ़ेका बना देवे। सुफेद गंडको पीछा रंगकर फाँममें लेनेसे ये बहुत सुंदर लगते हैं। आशा है कि इस वर्ष यह सुचारु अवश्य होगा।

(२) पुस्तकाधार ग्रंथके पत्रे अलग हो गये हो तो उनको भी ठीक करा लेवें।

(३) श्रुतपंचमी अर्थात् ज्येष्ठ सुदी ९ के दिन सुबह हर एक मंदिरके छंटे बड़े सभी शास्त्रोंको ऊँचे आसनपर विनयके साथ विराममान करना चाहिये और फिर सब भाष्यों बहिनोंको मिलकर 'श्रुतस्कंध विधान' पुना अर्थात् जिन-कीकी पूजने गजेवाजेके साथ पढ़नी चाहिये। यदि विधानकी पुस्तक न हो तो सरस्वति पुना करनी चाहिये।

(४) ज्ञानकी अथवा रात्रिकों शहरके सब भाष्योंको इस प्रकारके मंदिरमें या तो कोई बड़ी जगहमें व्याख्यान समा करनी चाहिये और उसमें विद्वान वचनार्थके पास श्रुत पंचमी एवं और हमारा आधुनिक कर्तव्य यह व्याख्यान दिखाना चाहिये तथा जो २ शास्त्र आने मंदिरमें न हो उनको मंगानेका प्रबंध करना चाहिये। हस्त लिखित व मुद्रित हर एक जैन ग्रन्थकी एक व नकल तो अवश्य हर एक मंदिरमें होना चाहिये पान्थ धनेकों मंदिरमें हैं नही के मंदिरोंमें तो जगहों रुकेंहीं मिलिक है पान्थ शास्त्रमंदार देखो तो उनमें इनमें शय्य ही हैं इस लिये ही हम लिखते हैं मंदिरोंके द्रव्यता खान उपयोग जैन प्रथमों सभ्य करके करना चाहिये। श्री

गोमटसार ग्रंथकी बड़ी टीका (६ खंड मू० रु० ९१) तथा माणिकचंद सुलभ ग्रन्थमालाके प्रकट हुए सभी संस्कृत ग्रंथ तो हर एक मंदिरमें अवश्य मगाकर विराममान करना चाहिये। जो मुद्रित नहीं मिलते हों वे हस्त लिखित मगानेका प्रबंध महासभा अफिस बड़नगरसे करना चाहिये तथा मुद्रित तो हमारे दि० जैन पुस्तकालयसे या अन्य पुस्तकालयोंसे सिद्ध सकते हैं।

(५) जहाँका शास्त्र भंडार बिचकुल बंद पड़ा है उनको खोलनेका प्रबंध करनेके लिये एक कमेटी नियुक्त करना चाहिये तथा उस कार्यके लिये कुछ पैसा भी करना चाहिये।

(६) ज्ञान दान समान पुण्य दूसरा नहीं है इस लिये ज्ञानके लिये जहाँ कहीं पाठशाला नहीं हो अथवा बंद पड़ी हो तो वहाँ पाठशाला खोल करनेका पक्का प्रबंध करना चाहिये और शास्त्र दानकी प्रभावना करनी चाहिये, अर्थात् कोई भी छोटी बड़ी पुस्तक सब भाष्योंको भेंट बांटनी चाहिये।

(७) इस श्रुतपंचमी पर्व हर एक स्थान पर किस प्रकार मनाया गया उसका समाचार भागामी अंकमें प्रकट करनेके लिये हमें शीघ्र ही लिख भेजना चाहिये। आशा है हमारे इस निवेदन पर समान अवश्य ध्यान देगी।

* * * सोनागिरि सिद्ध क्षेत्रपर मठारक हेमद्रभूषण

की मछी है। वे दा उनके
सोनागिरि गुरु प्रशयारामजी और
म और अ-पका स्वार्थके सिषाव शैल
न्याय। प्रबंध कुछ नहीं करने और
मठारके छात्रों मरने स्वार्थ



कर गये थे इससे हमारी भारत० दि० जैन क्षेत्र कमेटीने वारं वर्षसे वहाँ अछप दफ्तर स्थापन किया है और मटारक नितना भी कष्ट देते हैं उनको सहन करके आपसे विशेष खर्च कांके भी अपना कार्य चला रही है। दूसरी ओर मटारकने नई कमेटी बनाकर अपनी जाल फैलाई थी तौ भी बहुत लोक कमेटीके दफ्तरमें ही। मटारपट्टी देते थे। कईवार मटारकने कमेटीके मुनीवरा कोमदारी दावे भी किये थे उसका भी पूरा २ सामना किया गया था। परन्तु इससे बड़कर अभी इस मटारकने अपनी कमेटीके संपत्ति छोला मोसेछाछनी आगराकी बिना सम्पत्ति तथा तौर चिट्ठिद्वारा उनका अटकाव होनेपर मो तीर्थक्षेत्र कमेटीके ऊपर एक मुकदमा चलाया है जिसमें आपने कमेटीपर भ्रष्टाचारोपण काके महायज्ञ दतियाकी नगरसे कमेटीकी महत्ताको गिरानेका (दफ्तर हटवा देनेका) निघ प्रयत्न किया है। इसकी दो पेशी हो चुकी हैं। और मुकदमा चालू ही है परन्तु जैन समानका इस मौकेपर कर्तव्य है कि वह दतिया नरेशके ध्यानमें यह बात छोड़ की यह क्षेत्र मटारककी मांछकीका नहीं है परन्तु सारी जैन समानका धर्मतीर्थ है। इसके लिये एक अर्जी हरएक पंचायतीकी ओरसे दीवान, दतिया स्टेट-दतियाकी सेवामें इस आशयकी भेजनी चाहिये कि मटारक हरेंद्रभूषणने सोनागिरी तीर्थक्षेत्र कमेटीपर जो मुकदमा दायर किया है यह विशुद्ध जुटा है।

नहीं चाहिये और मटारकका दावा रद्द करना चाहिये आदि। आशा है कि हरएक पंचायती आखत्य छोडकर ऐसी अर्जी अवश्य भेजेंगी।

* * *

जैन साहित्यका महत्व प्रकट करनेके लिये

लखनऊमें रात्र महासम्मेल

जैन साहित्य-साथ २ लखनऊके धर्मप्रेमी का महत्व। पाईयोंने जैन साहित्य समा

करनेका खास प्रबंध किया

था और (१) पदद्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धि

तथा (२) जैन काव्योंका महत्व, ऐसे दो इनामी

निबंध विद्वान पंडितोंसे लिखवाये थे और ऐसे

६ लेख भेजनेवाले विद्वान पंडितोंकी सब मिल-

कर २००) इनाम भी दिया गया था। परंतु

समयाभावसे साहित्य समामें इन लेखोंमेंसे सब

तो क्या एक दो भी पूरे २ नहीं पड़े गये थे

इससे इन लेखोंमें विद्वान लेखकोंने क्या २

बताया है वह सबके जाननेमें नहीं आया था

तथा ऐसे महत्वपूर्ण लेख छपकर अवश्य प्रकट

होने चाहिये परंतु अभीतक ऐसी व्यस्तता न

हो सकनेसे पुण्य ग्र० श्रीतलप्रसादजीने हमको

आग्रह किया कि आप इन लेखोंको अपने मासि-

कपत्रमें कमशः प्रकट करदो तथा कुछ कापी

अछप भी निकालोमे तो जैन समानका बहुत

कल्याण होगा और नवीन लेखकोंका उत्साह भी

बढ़ेगा आदि। हमने इस बातको स्वीकार किया

सब लेख प्रसन्न किये और कमशः प्रकट करनेका

प्रारंभ किया है उसमें "पदद्रव्यकी आवश्यकता

व सिद्धि" के तीन लेखोंमें पं० मधुगदासजी

मोरियाका प्रथम लेख इस अंकमें पूर्ण हुआ है

तीर्थक्षेत्र कमेटी, सरकारमें रजिस्टर्ड समानकी माननीय संस्था है और उसपर समानका पूर्ण निश्चित है इससे कमेटीका दफ्तर क्षेत्रसे हटाना

ઔર દુસરા લેલ આગામી અંક્સે પ્રારમ્ભ હોગા ।
 હરેક પાઠકકો હમે આપ્રહ કરતે હૈં કિં ચે હન
 લેલોંકો અવશ્યમેવ પઢૈં ઔર સંપ્રહ કરરવલૈં ।

* * *

હાલમાં કેટલાક વર્ષોથી અખજીની યાત્રાએ
 જવાને જે અગવડ પડતી હતી
 આખજીની તે ત્યા જનારજ જાણે છે.
 યાત્રામાં સગવડ. એટલે કે આખજેડથી તો પહાડ
 પર જવાને મોટાર ખલે છે પણ
 ઉપર કેમ્પ પાસે જતાંજ યાત્રાજીઓને કેમ્પમાં
 થઈને જવાનો દુષ્કર્મ ન હોવાથી મોટારવાળા ઉતારી
 દે છે જેથી પછી પંગે ચાલતા આડેઅવળે જંગલી
 ઝરને મનૂંગે પાસે જોળા ઉઘાડી આસરે ૨
 મહન સુધીજવું પેડે છે જેથી યાત્રાજીઓને અતિ-
 શય હાડમારી પડતી હતી તે માટે જિત સથે
 પ્રયાસ કરવાથી રજપૂતાના એજન્ટ દુધી અવર્તર
 જર્નરલને આપણું રેપ્રેસેન્ટેશન તા. ૧૨-૪-૨૨ને
 દિને આપુ મળેલું તે પર વિચાર કરી તા. ૪-૫-૨૨ના રોજ ખાઉંટ આખજા ડિરેક્ટર
 મેજસ્ટ્રેટ તરફથી નીચે મુજબ નોટિસ પ્રગટ કરવામાં
 આવી છે:—

નોટીસ.

આ જાહેર ખજારથી દેલવાડા જનાર સર્વે
 યાત્રાજીઓને ખજાર આપવામાં આવે છે કે દેલવાડા
 જવા માટે આપુ રોડમાં ડાકટરી તપાસ ચોક્કી
 આગળ તેજોની ખરજી મુજબ જે પાસમાંથી ગમે
 તે પાસ તેજોને આપવામાં આવશે. એક પાસ
 બુગ રંગોળા, હુંદાલ ચોક્કી પાસે થઈ યાત્રાજીઓને
 રસ્તે ખારોગાર દેવવાડા જવાની ઇચ્છાનાજીઓને
 આપવામાં આવશે, અને બીજા પાસ પીંગા રંગોળા
 ખાઉંટ આપુમાં થઈ જવાની જેજોના ઇચ્છા
 હોય તેમને આપવામાં આવશે, પરંતુ પીંગા પાસ
 લેનારાજીએ પ્યાન રાખવું કે જે તેજો ખાઉંટ
 આપુની દરમ્યાં રહેશે તો જવા સુધી તેજો સન્ન-
 દમાં રહે ત્યા સુધી તેમને દરરોજ ૧૦ દીવસ સુધી
 એકપસ દોરણીસમાં ડાકટરી તપાસ માટે જવું
 પડશે. પોતાને ખરચે હી આપવાથી થેર પત્ર મલક

તપાસ કરવાનો બદોલત થઈ શકશે. બુરા રંગોળા
 પાસ લેનારને ખાઉંટ આપુમાં થઈ જવા દેવામાં
 આવશે નહીં.

૨૦ બી. ૦ વોહર મેજર.

ડીસ્ટ્રીક્ટ મેજસ્ટ્રેટ, ખાઉંટ આપુ.

આથી હવે આખજે કેમ્પમાં થઈને મોટાર દ્વારા
 આપણા મંદિરો સુધી જઈ શકાશે અને આ
 જામત વિશેષ પત્રવ્યવહાર હવે આપુ છે.

ગરીબોંકે વિવાહ.કૈસે હૌં ?

વયોંકર ગરીબ માઈં અપના વિવાહ કરલેં ?
 હમકો બનાયે કોઈં હમ મી સલાહ કરલેં । ટેક
 ધનવાન માઈંયોંકો દેતે હૈં પુત્રિયા સવ ।
 હેં વયા મનાલ । કોઈં નિર્ધન વિવાહ કરલે ॥
 ફસદી ગરજસે નિર્ધન ફિરતે હૈં મારેમારે ।
 રુપયોં વિના વિચારે કિસ વિધ વિવાહ કરલે ॥૨
 ધનવાન માઈંયોંકે સવ પુત્રિયા સરીદોં ।
 રુપયા હમારોં દેકર સુવિધાસે વ્યાહ કરલે ॥
 ફસ હી સવવસે નિર્ધને ચહુતક ફિરેં કુંવારે ।
 ફરતે હૈં સ્વાર જીવન કૈસે સુધાર કરલેં ॥
 ફસપર વિચાર ફરના હૈં ફર્મે સબકા "પ્રેમી"
 નિસસે વિચારે નિર્ધન અપના વિવાહ કરલે ॥
 પં. ગોરેલાલ પંચરતન "પ્રેમી"

સુલભ જૈન ગ્રન્થમાલાકે

દો નયે ગ્રન્થ ।

ધર્મ-પરીક્ષા-ધ્રી અમિતગતિ જ્ઞાનાર્વજ્ઞ
 મનોપેગ પત્રવેગતી અપૂર્વ ચોષદામક કપાકા સ્ત્રી
 અનુવાદ । ૨૦ ૨૬૦ ઔર મૂ. ૦ સિફ ॥૨
 સીર્ધયાત્રા દર્શક-૧મમે અગની
 યાત્રાલોહા પરિવપ દે । ૨૦ ૨૭૬ ઔર
 સિફ ॥૨ મેનમ, દિ. ૦ જૈન ૨. ૧



❖ चार दान । ❖

यह चंचल लक्ष्मी पाय गर्व नहि कीजे ।
मन वचन प्यारे चार दान शुभ दीजे ॥ टेक ॥
यह पूर्व पुण्यके तरुवरका फल सारा ।
जो आकर तुमको प्राप्त हुआ इस वारा ॥
चक्राधीशोंने इससे मोह निवारा ।
यह लक्ष्मी चंचल इसका कौन पतियारा ॥
सुन प्यारे मत्त इससे कीजे यारी ।
सुन प्यारे यह लक्ष्मी चंचल भारी ॥
सुन प्यारे तज लोभ मदा दुखकारी ।
सुन प्यारे करले सन्तोषसे यारी ॥
यह सीख सुगुरुजी हृदयमें धरलीजे ॥ १ ॥
सुनि त्यागी कुलक और वृक्षचारी हैं ।
अंगे अंग जो निर्धन दुखयारी हैं ॥
अथवा समाजकी जो विषवा नारी हैं ।
जिनका दुख देखत नयन नीर नारी हैं ॥
सुन प्यारे इन आदि और जो होवें ।
सुन प्यारे जो मुखे निशदिन रोवें ॥
सुन प्यारे उनकी सहायता कीजे ।
इससे जगमें यश लीजे ॥

यह पहिला भोजन दान इसे दे लीजे ॥ २ ॥

इस समय देशमें रोग अनेकों छापे ।
जिनके कारण जन बहुतक प्राण गमाये ॥
कोई पैसे विन हैं रोग असत घबड़ाये ।
है औषधकी दरकार वैद्य दिग आये ॥
सुन पैसे विन वैद्य न आवें ।
सुन प्यारे नहि उनको दवा दिलावें ॥
सुन प्यारे उनकी सहायता कीजे ।
सुन प्यारे पैसे विन औषध दीजे ॥

यह दूजा औषधदान इसे देलीजे ॥ २ ॥
इस जगमें सब जन निर्भय रहना चाहते ।
नहि किसी तरहकी विपत्तिमें परना चाहते ॥
निस तरह वने उनकी विपत्तिको हरना ।
यह अभयदान भी मनवच वितरन करना ॥
सुन प्यारे यह अभयदान नित दीजे ।
सुन प्यारे यासे निर्भय यद लीजे ॥
सुन प्यारे जो परको निर्भय करता ।
सुन प्यारे वह जगमें निर्भय रहता ॥
यह तीना निर्भयदान इसे देलीजे ॥ ४ ॥
है ज्ञान जगमें जीवनका हित करता ।
इसके विन आत्म चारों गतिमें भ्रमता ॥
दिन ज्ञान देखलो कार्य न कोई सरता ।
ज्ञानी सर्वथा सुखका अनमव करता ॥
सुन प्यारे कर ज्ञानदान सुख लीजे ।
सुन प्यारे नहीं इसमें संशय कीजे ॥
सुन प्यारे जो ज्ञानदान देता है ।
सुन प्यारे वह ज्ञान स्वयं लेता है ॥
यह "गोरालाल" की विनय प्राप्त कर लीजे ५
पं० गोरेलाल पंचरत्न ।

दूसरी चार तैयार हो गया !

मोक्षमार्गकी सच्ची कहानियां-

नामक अतीव उपयोगी ग्रन्थ जो विश्वार्थियोंको तो अतीव उपयोगी है और स्वाध्याय करने योग्य है उसकी दूसरी आवृत्ति छपकर तैयार होगई है ।
इसके ८८ पृष्ठोंमें पं० बुद्धिलाधे श्रावक कृत धार्मिक २२ कहानियोंका नये ढंगसे संग्रह है ।
मूल्य सिर्फ ॥३॥ अवश्य मंगा लो ।

मैनेजर-दि० जैन पुस्तकालय-सुरत ।



अकाल मृत्युसे सभा व प्रतिष्ठा
 चंद-व्यावरमें ज्येष्ठ सुदी १ से ५ तक वेदी
 प्रतिष्ठा व भारत० दि० जैन खंडेलवाल महा-
 समाका दूसरा अधिवेशन होनेवाला था परंतु
 सुद प्रतिष्ठाकारक श्रीमान् सेठ मोतीलालजी
 कासलीवालका बंधईसे व्यावर जाते हुए गत
 ता० १९ की रात्रिको ८ बजे सेन्दरा स्टेशन
 पर रेल गाडीके नीचे आकर अस्मयमें अक-
 स्मात् देहोत्सर्ग हो गया इससे प्रतिष्ठा व सभा
 दोनों बंद रखा गया है। इस अकाल मरणमें
 हम सेठ मोतीलालजीकी आत्माको शांति
 चाहते हैं। -

आविकाश्रम-बन्धई गर्मीकी छुट्टीके बाद
 ता० १-६-२२ ज्येष्ठ सुद ६ को खुलेगा।
 जिनको दाखिल होना हो फार्म भरकर मेज
 दें। मगनव्हेन।

अजमेर-में जेठ वद ५ को रा० वा०
 सेठ टीकमचंदजीके सभापतित्वमें दर्शो धर्तोंके
 समस्त दि० जैन खंडेलवाल भाइयोंकी
 एक विराट सभा हुई थी जिसमें सेठ
 मोतीलालजी व्यावरके अकाल मरणपर शोक
 प्रकट किया गया और मेला चंद रखनेका प्रस्ताव
 पास हुआ। तथा सं० महासभा व अजमेर
 प्रा० दि० जैन सं० सभाके लिये प्रतिनिधियों-
 का चुनाव करनेके लिये सभापतिने अभील की

परंतु बहुत लोगोंने कहा कि हम अपनी सत्ता
 चंद आदिमियोंके हाथमें क्यों देवे आदि, इसपर
 बहुत बहस होकर अंतमें प्रतिनिधि चुनना बंद
 रहा परंतु सभापतिजीने कहा कि प्रतिनिधि
 न चुनो तो न सही लेकिन यहां भी तो कुछ
 काम करके दिखाओ, इससे लग्न मृत्यु आदिके
 अवसरोंपर होते हुए जीमन व रीतिरिवाजोंमें
 बहुत कुछ सुधार करनेके प्रस्ताव पास हुए
 थे। सेठ टीकमचंदजीका यह प्रयत्न उत्तम है।

पानीपत-की जैन उपदेशक सभाके उप-
 देशक पं० जोतिप्रसादजीका देहांत हो गया।
 आप बड़े सज्जन थे। ४० ग्रामोंमें भ्रमण करके
 आपने बहुत धर्म उद्योत किया था। अब यहां
 विद्वान् उपदेशककी आवश्यकता है। यहांपर
 चिरस्थायी कार्य है। लिखो-जियालाल जैन,
 जैन उपदेशक सभा-पानीपत (करनाल)

पहाडी धीरज-देहली-की हीरालाल
 जैन हाईस्कूलसे इस वर्ष ११ विद्यार्थी पंचाव
 यूनिवर्सिटीकी परीशामें बैठे थे उनमेंसे १०
 पास हुए हैं। इनमें ३ तो प्रथम डिवीजनमें
 पास हैं।

मेला देवरान-देवरान (ललितपुर) में
 ये० वदी १४ से सुदी-२ तक पंचाव कल्याणक
 प्रतिष्ठा महोत्सव हो गया। अंतिम दिन जैन
 लूननकी ५०००० तक संख्या होगई भी
 जिसमें २०००० जैनी होंगे। स्थानी गोकुल
 प्रसादजी, पं० बंसीधरजी शास्त्री, पं० देवकी
 नंदनजी, स्थानी ठाकुरदासजी, उपदेशक कस्तूर-
 चंदजी आदि बहुत विद्वान पपाते थे। व्या-
 क्यान सभायें भी रात हुई थी। संभाओंमें

२१०) की सहायता मिली थी । गोलालारीय दि० जैन सभाका भी जलसा त्यागी गोकुल-प्रसादजीके सभापतित्वमें हुआ था जिसमें प्रथम उपदेशक मौजीलालजीने सभाके ऊपर २००) लेकर विवाह करा देनेका दोषारोपण किया था उसके लिये उन्होंने क्षमा मांगी और पं० देव-कीर्तनदत्तजीने २००) के प्रस्तावका खुलासा प्रकट किया था । पावके ४ प्रस्ताव फिर से दुहराये गये और विवाहमें लड़के भी आती होती हुई सदर जीमनवार बंद करनेसे सभा सोनागिरी तीर्थकी भटारक कम्ये तीर्थक्षेत्र कमे अप्रसन्न है इससे क्षेत्रका प्रबंध स्थाव पास हुए टीको ही सौंपनेका ऐसे दो प्रश्न बृद्ध विवाह, थे । अंतमें वरगांवके छात्रों का विवाह किया था ।

जुआ और बीड़ीपर दामा वि० लिये नीचे लिखे जैन लॉ-तेयार करनेके प्रकटा है । भद्रवाहु दायभागके ग्रन्थोंकी आवश्यकता सहिता, एक संघी सहिता, देवदत्त जिन (सं) वृद्ध संघी सहिता, सहिता (भटारककी बनाई) निर्णय, अहिंसीति नीति, वाक्यामृत, विवाह और कोई सहितामें यह आदि । इनके अतिरिक्त, पत्ता-नग्नमूल जैन विषय हो तो यह भी भेजें । दरीयाकल्ला । देहली । मंत्री जैन मित्र मंडल, प्रांतीय ख० सभाका बंगाल आसाम में शिवनारायण छाव-नेमिचक्र अधिवेशन सेट (बंगाल) में होके सभापतित्वमें लालगंज जेल मुद्री ११ से होगा । जयपुरमें-हस्ती-कृष्णम व० आश्रम से व० आश्रम गायत्री जलवायु दूषित होने का हुआ करती थी छात्रोंको बारबार तकलीफ

तथा रेल्वे स्टेशनसे हस्तिनापुर बहुत दूर था इस लिये आश्रमकी कमेटी स्थान परिवर्तनके लिये कई वर्षोंसे विचार कर रही थी और जब हर्षके साथ प्रकट करने में सफल हुए और आश्रमको अधिष्ठतानी भाईयोंने अपनाया अर्थात् अक्षय जयपुरमें (वै० सु० ३) को यह आश्रम हस्तिनापुरसे उठाकर जयपुरमें सेठ सर्वमुख-दासजी खनानश्रीकी नशियामें लाया गया । यह स्थान चांदपोल दरवाजेके बहार शहर और स्टेशनके गच्छमें है । साथमें मंदिर भी है जलवायु भी बहुत अच्छी है । जयपुरमें दि० जैनियोंके १७९तो मंदिर हैं और करीब ६००० जैन संख्या है इसलिये इस जैनपुरीमें आश्रमकी उन्नति अब अवश्य होगी । अब सब भाई सब प्रकारका पत्र व्यवहार हस्तिनापुर न करके जयपुर ही करें ।

यात्रा और दान-सर सेठ हुकमचंदजीने चैत्र मासमें बडवानीकी यात्रा करके इस प्रकार दान किया-पड़ाडकी घग्गदालामें चार कमरे बनानेको ४०००) तथा १०००) चौकमें फर्स लगानेको दिये । पंचने आपको मानपत्र दिया तथा सेठजीने बडवाणी राणा बहादुरको १९ गिनी गेट की थी ।

१९००)का दान-डेहलीके सेठ मिश्री-लालजीने १०००) सुकृतमें खर्च करनेको इस साल निकाले हैं तथा सुसारीके सेठ रौडमलजी मेवरासजीने नेमिषेदगीकी बीमारीके समय १००००) सुकृतमें खर्च करनेको निकाले हैं जिसका चार प्रकारके दानोंमें व्यय होगा, और

भी १४ वें गुणस्थान तक रहता है। अन्तर्के द्विचाममें साताकी व्युत्पत्ति हो जाती है और अन्त समयमें असाताकी भी सत्य व्युत्पत्ति हो जाती है।

मुक्त जीव जब गुणस्थानातीत यानी गुणस्थानसे रहित हैं तो जब कि साता असाताका बन्ध, उदय, स्तब्धता भाव गुणस्थानोंमें ही पाया जाता है, सिद्ध अवस्थामें किसी भी कर्मका बन्धादि कुछ भी नहीं पाया जाता तो वहां सुखदुःखकी वरदान किसीतरह भी नहीं हो सकती।

अब यदि आप द्वितीय पक्ष आत्मीय सुखका लेंगे तो निरपेक्ष दृष्टिसे आत्मीय सुखका कारण ज्ञान है वह ज्ञान मुक्त अवस्थामें सर्वथा निरावरण हो जाता है अतः वहां अनन्त सुख हो जाता है। दुःखका कोई कारण वहां उपलब्ध नहीं है निमित्त कि सुखकी तरह दुःख भी माना जाय। उक्त युक्तिसे सुख दुःखका मोक्षमें भी प्रत्यक्ष देकर अपना मनोरथ सिद्ध नहीं कर सकते अतः जीवको सर्वथा नित्य मानना सर्वथा श्रम मात्र है।

सांख्य लोग भी जीव मानते हैं लेकिन अकिञ्चित्तर मानते हैं यह उनका मानना भी युक्तिमत्त नहीं है क्योंकि संतारी अवस्थामें जीव वर्मेका बन्ध करता ही है और जब वर्मेका बन्ध करता है तो उसका फल भी अनेक प्रकारसे भोगता ही है तथा सांख्य जो प्रकृतिको कर्ता और पुरुषको मोक्ष मानता है वह पहिछे दिखाया जा चुका है।

अतः सांख्य सिद्धन्त भी मान्य नहीं कहा जा सकता।

अब कोई जो नीचकी सन्तानोंकी ही जीव मानते हैं उन्हें विचारना चाहिये कि संतान बिना सन्तानोंके नहीं रह सकती अतः सन्तानों अवश्य मानना चाहिये। सन्तानोंसे सन्तानको प्रत्यक्ष मानेंगे तो बहुतसे दोष आवेंगे। आत्माको जो व्यापक मानते हैं उनका मत भी प्रतीक्षासह नहीं है।

(शङ्काकार) व्यापक आत्माको सिद्ध करनेके लिए यह अनुमान जब निर्धार है तो आत्माको व्यापक क्यों नहीं मानना चाहिये। आत्मा व्यापक है। द्रव्य होते हुए अमूर्त होनेसे, जो जो द्रव्य होते हुए अमूर्त है वह व्यापक है जैसे आकाश द्रव्य होनेपर अमूर्त आत्मा है अब व्यापक मानना चाहिये, यह अनुमान भी ठीक नहीं है क्योंकि अमूर्त होनेसे यहांपर अमूर्तका क्या अर्थ है। ज्ञादि निमित्तमें हो उभे मूर्त, और तद्विच्छेद अमूर्त। यदि यह अमूर्तका अर्थ ब्रह्म तो मनमें भी हेतु प्रशंसा पाया जाय क्योंकि मन द्रव्य होकर ज्ञादि रहित है ही अतः मनको भी व्यापक मानना चाहिये अतः उक्त हेतु अनेकानिर्दिष्ट होनेसे अदोषी नहीं है। यदि व्यापक माना न रहता मूर्त और सब द्रव्य रहना अमूर्त मानते हैं तो हेतु भी व्यापक माना है और साध्य भी व्यापक माना है अतः सत्यत्व होनेसे पुनः भी हेतु माना नहीं कहा जा सकता। व्यापकता बहुत ही

किया जा सकता है लेकिन यह प्रमाण प्रसंगपर है प्रधान नहीं अतः इस विषयमें इतना ही कहता हूँ । कोई कोई महाशय आत्मा ऋकीणता (ररीका फल) के समान मानते हैं उनका यह मानना न्याययुक्त नहीं है । क्योंकि सुखका सर्वाङ्गरूपसे अनुभव होता है । आत्मा छोटी होती तो जहाँ २ पर अत्मा रहती वहीं वहीं आनन्द होना लेकिन सुख सम्पूर्ण में होता है । कोई २ महाशय आत्माकी आशुवृत्ति (शीघ्रगति) बताकर उक्तकारका निष्ठाण करदिया करते हैं लेकिन यदि आत्मकी शीघ्र गति होती तो भी एक समयमें आत्मा एक ही जगह रहेगी अतः जब एक स्थानपर आत्मा हो तो उस जगह और दूसरी जगहपर जब आत्मा पहुँच जाय तो दूसरी जगह सुख होना चाहिये अतः सुखके व्यवधानका दोष आता है इस लिए आत्मा छोटी भी नहीं माननी चाहिये किंतु अपने २ शरीरके परिमाण मानना चाहिये । श्री नेमिचन्द्राचार्यन आत्माका स्वरूप ऐसा करा है कि—

अद्वचिहिकम्म विथला सीदीभूदा गिरञ्जणाणिचा ।

अद्वगुणाफिद फिचा लोचग्गणि चासिणो सिद्धाः ॥

शुद्ध आत्मा आठ प्रकारके कर्मों (ज्ञान, दर्शनावरण, वेदानीय, गोहनीय, आशु, नाम, गौर, अन्तराय) से रहित है । शान्तिस्वरूप (वीरग) है क्योंकि आत्माकी शान्तिको रागद्वेष सहित अवस्था भी मंग करती है; मिथ्या दर्शनादिसे रहित है नित्य है । अष्ट गुण (ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, अम्बाबाध, अवगाहन, सुदन्त, अगुरुगु) वर सहित है । कृष्णकृष्ण यानी कुछ कार्य करनेको बाकी नहीं है । और लोके अवप्रगमें स्थित है तथा सिद्ध —

यहाँ जो आत्माके आठ कर्मोंसे रहित आदि विशेषण दिये हैं वे दूसरोंकी परिकल्पित तथाविध आत्माके निराकरणके लिए हैं क्योंकि विशेषण हमेशाह व्यवच्छेद रूप होता है जैसे कि काला घोड़ा । यहाँ जो घोड़ेका काला विशेषण है वह अन्य लाल पीठे भूरे चित्त-कवर आदि रंगोंसे युक्त घोड़ोंसे काले घोड़ेको अलग बतलाता है ।

दूसरे लोग शुद्ध आत्माका ऐसा ऐसा स्वरूप मानते हैं—

मदाशिव सदायुक्तः सारूपो मुक्त सुखोज्झितः ।

मस्करी किलमुक्तानां मन्यते पुनरागतिम् ॥

क्षणिकं निर्गुणं चैव शुद्धो योगश्च मन्यते ।

कृतकृत्यं तमीशानो मण्डली चोर्ध्वगामिनां ॥

अर्थ —माधव्य—मदाशिव आत्माको हमेशाह कर्मरहित अनुभावसिद्ध मानते हैं उनका स्वतन्त्र सिद्धान्त यही है कि आत्मा कर्मोंका भेदक नहीं है मदायुक्त हीनते, यह (आत्मा) सदायुक्त है, अनुभाव सिद्ध होनेसे, आत्मा बिना उपायसे सिद्ध है आदि सिद्ध होनेसे, यह

अनादि सिद्ध है तनुकरण मुक्तादिके बननेका निमित्त होनेसे, तनुकरण मुक्तादि ईश्वर हेतुक हैं कार्य होनेसे, इस अनुमान मात्रासे वे आत्माको सदा मुक्त सिद्ध करते हैं लेकिन नित्य तरह यकानकी कमजोर भीव खुद ही नहीं गिरती है बल्कि और अपने ऊपरके मकानको भी लेकर गिरती हैं उसी तरह कार्यत्व हेतु असिद्ध होकर आत्माके कर्मरहितत्वका पतन करा देता है क्योंकि कार्यत्वका आपको क्या अर्थ अभीष्ट है । १. स्वकारण सत्ता समवाय, २. अभूत्वामावित्व, ३. अक्रियादर्शिनोऽपिकृतबुद्धमुत्पादयत्व, ४. कारणान्तरानुविवायिन्य, इन चार विकल्पोंके और भी उत्तरविकल्प बहुतसे होते हैं । विशयया प्रमेयक्रममार्तण्डमें स्पष्टन किया है । यहां लेख वृद्धिके मयसे नहीं लिखा जाता है अतः आत्माको अशर्मकताकी सिद्धि नहीं होती । सांख्य मुंकात्माको मुख रहित मानते हैं । पहिले इसका खंडन किया जा चुका है इसीलिए आचार्यने शुद्ध जीवके लक्षण प्रतिपादन करते समय शीतीभूत विशेषण दिया है । मस्कारी मुक्त जीवका पुनः आगमन मानते इसीको निषेध करनेके लिए आचार्यने निरञ्जन विशेषण दिया है । बुद्ध व योगानुमती आत्मको क्षणिक तथा निर्गुण मानता है इसीको निषेध करनेके लिए आचार्यने नाश विशेषण दिया है । ईश्वरवादी ईश्वरको कर्तृत्व मानते हैं इसके निषेधके लिए कृतकृत्य विशेषण दिया है । मण्डली मतवाले जीवकी हमेशह ऊर्ध्वगति ही मानते हैं इसके निषेधके लिए आचार्यने लोकापनिवासी ऐसा विशेषण दिया है ।

इस उक्त प्रकरणमें जीवकी सिद्धि परमतानुयायियोंके असत्य कलित लक्षणके स्पष्टन पूर्वक की गई है और आवश्यकता भी बतलाई है ।

पुद्गलकी आवश्यकता और सिद्धि:

अब अजीवका वर्णन क्रमपात है अतः उसका वर्णन करना चाहिये ।

अजीवके पांच भेद हैं—१ पुद्गल, २ घर्म, ३ अवर्ग, ४ आकाश, ५ काष्ठ । अब प्रत्येकका वर्णन कहते हैं । इन पांच भेदोंका प्रत्येक प्रपञ्च वर्णन करना ही अजीवका वर्णन होगा क्योंकि अवयवके वर्णनसे अवयवीका वर्णन हो जाता है जैसे तना, शाखा, टहनी, पत्ता आदि वृक्ष सम्मन्धी अवयवोंका वर्णन करना ही वृक्षका वर्णन है ।

पुद्गल द्रव्यका लक्षण “स्पर्शरसगन्धवर्णान्तः पुद्गलः” ऐसा किया है । जो स्पर्श, रस, गन्ध, वर्णसे सहित हो उसे पुद्गल कहते हैं ।

पुरगन्धि गन्धन्ति इति पुद्गलः यह पुद्गल शब्दकी निरुक्ति है ।

स्पर्शादिकी निरुक्ति निम्न प्रकार है । “स्पर्शयन् स्पर्शः, यानी जो दूसरा भाव, इसी

प्रकार रस्यते रसनमात्रं वा रसः, गन्ध्यते गन्धमात्रं वा गन्धः, वर्ण्यते वर्णनमात्रं वा वर्णः।" की निरुक्तिया हैं।

पृष्ठद्रव्य अन्तर्गुण समूह स्वरूप है। यहां भी जीव-द्रव्यकी तरह उत्पाद व्यय ध्रौव्यकी सिद्धि होनेसे द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह घटित होता है। जीव तथा पृष्ठद्रव्य-का अनादिकालसे आपसमें सम्बन्ध होता चला आ रहा है जैसे कि पृथ्वी जो कि तानसे तुरन्त निकास जाता है, किदिमा कालिमा अंतरङ्ग मलसे छित होता है और अग्नि आदिके संसर्गसे वह भैरु दूर कर दिया जाता है उसी प्रकार जब इस जीवके पूर्वोक्त कर्मोंकी निर्मला होने लगती है और संसारके बलसे आनेवाले कर्मोंका आना रुक जाता है तब सम्पूर्ण कर्मका क्षय होनानेसे जीवकी मुक्ति हो जाती है तो संसारी अवस्थामें जीवकी पूर्वपर्यायका विनाश होनेसे व्यय, नवीन पर्यायके उत्पन्न होने उत्पन्न और जीव-तत्त्वा ही रहता है अतः ध्रौव्य, ये तीनों ही गुण जीव द्रव्यमें अच्छी तरहसे घटित हो जाता है अतः द्रव्यका लक्षण जीव द्रव्यमें सिद्ध होता है।

(शङ्काकार) जन कि कर्मोंके अभाव होनेसे मुक्त जीवोंके शरीर रहता ही नहीं है उन फिर मुक्त जीवमें उत्पादादि कैसे होंगे।

यह भी ठीक नहीं है क्योंकि मुक्त जीवोंके अगुहृष्टु गुणके द्वारा पट् स्पर्श पतित हानि वृद्धिसे उत्पादादि बन जावेंगे।

संसारी जीवोंमें इस तरह भी उत्पाद व्यय ध्रौव्य बन सकते हैं।

पृष्ठद्रव्यमें पूर्वपर्यायके विनाशसे और उत्तर पर्यायके प्रादुर्भावसे उत्पन्न व्यय बन जाते हैं। कभी भी पृष्ठद्रव्यका सर्वथा विनाश नहीं होता अतः ध्रौव्यता भी रहती ही है।

दूसरे जो पृष्ठद्रव्यमें स्पर्श रस गन्ध वर्ण गुण पाये जाते हैं वे सर्वथा एकसे नहीं रहते, स्पर्श कभी कोमलता, कभी कठिनता, उष्णता, शीतता, लघुता, गुरुता, स्निग्धता, रूक्षता इन आठ तरहसे परिणत होता रहता है। रसमें चिरपरा, कटुभा, खट्टा, मीठा, कषायका ये पांच भेद हैं तथा गन्धमें दुर्गन्ध सुगन्ध इस तरह दो। वर्णमें नील, पीत, श्वेत, श्याम, शालू ये पांच भेद हैं। इन बीस भेदोंके सिवाय विस्तारसे उत्तर भेद संख्यात असंख्यात अनन्त भी हो सकते हैं।

(शंका) जब कि लोक असंख्यातप्रदेशी है तो उसमें अनन्त प्रदेशवाला पृष्ठद्रव्य किंच कैसे आ सकता है।

ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये क्योंकि एक एक आकाशके प्रदेशमें भी सुदूर परिमाणसे परिणत अनन्तानन्त प्रदेशी रङ्ग आ सकता है ऐसा आगममें कहा है। पृष्ठद्रव्यकी शब्द, बन्ध, सौन्दर्य, स्पर्श, संस्पर्श, भेद, तप, उपा, आनर, उद्योग ये १०

मुख्य पर्याय हैं। मायात्मक और अमायात्मक इस तरह शब्द दो तरहके होते हैं। मायात्मक भी दो भेद बाटा १ अक्षरात्मक दूसरा अनक्षरात्मक। अक्षरात्मकके प्रकृत संस्कृत देशभाषा आदि अनेक भेद हैं। अनक्षरात्मक माया द्वीन्द्रियादिकोंमें और अर्हन्त देवकी दिग्बन्धनमें पाई जाती है। मायात्मकके सभी भेद परके प्रयोगसे होते हैं अतः प्रायोगिक है। अमायात्मक शब्द दो प्रकारके होते हैं। एक प्रायोगिक दूसरे स्वाभाविक। मेवादिककी ध्वनि स्वाभाविक होती है और प्रायोगिकके १ तत २ वितत ३ घन ४ शौपर ये चार भेद हैं। विस्तृत चर्पके शब्दकोतत, सितार, साझी आदिकी आवाज़को वितत, घंटा आदिकी ध्वनिको घन, और हवासे जो शब्द आदिकी आवाज़ होती है उसे शौपर कहते हैं।

अन्ध दो प्रकारका है—एक स्वाभाविक दूसरा प्रायोगिक। सुझता भी दो तरहकी होती है—एक अन्त दूसरी अपेक्षिक। स्थिरताके भी यही दो भेद समझना। संस्थान (अकृति) नियत स्वरूप, अनियत स्वरूपसे दो भेद बाटा है। भेद प्रपञ्च भावको कहते हैं और वह उत्तरपूर्णादि भेदसे ६ प्रकारका है। तम अन्धकारको कहते हैं। सांया आवरणको कहते। जिसकी उज्ज प्रभा हो उसे आवरण कहते हैं और यह सूर्य या अग्निसे उज्ज होता है। जिसकी प्रभा उज्ज नहीं होती है उसे उद्योत कहते हैं, यह चन्द्रसे उत्पन्न होती है। कहा भी है कि—“आदावो होदि उज्ज सहिषपहा”

“उज्जहण वह्राहुं उज्जो ओ”

अर्थात् उज्जप्रभा सहित आतप और उज्जप्रभा रहित उद्योत होता है, ये प्रद्वन्द्वके १० भेद हैं।

प्रद्वन्द्वके इस प्रकारसे भी भेद किये जासके हैं। मूत्रमें प्रद्वन्द्व दो प्रकारका है—एक स्कन्ध दूसरा अणु।

जिसमें उठाना रखना आदि क्रियाओंका व्यवहार हो और स्थिर हो उसे स्कन्ध कहते। द्रव्यणु आदिमें रुद्धके बराबर द्रव्यणु बिना चटित होते हुए भी स्कन्धता मानी गई है। जो त्रिक एक प्रदेशांश हो उसे अणु कहते हैं। यह अणु अस्पर्शदि वस्तुसंगोच नहीं है। सर्वज्ञ भगवान् दो इसे जानते हैं। प्रत्येक अणु छकोण बाटा है और आकाशके एक प्रदेशमें रहनेवाला है। इसमें अत्यन्त सूक्ष्मता होनेसे आदि अन्त मध्यकी व्यवस्था नहीं की जा सकती क्योंकि जो ही इसका आदि है वही मध्य और अन्त है जैसे कि किसीके एक पुत्र हो तो उससे पूछा जाय कि तुम्हारा सबसे बड़ा पुत्र कौन है तो वह उसे ही बड़ा छोड़ और मध्यम पुत्र बतलावेगा। प्रद्वन्द्व द्रव्यकी सिद्धिके लिए सर्वतः प्रथम यह उचित है कि अणुकी सिद्धि कर ली जाय। अणुकी सिद्धि हो जाने पर कि बड़ासे बड़ा भी स्कन्ध सिद्ध किया जा सकता है। अणु द्रव्यकी प्रत्यक्षता नहीं दिखताई देना गणना

उसका अमर भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि बहुतसे पदार्थ साधुन्तरित (जो वर्तमान कालमें नहीं पाये जाय) हैं जैसे राम सीता लक्ष्मण गारणादि देशान्तरित (जिस देशमें जाननेवाला मौजूद हो उस देशमें न पाये जाय) जैसे सुमेरु हिमालय आदि, इन पदार्थों की जैसे अनुमान व आगम प्रमाणके द्वारा सिद्धि की जाती है। अणु ही भी उसी तरह अनुमानसे व आगमसे सिद्धि की जा सकती है, अणु है क्योंकि यदि अणु नहीं होता तो संसारमें स्थित अणु पिण्ड स्वस्व/ये मर्त्य देहमें नहीं आते। इस अन्वयानुरागति रूप हेतुसे अणु की सिद्धि की जाती है। आगम तो इसके लिए पक्षी है ही।

कोई कोई परमाणु को सिर्फ राशण ही मानते हैं यह उनका मानना अनुचित ही है क्योंकि "भेदादणु" अर्थात् पदार्थोंमें भेद करनेसे अणु होता है। किसी मित्रे हुए पदार्थका यहा तक भेद हो जाय कि जिससे फिर उसके भेद न हो सकें तो वह जो अन्त दशावत पदार्थ होगा, वह ही परमाणु बोला जायगा अतः भेदके द्वारा अणुके उत्पन्न होनेसे अणु की कल्पना भी है। परमाणुमें उत्पाद व्यय प्रौढ्य भी संघटित है क्योंकि उसमें स्तिर-रवादि गुणोंका उत्पाद और व्यय होता रहता है। अज्यायिक नयवी अपेक्षासे परमाणु की न कभी उत्पत्ति होती है न कभी नाश होता है, अतः परमाणुमें द्रव्यका वक्षण अच्छी तरह घटित हो जाता है। स्पर्श रस आदि गुणोंका समुदाय ही परमाणु है अतः परमाणुमें स्पर्श आदिके भेद होनेसे भेद भी हैं और परमाणु फिर विभाग नहीं होता अतः परमाणु अभेद स्वस्व भी है। परमाणु सूक्ष्म परिमाणवाला है इस लिए कथंचित सूक्ष्म है और द्रव्यकारि-सम्बन्ध होनेसे सूक्ष्म स्वरूप हो जाता इस लिए कथंचित सूक्ष्म भी है। परमाणुका द्रव्य रूपसे कभी विनाश नहीं होता अतः नित्य है और स्वरूप रूपमें अनेक प्रकार से इसका परिवर्तन होता रहता है अतः कथंचित अनित्य है। कार्यरूप अतुल्य से परमाणु माना जाता है अतः कार्यरूप है और प्रत्यक्ष ज्ञान विषय पनेकी अपेक्षा कार्यरूप नहीं है अतः मानना चाहिये कि —

अणुमें भी अनेकान्तताका अच्छा साक्षात्कार है।

स्वरूपके विषयमें कुछ विशेष कहना नहीं है ॥

स्वरूपके स्वरूप, स्वरूपवैश, स्वरूप प्रदेश इन तरह तीन भेद हैं।

स्वरूपके स्थिती, अमर, तन, वायु ये चार भेद भी हैं।

नैर्वायिक लोग पृथ्वी, जल, वायु, अमर (अग्नि) को अलग २ स्वतन्त्र पदार्थ मानते हैं। पृथ्वीमें स्पर्श रस गन्ध और वर्ण ये ४ गुण मानते हैं और पृथ्वीका दृक्षण भी होती जाती सम्बन्धित है ऐसा मानते हैं। जलमें स्पर्श रस वर्ण ये तीन ही गुण मानते हैं और अमरस्पर्शरस आप शीत स्पर्शरस जरूरी है यह जलका दृक्षण मानते हैं। अग्निमें वर्ण और

स्पर्श ये दो गुण मानते हैं और लक्षण उष्णस्पर्शवत्तेजः ऐसा मानते हैं । वायुमें रूप भी नहीं मानते सिर्फ स्पर्श ही गुण मानते हैं और रूप रहित स्पर्शवान् वायु ऐसा वायुका लक्षण कहते हैं । यह इनका मानना अविचारित ही है क्योंकि पृथ्वी आदि अलग पदार्थसे मिलन पदार्थ नहीं है । हम देखते हैं कि पृथ्वी रूप जो कांठ है वह नष्टकर अग्नि रूप हो जाता है तथा बारूद दियासलाई आदिमें अग्निका उष्ण स्पर्शवत् लक्षण नहीं भी है तथापि ये जलकर अग्नि रूप ही होनाते हैं और अग्नि चक्र चुकनेके बादमें फिर पृथ्वी रूप हो जाती है । स्वाति नामक नक्षत्र विशेषमें वर्षा होते समय यदि जल बिन्दु सीपमें पड़ जाय तो वही पार्थिव रूप मोती बन जाती है । जिस आहार बातको हम ग्रहण करते हैं वही पित्तरूप (उदराग्नि) परिणत हो जाती है अतः पृथ्वी आदि स्वतंत्र पदार्थ नहीं माने जा सकते तथा जो अपने पृथ्वीमें स्पर्शादि चारों ही, जलमें गन्ध विना तीन, अग्निमें रूपस्पर्श और वायुमें केवल स्पर्श माना था सो यह भी तन्हासा मानना न्याय नहीं कहा जा सकता, क्योंकि भिनमें परस्पर अविनाभाव सम्बन्ध है वे एक दूसरेके विना कभी नहीं रह सके, इनका अविनाभाव किस तरहसे हैं और पृथ्वी आदिका जीव पदार्थादि किस किसमें अन्तर्भाव होता है यह हम पदार्थोंकी व्यवस्था जहां निर्णय की है वहां छित्रा आये हैं अतः यहां पुनरुक्ति, दोस वृद्धि, समवामाव, और निरर्थक होनेसे नहीं लिखते हैं । आशा है कि इस प्रकारके निज्ञामु जहां यह विषय छित्रा गया है उन पत्रोंमें देखनेका कष्ट उठावेंगे ।

परमाणुकी तरह सन्धमें पूर्ण अपर अवस्था विनाश उद्भूत होने द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह प्रतिष्ठित हो जाता है । श्रौंयता इनके सर्वथा नाश न होने सदा बनी ही रहती है ।

पृथ्वी आदि पदार्थकी अपेक्षा आदि रहित हैं । उत्पत्तिकी अपेक्षा तो अनन्त नहीं कह सके क्योंकि उत्पत्तिनाश सादि ही होता, इस तरह पदार्थकी आवरणकता और सिद्धि विषय समाप्त किया ।

सारांश—पदार्थ द्रव्य यदि नहीं होगी तो संसारकी प्राणमृत पदार्थ व्यवस्था नहीं बन सकते अतः पदार्थ द्रव्यकी आवश्यकता है । परमाणुके सिद्ध होनेसे पदार्थ द्रव्यकी सिद्धि है ही । अतः जीवद्रव्यस्त पदार्थद्रव्यको भी मानना चाहिये ।

धर्म अधर्मका निरूपण तथा आवश्यकता ।

उक्त कथनमें पदार्थकी अच्छी तरहसे सिद्धि की गई है । यहाँ पर धर्म अधर्मके विषयमें लिखते हैं—प्रथम धर्मद्रव्यका लक्षण श्री कृष्णकृष्णधर्मने इस प्रकार किया है—

धर्मस्थि कायमरसं अयणगंधं असहमणकासं ।

लोगोनादं पुद्गं विदुलमसंजादि य पदेसं ॥ १ ॥

अगुरुगलघुगेहिं सया ते हिं अणंते हि परिणदं णिचं ।

गदिकिरिया जुत्ताणं कारणभूतं समयमकज्जं ॥ २ ॥

उदयं जइ मच्छाणं गमणाणुग्गहपरं हवदिलोये ।

तइजीव पुग्गलाणं धम्मं दव्वं विद्याणे हि ॥ ३ ॥

भावार्थ—वर्मास्त्रिकाप स्पर्श रूप गन्ध रस और शब्दसे रहित हैं अतएव अमूर्त हैं, सकल लोककाशमें व्याप्त हैं, अक्षण्ड विस्तृत और असंख्यगत प्रदेशी हैं, पटस्थान पतित वृद्धिहानि द्वारा अगुरुघु गुणके कारण अविभाग प्रतिच्छेदोंकी हीनाधिकतासे उत्पाद व्यय स्वरूप हैं । स्वरूपसे कदापि च्युत न होनेके कारण नित्य हैं । गति विक्रिया युक्त जीव पदार्थोंके गमनमें सहायक हैं । आप किसीसे उत्पन्न नहीं हुआ है अत आकार्य हैं । जड़ मत्स्यादिकोंके गमनमें स्वयं न चक्ररूप जैसे सहकारी हैं उसी प्रकार जीव पदार्थोंके साथ स्वयं न गमन करता हुआ उनके (जीव पदार्थोंके) गमनमें सहकारी मात्र हैं । यहां यह व्यय रचना चाहिये कि धर्म अधर्म शब्दका उपयोग दृष्ट अदृष्टमें भी आता है । लोकमें प्रणय पावको भी धर्म अधर्म कहते हैं जिसमें कि धरतीति धर्म न धर्म; अधर्म ये व्युत्पत्तियां हैं । ये धर्म अधर्म शब्द गुणवाचक हैं लेकिन इन कथनगत धर्म अधर्म शब्द द्रव्यवाची हैं ।

धर्म द्रव्यका स्वरूप संक्षेपसे यह है कि जीव पदार्थोंको गमनमें सहकारी मात्र हो वह धर्म, और जो ठहरानेमें जीव पदार्थोंको सहकारी हो उसे अधर्म द्रव्य कहते हैं । भिन्न तरह पवन पताका उड़ाता है पावल्ली नावको चलाती है या मोटर मनुष्यको स्थानान्तरण पहुंचाती है उसी प्रकार धर्म द्रव्य जीव पदार्थोंके गमनमें सहकारी नहीं है क्योंकि “ निष्क-वाणि ” इस सूत्रसे धर्मादि द्रव्योंकी निष्क्रिय वदनाया है । जो स्वयं क्रियायुक्त नहीं वह दूसरोंकी क्रिया नहीं करा सकी किन्तु धर्म द्रव्य उदासीन निमित्त कारण है । इसी तरह अधर्म द्रव्यकी मानत भी समझना चाहिये अधर्मको भी जीव पदार्थोंकी स्वयंमें उत्पत्ति निमित्त कारणता है ।

शंका—अब कि धर्म अधर्म द्रव्य और आकाश द्रव्य क्रिया रहित हैं तो उत्पाद नहीं होना चाहिये, उत्पाद नहीं होगा तो व्यय भी नहीं होगा क्योंकि जो २ उत्पादवाले हैं वे ही व्ययवाले देखे गये हैं । घटादिक जो व्ययवाले नहीं हैं वे उत्पादवाले भी नहीं हैं ऐसे कि आत्मा ।

अन्यथा, उत्पादन होना ही व्ययके अन्वय सूत्रक हैं क्योंकि “ कार्योत्पाद स्ये हि ” कार्यक उत्पाद है वही व्ययका कारण है । उत्पाद व्यय न होनेसे इनमें द्रव्य अक्षय वदित नहीं हो सत्ता । यह रहना भी युक्त संगत नहीं है । यद्यपि क्रिया निमित्त उत्पाद अक्षय नहीं भी है तथापि स्वयं निमित्त उत्पाद यथांश अक्षय तरह वदित हो

जाता है। स्व निमित्त उत्पाद व्यय अगुरु छुट् पूर्व पद्वत्प गुण हाजिसे होता है पर निमित्त उत्पाद व्यय अक्षादिक गति स्थिति अवगाह देनेसे होता है। धर्म अवर्गका सद्भाव उनके कार्य द्वारा किया जाता है क्योंकि कार्यके द्वावमे कारण का सद्भाव अवश्यमावी है जैसे कि धूमके सद्भावमे अग्नि का होना अवश्यमावी है। जब कि जीव पृथ्वीमें गति स्थिति देखते हैं तो उस गति स्थितिका कोई न कोई कारण अवश्य होगा और वह कारण अभी धर्म ही है यानी गति का कारण धर्म और स्थितिका कारण अवर्ग है।

शंका—जब कि गति स्थितिका कारण पृथ्वी भी हो सकती हैं तो अदृश्य धर्म धर्मकी कहरना नहीं करना चाहिये ऐसा भी नहीं कह सकते, क्योंकि पृथ्वी जल आदि आश्रय रूप है अतः गति स्थिति हेतुक विशेष कारण धर्म अवर्ग मानना ही चाहिये।

शंका—आकाश द्रव्य सर्व व्यापक है अतः आकाश ही गति स्थितिमें साधारण निमित्त कारण हो सका है। धर्म अवर्ग माननेकी पुनर्पि आवश्यकता नहीं है, ऐसा नहीं रह सके क्योंकि आकाशका अवगाहन उपकार है अन्यका यानी धर्मधर्मका उपगृह अन्य यानी आकाशका नहीं हो सका अन्यथा किसी भी पदार्थकी सुव्यवस्थिति न हो सकेगी।

अन्यत्त्व—यदि आकाशको गति हेतु का कारण मानोगे, आकाश अलोकाकाशमें भी है। वहां पर भी इसको गति स्थिति हेतु। प्राप्त होकर जीव पृथ्वीका गहन हो नायगा तथा च लोकलोकका विभाग नहीं हो सकेगा। अतः मानना चाहिये कि धर्म अवर्ग द्रव्य है। लोकलोक विभागकी धर्म अवर्गके बिना उत्पत्ति न होनेसे यहां लोकलोक विभाग रूप हेतु असिद्ध नहीं है क्योंकि लोकलोक विभागका अनुपात हेतुअन्तर उपस्थित है। लोक अलोकाका विभाग है क्योंकि लोक मान्य है और अलोकाकाश अनन्त रूप है, कोई ऐसा वह कि लोक अतत्त्व नहीं है तो भी लोक नहीं है क्योंकि लोक सान्त है सान्त विशेष होनेसे मरानादिककी तरह।

इन तरह लोककी सान्तता सिद्ध हुई। सांगंश यह है कि धर्म अवर्गकी सिद्धिके लिये लोकलोक विभागव्यवस्था हेतु है। लोकलोक विभागके लोकस्य सान्तता हेतु है और लोककी सान्तता सिद्ध करनेके लिये स्वता विनिष्ठत्व हेतु है। स्वता विनिष्ठत्व प्रत्यक्षात्मे ही है क्योंकि ओ २ द्वारा विशेष विनिष्ठ है वे २ सान्त हैं और ओ २ सान्त हैं वे २ विभाग मुक्त हैं। जबकि विभाग सिद्ध हो गया तो इस अनुमानसे धर्म अवर्ग है। लोकलोकको अन्यथा (धर्म अवर्गके अभावमें उत्पत्ति न होनेसे) धर्म अवर्गकी सिद्धि हो ही जाती है। अतः धर्म अवर्गका स्वीकार करना ही चाहिये।

आकाश द्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धिः।

आकाशका उत्पन्न नाशदिक धर्मोंके अवगाहन ऐसा है अर्थात् ओ २ अतत्त्व और सबकी अवगाह देनेका सामर्थ्य बाध है उसे आकाश कहते हैं।

कान्ते घर्मावर्षे द्रव्यण्यमासौ लोः यानी जिसमें जीवादि पदार्थ डेले जाय उसे लोक कहते हैं । जहापर घर्मावर्ष द्रव्य नहीं है वहाँके आकाशको अलोकाकाश कहते हैं ।

शंका—जिस तरह आप घर्मावर्षजीवादि द्रव्यका आधार आकाश मानते हैं तो आकाशका भी आधारान्त (अन्य आधार) मानना चाहिये या आकाशके सदृश जीवादिको भी स्व प्रतिष्ठित मानिये, ऐसी शंका नहीं कर सके। क्योंकि आकाश सर्वतो अनन्त है अतः उसको कोई आधारान्तर कल्पित नहीं किया जा सका ।

शंका—आधार अधेयभाव पूर्व उत्तर वर्गियोंका होना है तो जब घर्मादिका आकाशमें आधार अधेय भाव है तो पूर्वोत्तर भाव भी पारा माना चाहिये और ऐसा माननेसे द्रव्योंकी अनादिताका खंडन होता है ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये क्योंकि पूर्वोत्तर वर्तियोंका ही आधार अधेय भाव होता, यह कोई नियम नहीं है । अन्तर्मात्रे ज्ञानदर्शनादि या घटमें रूप रवादिक इन सयनमयशालोंमें भी आधार अधेय भाव देखा जाता है । आकाशमें “ दृश्य लक्षण ” “ गुणवर्षे दय ” अदि तीनों ही द्रव्यके लक्षण सम्यक् रीत्या संघटित होते हैं और वह कैसे सो अगाड़ी दिखावेंगे ।

शंका—आकाशका जो अवगाह देना लक्षण किया सो अतिव्याप्तिदोष दूषित है क्योंकि “ लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न प्रतियोगिताकभेदसामानाधिकरणं अतिव्याप्तिः ” जिस घर्मसे सहित लक्ष्य होता है, उस घर्मको लक्ष्यतावच्छेदक नामसे कहते हैं और लक्ष्यतावच्छेदकने अचच्छिन्न है उसे लक्ष्य कहते हैं । यहां लक्ष्यतावच्छेदक आकाशत्व है तथा लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न आकाश है और यस्याभावः सप्रतियोगि इति नियमके अनुसार आकाशका प्रतियोगि (प्रतिपक्षी) मकान घर्म अथवादि भी जीव पदार्थोंको अवगाह देते हैं फिर अक्षाश हीका यह लक्षण कैसे हो सकता ।

उक्त शंका नहीं करनी चाहिये । प्रथम तो आपने जो अति व्याप्तिका लक्षण बताया वही ठीक नहीं है क्योंकि मानलीजिए अथ (बोहे) का हमने साक्षादिमत यह लक्षण किया तो आपका उक्त अतिव्याप्ति का लक्षण यहां घट ही जाता है यानी लक्ष्यतावच्छेदका अच्छिन्न हुआ अथ उपका जो प्रतियोगी गौ उपमें साक्षादिमत रह गया लेकिन अथका साक्षादिमत लक्षण करना यह असंभव दोष कहा है क्योंकि “ लक्ष्यतावच्छेदक व्यापकी भूताभाव प्रतियोगित्वम् ” ऐसा अक्षमत्वका लक्षण किया है; अथका साक्षादिमात्र लक्षण करने पर लक्ष्यतावच्छेदक अथव तथा अथव व्यापकीभूत (पानी अथव जिनमें रह) हुए सब अथ, उनमें जिसका अभाव रूप प्रतियोगित्व हो सो साक्षादिमतत्व अभाव है अतः अथका साक्षादिमत लक्षण है वह जिस घर्मों और अति व्याप्ति दोषसे अतिव्याप्ति दर्शा

घर्मका अवलम्बन करके असंभव दोषसे भी दृष्ट है अतः आपको अपने उक्त अति व्याप्तिके लक्षणमें लक्ष्यतावच्छेदक सामानाधिकरण्ये सति इतना विशेषण और मिलाना चाहिये। क्योंकि ऐसा करनेसे अति व्याप्ति और असम्भवे ऐक्य नहीं आसकता। उक्त उदाहरणमें ही जिसमें कि अथका साक्षादिमत्व लक्षण कहा निर्दिष्ट अति व्याप्तिका लक्षण बना देनेसे लक्षण ही नहीं जाता क्योंकि लक्ष्यतावच्छेदकका सामानाधिकरण्य जो लक्ष्य उसमें रह करेगा जो लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न प्रतियोगिमें जो लक्षणका रहना है उसे अतिव्याप्ति कहते हैं। लक्ष्यतावच्छेदक अथवा इसका सामानाधिकरणी जो अथ उसमें साक्षादिमत्व रहकर फिर लक्ष्यतावच्छेदक सामानाधिकरण्य प्रतियोगि गायमें रहता तो साक्षादिमत्व अतिव्याप्त होता लेकिन रहता ही नहीं है अतः यहां असम्भव दोष ही आवेगा।

और जब कि आपसे अतिव्याप्तिके लक्षणमें ही गल्ती होती है तो आप आकाशके अवगाहित्व लक्षण कैसे अतिव्याप्त सिद्ध करेंगे।

(शङ्काकार) - अस्तु, हमने आपके द्वारा स्मृत कराया ही अति व्याप्तिका लक्षण स्वीकार किया किन्तु महाशयजी क्या अति व्याप्तिके विस्मरणसे अशुद्ध लिखे हुए लक्षणको ही शुद्ध करके अति व्याप्ति दोषका निराकरण करना चाहते हैं। इस सचसे तो केवल एक लक्षण ही शुद्ध किया गया, अति व्याप्तिका निराकरण तो हुआ ही नहीं।

आकाशका अवगाहित्व लक्षण मकान घर्म अवर्ममें भी पाया जाता है इसलिए अति व्याप्त है। और दोष दृष्ट लक्षणसे कभी भी लक्ष्यकी सिद्धि नहीं हो सकती।

जैनी - आपका उक्त कटाक्ष भी आपकी आत्मदोषरूपका प्रदर्शक है। आकाशका अवगाहित्व लक्षण प्रधान है। पृथ्वी घर्म अवर्मादिके अन्य अन्य लक्षण हैं जैसे पृथ्वीका स्पर्श रस गन्ध वर्णदायक, घर्मका गति हेतुत्व, अवर्मका स्थिति हेतुत्व।

अतः अवगाह देना लक्षण आकाशका ही है। घर्म, अवर्म, पृथ्वी आदि सभीको अवगाह नहीं देते। दूसरे अवगाह देना इनका लक्षण भी नहीं है अतः आकाशके अवगाहित्व लक्षणमें शंका नहीं करना चाहिये।

यदि आकाशका लक्षण अवगाह देना ही है तो अलोकाकाशमें तो अन्य द्रव्योंका अभाव है अतः वहां अलोकाकाश किसीको भी अवगाह नहीं देना अतः आकाशके लक्षणमें अवगाति दोष आता है क्योंकि लक्ष्यतावच्छेदक सामानाधिकरणापन्तापवप्रतियोगि में अतिव्याप्तिका लक्षण माना है तो यहां अच्छी तरहसे घटित होता है। यहां लक्ष्यतावच्छेदक आकाशत्व है तथा आकाशत्वका सामानाधिकरणी हुआ आकाश, उसके अन्तर्भावाका प्रतियोगि (यानी लक्ष्यका कुछ भाग) में लक्षणके रहनेसे अवगाति दोष आता है तो यहां आकाशके कुछ भाग यानी अलोकाकाशमें तो यह द्रव्यका लक्षण आता है,

अलोकाकाशमें नहीं जाता अतः अभ्यासि दोष दृष्ट होनेसे द्रव्यका लक्षण अलोकाकाशमें द्रव्यत्व नहीं सिद्ध करसक्ता।

ऐसी शंका भी नहीं करना चाहिये क्योंकि अलोकाकाशमें अन्य द्रव्य ही नहीं है जिसको कि आकाश अवगाह दे। यदि किसी वहेमें यानी न रक्ता जाय तो गडका जड़ धारण-वर्म नष्ट नहीं हो सकता उसी प्रकार यह दोष आकाशका नहीं है।

(शंका) जबकि अलोकाकाशमें काष्ठ द्रव्य ही नहीं है तो वहां वर्तना नहीं हो सकती। वर्तनाके विना उत्पाद व्यवका व्यवहार नहीं हो सका और न नित्यताका ही व्यवहार हो सका है अतः वहां द्रव्यका लक्षण ही संबधित नहीं होता अतः यातो अलोकाकाशको द्रव्य श्रेणीसे अलग कर देना चाहिये नहीं तो द्रव्यका लक्षण अभ्यासि दोष दृष्ट मानना चाहिये। अलोकाकाश द्रव्यकी श्रेणीसे अलग तो किया नहीं जा सका क्योंकि आकाशका विशेष भेद है। विशेष विना सामान्य रह नहीं सका। यदि अलोकाकाशको द्रव्यकी श्रेणीमेंसे अलग कर देंगे तो आकाशका भी अभाव हो जायगा, आकाशके अभाव होनेपर अवगाह देनेकी शक्ति युक्तद्रव्यका अभाव होवेगा फिर वर्म कवर्म-आदि कहाँपर गहरेंगी। तथा च सात नरक वनोदविषलक्षके ऊपर हैं। वनोदविषलक्ष, वनवात-वक्षके ऊपर है और वनवातवक्ष आकाशके ऊपर है और आकाश स्वयं स्वप्रतिष्ठित है। इस सबका अन्य कारण आकाश ही है फिर आकाशका अभाव होनेसे यह सब व्यवस्था कैसे बनेगी।

ऐसी शंका नहीं करना चाहिये। क्योंकि आकाशमें द्रव्यका लक्षण सुबधित ही है अतः एक बड़े बांसके सिरेपर कुछ गंधात करनेसे सब वातमें उसकी आवाजसे क्लिया हो जाती है। बांसके एक होनेसे तथैव आकाशमें भी कथञ्चि एतत्त्व है अतः वहां भी एक देशीय आकाशमें उत्पाद व्यव धीम हो जायगा यानी अलोकाकाशके अलोकाशमें काल द्वारा वर्तना है अतः उत्पादादि भी होंगे। उसी उत्पादादिका संबंध अलोकाकाशके आकाशमें भी हो जायगा। द्रव्य लक्षणके सुबधित होनेसे आकाशमें द्रव्यता सिद्ध हो गई अतः उक्त कोई दोष नहीं आसक्ता, आकाशके सद्रव्यका विनिश्चायक यही प्रमाण है कि सभी शब्दोंक वाच्य अवयव हुवा करते हैं। अतः आकाश शब्द नव-प्रसिद्ध है तो उसका अभिव्येय अवयव मानना चाहिये।

शंका—यद्यपि २ शब्द हैं उन समीके कुछ न कुछ वाच्य अवयव हुआ करते हैं। यदि ऐसा है तो वन्था पुत्र खरविषाण इनका भी कुछ न कुछ वाच्य होना ही चाहिये, ये कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि वन्था पुत्र इतना समस्त कोई है नहीं है एक है और एक २ अभिव्येयोंकी उपलब्धि भी होती है। अब कोई कहे कि आकाश तो सर्वव्यापक है उसमें उत्पाद व्यव धीम

यह कहना भी अविचारीतरम्य ही है, क्योंकि आकाश जब निश्चय है तो औचित्यता तो उसमें सदा बनी ही रहेगी। उत्पाद व्यय अगुरुत्वगुणकी अपेक्षासे हो जायगे। द्रव्योंमें उत्पाद व्यय दो प्रकारसे होते हैं। एक स्व प्रत्यय और दूसरे पर प्रत्यय। अनन्त अगुरु छत्रु गुणोंके द्वारा पट स्थान पतित वृद्धि हानिसे पूर्व अवस्थाके अभाव होना-नेको स्वद्रव्य व्यय कहते हैं और पहिलेकी तरह आगेकी पर्यायिका आविर्भाव होनेपर स्व प्रत्यय व्यय कहते हैं पर प्रत्यय उत्पाद व्यय तो मुख्य ही हैं। यानी आकाश बहुतसी आकाश रूप परिणत बहुतसे जीवादिकोंको अवकाश देता है अतः कि द्रव्य जिसका कि आकाशमें अवगाह होता है अनेक रूप हैं तो आकाश भी अपनी प्रत्येक २ शक्तियों द्वारा उन अनेक रूपजीवादिकोंको अवकाश देता है अतः अनेक रूपता आकाशको सिद्ध ही है। कोई २ "शब्द गुणकमीकाश" यानी शब्द है गुण जिसका ऐसा आकाश है, ये आकाशका लक्षण मानते हैं। नैयायिक लोग शब्दकी गुण मानते हैं। अपने चौबीस (२४) गुणोंकी संख्याके अन्दर शब्द नामक एक गुण है जिसका कि लक्षण "श्रोत्र आलो गुणः" "श्रोत्र ग्राह्यत्वेन गुणवत्त्वं शब्दस्य लक्षणं" श्रोत्र ग्राह्यत्व विशेषण देते तो रूपरवादि गुण हैं अतः यहां अलक्ष्यमें शब्दका लक्षण जानिसे भक्ति व्याप्ति दोष होता। और यदि मोत्र ग्राह्यत्व मात्र कहते तो शब्दत्व भी श्रोत्र ग्राह्य है किन्तु गुण न होनेसे शब्द नहीं कहा जासकता।

इस तरह शब्दका लक्षण मानकर नैयायिक शब्दगुणवाला आकाश है ऐसा कहते हैं किन्तु शब्द पौष्टिक है यह हम पहिले सिद्ध कर आये हैं।

अतः जब कि शब्दको पुष्टलता है तो उसे गुण नहीं कह सकने। यदि द्रव्य भी गुण कहेंगे तो द्रव्य गुणमें संकर हो जायगा। इस लिए शब्द गुणवाला आकाश नहीं होसकता अतः जैनियोंका माना हुआ आकाशका लक्षण स्वीकार करना चाहिये सर्वत्र निर्विवाद होनेसे।

सारांश—वाच्यसे वाचककी सिद्धि होती है अतः आकाश वाच्यसे आकाश वाचक की सिद्धि हो ही जायगी और उपयोगिता उसकी अवगाह दानसे सिद्ध होती है। यदि आकाश माना जाय तो सभी द्रव्योंको निराध्वयताका प्रसङ्ग हो जायगा अतः आकाशको मानना ही चाहिये।

अब कालकी सिद्धि और आवश्यकता चतुर्लाते हैं।

काल द्रव्यका स्वरूप पूर्णचाचने यह दिशाओं है कि जो तर द्रव्योंक वर्तमाने उदाहरण हो उसे काल द्रव्य कहते हैं। जैसे वर्म और अपर्म द्रव्य पुष्टों और मीनों की गति विविधमें बराबरप्रयोजक नहीं है उसी तरह काल भी बराबरसे किसी द्रव्यमें वर्तना

(परिणामन) नहीं करता जैसे कि गाड़ी के नीचे छगे हुवे पहिये, स्वयं गाड़ी को नहीं खींचे। जाते बहिक गाड़ी बच्च आदिकोंसे खींची जाती है तो पहिले गाड़ी के चक्केमें उदासीन कारण हो जाते हैं। उसी प्रकार काळके वर्तनाकी दशा है। लोकांशके एकरूपदेशके ऊपर वर्तनकी राशिके समान एकर काष्ठका अणु स्थित है।

उक्त च-लो गायान पदेसे इच्छेके जे ठिपाहुं इच्छेका ।

रयणाणं रासीमिव ते कालाणु असंख दब्बाणि ॥१॥

द्रव्यके जो दो या तीन लक्षण पहिले रहे थे वे दोनों ही काळ द्रव्यमें अच्छी तरह वदित हो ग्यते हैं। काष्ठ द्रव्यमें अणु रश्च गुणकी अपेक्षा पट स्थान पतित और हानि वृद्धिसे उत्पाद और व्यय होते हैं। समय १ के अनन्ता काळमें-भूत भविष्यत् वर्तमानका व्यवहार होता है। कुछ समयके बीत जानेसे (विनाश हो जानेसे) भूत काळका व्यवहार होता है। और तात्कालिक उत्पाद होनेसे वर्तमानका व्यवहार होता है और अनागतकी अपेक्षा भविष्यका व्यवहार होता है। इन तात्कालिक उत्पाद व्यय हो जाते हैं और काळके समी काळोंमें व्यवहार होता है, अतः श्रवता है ही इसलिये सद् द्रव्य लक्षण घटित हो ही जाता है। काळके साधारण गुण चेतनस्व सुक्ष्म आदि हैं और असाधारण वर्तना हेतुत्व है। भूत वर्तमान आदि ये सब काळकी पक्षीय हैं अतः द्वितीय द्रव्यका लक्षण गुणपर्ययवद्भूतं यह भी सुप्रतिष्ठित ही है। काळमें भूत भविष्यत् आदिका व्यवहार होता है अतः काळको अपदेशी और अनन्त समयवाला माना है।

शंकाकार-नन कि आप वर्तना कराना काळको लक्षण मानते हैं तो काळको सक्रिय मानना चाहिये यह उनका कहना भी ठीक नहीं है। क्योंकि यहाँ निमित्त मात्रमें हेतु-कलाका व्यवहार है जैसे चश्मा मुझे दिखता है, या बण्टकी अग्नि मुझे पड़ाती है, उत्पादितमें काळका व्यवहार होता है। संसारमें भी मुख्यतया समय मन्वयह (दोपहर) का समय नाश्त समय ऐश्वर्यसंका समय पैसिनरका समय इत्यादि जो व्यवहार होता है वह काळके सद्भावमें ही मुख्यतया होता है। दूसरेके द्वारा अवगतया दूसरेको ज्ञान करानेवाली जो क्रिया विशेष उसको काळ कहते हैं। निमित्त २ में काळका लक्षण जाय उसे २ द्रव्य मानना चाहिये इसलिये अनायास काळको द्रव्यता सिद्ध ही है। नैयायिकोंने काळका लक्षण "अतीतादि व्यवहार हेतुः काळः" ऐसा माना है।

शंकाकार-अतीतादिका व्यवहार करानेवाला आकाश भी है अतः आकाशको भी काळका लक्षण मानना चाहिये। क्योंकि आकाशके बिना अतीतादि शब्द नहीं बोले जा सके अतः उक्त काळ द्रव्यका लक्षण अति व्याप्ति दोष दुष्ट होनेसे प्रपञ्चीक नहीं माना जा सका ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये। व्यवहार हेतु शब्दका अर्थ निमित्त मात्र लेना चाहिये। कण्टतालु आदि जो अतीत आदि शब्दोंके अभिव्यक्त हैं उनसे भी अतिव्याप्ति

नहीं दे सके क्योंकि यहां अतीतादि व्यवहार हेतु शब्दका अर्थ निमित्त मात्र ही है, कालकी सिद्धिमें और भी बहुतसे प्रमाण दिये जा सके हैं। यह कालकी ही महिमा है कि नियत समयमें प्रकृतिका नियत कार्य होता है। चैत्र वैशाख ज्येष्ठमें ही आम आते हैं। मका सीमन मार्दोमें ही पकती है आदि २।

यदि समय कुछ भी चीज न होती तो जो चीज जन्म चाहे उपज आती। समय न होता तो १० ही माह बाद खीके बादक नहीं पैदा होना चाहिये। वर्षा भी नियत समय पर नहीं होना चाहिये तथा जो आम्र, निंबू, केला, आम्रान, सेब, के आदि फल उत्पत्ति समयमें जैसे होते हैं उसी तरह हमेशा रहना चाहिये। वच्चा भी जैसा उत्पत्ति समयमें होता है वैसा ही रहना चाहिये तथा वृक्ष आदि जितनी भी वस्तु उत्पत्ति अवस्थासे आगे २ वृद्धिको प्राप्त होती है वे सब पूर्व अवस्थामें ही रहनी चाहिये अतः ऐसी स्थिति होनेपर संसारके बहुत मायका आवात हो जायगा इसलिये काल द्रव्य अवश्य मानना चाहिये। यह काल द्रव्यका व्यवहार सूर्य चन्द्र आदिकी गति हेतुक है। सूत्रकारनी ने भी कहा है “तत्कृतः काल विभागः” यानी सूर्यनक्षत्र आदिकी गतिसे कालका विभाग होता है। संसारकी स्थिति जो प्रथम कालमें थी वह इस पंचम कालमें नहीं है और जो इस कालमें है या होगी वह षष्ठम कालमें नहीं होगी अतः इन सबमें भेद विनिर्धारक कालकी सिद्धि होती है। कालके दो भेद हैं व्यवहार काल और परमार्थ काल। व्यवहार कालके भूत वर्तमान भविष्य इस तरह तीन भेद होते हैं इस तरह कालकी प्रमाणता और सिद्धि जानना चाहिये। इस निरन्वक निर्माणका यही तात्पर्य है कि सम्बन्ध पदार्थ व्यवस्था सदा ही स्थितिको प्राप्त रहे।

इस प्रकार इन लेखमें निम्न रूपांसे पदार्थ व्यवस्थाका निरूपण किया है। प्रथम दूसरोंके द्रव्य वक्षणांकी सुचास्ता अप्रमोणीक सिद्ध करके आहंतमतानुयायियोंके द्रव्य वक्षणांकी सिद्धि की है इसके पश्चात्तर स्वीकृत द्रव्य संख्याकी ग्युनाधिकता होनेसे संख्याभासनाकर नैनियोंद्वारा स्वीकृत संख्याकी प्रमाणता सिद्ध की है तदनन्तर अन्यमतानुयायियोंकी द्रव्योंवा वक्षणांकी सिद्ध कर व्याख्यादियोंके दृष्टिज नौकादि पदुद्रव्योंका विषय निरूपण किया है।

यदि समानका कुछ भी इस लेखसे उपकार हुआ तो मैं अपना धन सकल समर्पण।

श्री सारसान अगर स्वामी योनती हमरी यही।

शुभ ज्ञान हमको दीजिये अरु शान्तिमय कीजे मही॥

कर्तव्यमें निष्ठा सभीकी होय ओमन् सर्वदा।

अन्याय अत्याचारका उत्पाद नहि होवे कदा॥१॥

शान्तिका साम्राज्य हो अरु नाश अत्याचारका।

समके दिलोंमें भाव हो सदा नीति धर्म प्रचारका॥२॥



વસ, વહા વહા અને વહા !

"We thoroughly believe that more harm is done at the present time by Tobacco, Tea and Coffee, than by all forms of alcoholic drinks combined; and we deem it of greatest importance that the efforts of temperance workers should be turned in this direction."

J. H. KELLOGE, M.D.

મનુષ્ય પ્રાણીનો દેહસ્વભાવજ એવો છે કે તે ચોવાની સારે બનતા બનાવેલું ચતુરણુ કરતો રહે છે. એમાં આપણા લોકોના જેવા અતુ-રણુ પ્રિય પ્રાણી કવચિત્તજ મળશે. એકે અમુક એક કાર્ય કર્યું કે બીજાએ આબેહુજ તેનાજ જેવી નાક કરીજ સમજે. વિશેષતઃ એકદમ સખા નવીજ શુદ્ધરણે જે કંઈ બાબત કિંવા પ્રધાત પા-રણી તો તે બાબત કિંવા પ્રધાતને હચમીલેસમાં કોઈજ વચ્ચે લાગતો નથી. અને એમાંજ પણ તે જે બાબત કિંવા પ્રધાત પરેણી લોકોએ, મુખ્યત્વે, કરીને પુરોષિયન લોકોએ અને તે સુદાં ગ્રામ્ય અધિકારી વગેરે પાઠણે હોય એટલે જે તેમણે કરવું તે સર્વાંગ સુંદર પ્રાપ્તિપાણું અને ઉત્કૃષ્ટ એવું હોયુંજ નેહરણે, એવી કંઈ એકંદરે આપણા લોકોની માન્યતા થઈ ગઈ છે. અને એથી તે પ્રધાત કિંવા તે બાબત આપણા લોક આમજાની પેઠે, માન્યપરને રખરીને પાળે છે. પૂરુંજ ને પૂરું, ચંદાણા અને વિચારશીલ છે તેમના હોયે સહસ્રા એવું વર્તન થતું નથી. માન્યુષી પરેણી લોકોનો અને હિંદુસ્થાનનો સંબંધ થયો તેને મણાં વરતો લીલાં. વધાપિ પરેણીઓએ એકપણ બાબતમાં દિંડુ, લોકોના રીવાજનું અતુ-રણુ કર્યું નથી એવું કારણ ગોધરા જગજે તો એજ છે, અને તે સ્વદેશભિમાન-ચિવાય કંઈ નથી. તેમને સ્વજિમાન છે, સ્વદેશભિમાન છે. પોતાના રીતરિવાજ પાળનામાં તેમને મોડું ગારવ

લાગે છે. અને તેથીજ તેઓ જેવા પૂર્વે દત્તા તેવાજ આગે છે. પણ એથી ઉલટું દિંદી લોક માત્ર પરાવજની માન્યા એટલુંજ નહીં પણ તેઓ હવે દિંડુ તરીકે સુદાં જાણખાઈ આવતાં નથી. તે ગાવ એકજ બાબતથી દિંડુ છે, એમ જાણખી શકાય છે. અને તે બાબત તે જે કે તેમને વધુ છે. પથારીની પાસેથી રંગ બદલવાની જે એકદ નવી યુક્તિ શોધી કાઢી તો માત્ર તેમનાથી પૂર્વ પુરોષિયન બની શકાશે અને જગજાણું સાર્થક થયું એમ તેમને લાગશે. આમ થકાંટ કારણ શોધવા જતાં આપણને માન્યભિમાન નથી. સ્વદે-શભિ માં નથી એજ છે. તબુ નેટલું મારું અને વ્હવું નેટલું ખરાજ અને મુખ્યત્વેજ, આવા પ્રકારની અહીં માન્યતા છે, ત્યાં કોઈ થું કરે ! મોરને માટે એમ કહેવાય છે કે, તે જગદે નાચવા લાગે છે ત્યારે તેને જગદેને દેખી સુદાં નાચવા લાગે છે. પણ મળ થું થાય છે કે મોર નાચવા લામતાની ક્ષણેજ તેના પોંછાની સુદર દગા ધાપ છે. પણ દેલડીનો યુદ્ધ બાગે પહાર દેખાય છે. અરુ. આ પ્રમાણે ધણી ખરા રીતરિવાજમાં આપણું થયું છે. એમાંથી ચંદા-કાશીના પીણાનાં દુષ્પરિણામની બાબતમાં આપણે વિચાર કરીએ. ચોગ્ર વપ પહેલાં આપણે ચંદા કાશીનાથે નિલકુલ અવિશ દત્તા, એટલુંજ નહીં પણ ચંદા પીવી એ અધર્મનું દર્શણ છે એવી ધણી લોકો-ની માન્યતા હતી અને કેટલાકની અધર્મ પણ છે. આજસુધી ચંદા કાશીનું નામ સુદાં જે લો-કોને માદિવ નહોતું તેમને બાથરે ૧૫-૨૦ વર્ષની દેવથી તેણે પોતાનાં બીજકુલનાજન ગુલામ બનાવી મુક્યા છે. આટલે આપણે પથારી લોકોની પાસેથી લીધી. વચમાં કેટલાક લોક ચંદા પરેણીએ તેથી ખીતા નહોતા. પણ હિંદુસ્થાનમાં ચંદાનું વર્તિતર થવા લગ્યું ત્યારથી ચંદાનું એટલું પ્રસ્થ નીકળ્યું છે કે, જેટલું તેમજ મનુર વર્ગના લોકને ને પારના પારમાં નાસ્તાને માટે, બને રોટલા અને ચણીને જેના કિંવાં મરચાંનું અધાણું લાગતું હતું તેમને હવે જગદમાં ચંદાનો કંઈ મળ્યા કિંવાય મળ

ધર્મોત્તમ સુજ્ઞાતો નથી. રાજાથી રોક સુધી સોમોષ્ટને
ચલાવિના ચાલતું જ નથી. અંકેકે જાણે દિવસ
ખાવાનું ન મળે તો ચાલે પણ ચલા ન મળે તે
કામતું નહીં. ચલા ન મળે તો તેમના ધાણ
આકૃષ્ટાકૃષ્ટ યાય છે.....

જે મહિનાના બાળકથી તે ઠેક ડોસો
હમરાં પાંત. ચલા કાલ્યાણક થઈ પડી
છે. આખા ડોસોનાં પ્રવાસે હતી વેળા હોટલની કે
હરે ચલા મળતો નથી તોપણ “ગરબગરમ
આ લાઈયા ચલા” પાળે ખાતનગ ચલાની ફરી-
વળ. પસેથી લઇને ચલા પીગા પુષ્પજ સભ્ય
ડે સાચા પછ નજરે પડે છે એટલું જ નહીં પણ
લેડીને ધરણી કહીને બદનામ કરનારા બટબ-
હુને સદા ચલા શિખર ચાલતું નથી. તે ચલા
માત્ર ચલા મારીના કપ રકબીમા આપવી કામતું
નહીં. સંજ્યા કે પીતળના વાટકમાં માત્ર ચલા
પીગમાં ફરત નહીં જુવાન વર્ગ તરફ નજર
ફેરવે તો રંગે પોતને કૃષ પચતું નથી,
કે કૃષ કૃષ મળતું નથી. વગેરે બદનામીથી
ચલા પાંત શરૂ થયું છે. આ બધી કામચલાવે
તો જો છે કે, નાના કુળમાં જે ચાર મહિનાના
હુન પોતા બાળકથી તે જે ત્રણ વર્ષના બાળકનાં
અંગમાં આ કાનિષ્ઠક પચ કેટલાક સુદક્ષિત
માણ્ય કેળા હોટલી ખાતર કેડત. હોય છે આ
‘મુખ્યપદના સંગમ ચલા’ પેતે પેતાનાં ચર રતી
તો ખરાબી કરી લેવી પડે એવી બનાવજ
બીજાનાં પે તેવીજ રિયત કરનારા હોટલી કેળા
નરાધમ અને નારાધ છે એમાં લેશમાત્ર પણ

સંકો નથી. કેટલાક સુધારવાળાઓ જૂના રીત-
રિવાજના લોકને અંધ અકાળ કહીને તેમની
મનક ઉઠાવે છે. કારણ જૂના લોક પોતાના
વહોડોની રીત પ્રમાણે વર્તે છે પણ આપણા
સુધારક બદાદર જે બાબતો તેમના આપદાઓએ
કદિ રવંનમાં સુધાં સાંભળી કે જોષ નહીં હોય
તે બાબતોનું, આચારવિચારોનું તેમજ રીતરિવા-
જનું અતુકરણ ખરોખર અધ્યક્ષથી કરે છે
એમાં લેશમાત્ર પણ સંકો નથી. કારણ જેમના
રીતરિવાજ આપણા આ બદાદરો અકાળ કરે છે
એજ રીતરિવાજને માટે ખુદ પાશ્ચાત્ય લોકોનું
શું કહેવું છે એવું તેમને જરા જોટલું સુધાં
જાન હોતું નથી. આવી રીત તો ધાણીએ જોડેલા
બજારનીજ છે. ! અમર. ચલા-કાશીનાં પીણીની
બાબતમાં પાશ્ચાત્ય લોકોનું જ શું કહેવું છે જે
બાબતનો મહિસિત ચિચાર ચલા-કાશીમિય કરે
તો તેમની મોટી બધકર જૂલ તેમની નજરે
આપ્યા શિવાય રહેશે નહીં, એવી ખતારી પૂર્ણ
ખતારી છે. પાશ્ચાત્ય લોક ચાલ-કાશી પીએ છે,
ચિરોટ પીએ છે, તેથી આપણે પણ તેમ કરવું
જોઈએ, પણ આજ બાબતોને માટે ત્યાંના સંસ્કૃત-
પ્રવીણ લોક શું કહે છે, એનો અવરજ વિચાર
કરવો જોઈએ. દમજાની રિયાતમાં આજે પોતાનાં
ધાતુક પરિણામની બાબતમાં પાશ્ચાત્ય દેશોમાં
અને વિદેષવતઃ અમેરિકામાં ખૂબ જોરથી ચર્ચા
ચાલુ છે. અમેરિકાના આરોગ્યશાસ્ત્ર અને
રિખાત અંધકાર બરનાર મેકેડોને આ
વપય સંબંધે પોતાના એક અંધમાં કટાક્ષ
બને સાધાર વિવેચન કર્યું છે. તે
પ્રતેક ચલા કાશી મિય લોકોએ અવરજ કરીને
જોવું. તે ચલા કાશી પાનની બાબતમાં શું કહે
છે તે મંદિરમાં જાણીએ છીએ.

લગભગ તમામ લોકોની એવી કદ મનાવતા
કચેલી છે કે, ચલા બને કાશીમાં સરીને બગવત
બનાવનારાં ડ્યો છે. પણ આના લોકોએ એટલું જ
લોકોમાં ચાલતું કે કાશી જેવા મારક બદાદરો
સંકોને પુષ્ટિ આપનારાં નેટલાં ડ્યો છે તેમનાં

આ બે મોઢક પદાર્થોમાં છે. ચંદ્ર અને કાશી એ રપટ ઉત્તેજક દ્રવ્ય છે. એમાં અત્યંત તરીકે જો કંઈ હોય તો દૂધ અને સારંજ માત્ર છે. હવે ચંદ્ર-કાશીમાં નોખવામાં આવતા દૂધ સાકરમાં અત્યંત તે કેટલો હોય ? એક કપમાં મોટા ચમ-ચામર દૂધ શિવાય આપણે વધારે દૂધ નોખતા નથી. તેથી દૂધ હોઈ ન હોઈને સરખું જ છે. ચંદ્રમાં દૂધ નોખવાથી તેને ઘોળો રંગ માત્ર આવે છે. હવે રહી સાકર. તે સુદાં એ અઢી ચમચાના કરેલાં વધારે આપણી નક્કી. અને પંચી પંચી તો ચંદ્ર તદ્દત સાધારણ ગળી લાગવા માંડે છે. એવંચ એમાં અત્યંત હોય ઉમેચ કહેવાને ખીલકુલ આવડે નથી. હવે જો આ પદાર્થોમાં સારીને બળવાને બતાવવાનું સામ્ય છે તો આરા લારક પદાર્થોને જે કસોટીએ ચંદ્રનીએ છોએ તે કસોટીએ આ પદાર્થોને પણ ચમચના બેડખે. જે પદાર્થ ખાવા થોડા અને સારા હોય છે તેની શ્વાભાવિક રસ મિટ હોય છે. આરા જે પદાર્થ હોય છે તેના આરોગ્યકારક હોય છે. નિરોગી મનુષ્ય જો દારૂનો એક ધુંટી ભે તો તે તેના ગંગાને દાઢ કરતો કરતો જ નીચે ઉતરશે. આ જે પદાર્થોના શ્વાભાવિક શ્વાભ છે. ચંદ્ર અને કાશીમાં દૂધ સાકરનું મિશ્રણ કરવાથી આવજીને તેની શ્વાભાવિક રસિ સમજાતી નથી. જો આ પદાર્થોની શ્વાભાવિક રસિ આપણે જોવી હોય તો દૂધ અને સાકર ન નાખતાં ચંદ્ર અને કાશી પોતે જોઈએ. એટલે તે અતિશય કડવી લાગ્યા શિવાય રહેશે નહીં. અને કાશીએ એવા પદાર્થ પીવાની છાજ પણ વધે નહીં. દારૂની પેડે ગરમ સીખાડેને ચંદ્ર સુદાં મન પૂરક ગમતી નથી. પણ પંચી રૂપથી જે પ્રમાણે દારૂની આસક્તિ વધતી જાય છે તે પ્રમાણે ચંદ્ર કાશીનું પણ થાય છે. અને ચંદ્ર કાશીનું દુષ્પરિણામ જો કે દારૂના જેટલું તો શ્વાભાવિક દેખાઈ આવતું નથી તેથી શાળાવર તે દારૂના જેટલું જ બગરે આવે છે એવું પણ અનુભવની અને જ્ઞાન આપે છે. અને ઉપર દારૂની પેડે જ કરીશી

હાતિ થાય છે. આ બે દ્રવ્યોમાં ચંદ્ર બહુ જ ખરાબ દ્રવ્ય છે. કારણ એમાં ટંનિન નામનો એક ધાતુક વિષારો પદાર્થ મોટા પ્રમાણમાં હોય છે. ચંદ્રને જે એક ઉત્તેજકપણ આવે છે તે આ ટંનિનને લાધેલ આવે છે. આ ટંનિનનો એવો ગુણ છે કે, તે કંઈક કળ પર્વત ઉત્તેજક કાર્ય કરે છે. જ્યુ નેટલો દાળ મચા પછી દારૂને દીવકાળ અનિદ અને ધાતુક પરિણામ થાય છે. તે સુદાં આનાથા થાય છે. ખીજું એમ કે, વારંવાર ઉત્તેજકપણ વધારવા સાથે દારૂની પેડે ચંદ્ર સેવાનું પણ પ્રમાણ વધવાનું પડે છે. એથી પ્રગળ થોડા દિવસ સતીની ૧૯૧૧ વર્ષત ચંદ્ર પીતાને કમી કરવા નથી. પણ આ કૃત્યનું અનિદ પરિણામ લોભવવાનું કારણ પણ સુખનું નથી. આ પ્રમાણે ખાના થોડા પદાર્થને લગાડવાની કસોટીથી પણ ચંદ્ર કાશી દારૂરને શક્તિ આપવારા છે. આ ભિક્ષાં લાંઝોજ પડે છે.

કાશી, ચંદ્રના જેટલો અપાયકારક નથી. તથાપિ તેમાં પણ વિષારો દ્રવ્યો હોવાને કારણે પાંજુએ તે સુદાં કાતકજ થાય છે, એવું અનુભવાને નહીં મળેલું છે. જેમને કાદ પવાની ટેવ છે તેમને કયા કયા વિકાર થાય જ તે જણાવોએ. (૧) તેના તથા પાળા રંગની ચંદ્ર ભાગ છે. (૨) ચંદ્રના વિષારો તેજ ઉડા મધ દ્રોષ જે છાંની જાળ મારવા લાગે છે. (૩) પિત્ત બે છે. (૪) પિત્ત વધવાને લાધે તેના સંસર્ગથી શુભ શુભ રોગ ઉપજ થાય છે. (૫) બાંજમાથ તેમજ મધુ મેદાદિ વિકાર ઉદ્ભવે છે. (૬) પાચનક્રિયા બગડે છે. (૭) પાચનક્રિયામાં હોય ઉત્તર થયો કે સરીરમાં નોખાતો વાસ્તવ્ય શર થાય છે. (૮) ધાતુ કાંઈ થાય છે. આ પ્રમાણે વિકારો થવાથી સરીર પારાપ થઈ જાય છે. અને જન : તે પૂર્વ સ્થિતિ પર આવવું જરૂર કઠિણ કિંબહુના અશક્યમ થાય છે.

હવે ચંદ્ર પીવાથી કયા કયા વિકાર થાય છે એના વિચાર કરીએ. દરેક ચંદ્ર પીવાથી મનુષ્યને કોને જાણતું મન થાય છે. (૧) નીચેને

બળવાન બનાવવાને તો ઉત્તમ પ્રકારનો અંશર હોવો જોઈએ. અગ્નિમાં ઘટતો વિકાર કાપબનોજ થાય છે. (૨) પાચનક્રિયા બરેહાર થતી નથી. (૩) અપચનને લીધે માથાનો રોગ, (૪) ફેફસ, (૫) મૂત્રાશયના રોગ, (૬) નાના પ્રકારના મેદ, (૭) વિશેષતઃ મધુમેદ વગેરે વિકાર થાય છે. (૮) વિષ પાતળું થાય છે. (૯) પેટમાં ઉબજતા ઉત્પન્ન થાય છે. (૧૦) રાત્રી સળગી ઉઠે છે. (૧૧) ચઢામાં રહેલા ટૅનિન નામનાં વિષારી તેમજ ધાતુક દ્રવ્યથી દારૂનાં જેવાંજ અનિષ્ટ પરિણામ થાય છે. (૧૨) ચઢા કાફીના પાનથી એક ઘણો કાપડો તો તેનાથી દશગણું તુકસાન એ તો આવી જાયતો કરવામાં ચઢાજીવણું તે ચાલું ?

આપણામાં ચઢા પીવાની ટેવ નહોતી; પરંતુ પાશ્વત્યોના અનુપંગે તે આપજને લાગી. તથાપિ પાશ્વત્ય લોક પણ તે ક્યા ઉદેશથી પીતા હતા એ બાબતે યોગ્ય લક્ષ આપવું જોઈએ. પીતા હતા નહીં. પાશ્વત્ય લોક ખાંસાદારી છે અને ખાંસ એ જડાન્ન હોવાને લીધે તેને પચવામાં મદદ થાય. એવર્થ અને અંશતઃ મોજને ખાતર ચઢા પીવાનો રિવાજ પડ્યો. શિવાય તેમનો પ્રદેશ અતિ-શ્ય હડો હોવાથી તેમને નેટશે. ઉચ્ચ પદાર્થ પેટમાં જાય તેટલો આવરણક હોય છે. પણ આ વસ્તુની અન-પચનના કાર્યમાં મદદ ન થતાં ઉલટી તેનાથી શરીરની દાનિજ થાય છે. જાણું અનુભવથી સિદ્ધ થએલું જોઈને ત્યાંના લોક સુદાં આ કારી, મધપાન વગેરે જાજતોને પ્રતિબંધ કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે. પણ આપણા કાર્યકરકર લોક આપણો દેસ ઉચ્છ્રાંટિતમમાં હોવા છતાં જગમતું સેવન ન હોવા છતાં અને તે પીજીં કાનુક તેમજ દાનિશકર દોતા છતાં ચઢામરીના પ્રાણીનો અટકાવ કરવાનો પ્રયત્ન ન કરતાં ઉલટાં એવાં વ્યક્તો વધારવાનેજ જાણે કે ઉત્તેજન આપે છે; એ પ્રકાર બીજકક લખતરપક છે એમાં ચંકા ાથી! બીજક પાશ્વત્ય લોક નરજી પેટે (ક) પણ આધા પડેલાં) કદિપણ ચઢા પીતા નથી અને જ્યારે ત્યારે ચઢા પીએ છે ત્યારે

ત્યારે તેની સાથે કંઈને કંઈપણ આધા શિવાય રહેતાં નથી. પણ આપણે ત્યાં જોઈએ તો બધીજ પ્રકાર ઉલટો! ચઢા નરજી પેટે પીવાની અને તેની બરેહાર કંઈપણ આવતું નહીં. આથી તે વધારેજ અપાચકારક થાય છે. અરુ,

હવે એવો પણ પ્રશ્ન ઉદ્ભવે છે કે; ચઢા પીવાથી બંધાની પ્રકૃતિ ક્યા બગડી છે? પરંતુ આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપવો બહુ મુશ્કેલ નથી જેને ત્યાં ચઢાને માટે ધરતું ઉત્તમ કુષ હોય છે તેમને ચઢા વિશેષ તુકસાન કરતી નથી. પણ હોટલમાંની ચઢા તરફ કેવળ જોતા માનથી સુદાં જોશારી આવે છે તો પછી પીવાની તો વાતજ થી? શિવાય એવાર ચઢા તૈયાર ક્યા પછી તેને વધારે વાર રહેવા દેવાથી તેમાં અપાચકારક દ્રવ્યો ઉત્પન્ન થાય છે. જેમની પ્રકૃતિ સુગંધીજ સુદ્ધ છે તેમને ચઢા અપાચકારક થાય છે એમ લામંદે નહીં; તથાપિ એવાંજોને સુદાં કેટલાક વર્ષ પછી તેલુ સુષ અનુભવવાને, મળે છેજ. સાધારણતઃ ચઢા પીનારાની પ્રકૃતિ કન્યિતજ સુદ્ધ હોય છે. શિવાય ચઢા-કરીયા કેટલાં તુકસાન થાય છે. એવું અનુભવ પરથી શાસ્ત્રપ્રવીણ તેમજ ડોકિયાર ડાકટરોએ ઘણાં અંશેમાં સચાજ વિવેચન કર્યું છે, તેથી તે ન પીરી એજ સારું.

આપણી મૂર્ખતાથી આપણે ચઢા-કરીયા પીજીંથી શરીરની બરાબી તો કરીજ લખ્યે છીએ. પણ આપણી સુરેખરજ આ વ્યસનને લીધે આ પછી કેટલા પૈશા ખરાજ થાય છે, એની કાણે કરવાના સુદાં છે શું? નાનાથી મોટા પર્વત અને શવથી રંક પર્વત મટું કાણેજ ચઢાની ચાલ લાગી ગયેલી છે. શ્રીમંતોની બાજતને હોડી રખે તો પણ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ લોકો આ ચઢાપાનથી અપરિમિત તુકસાન, થયું છે. પણ મરોંધ થયેલા લોકોની આંખમાં સારું મળુજીવ અંજન આંજનારો કાણ નીકળે ત્યારે ખરી! અવ્યસનમાં ખગજ થતા પૈશાને જે એકા કરવામાં આવે તો આજ દાવેશ મરીજ વિલાપીએ ઉદરનિર્વાક થવા ઉપરાંત તેમને ઉત્તમ કિષ્કુએ

લાભ સુધા મળી શકે ! પણ એટલી ગરજ છે દોને ? સદુ કોષ્ટને પોતપોતાની રોટલી ઉપરજ થી નોખવાનો પ્રયત્ન ? તો બીજાઓની આરક્ષકતા અને હાજરો પ્રત્યે લાજ, જાળ્ય કેવી રીતે ? વાસ્તવિક જોઈએ તો એમને આટલા પૈસા ખર્ચ કરવાનું સામર્થ્ય ક્યાં છે ? પણ નાદાન વ્યસનને લીધે આ નંદીમેલ-આખલા-ને બીજા કંઈ સહનું નથી. પોતાની ખાવાપીવાની ચેન યથા, બીજી વગેરેમાં કંઈ કસર ન થાય એટલે થયું. પછી ધરે બેસી જોઈશો. બહેને ઉપવાસી રહે. બહેને તેમને જાણ્યે દિવસ અન્ન ન મળે ! જાળજાઓને બહેને શરીર ઠંડવા પૂરતાં કપડાં પણ ન હોય ! કેવી આ શોષક રીતિ ! હમણાં અધ્યત્ન અને કનિષ્ઠ લોકોને પેટ પુરતું અન્ન મળવાની સુધા મારામાર થતી ચાલી છે. અનાજનો આવ વખણો તમજો વધ્યો છે. આથી તેના કુટુંબની બીજી વાસ્તવિક ગરજો તો રહી; પણ તેને અત્યંત આરક્ષક એવું પૌષ્ટિક અન્ન સુધા મળતું નથી. પણ આવી રીતિમાં સુધા ચઢા-કાશી, પાન-વંદાક વગેરેમાં પૈસા ઉઘાડી પોતાના ઘરના માણસોને બૂપે મારવા એ અધમપણાની સીમાજ વધ ! આવી રીતે નિર્મલક પૈસા સુખાવી સરીસામર્જિતો કાંઈ કરી લેવાના કરતાં એજ પૈસા સરીરેલેણાઈ આવરતક પદાર્થ લેવાના કામમાં ખરચીને તેટલાજ પાણીમાં ધરનાં માણસોનાં હાલ મટાડવા વધારે શ્રેયસ્કર છે એમાં લેધમાન પણ શંકા નથી. આ સાધારણ લોકોની દલીલત યથા, પણ શ્રીમંત લોકોની અને જોમને ચઢા અત્યાવરણક મધ પડી છે તેમને ચંદાપાનમાં વપરાતા પૈસામાં કંઈ પૌષ્ટિક પદાર્થ લાગે ખાઈ ચકારો કે નહીં એનો યોગમાં વિચાર કરીશો.

દરેક પાત્રો (ઉપર) ચઢા લેવાની હોય એટલે તેને માણસે આશરે એક રૂપિયા માસિક ખર્ચ આવે છે. ધરનાં જો પણ એટલે ૧૦-૧૨ માણસો હોય તો એ ખર્ચમાં કંઈક એટલું થશે વિચાર્યે વખત ચઢા પીનારો પણ ધણું છે. તેમને તો વધુવાર ચઢા થાય છે કિંવા ને

કર્મિત પ્રસંગે ચઢા પીએ છે એવા લોકોની ખાજતમાં આપણે વિચાર કરવાનો નથી, પણ સર્વ સાધારણ ધના ચઢાના ખર્ચમાં બીજા પૌષ્ટિક પદાર્થ ખાઈ ચકારો કે કેમ એનો આપણે વિચાર કરવાનો છે. સ્વર્ગ પ્રમાણમાં નેતા એક ખાંસા ચઢાને રૂપિયાથી સગા રૂપિયા માસિક ખર્ચ આવે છે. આ સગા રૂપિયામાં આપણાથી શું શું કરી શકાય તે બધાનું છું.

આ પૈસામાં એક માણસથી પાંચેર દુધ ઉત્તમ રીતે પી શકાશે. પાંચેર દુધમાંથી પુનના નેવેચની વાટચી જેટલું રસ તૈયાર થાય છે. દુધના જેવો રસ તૈયાર કરનારો બીજો પદાર્થ કવચિત્તજ દશે. એક વખત ચઢા પીવાથી કેટલું તુક-શાન થાય છે એ ઉપર જણાવ્યું છે. આ જે જાખતો આપણા કાને હોવા છતાં જો આપણે દુધના બદલે ચઢા લીંચાને માટે લોકોએ આપણને મૂર્ખ કહ્યા તો તેમાં ખોટું શું માટે લાગતું જોઈએ ! મળતો કહો કે ચણતો કહો એક લોક ચઢાના ખર્ચમાંજ આપણાથી દરેક ખાઈ ચકારો. સગા રૂપિયામાં બીજે કામથી બહામ મળે છે, તે આપણાથી રોજ ૧૦ થી ૧૫ સુધી ખાઈ ચકારો. એટલાજ પૈસામાં હોદ શેર ઉત્તમ માણસ મળે છે અને તે દરેકજ એક વાટચીમર ખાઈ ચકારો. ખારેક, પીત્તા વગેરે પદાર્થોનું પણ એમજ છે. આ પ્રમાણે બધા પૌષ્ટિક પદાર્થને જો જણવા બેસું તો એક નાનો સરખો અંદાજ થાય પણ આ ઉપરથી એટલું તો નજરે આવશે કે, ચઢાના બદલે તેટલાજ ખર્ચમાં આપણાથી પૌષ્ટિક પદાર્થ ખાઈ ચકાય છે અને જો પદાર્થના ગુણધર્મ ઉપરથી જોતાં ચઢા એક ગણો હાથે કરે છે. તો તેનાથી દાઘણી દાની કરે છે. વસ્તુસ્થિતિ આવી હોવા છતાં આપણે પ્રમથી મોદથી કે નારાનપણાથી હીરાને ફેંડી દઈ ચકમ-કમ ખર્ચનેજ નજી રહેવા લાગ્યા તો લોકોએ આપણને મૂર્ખ ના કહેતા તો શું કહેવા ? હું તો કહું છું કે, હોદ થયું કે લોક એટલાજ અપાનથી તો લોકોના મેલને કાણુ બંધ કરે ? આપણા ચઢા



पीनताओंने तेमण्डे जण्ड न कला ओज तेमनी भेदरानी !

आनी उपर डोछ ओम इहेसे के, आठवा क्षाया वषलनी देव नय डेनी रीते आने। उत्तर आपथी जडु मुग्ध नथी। जेयो इह निश्चयी छे तेयो। उपरी दडीकत जलुयागो आपतानी क्षणेज यदाथी अक्षिप्त रदोशे जेथी भारी पूर्ण आनी छे, पञ्च जे औटला वैयवाजा नथी तेमण्डे दमेसां यदानी वेजाओ यदा योडी योडी ओछी करी। ओटसे ओके कपडुं प्रभाजु पोशा कप उपर आपुं, अने ओभा इध वधारे नांजुं, आ प्रभाजु करवां करवां यदानी पांछी अथवा पाठ डर नांभवातुं प्रभाजु करेज ओछु ओछुं कर तांज जनुं, आठजु यथा पछी यदानी रज आपो इधने तेने अदवे कश्जतां पाथोभां इध साकर नांभीने देहसाक दिवस पीनुं, पञ्च आगज जवा ते सुद्धा रज आपी देरी ओटसे यदानी पीकडुप ज देवुक्षाम जनेता सोक सुद्धा यदा क्षाया पीजाथी वटन अक्षिप्त दध जशे ओभां जरा जेहली पञ्च शंका नथी, जेभने ताजेटरनी देव पडी होय तेमण्डे ने ताजडताम छोडी देरी, जेरी ज रीते पेलाने यदा नेछणे छे तेथी पेलाना जन्ता छोडने सुद्धा यदातुं व्यसन पाठनाश देहसाक नराधमो छे, पञ्च आपण्डे छालु आधुं जो आधुं पञ्च आगली पेशेजे तो जेम न करुं ओटसे नियर तेमनी इज्जुप जेलभां आवे तो तेमण्डे कटकृत हुं जेम अमने लागरी !

उपर ओटली विनती छे के, प्रत्येक यदा क्षाया व्यसनथी इर रदेवारे प्रयत्न करवे यदाजुं पञ्च जीज माधपञ्च जणतनुं सुद्धा व्यसन पाडी जेनुं नका, आ व्यसनने लीधि आ पाठ देहसां तुझाल यधुं छे जेते क्षाया पञ्च नियर करवाथी आठवा दिवस आपण्डे आठवा गानी पंडे जेथी व्यवहार कपी जेते अटे शरम क्षाया शिव, गेहे नदी, जेने जेने पेलाना अत्राजुं क्षाया कपडुं छे जेणे तेने सभाजने उपरी व्यसनथी इर गजवाते प्रयत्न करे, ओटमुं नदी पञ्च जे तेमण्डे ओके प्रमुज कर्तव्य छे, " जिनमय जगता " उपरवे.

दरिद्रता ही सब रोगोंका मूल है।

आजकल अनेक विज्ञानियोंके साथ २ मार-तमों रोगोंका संख्या भी अत्यन्त तीव्रताके साथ बढ़ाही है। डेग, हैजा, इन्फ्लूएन्जा, मेलेरिया आदि सैकड़ों भयंकर व्याधियों बढ़ी मीषणनासे प्रतिवर्ष भारतका ह्वंस कर रही हैं। वैज्ञानिक डाक्टर उक्त रोगोंके अनेक प्रकारके कारण निर्धारित कारहे हैं। किन्तु वास्तवमें देखा-जाय तो सब रोगोंका एक मात्र कारण भारतकी दरिद्रता ही है। दरिद्रता हीके कारण देशमें आज इनने रोगोंकी विभीषिका फैल रही है, हम में कुछ भी संदेह नहीं है। नीचे इस बातको वैज्ञानिक रीतिसे सिद्ध करते हैं।

हमारे साध पदार्थोंके सारमाग से रक्त बनता है। रक्त ही हमारे शरीरका मुख्य पदार्थ है। रक्तके ही द्वारा हमारे समस्त शारीरिक यन्त्रोंका संचालन होता है और हम जीवन चारण करते हैं। रक्त ही हमारे शरीरका सारमाग है तो रक्तकी उत्पत्ति और भवनतिके ऊपर ही हमारे शरीरकी एवं समस्त जीवनकी उत्पत्ति और अवनति निर्भर है। वर्तमान डाक्टरोंके मतसे बीमणुओंके द्वारा ही रोग उत्पन्न होते हैं, ये बीमणु श्वास-वायुके साथ जठके साथ और अन्यान्य नाना प्रवासे हमारे शरीरमें प्रविष्ट होते हैं। यद्यपि ये बीमणु हमारे शरीरमें हा समय प्रवेश करते हैं तथापि हम हर समय रोगी रहने हों, ऐसा नहीं होता इसका कारण यह है कि ये रोगके बीजा-

णु मन हमारे शरीरमें प्रवेश करते हैं तब हमारे शरीरमें एक प्रकारकी क्रिया होती है—अर्थात् हमारे रक्तस्थित बीजाणुओंके साथ इन आंग-शुक्र रोगके बीजाणुओंका एक प्रकारका युद्ध होता है। पहरेभूँडे सिपाहियों और चोर-टाकूओंमें ऐसी लड़ाई होती है, इनमें भी प्रायः जैसे ही लड़ाई होती है। इस लड़ाईमें जो जीत जाते हैं, उन्हींका प्रमाण फेरबाना है। हमारे रक्तके बीजाणुओंके विरुद्ध प्रसक्त करने पर ही हमारा संयत्त है कारण उनसे सम्पूर्ण रोगोंके बीजाणु पराजित होकर मारगमते हैं अथवा नष्ट होजाते हैं। यदि ऐसा न होकर यदि हमारे रक्तिके बीजाणु पराजित होजायें तो हमारा विशेष क्षति होनेकी सम्भावना है। ऐसा होनेसे शत्रुओंके द्वारा हमारा शरीर रूपी दुर्ग शत्रुओंके अधिकारमें आजाता है और हम रोगी हो जाते हैं। हमारे रक्तिके साथ स्वास्थ्यका घनिष्ठ सम्बन्ध होनेसे रक्तिकी उन्नति करना हमारा प्रधान कर्तव्य है। हमारा रक्त यदि शुद्ध और शक्तिशाली हो तो सहजमें कोई भी रोग हमारे ऊपर आक्रमण नहीं कर सकता। हम सदैव इसके उदाहरण देखते हैं। एक स्थानमें और एक ही अवस्थामें होने पर भी एक मनुष्य स्वस्थ और दूसरा स्वस्थ पाया जाता है। उपर्युक्त कारणके बिना ऐसा नहीं हो सकता। इससे स्पष्ट जाना जाता है कि जिसका रक्त प्रदूषित और तेजहीन होता है वह रोगी रहता है। जिसका रक्त शुद्ध और बलवान् होता है वह स्वस्थ रहता है। रोगका आक्रमण और

चोर-टाकूओंका आक्रमण एक ही प्रकारका होता है। जिसके पहरेदार सावधान हों और घरके किराड आदि खूब मजबूत हों उस घरमें सहज ही चोर प्रवेश नहीं कर सकते। किंतु जिससे पहरी लोग कमजोर और क्षिब्ध हों और घाके दरवाजे आदि टूटे फूटे हों उसके घरमें चोर सहज ही प्रवेश कर सकते हैं।

यह पहले कहा जा चुका है कि—आहारके सार भागसे हमारे शरीर में रक्षित उत्पन्न होता है, इस कारण हमारे आहारके ऊपर ही रक्तिकी सब प्रकारकी उन्नति, अवन्नति अवलम्बित है। हमारा आहार उत्तम और पुष्टिकारक होने पर हमारा रक्त भी शुद्ध और शक्तिशाली होगा और हमारा आहार यदि थोड़ा और पुष्ट हो तो हमारा रक्त भी निष्टुष्ट और मलहीन होगा। उत्तम आहारका प्राप्त होना अर्थके ऊपर निर्भर है। यद्यपि पैसके न मिलनेसे मनुष्य उत्तम भोजन संग्रह नहीं करसकता। तृप्तिक, स्वादिष्ट, और पुष्टिकारक भोजन कानेकी किमकी इच्छा नहीं होती किंतु बिना अधिक आयके उसका प्राप्त होना असम्भव है। उत्तम और पुष्टिकारक भोजन प्राप्त कानेके लिये हमें अधिक धन उपार्जन करना चाहिए। किन्तु हमारा देश अतिशय दक्षिण है। इस देशके अत्येक मनुष्यकी दैनिक आय अल्पान्य सभी देशोंकी अपेक्षा बहुत कम है। इस दरिद्रताके कारण हमारे देशवासी अल्पसंख्यक प्रमाणमें पुष्टिकर खाद्य नहीं खासकते। अल्प और घुरे भोजन कानेसे दिन दिन हमारा शरीर कम और रक्तिकी अवन्नति होती है।



जिस तिस तरह पेट भरलेने को ही प्रकृताहार नहीं कहा जा सकता । उससे सामयिक खुवाकी निवृत्ति हो सकती है किन्तु शरीरकी विशेष उत्पत्ति नहीं हो सकती । भूखके समय पेट भरकर जल पीलेनेसे वा शक-पातको उबार कर खानेसे यद्यपि खुवाकी ज्वाला कुछ शान्त हो सकती है किन्तु उससे शरीरका पोषण नहीं हो सकता और न मनुष्य स्वास्थ्य-सुखका अनुभव ही कर सकता है । सुस्वादु और प्रष्टिकर खाद्यके द्वारा खुवाकी निवृत्ति करना प्रकृत-आहार है । किन्तु इस समय निर्धन ही नहीं मध्यम श्रेणीके लोगोंको भी प्रायः ऐसा भोजन प्राप्त नहीं होता । अकृत्रिम साधारण और प्रष्टिकर खाद्य मिटना भी आजकल कठिन है । बाजारमें इस समय सभी खाने पीनेकी चीजोंमें मिलावट की जाती है । सभी जगह कृत्रिमता और प्रपंचकी उत्पत्ति हो गयी है । वनमें चर्रा, दूधमें मानी, मखन निराश दुध, आटेमें मट्टी, चाटमें मिटरती सांड आदि स्वास्थ्यनाशक पदार्थ मिलाये जाते हैं । जन बाजारसे इन सब चीजोंका असली मिटना कठिन है । उसे दूषित पदार्थोंको सेवन करनेसे हमारा स्वास्थ्य और भी खराब होता जाता है । विशेषकर साधारण और गरीब लोगोंकी अच्छी चीजोंका प्राप्त होना और भी कठिन हो गया है । इत्यादि बातोंसे जाना जाता है कि वर्तमान रोगोंका कारण देशकी दशादशा ही है । अल्प प्रयत्न इस देशकी दशादशा दूर न होगी तब तक रोगोंका दूर होना भी सम्भव है ।

॥ वैद्य ॥



संसारमें प्रेम रकी चिल्लाहट मचानेवाले लोग कुछ ऐसे हैं जो हेयाहेयका विचार न करते हुए अथवा हिताहितका मार्ग भूलते हुए प्रेमके अंधे होते दिखाई दे रहे हैं । वे इस बातका विचार नहीं करते कि संसारमें आकर हमें कौनसे भाग पर चलना अथवा कौनसे मार्गपर न चलना ठीक है । प्रेम नसेमें विह्वल होनेकी उनकी उत्तरी यह गई है कारण उनके पीछे मोह पिशाच अनादि कालसे लगा हुआ उनके आपेको मुझाये हुए है इसीसे मोह प्रसन्न बीब प्रेमके प्यालेका पान कर मदमत्त हो जाते हैं ।

तीव्र प्रेमका नसा उस शराबके नसेके सदृश है जिसका पान करनेसे मनुष्य अपने आपको मुझाना हुआ एक दूसरी ही दशामें परिवर्तित हो जाता है और उसकी बुद्धि विरहीतता घातण कर देती है । जिससे वह कुछफा कुछ बराबरा हुआ दूसरोंको गाली वा मंद बचन कहता नहीं करता । सराबी मनुष्य अपने रुपाच्छातसे गिर जाता है । वह अपनी पत्नीको मा, और माको पत्नी समझने लगता है इत्यादि कुचेष्टायें वह शराबी मनुष्य करता हुआ नहीं सज्जना । इसी प्रकार प्रेमप्यालेको पीकर मनुष्य अपने आपसे बाहर हो अपने मेमोके प्रेमका यहां तक मल बन जाता है कि उसके लिये अपना सब कुछ अर्पण करने कि वह भी कभी नहीं रहता । प्रेमीका

❀ दिगंबर जैन: ❀

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्रैव सत्योपदेशैस्तु योग्यपणामि ।

सर्वोपपत्त्यभिद प्रवृत्ताम्, देगम्बर जैन समाज मासम् ॥

वर्ष १८ वॉ. | वीर शवत् २४४८. ज्येष्ठ विक्रम सं० १९७८. अंक ८वा

धर्म-प्रेम ।

प्रेम मानो प्रेमियों को स्वर्गा मंडार है ।
प्रेम मानो प्रेमियोंका सब ताह शृंगार है ॥
प्रेम मानो प्रेमियोंके कटका शुभ हार है ।
प्रेम मानो प्रेमियोंकी जित्दगीका सार है ॥१॥
यदि न ऐसा होय तो फिर क्यों मुझते हैं हमी ।
प्रेमके वस हो जगत में क्यों उगाते हैं हमी ॥
भूत कर निन हृषिको परमें लुपाते हैं हमी ।
वप्रेमद्वारा ही जगत बनये भ्रमते हैं हमी ॥१॥
प्रेमके द्वारा किसीको मित्र खपना मानते ।
साथमें रहकर उसीके सुख अपना जानते ॥
सग मान भी नहि मित्रसे हम अलग हो ॥ चाहते ।
देख सूरत मित्रकी सतोष दिलमें ठानते ॥२॥
यदि मित्रका कोई तरह वीयोग हो जावे कहीं ।
फिर विपत्तिका क्या ठिकाना चैन पढती है नहीं ॥
विश्वके प्रेयार्थ अपने प्राण अर्पण कर दिये ।
प्रेमका फल क्या मिठा वस जन्म खोकर चर दिये ॥
माथ्यो यदि आपको जो प्रेमकी दरकार है ।
जो वसको प्रेमी बनाओ जो सदा सुखकार है ॥
वर्ष प्रेमीसे कभी वीयोग होनेका नहीं ।
तुम्हारे पाव है यह सत्य प्रेमीने कही ॥३॥



हमारी जिनवाणी माताका पूज्य आदर कर

नेका सात पर्व श्री धर्म-
श्रुतपंचमीमें पंचमी पर्व ज्येष्ठ-सुदी
मदता । ५ को निरुक्त गया । इस

पर्व श्रावणमी पर्वमे जो
मदता मालूम पडी है इससे दुःख होता है ।
क्योंकि इसगल इनेगिने पांच सात सौ नौर हो
श्रुतपंचमी पर्वमें जिनवाणी पूजन व महोत्सव क-
रनेके समाचार मिले हैं । हमारे थे० जैन माई
योंमें सेठो ज्ञानपंडार हैं जहां हमारा शास्त्र
उत्तम अटमारियोंमें बैसे सुरसि रये माने हैं
उपसे हम अनमित्र नहीं है और हमारे सेवकों
शास्त्र भटारोंकी क्या दशा है उसरो सब
जानते हैं परंतु खेद है कि हम इतने प्रमादी हो
गये हैं कि हम हमारे धर्मको स्थिर रखनेवाले
धर्म शास्त्रों उद्धार नहीं करते । अतः हमारे
निधियोगकी यह कार्य मुख्यतः हो पड़ा
है परंतु धर्म पर दिव भी हम ऐसे चरणोंके

गोरेला पचरन्त ।

છિયે ન નિકાલ સકે. યહ હપારે છિયે. કિનના ધૌર ઉસમેં કિસી મી માઈ દ્વારા શાસ્ત્ર બંચવાના લખનાસ્પદ હૈ । આશા હૈ હમારે માઈ ખાગામોં ચાહિયે- ।

વર્ષ એસા પ્રમાદ નહીં કરોમે ।

વર્ષમેં અવકાશકા સમય યદિ કોઈ હૈ તો વહ વર્ષાક્રતુ અર્થાત્ ચૌમાસેકે ચાતુર્માસ દિન હૈં વર્ષોંકિં ઇન આ રહા હૈ । દિનોંમેં સવકો વ્યાપાર ધંદેસે ફુરસદ હોતી હૈ તથા વિવાહ શાદી પ્રતિષ્ઠા અદિકા કાર્ય મી ઇન દિનોંમેં નહીં હોતા હૈ તત્ત્વ એસે સમયમેં વર્ષધ્યાન વિશેષ રૂપસે હોસકતા હૈ । વર્ષકે કારણ ઇન દિનોંમેં વૃંચીજશ્મય હોનાનેસે ત્યાગી દુનિ ચાર માસ એક સ્થાનવર હી નિવાસ કરતે હૈં ત્યા સતત પ્રતિમાવારી વ્રજ્જનારિયોંકે લિયે યદ્યપિ ચાતુર્માસમેં એક હી સ્થાન વર ઠહરનેકા નિયમ નહીં હૈ તૌમી પ્રાયઃ વ્રજ્જચારણ ચાતુર્માસમેં એક હી સ્થાન વર નિવાસ કરતે હૈં યહ ઠોક હી હૈ । યદ્યપિ દિં જૈન સમાજમેં વ્રજ્જચારી તો નહત હૈં પરંતુ સમાજમેં ઉપદેશકા કાર્ય કરને વાલે ઇનેગિને હી હૈં એસે કિં વ્રં શીતલપ્રણાદ- જો, વ્રં જ્ઞાનાનંદમી, વ્રં મઃમીરામી, વ્રં વશંવાગમી, વ્રં મેચીછાત્રી આદિ । ઔર ત્યાગિયોંમેં એક પનાટાટમી મહાપાન યત્રતત્ર વિચારકર ઉદ્દેશ તથા નિનવાણોંકે ઉદ્ધારકા જો કાર્ય કર રહે હૈં વહ પ્રશંભનીય હૈ । ગહાર યોગ્ય પ્રવચારી યા ત્યાગીમીત્રા ચૌમાસા હોના વશં તો ઉપદેશ ઔર યનં મઃમુક્તિ હોગી પાન્તુ જહાં યો ન હો વશંકે માર્યોંકો વારં માસ તો અપિ નિંદ મુઃ શમ શાસ્ત્ર સમા કરને

આખા હિંદુસ્થાન તો શું હુનિયાબરની દ્રષ્ટિ સમક્ષ અદિસા અને શાંતિનો યુજરાતની મંત્ર રચુ કરનાર મહાત્મા ગાંધીના જેલ જવા પછી યુજરાતે અપૂર્વ શાંતિ પતાવી હતી અને ખતોલે છે જંથી કોઈને સ્વપ્ને પેંચુ આશા નહોતી કે યુજરાતમાં સરકારની સખ્તાઈ વશે પણ હાલ જે સમાચાર આવતા રહે છે તેથી તો એમ જણાય છે હવે યુજરાતની જેલો સરકારે બરવા મોડી છે. મુસ્તના એક નેતા જેલમાં ગયા છે, અમદાવાદમાં 'નવછત્રન' વાળા ચાર ભાઈ પકડાયા છે અને અનેક પકડારાની ને જેલ વાની વાતો ચાલ્યા કરે છે. આવે સમયે યુજરાત જાગૃત યશ્ન ગયું છે અને હામહામ વિશેષ પ્રદર્શિ થતી જણાય છે. જે વિશેષ પ્રદર્શિઓમાં ખાસ પ્રસિદ્ધિ ખાદી પ્રચારનીજ છે. આ પ્રદર્શિમાં આપણે દેવો નેટશે ફાળો આપીએ નેટશે ચોડા છે. ખાદીમાંજ ખાનદાની સમાવલી છે ને દેશના ઉચ્ચ યવાનો છે તો દરેક ભાઈ બહેને હાથે વજુલી ને હાથે કતિલી ખાદીને પોતે પારખુ કરવી જોઈએ અને જીવનને તે પારખુ કરના સમજવવા જોઈએ. મં ગાંધીજી તેમજ તે પછી જેલ જનારાનો સંદેશો એજ હોય છે કે ખાદીનો પ્રચાર કરવો. તો હવે આપણે તિલામ્બતીના મોદમાં ન દ્રક્ષતાં શુદ્ધ ખાદીનો વપરાસ પોતાના હાથમાં તેમજ મંદિરાના દરેક કોર્મોમાં કરવો જોઈએ. મંદિરામાં અતીવ અગુદ રેશમી વસ્ત્રો એક ડુકો પણ હવે આવવા દેતો ને- હ્ય નહિ.

યુજરાત તેમજ આખા હિંદુના માથેના વલ્લે છે કે અગર શી સકલવિંદિ હંદરનો શાસ્ત્ર ખાચારના નિામ રચન કરે શકે. (યુજરાત)માં મોટા યુ અમદાવાદ

છે જેનું મુચ્ચીપત્ર થવાની તથા એને સુરક્ષિતપણે રાખવાની સ્થાયી વ્યવસ્થા કરવાની વર્ષો થયાં બુધો પડે છે પણ બહારકાની આડખીલીથી અને જુડાં આશ્વાસનોથી કંઈ થતું નથી તેમજ છડરની પંચના બાધયો ખત્યાર સુધી આશામાં ને આશામાં તેમજ રહેને કંઈ સંજોગો કે રહેને કોઈ જોડ જશે એવી બાંધાયો ખાસ શાસ્ત્રમંદારના દર્શન સરખા પણ કરાવતા નથી. આમ ત્રણ વર્ષ પર છડર ગણેલા તે વખતે બહારનો શાસ્ત્રમંદારજ અમને બતાવેલો ને કહ્યું કે જે છે તે આજ છે વગેરે પણ જે ખાસ શાસ્ત્ર બહાર છે તે તો બતાવેલોજ નહિ. આથી સ્થિતિ હજી ક્યાં સુધી ચાલશે તે સમજાતું નથી છતાં પણ હાલમાજ છડરના એક ખાસ આગેવાન ગાંધી પુનેમચદ સાક્ષયક સુરત પધારેલા હતા તેમની સાથે સુધાકાંત યજ્ઞ તેમણે અમને કહ્યું કે હવે તો અમે બહારકતા સદરામાં પડવા માંગતાજ નથી અને ગમે તે રીતે શાસ્ત્રમંદારનોજ ઉદ્ધાર કરશે છે અને તે માટે એક વિદ્વાન પંડિત રાખી ખાસ દેખરેખથી શાસીની સાર સંભાલ કરી તેનું મુચ્ચીપત્ર બનાવવુંજ છે અને તેના પડિતની અમે શોધમાંજ છીએ. છડરના કેટલાક આગેવાનો હજી આજાસ અને પહેમ (શાસ્ત્રો જતા રહેવાના) હોડતા નથી એજ વાવો છે વગેરે.

આથી એમ તો જણાવ છે કે હવે કેટલાક છડરના બાધયો આધુનિક પરિગદો બહારકાની જાગમા અપડાવા નથી માગતા છતાં પણ નિડરતા તો નથીજ આવી. પેલા કહેવાતા બહારક વિજય-કોર્તિ પદમણ થઈ ચુક્યા છતાં તે ખામત પોતાની સહી સાથે પુનાસો કોણુ જશે શા દારણે બહાર પાડના નથી એ અજાન જેનું છે. એ મહાસય તો અમદાવાદથી વડનગરમાં જઈ પસેલા છે ને હયાત છે એમ જ્ઞેને તેને મોટીયા ખપર સંભગાવ છે પણ નિશ્ચિત ખપર કંઈ મગવોજ નથી. હવે, આપણને કંઈ તે સાથે લેવા દેવા નથી પણ આપણ તો હવે એજ કર્તવ્ય છે કે પંચોમા સદા દરેક પંચોપર હડર વગેરેની

પંચે મુચના બહાર પાડી દેવી જોડજે કે જોડી બંધિખમા જુલસુકે કોઈ એનાથી કંઠાપ નહિ કેમકે હંદુ જેણે લાલ વેગ તો દાવમ રાખ્યો છે ને બાકી નહું દીકાક છે.

આમ લખવાની મતલબ એજ છે કે ગુજરાતમાં અધ્યક્ષાનો પાર નથી. મુંબઈમાં પેના રતનકોર્તિ બહારક નામધારી જાગનલાલ ને પુરા પરિમદી થઈ બાલમચ્યા સાથે મુંબાઈમાં મોજ કરે છે તે ચાર પાંચ વર્ષ પર બહારક બનીને દાણીસા ગયા હતા ને ચોખાસું કચું હડું ને તેમના સપાટામાં વીસા મેવાડા બાધયો કેટલા આજ્યા હતા તે મો કોઈ જાણે છે ગાટે અમે ગુજરાતના બાધયોને ચેતાવીએ છીએ કે એવા આધુનિક ટોચીઓથી ચેતીને ચાલજે અને એમ નમો માનજે કે ગુજરાતનું દળદર હવે બહારકોથી ફીટવાનું નથી પણ ગુજરાતની ઉન્નતિ તો દરેક રથે પાટથાળા બોલી પડિતો તેપાર કરવોજ થઈ શકશે.



વીસા મેવાડા અને લગનગાળો ।

વીસામેવાડા બાધયોના કંદરયાન સોળીયાગા આ સાથે લગનગાળો બરાપો હતો. એટલે કે મેવાડામાધો પોતાના ગામથી લગન નિમિતે તે સોળા આજ્યા હતા. હિંદુસ્થાનની પ્રજાએ ઉપાડી લીધેલી, અસહકારની પ્રવૃત્તિને લઈ સ્વદેશી વસ્ત્રો તગ્દ દેકે કોમ એવાઈ છે, એ નિર્વિવાદ છે. તેવીજ રીતે આ જામીએ પણ સેકડે સાંઠે જણુ સ્વદેશી પોશાકમા દ્રષ્ટિએ-પડતા હતા, તેથી વધારે ખુદી ચરાવું એ છે કે આ સારે થયેલા આશીસ લગોમા પદરથી વીસ લગનેમાં વરરાજ સ્વદેશી પોશાકમા સજ્જ થયેલા હતા. જ્યારે એક પામવાનું છે કે કન્યાએ અપવિત્ર વસ્ત્રોના વસ્ત્રેમાં જોવામાં આવતી હતી. વળી વધારે ખુદી થવા જેનું એ છે કે નિંદિગ મન જોત પતના હિંદુઓ સંપા-



એક સાહેબની સુચનાને માન આપી યોગ્ય લગ્નો જૈન વિધિથી થયા હતા, તેમાં પણ મેવોડા કામના એક જખરજરત આગેવાન અને વંડોદરાના દિગંધર જૈન સંઘના એક મુખી શેઠ લાલચંદ્ર ભાઈને ત્યાં પણ લગ્ન જૈન વિધિથી થયું હતું. જ્યારે શેઠિયાઓ ઘેર નિંદ્રામાંથી જાગશે ત્યારે કામનું બહુ ઘરો, માટે દરેક આગેવાનની ફરજ છે કે કામમાંથી જે જે ક્ષણ દૂર કરવા હોય તે તે ક્ષણ પ્રથમ પોતાને ઘેરથી સુધારવા જોઈએ, કેમકે જખરાની પાછળ નખજાને ગો માં તમારો મારીને પણ જે ચાલુ પડે છે.

જે બે સગો જૈન વિધિથી થયાં હતાં, તેમાં હાજર રહેલો પ્રેક્ષક વળી તે વિધિની પ્રશંસા કરતો હતો, પણ તે ત્યારે સાર્યક ચાલ કે જ્યારે પોતે પોતાને ત્યાં જૈન વિધિથી ક્રિયા કરાવવાની પ્રતિજ્ઞા લે ત્યારે.

વળી લાલચંદ્ર શેઠની પણ ફરજ છે કે-તેમજે પોતાની ખટપટનો લાભ કામને આપવા ખાતર કામની સજામાં જૈન વિધિથી લગ્ન કરાવવાનો કરાવ પક્ષાર કરે અને તેથી વિરુદ્ધ ચાલનારને કંઈક સાસન હાવે.

આ લોકો હજુ પણ જાહેર ઉત્તિ તરફ ઝુકાતા નથી, તે તેમની પાપમાલી રપ્પ જતાવે છે, નહિતો આ સાથે તેમજે કંઈક પણ સુધારાના કરાવ કર્યા હોત.

૨ સીમંત સંસ્કાર કે-જે શાસ્ત્રમાં આલે મહાવ્રજાળી માનેલો છે, તેને લાભ જે રીતિ છે. તે નિંદ્રાની જાણ છે, માટે તેને જૈન વિધિ પ્રમાણે કરાવવો જોઈએ.

૩ કામમાં નાતરાની ખાફા એકજ રાતે એકજ ગોર દ્વારા ચતાં હાથા પાંદર લગ્ન બે યજ્ઞ ગોત્ર મહરથાઓ દ્વારા જૈન વિધિથી થવ જોઈએ.

૪ દશ વર્ષથી નાની ઉમરના છોકરા કે છોકરીની સમાધ નહિ કરવી જોઈએ.

૫ માલીશ વર્ષથી વધારે ઉમરના પુરુષના આદ્ય દશ કે. ખાર વર્ષની કન્યા સાથે ચતાં લગ્ન બંધ થયાં જોઈએ.

ઉપરની દર્શાવેલો વિચાર કરવાની ખાફ જરૂર છે. વળી સાથેજ જે જે કરાવો પ્રથમ થયા હોય તેનો અમલ કરવો જોઈએ. બા તેનો નાશ કરવો જોઈએ, કારણકે આ સાથે તે મનમાં વાતચિત થઈ જાય, ને દેહલાકનો વિચાર તે સંજમમાં જાડુ તીવ્ર હતો, માટે તેનો જે તે અસાચો કરી દેવાની જરૂર છે.

૬ ધર્મશાળા માટે કરેલા ફંડને ધર્મશાળામાં વાપરતાં વધે તો ધર્મશાળાને બાંહે એક જૈન માન મંદિર અથવા જમણ લાયક પ્રેમી ખાલી તેમાં મંત્રિનાં દરેક પુરતકો રીતમત જોઈવી જોઈ નહિ. મંત્રિ તરફથી ખરીદી તે માન મંદિરને મેળા રૂપમાં જનાવવું કે-જેનો લાભ અન્ય ધર્મી પણ લઈ શકે,

તે આશા આકાંક્ષા કુલ્લમવત્ જણાઈ ગઈ છે.

હવે અમરે સ્વયં જગ્યા સિવાય છુટકા નથી. હાલતો જમાનો યુવાન વર્ગને આગળ આવી નિરૂપણે કામ કરવાનો છે નહિ કે ખિલ્લી જાણતી માફક વાટ જોઈ બુલકો આરવાનો.

ચાહુ સાથે મારા રનેલી રાંઠ હીમતલાલ આપણે ખાસ મહેનત લઈ મેલુની શેષામાં પડેલા મેવાડા યુવક મંડળીને સજીવન કરવા પ્રયાસ કરવા માંડ્યો છે. હું તેમને મુશ્કેલીથી આપી હતું છું. કે-કદાચ તેઓથીને ફરીથી પ્રથમના કાલવાદોની જેમ ડિમોશનાં પૂછણં ન વળે એ તેમને એ કાલ્યે છોડી દેવું ન પડે.

યુવક મંડળનું કલ્પ છે. કે-પહેલાં ચાતિમાં જે કુધારા જણાતા હોય, તેના નાશ કરવા પંચને સુચવવું, તે પ્રમાણે પંચ ન કરે તો મંડળની મેનેજિંગ કમીટીએ તે રિવાજ તરફ સત્યાગ્રહ કરવા મંડળના સભાસદોને જાહેર કરવું.

હાલના જમાનામાં સત્યાગ્રહ સિવાય આપણી પાસે કોઈ દષ્ટીખાર નથી કે-જીવી વૃધોને તે રિવાજથી અટકાવી શકીએ.

યુવક મંડળની મેનેજિંગ કમીટી જે કાલ પ્રમાણ કરે તે કાલ દરેક સમાસદ સ્વીકાર કરતાં સીખશે તોજ મંડળ આરશી બની ચકશે. મેનેજિંગ કમીટીના મેમ્બરોની પધ્ધતિ છે કે-તેમણે જે રિવાજને બંધ કરવો કાર્યો હોય, તે રિવાજ તરફ પ્રથમ પોતે અણગમો બતાવવો. અને પછી તેના સંબંધમાં પ્રયોગો ચલાવવા. ત્યાર બાદ કાલની નકલો દરેક સમાસદને પહોંચાડી તેમની સેદી લઈ તે રિવાજ બંધ કરવા પંચને સુચવવું. તે પ્રમાણે પંચવાળા ન માને તો પછીજ સત્યાગ્રહ કરી પોતે તે રિવાજમાં ભાગ ન લેવો એમ છે.

આ મેં સુરના માત્ર દરી છે. યું કરવું તે સુધીયલ ચાતિજનને સોંપું છું.

મારે એટલું તો સ્વિકારવું પડે છે ને સાથેજ સુધી પધ્ધતિ પડે છે કે-મારી જૈન લગ્નવિધિની રદીવને સમજનાર પુત્રકાળ પરીધાર મહા

નથી, પણ વિધિને સમજનાર વિધિની શરૂઆત કરનાર રાંઠ લાલચદંભોષ જ્યાં મને મહ્યા છે. હું મને પુત્રક લખવા માટે કુટુંબ માત્ર છું કે-મારી ચાતિમાં તે વિધિની શરૂઆત થવા લાગી છે. ને આવતા લગ્નગાળામાં દસથી પંદર લગ્ન જૈન વિધિથી થશે, એમ કેટલીક કન્યાનાં માતા પિતાનાં હેવા ઉપરથી જણાઈ આવ્યું છે.

અધુઆ, છેવટે એટલુંજ લખવું છું માત્ર છું કે-તમે જૈન ધર્મને પાણી, અર્ધતદવને માનો. ને તમારા સંતાનોમાં પાણી ચઢાવ મિથ્યાવાદી દેવોના પૂજનથી ન કરાવો. ધિક્કાર છે તે અધ શ્રદ્ધાને કે-જે તમોને ધર્મ અષ્ટ બનાવે છે, તમારા સમગ્ર હેતુ શ્રદ્ધાને કળાવે છે. ધિક્કાર છે તે તરાધમોને કે-જે કન્યાનો વિકાસ કરે છે, વૃદ્ધ સાથે પરણાવે છે. યા તાના સાથે મોટી કન્યાને વળાવે છે. મારી ચાતિમાંથી દરેક કુરિવાજ જલ્દી બંધ થાય એની લાવનાની અપેક્ષા પૂરક નિરમો લખનાર હું છું આપનો તાબેદાર-

મોહનલાલ મથુરાલાલ રાહ કોણીરામ

દેહલીમાં-હીરાલાલ જૈન હાઈસ્કૂલ વ જૈન કન્યા વિદ્યાલય પહાડીવીરન દેહલીમાં વાર્ષિકો-ત્સવ રાં ૨૦ સાં ૫૦ વ્યારેલાલજી વક્તીલકે સમાપતિવર્ગે તાં ૨-૪ જુનકો હો ગયા ।
કન્યા વિં ૦ કી હાત્રાવોને માતા પૂજનકા નિષેવ અચ્છી સુક્તિ જીર અમિનયકે સાથ દિલ્લાયા પા । વ અચ્છે ૨ વ્યાલ્લાવ વ મનન હાત્રા-ઓંકે હુર થે । પારિવોપક મોટા ગયા યા ઉસમેં પ્રમોદવાપિકા સન્નોદેવીને અપની ઓરસે ૬૦) કે કયોરવાન સન હાત્રાઓંકો દિયો સ્કૂલકે હાત્રોને વ્યાલ્લાવ મનન જીર અમિનય એસે ઉત્તમ કિયે યે કિ સમાપતિને ડનકી વહુત પ્રમોદા કીયી ।
લાં ૦ જમીમજનીને રિપોટે પઢકર સુવાઈ યી જીર સમાપતિકા વ્યાલ્લાવ હુશા યા ।



श्रुतपंचमी उत्सव ।

निम्न लिखित स्थानोंसे श्रुतपंचमी उत्सवके समाचार आये हैं जो इस साल बहुत कम हैं—
मनीपुर (आसाम) में—सब नरनारियोंने मिलकर बड़े समारोहके साथ जिनवाणीकी पूजा की थी ।

चट्टकी (शीमोगा, म्हेसुर) में ब्र० श्रुतसागरजी प्रचारे के आपके उपदेशसे श्रुतपंचमी पर्वमें पूजा व्याख्यान आदि हुए भोजन समारंभ भी हुआ तथा नेमीराज गौडाने श्रुतावतार कथा सुनाई थी ।

फिरोजपुर में १५ दिन पहिलेसे सर्व शास्त्रोंकी संभाष की गई थी और चौथके दिन सबको सिधसिधवार लगाकर पंचमीको जिनवाणी पूजा की थी ।

लखनऊ में चूडीवाली गलीके मंदिरमें पूजन हुआ था शास्त्रोंकी सूची तैयार हो रही है ।

झालरापाटन में—श्रुतस्कंध विधान हुआ था
चंडनगर में अनाथाश्रमके छात्रोंने पूजन पूजन मङ्गलार्चन गाजेबानेसे किये थे । रात्रिको औपचारिक भजनमें सभा हुई थी जिसमें काठ संग्रहानदासजीका जिनवाणी माताके उद्धार व प्रार्थनाके विषयमें व्याख्यान हुआ था । इससे प्रार्थना में बड़ा उत्साह पैदा था ।

गोहाना में नवीन मंदिरमें सुबह पूजन हुई दुपहरको सब शास्त्रोंको धूप लगाई गई थी । रात्रिको सभा की गई जिसमें मं० जिनेश्वरदासजीने श्रुतपंचमी पर व्याख्यान दिया और कविता सुनाई थी ।

यम्भई में श्रुतपंचमीके दिन सुबह श्रीपाव त्यागी ऐलक पन्नालालजीके हस्तसे सेठ सुखानंदजीकी मनोहर धर्मशालाके खास भवनमें 'ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन'की स्थापना हो गई । यह शास्त्रापाठनके भवनकी शाखा रूप रहेगा ।

दान—टीकमगढ़के स० सि० फूटचन्दजीने रोगाक्रान्त होनेपर ५०० पौरा मांठशाला तथा ५०० का महान पपौराक्षेत्रको दिया है ।

मुनि—चंद्रसागरजी, त्यागी पन्नालालजी आदि त्यागी ब्रह्मचारी कहां विराजमान हैं और वहां कहां चातुर्मास करेंगे इसकी सूचना जिनको मालूम हो हमें अवश्य लिखें क्योंकि आगामी अंक्रमें चातुर्मासके समाचार प्रकट करना है ।

कुन्धलगिरि—के कुलमूषण ब्रह्मचर्य आश्रमका कार्य अधिष्ठाता ब्र० पार्थसारथी द्वारा खूब चर रहा है । ७६ ब्र० और अनाथ शिक्षा पा रहे हैं । १२०० मासिकका लान है । संस्थाओंको दान करते समय इस आश्रमको भी कुछ न कुछ दान अवश्य भेजना चाहिये ।

दिग्विजयसिंहजी अभी नहीं छूटेंगे—केनाबाद टि० भेउसे ब्र० कुंजर दिग्विजयसिंहका पत्र आया है कि इलाहाबाद राज्य सेवा करते हैं १॥ वर्ष सरश्रिप वेद और १०० दंडकी शिक्षा हुई थी परंतु पीछेसे १ महीनेकी सजा कर देनेकी हमें खबर मिली थी और उस प्रकार



हम ता० २१ जुनको छूटनेवाले थे परन्तु अभी अजिहारियोने खबर दी है कि जुमाना माफ नहीं हुआ है इससे २००) जुमाना न दोगे तो ३ मास विशेष सजा भोगनी होगी और हम दंड तो देंगे ही नहीं इससे ता० २१ सप्टेम्बरको छूटेंगे ।

आश्रम जयपुरमें—श्री रूपम ब्रह्मवर्षी श्रम हस्तिनापुरसे जयपुरमें आया गया है तबसे विशेष २ उक्ति कर रहा है । अधिष्ठाता ब्र० ज्ञानानंदजी तो वहां ही रहते हैं और ब्र० मागीरधनी वर्षी व ब्र० ठाकुरप्रसादजी भी वर्षी ऋतुमें यहा ही रहेंगे । जयपुर राज्य व जयपुर-के जैन भाइयोंकी आश्रमकी तरफ सहायमृति है । स्थान सेठ सर्वसुखदासजी खजानचीकी नसिया है ।

पानीपतमें—जैन उपदेशक समा तन मन धनसे उपदेशका खुर कार्य कर रही थी परंतु उसके उत्साही उपदेशक प० मोतीप्रसादजीकी अभी मृत्यु हो गई इससे उपदेशका कार्य रुक पड़ा है और नर्वन उद्देश्यकी आवश्यकता है ।

अजमेर—में उद्देश्य बरी ११ को छोटी घड़ोकी विगाट समा रा० बा० सेठ टीकमचन्दजीके समापतित्वमें हुई थी जिसमें व्यावहारिक सि० सेठ मोतीलालजीके विषय पर दु स प्रकट किया गया व र्जति सुधार सचची प्रस्ताव पास हुआ कि गृह सम्बन्धी कड़ी खीचड़ी, तीसरा, चारवा, तीसरा व पंचायती इमानतसे चिड़ी फाटकर मोमर करे उसके एक दिनके मोमनने सिवाय सब बतौ जीमन बंद रहेंगे । तथाहके वक्तके सिवाय पहगण के वक्तके और सब पंचायती

पतासे बन्द हैं आदि । श्री० सेठ टीकमचन्दजी खुद हाथक प्रस्तावका बराबर अमल करते हैं ।

उष्ण ऋतु

उष्ण ऋतुका आगमन अबसे हुआ देखो यहां । तब रहा है देश सारा धूर पड़ती है यहां । टेका। भाते नहीं कपडा हमें नहीं अग्निकी कुठ चाह है । तेज गरमी पड़ रही अब पागकर जावें कहां । देहसे देखो पसीना रात्रि दिन बहता रहे । पौछते गमछसे ये हाथ थकि जाते अहा ॥१॥ त्रपा व्याधा आस देती कुल नहीं पड़ती हमें । नीर ठंडेकी सदा दवाये कीनी है यहां ॥ ३ ॥ करते पंखासे पय ५५ ५५ ५५ बैठे सदन । नीर ठंडा पान करते त्रितु व्याकुल हैं महा ॥४॥ कोई मिश्री घोल पीते कोई टंडाई बना । करते अनेकों यत्न गर्मीके बचानेका यहा ॥५॥ तेम पड़ती धूल, बहुत बाहर निकलता है कठिन । ताती २ व यु चरती गोरसे देखो जहां ॥ ६ ॥ भूमिही रनउड चली आकाश मानो रक्त दिपाते मार्ग बंटत पूर्ण होगये वृक्ष कुम्हलते यहां ॥७॥ सरिता सरोवर सूखकर मानो हुए मैदान है । रह रहे लकड़ीक मारी रात्रि दिन प्रणी यहाँ ॥८॥ जगली हिर्यव मोरे चूके व्याकुल हुए । दौडते फिरते पट्टेचते वृक्षकी छाया जहां ॥ ९ ॥ इस तरहसे उष्ण ऋतुमें लोक निव विह्वल हुए । त्रितु मुनिजन उष्ण ऋतुकी परीवह सहते महा ॥ श्रेष्ठ सिताराम्भट हैं जहा रविकिरण पड़ती प्रखर । आत्मचरसे जीतते हैं उष्णकी व्याधा महा ॥११॥ अन्य ऐसे साधु निजने मोह जोडा देहा । उनके चरण दर्श प्रेमी, उष्ण ऋतु व्यापे कहा ॥१२॥

गोरेलाल पंचरत्न ।



प्रकृत-पेय ।

प्रकृत-पेय केवल वो जगमें,
प्रथम दुध पुन शीतल नीर ।
किंतु, आप पीते हैं कितने,
बने हुए पानी या क्षीर ?
सभी बनावट पेय द्रव्यमें,
रहता है पानी का भाग ।
मिले हुए ओ अन्य पदार्थ,
उनको दीजे निश्चुल त्याग ॥
यदि वे पीने योग्य ठीक थे,
यदि करते वे स्वास्थ सुधार ।
तो मंगलमय प्रकृति मातृ ॥१५॥
करती उनकी निशुद्धि प्रचार ॥
तोडावाटर, बरक सेमनेट,
भाति भातिकी बनी शराब ।
छोड़ो, यह सब जीवननाशक,
छोड़ो, यह सब बाधु खराब ॥
दुध और पानीको तनेका,
अन्य नहीं पीनेक योग्य ।
चाहो रोग पिओ इन सबको,
छोड़ो यदि चाहो आरोग्य ॥
वही साधु है शुद्ध हृदय है,
ताज्ञा नल पीता मो छान ।
वही आत्मिक शक्ति बढ़ता,
वही प्राप्त कर सकता ज्ञान ॥
वैद्य] नयन ।

व्यावृत्त-प्रतिष्ठकारक सि० सेठ मोती-
दासजीके सहायता वियोग होमानेसे मेला-
प्रतिष्ठा व संटेडवाल महासभा आदि सभी उ-
त्सव बंद (स्थगित) रखा गया था ।

उन्नतिका उपाय ।

धारे सज्जनो, जैन नातिकी उन्नति करना
प्रत्येक श्रावकका प्रथम धर्म है अतः प्रत्येक
श्रावकको जैन नातिकी उन्नति करनेके लिए
उत्तमोत्तम कार्य करने चाहिए । उत्तमोत्तम कार्य
में अपनी बुद्धि अनुसार आपके हितार्थ
द्विस्तता हूं सो ध्यान पूर्वक आप उन
अत्युत्तम कार्योंको संसारमें प्रचार करेंगे ऐसी
आप महाशयोंसे आशा रखता हूं ।

(१) पहला कार्य यह है कि प्रत्येक ग्राम में
श्रावकगण पाठशालाएँ स्थापित करें कि जिससे
श्रावकोंका अज्ञान रूपी अंधकार दूर हो ।

(२) दूसरा कार्य यह है कि जैनी माई
कन्या विक्रयका कार्य शीघ्रमेव बंद कर दें ।
क्योंकि कन्या-विक्रय करनेसे जैन धर्मका नाश
हो जागया क्योंकि जैन शास्त्रोंमें कहीं भी कन्या
विक्रय करना नहीं लिखा है ।

(३) कार्य यह है कि बाल विवाह और वृद्ध
विवाह शीघ्रमेव बंद कर दें क्योंकि बाल विवाह
और वृद्ध विवाह करनेसे विषवाच्योंकी तादा-
बहुत बढ़ गई है और व्यवचार बहुत ही बढ़
रहा है ।

(४) चौथा कार्य यह है कि मरत्येक जैनीमें
एकता होनी चाहिए और एकता होनेपर खादीके
कपड़ोंका कार्य अर्थात् चारखे और स्वदेशी
काढ़ेका व्यापार करना चाहिए जिससे कि
रूपयेकी बचत रहे और जैन नातिको उन्नति हो ।

चादमल जैन विद्यार्थी ।

शानपुर, साम्भार ।

पट्टद्रव्यकी आवश्यकता और उनकी सिद्धि ।

जैन साहित्य सभा लेखनऊका लेखन नं० २

(लेखक:—पं० अजितकुमार शस्त्री—मुंबई)

इन्द्रवज्रा—ध्याननिद्राया विधिको नशाया, ससारका ताप सभी मिटाया ।

दुःखार्तप्राणी बहुवार तपि, भेटो प्रभो । ये दुःखपुत्र सारे ॥

प्रियवर सज्जन समान !

यह संसार एक महासागर है जिसके अगाध जलमें दृश्यमान नाना प्रकारके अनेक जन्तु क्षारालुकी क्षारतासे, बडवानलकी तीव्र उष्णतासे तथा पारस्परिक कलहकी वेदनासे एवं मयावह महाकल्लोलोंके संघट्टसे अरुण पीढाको सहन करते हुए इषाउपर मटक रहे हैं किन्तु उस अपार पारावारकी शांतिदायिनी तटभूमिको न पानेसे उसी दुःखमार्गमें दबे हुए और भी अधिक छटपटा रहे हैं । अथवा यह जगत एक महाउपवन है जिसमें चेतन तथा अचेतन दो प्रकारके वृक्ष लगे हुए हैं । जिस प्रकार अचेतन पौधे अनेक प्रकारके हैं तथैव चेतन वृक्ष भी विविध प्रकारके लगे हुए हैं । कोई महा उन्नत हैं, कोई लघु आकारके हैं । एवं कोई रमणीय मनोहर हैं और कोई महा असुन्दर हैं ।

सारांश यह है कि यह संसार एक विशाल आश्चर्यमय या अजायबघर है जहाँ पर अनेक प्रकारके समस्त पदार्थ एकत्रित किये गये हैं । अस्तु ।

अब विचार इस विषय पर करना है कि जिसको सभी जो जगत कह रहे हैं वह जगत वस्तुतः क्या पदार्थ है ? और उसके अस्तित्व के प्रकारके पदार्थ विद्यमान हैं ?

जिस समय परीक्षामयनमें हम पहला दृष्ट उत्तर देते हैं उस समय हमको चारों ओरसे एक स्वरमें यही उत्तर मिल जाता है कि “ दृश्यमान तथा अनेक प्रकारसे ज्ञायमान नाना पदार्थोंका समुदाय ही जगत है ” यद्यपि इस उत्तरके विशेष विशेष अंशोंमें पारस्परिक अनेक विवाद हैं किन्तु सामान्य उत्तर समस्त पुरुषोंका समान ही है । अस्तु ।

परन्तु जिस समय द्वितीय प्रश्न उपस्थित किया जाता है उस समय हमको अनेक उत्तर नाना प्रकारसे प्राप्त होते हैं । इस कारण इस विषयका पता लगनाता है कि इन सभी उत्तरोंमें कां मन्त्र्योंमें सभी मतंजय यथार्थ नहीं हैं किन्तु यदि ठीक होगा भी; तो एक मतंजय ही ठीक होगा । शेष सभी मत अयथार्थ (गलत) होंगे । अस्तु ।

आज हम अपना अमूल्य समय इसी परीक्षामें व्यतीत करते हैं जिसका एक ऐसा मनोहारी फल निकालेंगे जो कि हमको अपूर्व, अनुपम तथा महा आनंद प्रमोद प्रदान करेगा जिससे कि हमारे सुषयकी बहुमूल्यता हमको अमूल्यता भेट करेगी ।

हम सबसे प्रथम इस विषय पर ध्यान देते हैं कि जिन द्रव्योंके भेदोंका हमें निश्चय करना है उनका सामान्य स्वरूप तथा लक्षण क्या है ? तदनन्तर हम परीक्षक बनकर सारासारका विचार कर सकेंगे ।

बहुत अनुसंधान करनेपर इत उर्ध्वक शंकाको दूर करनेके लिये हमको सारभूत द्रव्यका लक्षण यह प्राप्त हुआ है कि “ जो गुण तथा पर्याय स्वरूप हो वही द्रव्य है ” ये नी गुण और पर्यायका जो आश्रय है वही द्रव्य है । यहां पर यह ध्यानमें रखना चाहिये कि गुण और पर्याय ऐसे नहीं हैं कि द्रव्यसे पृथक् रहकर उसमें फिर आ मिलें हीं किन्तु जैसे वृक्षमें शाखाएं हैं शरीरमें अंग तथा उपांग हैं तथैव द्रव्यमें गुण और पर्याय हैं । अथवा गुण, पर्यायके अतिरिक्त द्रव्य कोई भिन्न वस्तु नहीं है जैसे कि शाखा, पत्ते, फूल, फल आदिके बिना वृक्ष कोई भिन्न पदार्थ नहीं है । इनमेंसे “द्रव्यकी सभी अवस्थाओंमें रहनेवाला और अन्य द्रव्योंसे भेद दिखलानेवाला ‘ गुण, है और उसी गुणकी नवीन २ जो दशाएं हैं वे ‘पर्याय’ कहलाती हैं । जैसे चेतन द्रव्यमें यदि ज्ञानगुण है तो वह ज्ञान बाल्या, यौवन, प्रौढ तथा कौमार आदि सभी दशाओंमें रहेगा किन्तु उस ज्ञानकी पर्याय प्रतिसमय नवीन नवीन ही होंगी यानी किसी समय पुत्ररूप यह ज्ञान है अन्य समय घररूप है तदनन्तर जलरूप है । आदि । यानी ज्ञानगुण जिस जिस नवीन हावमें होगा उसकी पर्याय भी उसी रूपमें होंगी । इसी लिये सारांश यह निकटा कि गुण द्रव्यके साथ सर्वज्ञ रहता है और पर्याय केवल एक ही समय तक रहती है ।

यहां पर यह कह देना आवश्यक होगा कि प्रत्येक द्रव्यमें बहुतसे गुण रहते हैं जिनको किसी प्रकारसे गिन नहीं सके हैं अतएव उनकी संख्या अनेक शब्दसे ही कहेंगे । पर्यायोंकी संख्या भी द्रव्यमें ऐसी ही है । अब इस प्रकार द्रव्यकी परिभाषा हो गई कि “अनेक गुणोंवा समुदाय एवं भूत, पविष्ट तथा वर्तमानकाल संबंधी पर्यायोंका समूह ही द्रव्य है ” क्योंकि एक समयमें एक गुणकी एक पर्याय और दूसरे समयमें उसी गुणकी दूसरी पर्याय हो जाती है । किन्तु यह बात ध्यानमें रहे कि गुणोंकी दृष्टि अनेक हावमें होंगी परन्तु उनका स्वरूप नहीं बदरेगा । जैसे मनुष्यकी दृष्टि बालक, युवा आदि अनेक दशा होंगी परन्तु वह उन सभी दशाओंमें मनुष्य ही रहेगा अन्य नहीं होगा ।

हम इसीसे पता लगा सके हैं कि द्रव्य क्या वस्तु है और गुण क्या है ?

अस्तु !

इसी द्रव्यका यदि अन्य प्रकारसे लक्षण बनाया जाय तो इस प्रकार बनता है कि “ जो उपाद, ध्वय तथा धौम्य रूप हैं वही द्रव्य है ” अर्थात् उत्पन्न, व्यय और धौम्य जिसमें मिले वह द्रव्य है ।

नवीन पर्यायका उत्पन्न होना उत्पन्न है । पहली पर्यायका नष्ट होना व्यय है और पूर्व स्वभावको जो स्थिर दशा है वह ध्रौव्य है । ये तीनों मूलतत्त्व गुणकी द्वाकों हैं । और यही सप्तगुण द्रव्यका एक मुला लक्षण है । जिन प्रकार द्रव्यका पूर्वोक्त लक्षण प्रमाणिक है और इसीलिये यथार्थ है । उसी तरह यह लक्षण भी प्रमाणसिद्ध है क्योंकि द्रव्य जिस प्रकार किसी अपेक्षासे निरूप है तथैव किसी अपेक्षासे परिणामी यानी बदलनेवाली भी अवश्य है । यदि ऐसा न हो तो मूलतत्त्व वस्तु जैसी है हमेशा वैसी ही रहनी चाहिये बिल्कुल न बदलनी चाहिये । किन्तु ऐसा कहीं भी नहीं देखा जाता है । हम देखते हैं किस्ती समय खेतमें बीज या उसके दूसरे समय वृक्ष अकृषा हो गया है उनके पीछे छोटा पेड़ है तदनन्तर वृक्ष बड़ा पेड़ हो गया और फलोंसे परिपूर्ण बन गया । अन्तमें समय पार करने आप सुख गया, यह एक वृक्षका दृष्टांत है । किन्तु यह दृष्टांत सभी पदार्थोंकी है । प्रति समय नवीन २ द्वाकोंमें बदलती हुई ही वस्तुएँ दृष्टिगोचर होती हैं । किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे बिल्कुल ही बदल जाती हैं । क्योंकि यह नियम है कोई भी पदार्थ न तो बिल्कुल नष्ट ही होता है न सर्वथा नवीन ही उत्पन्न होता है । जिस समय पदार्थ नई अवस्थामें आता है उस समय यद्यपि अपनी पहली पर्यायसे नष्ट हो जाता है । किन्तु अपने स्वभावसे नष्ट नहीं होता है । आप यद्यपि हरे रंगसे पीछे रंगका हो गया परन्तु उसमें रंग नामक गुण तब भी था और वह अन्न भी है । मनुष्यको बाह्यदशा नष्ट होकर युवावस्था उत्पन्न हो गई किन्तु जो मनुष्यता पहले थी वह अन्न भी है । हा ! पर्याय पड़ गई है इससे सिद्ध होगया कि वस्तुमें प्रत्येक समय उत्पाद, व्यय तथा ध्रौव्य अवश्य रहते हैं जिससे कि नवीन परिणमन भी होता है और अपनी स्वभावका नाश भी नहीं होता है । इसलिये ऐसा नियम बन गया कि जो वस्तु उत्पन्न होती है वही नष्ट होती है और वही स्थिर भी रहती है । तथा जो पदार्थ नष्ट होता है, वही उत्पन्न होता है और वही स्थिर भी रहता है । एवं जो द्रव्य किसी प्रकार स्थिर है वही उत्पन्न होता है और नष्ट भी वही होता है ।

यह नियम जब कि प्रत्यक्ष अनुपपन्न आदि प्रमाणोंसे निर्वीर्य सिद्ध है तब परिणामा इस रूपमें होगी कि जो पदार्थ उत्पन्न हुआ या वही उत्पन्न हो रहा है और वही उत्पन्न होगा तथा जो पहले नष्ट हुआ था, वही नष्ट हो रहा है और वही नष्ट होगा । इसी प्रकार जो वस्तु अपने स्वभावसे स्थिर थी, वही स्थिर है और वही स्थिर रहेगी ।

सारांश यह है कि यह नियम वैकालिक है । इन लिये द्रव्य उत्पन्न होती हुई तथा नष्ट होती हुई भी अपने स्वभावमें स्थिर रहती है ।

इसका अर्थ कुछ महाराज ऐसा लगाते हैं कि द्रव्य पर्यायकी अपेक्षा ही परिणामी

है, गुणोंकी अपेक्षा ध्रुव (अविनाशी) है। वे महाशय अपनी समझमें भूच करते हैं। क्योंकि द्रव्योंकी पर्यायें जैसे किसी कारण अनित्य अथवा उत्पाद व्यववाली है उसी प्रकार वे ध्रौव्यवाली भी किसी अपेक्षासे हैं। और द्रव्योंके गुण जिस प्रकार ध्रौव्यात्मक यानि नित्य मालूम होते हैं। वे ही गुण किसी तरह अनित्य भी दीखते हैं अथवा इसको इस तरह कहना चाहिये कि उत्पादमें व्यय और ध्रौव्य निवास करते हैं। और व्ययमें भी उत्पाद उत्पन्न तथा ध्रौव्य रहते हैं एवं ध्रौव्यमें भी उत्पाद, व्यय अवश्य पाये जाते हैं। यह बात इस तरह सिद्ध होती है कि यदि पर्यायमें कुछ भी नित्यता न हो तो वह क्षणभर भी न ठहर सकेगी और इस प्रकारसे पर्याय ही न रह सकेगी। पर्यायमें कुछ न कुछ नित्यता या स्थिरयन है तभी तो आम कभी हरा और कभी पीछा दिखाई देता है। मनुष्य कभी बच्चा और कभी युवा दृष्टिगोचर होता है। अन्यथा किसी भी रूपमें न दीखेगा। इसी प्रकार गुण भी यद्यपि किसी अपेक्षासे ध्रौव्यात्मक है परन्तु किसी अपेक्षासे उत्पादव्यय स्वरूप परिणामी भी है क्योंकि यदि ऐसा न होवे तो गुणोंकी सदा एकसी ही हालत दीखती चाहिये उसमें किसी भी प्रकार हेरफेर न होनी चाहिये। आमका रूपगुण सर्वदा हरा या पीछा ही रहना चाहिये, न बदलना चाहिये, रस भी खट्टा या मीठा ही सर्वदा रहना चाहिये किन्तु ऐसा होना प्राकृतिक नियमके विरुद्ध है। अतएव गुण जिस प्रकार सामान्यतया अपरिणामी (नित्य) हैं। विशेषतया वे ही परिणामी भी अवश्य हैं।

इस सभी जेजाहका यही सारांश है कि 'अनेक गुण तथा अनेक पर्यायवाली द्रव्य होती है। इसीको दूसरे ढंगसे ऐसा कह सके हैं कि उत्पत्ति, नाश तथा स्थिर दशाको धारण करनेवाला ही द्रव्य है।

अब द्रव्यका लक्षण तो पूर्णतया प्रमाणरूपी कटिपर तुल्य चुका जिससे कि हमको प्रकृत निषयपर विचार करनेका अवसर मिल गया। हमको प्रकरणानुसार प्रथम ही यह विचारना है कि वे द्रव्य कितनी हैं। और कैसे हैं ?। सप्रधान उसी प्रकरणकी अन्य शाखा उपास्थित करके उनका निराकरण करेंगे।

जिस समय हम उपर्युक्त प्रश्नों हल करनेके लिये अपनी प्रतिमाको काममें लेते हैं, उस समय हमको ज्ञात हो जाता है कि इस विशाल संसारस्थलमें दो प्रकारके द्रव्य ही उलझा होते हैं। अर्थात् संसारमें जितने भी अनेक पदार्थ हैं वे दो जातिके हैं—एक तो चेतन हैं दूसरे अचेतन।

मिन पदार्थोंमें जानने देखनेकी शक्ति है उनको चैतन्यदशासे सहित होनेके कारण चेतन कहते हैं इनकी ही 'जीव' शब्दसे प्रकाशते हैं। और मिनमें जानने, देखने,

सुख, भूख, अनुभव आदि अल्प शक्तिका विकाश नहीं है वे पदार्थ अचेतन हैं जिनको जड़ या अजीव भी कहते हैं । अस्तु । इन दो प्रकारोंको छोड़कर पदार्थोंकी तीसरी और कोई जाति नहीं है । सभी पदार्थ इन्हीं दोनोंके अन्तर्भूत हैं ।

किन्तु पदार्थोंकी ये जातियाँ भी जड़वादके इस मध्याह्नकालमें कहता असमय हो जाता है क्योंकि इस समय मनुष्योंका बहु भाग इस सिद्धान्तकी अट्ट तथा वास्तविक मान बैठा है कि "संसारमें केवल एक अजीव द्रव्य ही है । जिसको हम लोग जीव कहते हैं वह भी जड़ द्रव्यकी पर्याय है" इसको सिद्ध करनेके लिये वे प्रत्यक्ष, परोक्ष कई प्रकारके प्रमाण तथा दृष्टान्त उपास्थित करते हैं । अतु ।

कुछ भी हो । यहाँपर यह निश्चय नहीं किया जा सका है कि विचारक व्यक्ति-योंकी अधिक संख्या जिस मंतव्यको निश्चित करे वही मत यथार्थ होगा और सिद्धान्त भी वही हो सकेगा । क्योंकि संभव है कि वे सब भूलपर होवें और भेड़ियाघसानमें आकर उन मनुष्योंकी संख्या बढ़ गई हो । और उसमें विरुद्ध कहनेवाला थोड़े मनुष्योंका समुदाय ही ठीक मार्गपर हो । क्योंकि परीक्षकोंका मार्ग यद्यपि आनकल चौड़ा हो गया है किन्तु कषाय और पक्षपातका भाव अभी तक मनुष्योंके हृदयसे विदा नहीं हुआ है । अन्यथा आर्यसमान सरीला कृतकी जनसमुदाय भी 'मृष्टिकर्तृत्व' सरीले स्पृष्ट विषयपर न उल्ला रहता । अस्तु ।

इसलिये नर हमने अपना अनुभव तथा अमूल्य समय विचारनेके लिये प्रदान कर दिया है तब हमारा प्राथमिक कर्तव्य है कि हम इस कंठकको भी अलग कर दें अन्यथा आवागमनके प्रारम्भमें ही मसिका छोक देगी जिससे एक पैर भी आगे न चल सकेंगे ।

जड़वादको माननेवाले महाशय अपना सिद्धान्त इस प्रकार जमाते हैं कि "संसारमें केवल जड़ द्रव्य ही है । जीव भी इन्हीं अचेतन द्रव्योंके संगसे उत्पन्न हो जाता है । जगतमें पृथ्वी, जल, अग्नि, तथा वायु इन चार द्रव्योंके चार प्रकारके परमाणु भरे हुए हैं । उन्हीं परमाणुओंके परस्पर मिल जानेपर जल, पृथ्वी आदि अनेक प्रकारके पदार्थ बन जाते हैं । जिस प्रकार गुड़, महुवा, घृत आदिके मिलापसे गहरा नशा या बेहोशी लानेवाली मदिरा बन जाती है, उसी प्रकार पृथिवी, जल, अग्नि, वायु इन चार भूतके संयोग (मिश्रण) होनेसे चेतन शक्ति उत्पन्न हो जाती है जिसको जीव कहते हैं । वास्तवमें जीव नामक कोई पदार्थ अलग स्वतंत्र नहीं है । इसलिये संसार केवल जड़ पदार्थसे ही मरा है " ये लोग इसी कारण ऐसा कहते हैं कि परलोक कोई वस्तु नहीं है । अस्तु ।

इस मतकी युक्तिशून्य, असत्य सिद्ध करनेके प्रथम उत्पत्ति संरन्धर रखनेवाला डेढ़ विषय कह देना आवश्यक होगा जो कि इस प्रकार है ।

जिस प्रकारका कारण होता है कार्य भी उससे वैसा ही होता है । अर्थात् उपादान कारण जिस जातिका होगा कार्य भी उससे उसी जातिका उत्पन्न होगा । जैसे मनुष्यसे मनुष्य ही उत्पन्न होता है और घोड़ेसे घोड़ेकी ही उत्पत्ति होगी । तथैव चनेका बीज चनेका वृक्ष ही उत्पन्न करेगा और आमके पेड़पर आमका फल ही लगेगा उसपर केला कभी नहीं लगेगा । क्योंकि उस फलका कारण दूसरा ही है । इसलिये यह नियम बन गया कि चनेको चाहे जैसी भूमिमें बोदे और उसमें चहे जैसा खाद दे किन्तु उससे गेहूँ कभी नहीं होगा उससे चना ही होगा । आमके वृक्षपर हजारों प्रयत्न करने पर भी केला उत्पन्न न हो सकेगा ।

इससे हमको यह सार मिळ गया कि जिस जातिका कारण होगा कार्य भी उससे उसी जातिका उत्पन्न होगा । अन्यथा नहीं ।

अब हम अपने प्रकरणपर आते हैं । जड़वादियोंका जो यह कहना है कि “गुड़ धतूरे आदिके मिश्रणसे जिस तरह शराब बन जाती है जोव भी उसी प्रकार पृथ्वी जलादिक चार भूतोंके मिश्रणसे बन जाता है । यह कोई अलग नया पदार्थ नहीं है” आदि इस विषयमें हमको प्रथम ही यह देखना है कि शराबमें आ मादक (नशा) शक्ति है वह उसके कारणोंमें है या नहीं है ? । क्योंकि उनके कारणोंमें ही यदि वह शक्ति होगी तब तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि शराबसे बहुत गहरा नशा आता है क्योंकि वह नशा उसके कारणोंमें पहलेसे ही था । यदि उन कारणोंमें वह नशा नहीं होगा तो अवश्य ही एक आश्चर्यकी बात उठेगी ।

शराब बननेके उपादानकारण पट्टा, धतूरा, गुड़ तथा एक मादक फलका चून आदि हैं । इन वस्तुओंको यदि प्रथक् प्रथक् ही कोई मनुष्य खावे तो उसको थोड़ा बहुत अवश्य नशा आ जाता है । शिरकी पीडा, बुद्धिका बिगड़ जाना, स्वरष दशा न रहना ये सभी बातें केवल एक एक पदार्थको मक्षण करनेसे ही हो जाती हैं । यदि इन सबको मिश्रकर कोई पाक तयार किया जाय तब तो वह नशा और भी बढ़ जायगा क्योंकि वे सब एक स्थानपर मिश्र गये हैं । बस यही शराबकी हालत है । जो भीमें प्रथक् १ कप नशा लाती थी उन्होंनेको मिश्रकर शराब बना लेनेपर उन वस्तुओंका मद तीव्र हो जाता है । और इसके सिवाय और कोई नवीन बात नहीं होती है । इससे यह सिद्ध हो गया कि शराबके कारण ही मादक हैं, उसमें यदि मादक शक्ति आ गई तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं । क्योंकि नशीले कारणोंसे जो पदार्थ उत्पन्न होगा वह नशीला अवश्य होगा । अस्तु ।

इसलिये जड़वादियों द्वारा दिया ‘ट्टा मादिराका दहान्त तो टूट गया । अब प्रभाव विप्लव पर प्रकाश डालते हैं ।

“ पृथ्वी, अन्न, अग्नि और वायु इन चार भूतोंके द्वारा जीव उत्पन्न होता है अर्थात्

जीवके उत्पादनकारण पृथ्वी, जलादिक हैं । भूतवादी इसी सिद्धान्तपर आना पसीना बहाते हैं । अतः ।

यहाँपर हमको दो प्रश्न उठते हैं । कि इन चार प्रकारके भूतोंमेंसे केवल एक एक भूत ही जीवको उत्पन्न कर देता है । अथवा ये सभी मिलकर जीवको उत्पन्न करते हैं ? ।

यदि भूतवादी जनता पहले पशुको ग्रहण करके उत्तर दे अर्थात् केवल अलग ५ एक ही पृथ्वी आदिक भूतसे जीव उत्पन्न होजाता है । तो फिर यह बिना किसी कष्टसे सिद्ध हो गया कि जीव चार प्रकारके उत्पन्न होते हैं । पहले पार्थिव (पृथ्वीसे उत्पन्न) दूसरे जलीय, तीसरे अग्नेय और चौथे वायव्य (वायुसे उत्पन्न) क्योंकि जब कि कारण चार प्रकारके हैं उनके कार्य भी चार प्रकारके ही होंगे । किन्तु यह बात कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होती है । जितने भी जीव प्रत्यक्ष होते हैं सभीमें जीवत्वगुण एक सीखा मिलता है । यद्यपि मनुष्य, पशु, पक्षी आदि अनेक प्रकारके जीवोंका शरीर अनेक प्रकारका है किन्तु उन सबमें ज्ञान या चैतन्यशक्ति सामान्यतया समान है । यह दूसरी बात है कि किसीमें ज्ञानकी मात्रा अधिक है और किसी जीवमें अल्प है किन्तु इससे यह सिद्ध नहीं होता है कि " मनुष्यवा नीच अशुक् पदार्थसे बना है इस लिये उसमें ज्ञान सबसे अधिक है और हाथीका जीव अशुक् भूतसे निकला है इस लिये उसमें मनुष्योंसे कम और पशुओंसे अधिक ज्ञान है । तथा गवा, ऊँट, बैल, उल्लू आदि अशुक् भूतसे उत्पन्न हुए हैं इस लिये वे बुद्धिमें तथा समझनेमें गधा, उल्लू आदि ही हैं " ।

क्योंकि एक जातिके जीवोंमें भी ज्ञानकी कमी বেশी भिन्न होती है । मनुष्योंमें ही देश छोड़िये, जितने मनुष्य हैं उनके ज्ञानमें उतने ही भेद हैं । तारांश यह है कि ज्ञान (चैतन्य) गुण सामान्यतया सभी जीवोंमें है । इसके अतिरिक्त जीवोंके शरीर भी चार प्रकारके नहीं मिलते हैं निम्नसे उन्नतक क्रम सिद्ध हो जावे किन्तु जितने प्रकारके जीव जंतु हैं सभीके शरीर मात्र २ प्रकारके हैं । इस लिये मायायें यही निक्ला कि एक एक केवल एक एक भूतसे ही जीव उत्पन्न नहीं होते हैं ।

यदि कोई मनुष्य दूसरा पक्ष ले कि चारों भूत मिलकर जीवको उत्पन्न करते हैं । जैसे महुआ, गुड़ आदि मिलकर शराबको उत्पन्न कर देते हैं ।

तो उनके लिये यह उत्तर तयार है कि जैसे उत्पादनकारणका धर्म कार्यमें आया करता है । जैसे घड़ेमें उनके उत्पादन कारण मिट्टीका धर्म आता है । महुआ आदि नशीले पदार्थोंका नशीला गुण उनसे बनी हुई शराबमें आजाता है । यह प्राकृतिक अत्युत्तम है । इसी प्रकार जीवमें जो चैतन्य गुण दीसता है वह उसके उत्पादन कारण जलादिकमें भी दीसना चाहिये । ज्ञानकी कोई अधिक मात्रा अशुक् दृष्टिगोचर होनी चाहिये ।

किंतु ऐसा नहीं है । जल, पृथ्वी आदिमें अस्व भी ज्ञानशक्ति नहीं मालूम होती है फिर उनसे बने हुए जीवमें वह शक्ति कहाँसे आसक्ती है ? । आवेगी भी कहाँसे ? ये सब कारण तो अचेतन हैं । इस लिये यह सिद्ध हो गया कि ये चारों भूत जीवके सनातीय नहीं हैं किंतु विनातीय हैं । और यह नियम ही है कि जिस जातिका कारण होगा, कार्य भी उससे उसी जातिका उत्पन्न होगा ।

इस लिये यह सिद्ध हो गया कि अचेतन भूतोंसे चेतन जीव कभी उत्पन्न न हो सकेगा अन्यथा पृथ्वीसे जल और जलसे अग्नि भी पैदा हो सकेगी जिससे भूत चार प्रकारके ही हैं उनसे पदार्थ भी उसी जातिके उत्पन्न होते हैं, यह उनका सिद्धान्त विगड़ जायगा । किन्तु होता ऐसा भी है, पार्थिव छकड़ीसे अग्नि, जलसे पार्थिव ओला और दीपककी अग्निसे पार्थिव कानल बन जाता है ।

यहां यदि यह कहा जाय कि उन चार प्रकारके पदार्थोंसे शरीर बन जाता है और शरीरमें चेतनशक्ति अपने आप आनाती है अर्थात् चेतन शक्ति शरीरका ही गुण है ।

यह कहना भी पर्याप्त न होगा क्योंकि यदि ज्ञान शरीरका ही गुण होता तो शरीरके अनुसार ही उसमें कभी वेशी होती किन्तु ऐसा है नहीं, शरीर वैसा ही बना रहता है किन्तु जीवमें बहुतसे विकार हो जाते हैं । शरीर कभी मोटा हो जाता है कभी पतला । किन्तु ज्ञान उतना ही बना रहता है । मृतकका शरीर जैसेका वैसा बना रहता है किन्तु उसमेंसे चेतनशक्ति निकल जाती है । इसके अतिरिक्त जीव यदि शरीरका ही गुणस्वरूप होता तो शरीरके अनेक खंड कर देने पर सबमें पृथक् पृथक् जीव-मिलना चाहिये । जैसे कि बड़ेके अनेक खंड कर देनेपर सबमें मिट्टी तथा उसका गुण अवश्य मिलता है । शरीरके खंडोंमें ऐसी बात मिलती नहीं है ।

इस लिये अनेक पृष्ट प्रमाणोंसे अच्छी तरह सिद्ध हो जाता है कि जीव शरीर-दिक भड़ पदार्थोंसे भिन्न एक निराळा ही पदार्थ है जिससे कि संसारमें केवल जीव तथा अजीव दो ही द्रव्य हैं यह अनायास सिद्ध हो गया ।

यहां पर इतना कह देना आवश्यक होगा कि जीव द्रव्यका संक्षिप्त वर्णन भी अधिक समय तथा स्थान चाहता है अतएव उसको यहीं छोड़ देते हैं । इसके सिवाय उसके भेद प्रभेद भी असंख्यात तथा अनंत है । उनको भी हम यहां बतलानेमें सर्वथा असमर्थ हैं । अतः । किन्तु इतना ध्यानमें रखना चाहिये कि सर्व जीवोंमें गुण तथा शक्तियां समान विद्यमान हैं यह इसका विषय है । किसी विशेष कारणवश किन्हीं जीवोंमें कोई गुण मोड़े व्यक्त हैं और कुछ जीवोंमें अधिक प्रगट हैं । सामान्यतया सभी जीव समान हैं ।

अब अजीव द्रव्य जेय रहा जिसका व्याख्यान आवश्यक तथा अनिवार्य है । अस्तु । जीव द्रव्यको छोड़कर शेष जो भी द्रव्य हैं वे सभी अजीव द्रव्य हैं क्योंकि उन सभीमें चेतनराहित्य अथवा, अजीवत्व भाव विद्यमान है । अतएव सामान्यतया उन सभीको एक जातिका कह दिया जाय तो भी अनुचित न होगा । किन्तु उनको विशेष विशेष, अनिवार्य भेदोंके कारण विभक्त करना ही चाहिये ।

अब अपना मानसिक बल इसी पर लगाते हैं कि अजीव द्रव्य किनने प्रकारोंमें विभक्त है अथवा हो सका है ।

तब सबसे प्रथम जीव द्रव्यको छोड़ देनेपर जिनका भी कुछ दिखलाई देता है वह सभी शुद्ध द्रव्य ही दृष्टिगोचर होता है जिसको कि मूर्तिक द्रव्य भी कहते हैं । संसारमें चर्मचक्षुओंसे तथा इतर द्रव्येन्द्रिय ज्ञानेन्द्रियोंसे जो कुछ उपलब्ध होता है सभी शुद्ध द्रव्य है । यहाँतक कि यदि सूक्ष्म विचार न किया जाय तो शुद्ध द्रव्यको छोड़कर जीव द्रव्य भी सिद्ध नहीं होता है । अस्तु ।

पृथ्वी, पर्वत, समुद्र आदि जितने भी पदार्थ हैं सभी शुद्ध द्रव्यकी पर्याय है । यहाँ तक कि जीवद्रव्य जिस घातमें निवास करता है वह शरीर भी शुद्धद्रव्य है । इसलिये इस शुद्ध द्रव्यको सिद्ध करनेका परिश्रम नहीं करना पड़ेगा क्योंकि जगन्मात्र पुरुष भी अपने ज्ञाननेत्रोंसे अथवा अन्य इन्द्रियोंसे सहजमें ही इस द्रव्यसे पूर्ण परिचय हो जाता है ।

हां ! एक बात अवश्य कहना है जो कि प्रायः अस्मत् तथा विवादास्पद है । वह यह है कि जिस प्रकार शुद्धद्रव्यमें रूप गुण है और वह पूर्णतया स्पष्ट है उसी प्रकार उसके अविनाशशील या साध साध रहनेवाले तीन गुण और भी हैं । जिनका ज्ञान नेत्रेन्द्रिय के सिवाय अन्य इन्द्रियोंसे होता है । वे गुण रस, गंध तथा स्पर्श हैं जो कि प्रत्येक शुद्ध पदार्थमें अवश्य विद्यमान हैं ।

इसलिये पुद्गल-द्रव्यका यह लक्षण बगवा कि, "जिसमें रस, रस, गंध तथा स्पर्श ये चार गुण पाये जाय वह शुद्ध है" । इन चारों गुणोंमेंसे किसी पदार्थमें चारों गुण ही व्यक्त हैं और कुछ पदार्थोंमें कोई गुण ही व्यक्त है शेष अन्यत्र रूपसे रहते हैं । किन्तु यह नियम है कि जहाँ इन चारोंमेंसे कोई एक गुण होगा वहाँपर शेषके तीन गुण भी अवश्य मिलेंगे । यह नियम हमको उन अनेक प्रकारके नाना पदार्थोंके अनुभवसे ज्ञात हो जाता है । जैसे आमको खानेसे उसका मीठा रस मालूम हुआ, सुंनेपर सुगंध भी उपलब्ध हुई । कोपल, ठंडा, मारी, चिपण, स्पर्श भी पया गया । इसी प्रकार गुठारके ह्वमें जैसे सुगंध उपलब्ध होती है उसका रंग तथा स्पर्श भी उसी प्रकार मिलता है और स्वाद लेनेपर उसमें किमी न किमी प्रकारका रस भी मालूम होता है । हमको अब कि

ऐसा नियम या इन गुणोंका साहचर्य प्रायः सभी अनुभूत पदार्थोंमें मिलता है तब इसी कान्ठसे हम सभी पृष्ठलीय पदार्थोंका स्वभाव वेरोवटोक यथार्थ जान सक्ते हैं ।

अतएव कोई महाशय जो ऐसे सिद्धान्त बनाते हैं कि "जलमें स्पर्श रस तथा रूप है, अग्निमें स्पर्श तथा रूप है । तथा वायुमें केवल स्पर्शगुण ही विद्यमान है" । उनका यह सिद्धान्त स्वयमेव फिसलकर घराशायी हो जायगा । क्योंकि जलमें जब कि रस रूप स्पर्श पाये जाते हैं तब उसका अविनामावी गंध उसमें अवश्य रहेगा । अग्निमें कोई न कोई गंध तथा कोई न कोई रस अवश्य है क्योंकि उसमें स्पर्श तथा रूप मिलता है इसी प्रकार वायुमें भी जब कि शीत या उष्ण स्पर्श एवं बमन पाया जाता है तो उसमें गंध, रूप तथा रस भी अवश्य होने चाहिये । जैसे आमका फल । .

वात केवल यही है कि इन पदार्थोंमें कोई कोई गुण मुख्य तथा व्यक्त हैं शेषके गुण उतने तीव्र नहीं हैं किंतु हैं अवश्य । जैसे हींगमें बेलाके तेलमें केवल गंध गुणकी तीव्रता है किन्तु उसमें रस भी अवश्य रहता है, यही दशा उक्त पदार्थोंकी भी है । हम लिये भले प्रकार यह सिद्ध हो गया कि प्रत्येक पौष्टलिक पदार्थमें स्पर्श, रस गंध तथा रूप ये चारों गुण अवश्य पाये जाते हैं । अतएव प्रत्येक स्थलमें इन गुणोंमेंसे किसी एक गुणके रहने पर अवशिष्टके इतर गुण भी अवश्य रहेंगे । इस पृष्ठद्रव्यका भी व्याख्यान शक्तिसे परिभूत है । अतएव इसके विशेष परिचयसे विराम लेते हैं ।

अजीव द्रव्यमें एक प्रकारकी द्रव्य तो सिद्ध हो गई जो कि पृष्ठद्रव्य है । अब उसी अजीव द्रव्यको इतर प्रकार भी खोजना चाहिये ।

यह विषय सभीसे सुपरिचित है कि वार्यको देखकर उसके कारणका अनुमान होता है । जैसे वृक्षको देखकर जान लेते हैं कि इसको उत्पन्न करनेवाला प्रथम ही बीज अवश्य होगा । मिट्टीकी छेटी छेटी को देखकर पता चला लेते हैं कि इसको बनानेवाला सुक्ष्म पृष्ठद्रव्य परमाणु है । आदि । इसके प्रथम ही यह बात भी ध्यानमें रहे कि प्रायेक कथको उत्पन्न करनेके लिये जिस प्रकार उपादान कारणका उपस्थित होना आवश्यक है उसी तरह निमित्त कारणका होना भी अनिवार्य है । क्योंकि सृज रचना भी रहे किन्तु जुड़ावा तथा कया उपस्थित न होगा तो बल कमी न बन सरेगा । अस्तु ।

सोसादावी नीर तथा पौष्टलिक सभी पदार्थोंका एक साथ गमन होना किसी बड़ा निमित्त कारणसे ही हो सक्ता है अल्पता नहीं । जैसे ताड़ावमें एक साथ इधर उधर चलेवाले मछरी, मेंढक आदि हजारों नछमेंछुछोंके आसामगमनमें नष्ट निमित्त कारण है उसके बिना उगता गमन नहीं हो सक्ता है । तबव अनेक जीव पृष्ठद्रव्योंका रहना भी किसी निमित्तके बिना नहीं हो सक्ता है । इसलिए उस निमित्त कारणका होना भी अनि-

बाध है । जैसे घड़े में जब खला हुआ है वह बिना घड़े के न रह पाकेगा, उसके ठहरने के लिये कोई न कोई बल कारण अवश्य चाहिये । इस तरह दो प्रकारके कार्य देखनेसे उसके दो कारणोंका अनुमान होता है जिनके बिना उपर्युक्त दोनों कार्य कभी नहीं हो सकेगे । इस लिये दो अजीव द्रव्य और भी विद्यमान हैं जो कि अप्रतिष्ठ हैं, इस बातका पूर्णतया निश्चय होता है । इन दो द्रव्योंका नाम धर्म तथा अधर्म है । चलते हुए जीव तथा पुद्गलोंके साधारण कारण धर्म द्रव्य होता है । किन्तु चलपूर्वक चञ्चलता नहीं है और जीव पुद्गलोंके ठहरनेमें साधारण कारण अधर्म द्रव्य होता है ।

कोई महोदय यदि यह समाधान दे कि जीवोंके तथा पुद्गलोंके चलनेमें और ठहरनेमें जल, पृथ्वी, आदि निमित्त कारण होंगे धर्म अधर्म द्रव्य माननेकी क्या आवश्यकता है ? तो उन्हें यह बतलाना चाहिये कि आकाशमें उड़नेवाले पक्ष को सहकारी कारण कौनसा होगा ? । वहाँके लिये जिस प्रकार धर्म द्रव्यका नाम लिया जायगा उसी तरह अन्यत्र भी उसीकी कहना चाहिये । यहाँ कोई यदि यह कुरूप करे कि "इस तरह तो खाने, पीने आदिके लिये भी एक कारण होना चाहिये तथा अन्य तरहकी सभी क्रियाओंके लिये पृथक् पृथक् निमित्तकारण होने चाहिये" तो इसके लिये यही उत्तर पयास होगा कि उन सभीके लिये अन्य पुद्गलादि पदार्थ विद्यमान हैं ।

इस लिये यह सिद्ध हो गया कि पुद्गलके अतिरिक्त धर्म, अधर्म नामक भी दो अजीव द्रव्य विद्यमान हैं । ये दोनों सर्वव्यापक, अखंड हैं क्योंकि यदि ऐसा न होय तो सर्व देशवर्ती जीव पुद्गलोंके युगपत् चलने तथा ठहरनेमें सहकारी किस प्रकार होंगे । अस्तु । इसके सिवाय अनुसंधान करनेके लिये और भी आगे बढ़ना चाहिये, शायद और भी कुछ हाथ आ जावे ।

जिस समय द्रव्योंके आधारपदार्थोंका विचार जाता है उस समय ज्ञात होता है कि समस्त जीव, पुद्गलादि द्रव्योंका आधारभूत कोई और द्रव्य भी विद्यमान है । क्योंकि मनुष्य, पशु, पक्षी, पर्वत आदि दृश्यमान सभी पदार्थ पृथ्वीके आधारपर हैं अर्थात् पृथ्वीपर स्थित हैं । और पृथ्वी भी वायुमंडलपर स्थित है किन्तु वह वायुमंडल किस आधारपर स्थित है ? । इस प्रश्नको हल करनेके लिये द्रव्यान्तरका मानना अनिवार्य होगा । इतना ही नहीं किन्तु पदार्थोंकी वास्तविक व्यवस्था किस प्रकार कैसी है ? यह शंका भी हृदयकी विचलित करती रहेगी, जिसको हटाना हमारा प्रबल कर्तव्य होगा । अस्तु ।

जिस प्रकार हेतुओंके बलसे जीव द्रव्य तथा धर्म, अधर्म द्रव्य अपकट होते पर भी सिद्ध हो गई तथैव उपर्युक्त शंकाओंके निराकरणके लिये आकाश द्रव्य भी अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा, इसकी बिना माने कार्य न चलेगा । क्योंकि सत्त्व द्रव्योंको अवीणाह

सब जीव एकसे हैं। इसके बाद जिसे वे शत्रु या मित्र कहते थे, बन्धु वा दुश्मन समझते थे, उन सब कल्पनाको नष्ट कर सबमें समान भावकी भावना रखनी चाहिये। इससे संसारके जीव मात्र हमारे मित्र बन जायेंगे।

इस प्रकार सबके साथ मित्रता होनेपर सब हीमें हमारा राग-भाव हो जायगा; परन्तु यह राग सम-राग, के रूपमें होगा। अब याद रखना चाहिये कि हमारी सब जीवोंके साथ मित्रता है परन्तु पदार्थके साथ नहीं। और इसी कारण दुःखी जीवोंको और स्वयं-अवनेको दुःखी देखकर हमें कष्टना आयगी। जहां कष्टना उत्पन्न हुई कि उन जीवोंका और हमारा दुःख नष्ट हो जायगा। अर्थात् हमारे अनादि कालके अशुभ कर्म नष्ट होंगे। और सुखी जीवोंको देखकर सुख होगा अर्थात् अनादि कालसे जो हमने शुभ कर्म किये हैं उनका फल भी हम भोग चुकेंगे। मतलब यह कि शुभ अ-शुभ कर्म भावना न कष्ट देकर नष्ट हो जायेंगे। यह जो सुख-दुःख होते ये वे कर्मोंके कारण या पर वस्तुमें मोहके कारणसे होता थे; पर अब परभावके नष्ट हो जानेसे चित्तको आत्म-स्वभावमें छीन होनेका गौका मिलेगा। और जबतक राग पर-वस्तुओंमें होता था, वह अब आत्म-ध्वानाशिममें मग्न होकर, बोधराग होकर आनंदसे निम स्वरूपमें गिर जायगा। इस लिये मध्यम श्रेणीके जीवोंको इस उपायका उपबोध करना चाहिये; और जो वादक श्रेणीके जीव हैं उन्हें मध्यम श्रेणीके जीव बननेका यत्न करना चाहिये; और इस प्रकार वे जीव मध्यम श्रेणीमें

आ जायें तब उन्हें भी यही उपाय काममें लाना चाहिये। ब्र० आत्मानंदजी गढ़ाकोटा।

सोजीवनानो लग्गणो.

आ साव (सं० १८७८भां) सोल्लनाभां श्री वीशा भेवाडा जालिभां लग्गणालो वेशाभ भासभां भराधो दतो तेभां आशरे यावोस लग्ग यथां दतां छतां जेदनी वात छे के अक्षपलु लग्ग जेन विधिधी अजेठुं सांभल्लुं नथी। तेभ आधुनिक परिअडी भट्टारको पल्ल जे पधारेवा दता, पल्ल कोअ पल्ल धार्मिक विषय यथाधो नडातो. लग्ग प्रसजे वेशाभ सुद उ यी आशरे पदरेसोधी जे दण्णर भावसे अक्षडा यथा दता ते वेशाभ वडी १० रवीवारनी डल्लथी करी सुधणा पोवपोताना अभ तरिद वेराअ गया दता. आ साव जालि ओल्लननी न्यातो २७ यध दती तेभां अक्ष न्यात पीपलाववाणा शा० आभरदास पृथलास तरिधी यध दती ने जीअ न्यात धसलाववाणा शेड० नरसीदास गंगादास तरिधी यध दती. लग्ग प्रसजे सुधण आविआअभने नीजे सुधण भदद मणी दती.

परयाणा तरिधी.

- २५) शा० नरसीदास गंगादास धसलाववाणा
- १२) शा० मयुभाअ प्रेमनाथदास ओरसदराणा
- ११) शा० शंकरदास ताप्रीदास आभोद
- ७) शा० जगज्जनदास रमनाथदास भोगरी
- ११) शा० शिवदास ताराचंद दावोव
- १०) शा० परसोतमदास दीभयंद सोल्लना
- ७) शा० पीताम्बरदास जगज्जन सोल्लना
- ५) शा० नरोत्तम गंगादास वेडय
- ५) शा० नाथाशेड जेवरदास भोज
- ५) शा० नीजोपनदास धरदास सोल्लना
- ५) शा० परशुराम धरदास वसिहदा
- २) शा० भगजदास डवदास दावोव
- १) शा० सुधाजयंद सुधण ओरसद
- १) शा० नाथाभाअ धरदास पादरा

છોકરીવાળા તરફથી.

- ૧૧) શા. ત્રીભોવનદાસ રજુછાડાસ કરમસદ
- ૭) " રાયચંદ કુમચંદ સોજાપા
- ૫) " કાળીદાસ દરગોવીંદ આમેદ
- ૪) " રાયચંદ તલકચંદ વડુ
- ૭) " જાળરદાસ વૃન્દલાલ પીયલાલ
- ૫) " પાનાચંદ મનોદાસ વેડચ
- ૫) " નાથાલાલ મોતીલાલ કરમસદ
- ૩) " ખરસોતમ દામોદર વેડચ
- ૨) " જેસંગલાલ હીમચંદ પરીએજ
- ૧) " મુળજીભાઈ હર્ષદાસ વેલાસજી
- ૩) " જામજી મયુરભાઈ મહેજાવ
- ૧) " ચુનીલાલ મુખચંદ તણાડી સોજાપા
- ૧) " નાથાભાઈ હર્ષદાસ પાદરા
- ૩) " દોડાલાલ દલપતભાઈ આમેદ

ઉપરની મોટી રકમો સિવાય આરસો, તથા સો તથા બસો જોડીની રકમો બરાબ ૪૧૦૦૦)ની રકમો બરાબ ગણ છે ને જે લોકોએ ન બરી હોય તેમણે ખુશીથી બરી આપવી. છેવટે લેણા દીક ૨. ૧૧) લેણા કાન થયા છે.

ઉપર મુજબ કમદાન રકમ વેશાખ વદી ૧૧ સોમવારે જેઠા લોક-પોતપોવાના ગામે વેશાખ ગવા દતા. વળી એક યુવક મંડળની મીઠીમ ગળી દતી, તેમાં કેટલાક હાલો પાસ થયા દતા તેમાં મુખ્ય હાલ માતિયુ વરતી પવક કરવાનો હાલ થયો દનો અને તે મંડળના પ્રમુખ મી. મનામુ ખલાલ બેચરલાલ ચોકશી સોલીસીટર છે. શા. ત્રીભોવનદાસ રજુછાડાસ કરમસદવાળા.

સ્તંત્ર સ્વરૂપ સ્વરૂપિ ।

મનુષ્ય સ્વભાવે હી દેવવદન ક્ષયિક્ષગ ઔર પિતૃક્ષગ હન તીનોં ક્ષણોંકો છેાર સ્તંત્ર છેતા હૈ । ડગમેં પૂના, યાગ-પજાદિકે ત્રારા જેસે દેવકષગસે ઔર શાલોંકે પટન પાઠન આદિકે દ્વારા જેસે ક્ષયિક્ષગસે મુક્ત હોતા હૈ ડવી પ્રકાર સંત્તાન ઉત્પન્ન વરકે પિતૃક્ષગસે મુક્ત હોતા હૈ । પુરુષકે હિંદુ સંત્તાન દાત પાપ આદરકી વસ્તુ હૈ । સંત્તાન મુદ્દસ્વાશ્રપત્તા મૂઝ કારણ હૈ । સંત્તાનકે નિના મુદ્દસ્વાશ્રપત્તા અવકારમય હૈ । પ હિંદુ સંત્તાનોત્પત્તિકે હિંદુ પુરુષકો કલુકલમેં પ્રવેગ કરના આવડાક હૈ । કિંતુ શરીર અસ્થિ હોને સે વા સ્ત્રીકે સ્તમીપર્વે ન રહવસે અપૂરા કલ્પ કિસી મંકારકા વિશેષ વ્યાપત હોનેસે કદાપિ પ્રવેગ નહીં કરના યાહિં ।

ઉત્તા સંતાનકો ઉત્પન્ન કરવેકે હિંદુ પારંપર સ્ત્રી પુરુષોમેં પ્રીતિ ઔર માનસિક હર્ષ હોના અત્યંત આગમક હૈ । આગમમેં પ્રેમ, ઉત્સુકતા ઔર હર્ષકે ન હોનેસે ગર્ભકે ઉપાદાન શુક ઔર

(૫૮)

ઉપર મુજબ કલ રૂપીઆ ૧૧૪) અવિકાત્ર મને મદદ મળી છે તે ઉપર સાર સાથે રીતકારીએ હિંદુ આવી રીતે દરેક લગ્નમાળે દગા પ્રસંગે, તેમજ શતિ પ્રસંગે આવી ખોવાંખોને મદદ મળે તેા ધણી સારી વાત છે.

૨) દાનોદવા શા. રાયચંદ દાગોદરની દીકરી રજુછાડાસ મુખચંદ મધ્યા છે.

તેમ આ વસે સોજાપા માં એક " સી વીયા મેલાસ દિગંબર ત્રીભુ કોમળી વાડી" આપવા મોટે કુટ એકકુ કરવા મોલુ છે જેમાં અત્યાર રૂપીઆ લગભગ ૪૧૦૦૦) રૂપીઆ બચાયા છે ને હવે આશરે ૬૦૦૦૦) રૂપીઆ થવા સંભવ છે ને વાડી આપવામાં પણ લગભગ એક લાખ રૂપીઆનું ખર્ચ છે । તે પ્રકારે મોજામાં મોટી રકમ મોરસદવાળા પરીખ જ્ઞેમાનંદ નારણદાસ તરફથી રૂ. ૫૦૦૧) બરવામાં આવી છે.

ખુશસદવાળા મેગાનંદ અગાધસ રૂ. ૨૨૫૦) કરમસદવાળા મયુરદાસ દરગોવીંદ રૂ. ૧૦૦૧) ત્રામુખવાળા પાનાચંદ હર્ષદ રૂ. ૬૫૧) મોરસવાળા કીર્તલાલ દુસરીલાલ રૂ. ૫૦૧)

रत्न शरीरमेंसे पूर्णरूपसे स्खलित नहीं होते । वीर्य और रत्नके अलग परिणाममें क्षरित होनेसे उनमें संयोगसे जो गर्भ होता है, वह विशेष पुण्य नहीं होता । इस लिए उस समय जिससे हर्ष और उत्सुकता प्रकट हो ऐसे कार्य करने चाहिए । दम्पतीकी शयन, दूबके झागोंकी समान स्पर्श कोमल, विस्तीर्ण सुगंधित द्रव्योंसे सुगंधित और नानाप्रकारके पुष्पोंसे सुशोषित होनी चाहिए । पुरुष पहलेसे ही वीर्यवर्धक पदार्थ विशेषकर दुग्ध और घृतपक्व पदार्थ एवं स्त्री रत्नको बढ़ानेवाले तैल व घृताके द्वारा बने हुए हृदय आदिके पदार्थोंकी भक्षण करे । दोनोंको ही स्पर्श इन्द्रिय पहनना, चन्दन अगार आदि सुगंधित द्रव्योंका प्रयोग करना, पुष्प माताये धनकर नानाप्रकारकी वेशभूषाओंसे सुवस्त्रित होकर प्रथम प्रथम दूहने पै से और स्त्री बाये पैसे शयन पर चढ़े ।

रत्नकी निवृत्ति होनेपर ऋतुके चौथे दिन भी गर्भावान किया जा सकता है, किंतु चौथे दिन भी बहुवर्ती स्त्रियोंके रजः प्लाव होता है । इस दिये मनु आदि स्मृतियोंमें चौथा दिन भी वर्जित है । वास्तवमें रजोदर्शन होनेके पहले दिनसे लेकर, जो सोरह दिन ऋतुकाळके वहे हैं, उनमें प्रथमकी चार रात्रि, ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि गर्भावान करना उचित नहीं है । अन्य दश रात्रियोंमें गर्भावान करना श्रेष्ठ है ।

शुक्र और रज इन दोनोंमें शुक्रकी अधिकता होनेसे पुत्र, रक्तके अधिक होनेसे कन्या और दोनोंके समानपाव होनेसे तृपुत्र संतान उत्पन्न होती है ।

जैसे त्रिदोषमन्य ज्वर सातवें, नवें, ग्यारहवें आदि दिनोंमें स्वभावसे बढ़ता है और अन्य दिनोंमें पहलेकी अपेक्षा कम होता है एवं विशेष तिथियोंमें जैसे समुद्रमें ज्वार माटा आकर जड़को बढ़ा देता है और तिथि विशेषमें भूत फिर प्रकट अवस्थामें आ जाता है, उसी प्रकार स्त्रियोंके ऋतुकाळके अयुग्म दिनोंमें रज स्वभाविक रूपसे वृद्धिको प्राप्त होता है और युग्म दिनोंमें पूर्ण दिनोंकी अपेक्षा कम होता है । इस कारण पुत्रकी इच्छा होनेपर दम्पती युग्म दिनों में अर्थात् ऋतुके छठे, आठवें, दशमें, बारहवें, चौदहवें और सोरहवें, दिन कन्याकी इच्छा होनेपर अयुग्म दिनोंमें अर्थात् पांचवें, सातवें, नवें, और पंद्रहवें दिन गर्भावान करें । पहले २ दिनोंकी अपेक्षा दूसरे दिनोंमें अर्थात् पांचवें दिनकी अपेक्षा छठे दिन, छठे दिनकी अपेक्षा सातवें दिन, सातवें दिनकी अपेक्षा आठवें दिन, आठवें दिनकी अपेक्षा नवें दिनमें इस प्रकार दूसरे २ दिन गर्भावान करनेसे उस गर्भकी रज्ज्वान उत्तरोत्तर उत्तम साध्ययुक्त, चट्यान्, देर्माणु और ऐश्वर्यशात्री होती है ।

पुत्र और कन्या होने के लिये युग्म और अयुग्म दिनों में स्त्री-पुरुषके प्रसंगका कारण साधारण और स्वामयिक है । किन्तु युग्म दिनोंमें भी यदि पुरुष वीर्यवर्धक घृता दुग्धादि पदार्थ और बानीकरण औषधियाँ सेवन कर वीर्यकी वृद्धि काके अयुग्म दिनोंमें गर्भावान करे तो भी पुत्र उत्पन्न हो सकता है । इसी प्रकार स्त्री रजोवर्धक पदार्थोंके द्वारा रजकी वृद्धि



काके शुभ दिनोंमें सहवास करने तो भी बन्धा उत्पन्न होसकती है ।

गर्भाधानकी विधि ।

प्रसंगके समय दम्पती ताम्बूळ भक्षण करें और तन्मय होनावें । स्त्री टेढ़ी तिरछी होकर या करवट लेकर शयन करके प्रसंग न करे । टेढ़ी तिछे या कुनड़ेवनसे शयन काके प्रसंग करनेसे बाधु कुपित होकर स्त्रीके अंगोंमें पीड़ा उत्पन्न करता है । बैठे ही दाहनी करवटसे शयन कर सहवास करनेसे कफ स्तब्धित होकर गर्भाशयको दूकदेता है, इससे प्र.यः गर्भ नहीं रहता है । नाई करवटसे लेकर प्रसंग करनेके चित्त कुपित होकर रक्त और वीर्यको दूषित करता है इससे भी गर्भ नहीं रह सकता । इस लिए स्त्री सीधी उत्तान रूपसे शयन करके वीर्यको ग्रहण करे । सीधी होकर उत्तानरूपसे शयन करनेसे शरीरके रक्त बाधु पित और कफ इनके प्रकृत अवस्थामें अपने स्थानोंमें रहनेसे गर्भधारण करनेमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं होती ।

यहाँ प्रसंगवशसे यह कह देना अनुचित न होगा कि ऋतुकालके बीतने पर भी आयुर्वेदमें स्त्री प्रसंग करनेकी आज्ञा देली जाती है । शरीर चारी प्राणिप्रायको प्रसंगकी इच्छा स्वभावसे ही उत्पन्न हुआ करती है । रमस्वला होनेके बाद पन्द्रह या सोलह वर्षकी स्त्रीको बाला कहते हैं । सोलह वर्षके बाद बत्तीस वर्ष तक तरुणी और ३२ वर्षके बाद ५० वर्ष तककी स्त्रीको प्रौढ़ा कहते हैं । इसे आगे क्रमसे वृद्धावस्था आती है । रमस्वला होनेके पश्चात्

स्त्रियोंके सम्मोगेच्छा उत्पन्न होती है । बाला स्त्रीके साथ सम्मोग करनेसे प्रत्येक स्मृति और शारीरिक शक्तिकी वृद्धि होती है, किंतु उस समयमें उत्पन्न हुई सन्तान विशेष स्वस्थ और दीर्घायु नहीं होती । कारण सोलह वर्षकी अल्पता तक भी स्त्रियोंका शरीर पूर्णरूपसे पृष्ठ नहीं होता । तरुणी स्त्रीके साथ प्रसंग करनेसे प्रत्येक शक्ति कुछ ह्रास होती है । प्रौढ़ा स्त्रीके साथ प्रसंग करनेसे वृद्धता आती है । वृद्धा स्त्रीके साथ सहवास करनेसे बहुत जल्द मलना नाश होकर शरीर आर्षण हो जाता है ।

हेमन्त और शिशिर ऋतु में मनुष्यके स्वभाव से कुछ अधिक बलकी वृद्धि हुआ करती है । इन दोनों ऋतुओंमें शीतल वायु और हिमके स्पर्शसे शरीरकी भीतरी गरमी बाहर नहीं निकल सकती । इस लिये शरीरके भीतरी अग्नि (पाचकाग्नि) बढ़ जाती है । उस समय अधिक पौष्टिक भोजन करने पर भी बहुत सहन में ही पच जाता है और शुककी वृद्धि होती है । इस कारण हेमन्त और शिशिर ऋतुमें बलकारक पदार्थोंका भोजन और बाष्पीकरण औषधियोंको सेवन करके शक्तिके अनुसार प्रतिदिन भी प्रसंग किया जा सकता है । विशेषकर इस समयमें कफका रीचय होता है, इस लिये इन ऋतुओंमें प्रसंग करनेसे कफके न बढनेके कारण शरीर स्वस्थ रहता है ।

यसन्त और शरदऋतुमें तीन दिनके बाद, ग्रीष्म और वर्षा ऋतुमें पन्द्रह दिनके बाद प्रसंग किया जासकता है । किंतु अधिक गरमी

या वर्षा होने पर एक दिन स्नान स्नान देना चाहिये । ग्रहण ऋतुमें सूर्यकी वीक्षण घुसे शरीरका सार माग क्षय होता है, उस समय शीतल और स्निग्ध अन्न पानादिके द्वारा उस क्षयकी पूर्ति होने पर भी शरीरमें सार मागकी वृद्धि नहीं होती । इसी प्रकार वर्षा और पहली ग्रहण ऋतुमें सूर्यकी तेज गर्मीसे शरीर और उसकी परिपाक शक्ति दुर्बल हो जाती है । इस कारण पौष्टिक खाद्य पदार्थ खाने पर भी उनके उत्तम प्रकारसे जीर्ण न होनेसे घातु परिपुष्ट नहीं हो सकती । शुष्ककी वृद्धि न करके केवल उसको गट करनेसे अनेक प्रकारके दुष्प्राप्य रोग उत्पन्न हो जाते हैं । वीर्य ही पुरुषका प्रत्यर्थ चक्र और प्राण रूप है । उसको पुष्ट करनेसे शरीरमें सहजमें ही रोग प्रविष्ट नहीं होता । रुदाचित कोई रोग हो भी जाय तो वह सहजमें दूर हो जाता है । और अतृप्ति रीतिसे शुक्लक्षय करनेसे शरीर रोगों समूहका आगार बनजाता है और वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है । साधारणतः शरीरको पूर्णरूपसे स्वस्थ और पुष्ट रखकर मितने परिमाणमें वीर्य राप हो उतने ही परिमाणमें उसकी फिर पूर्ति होने के लिए उत्तम सायुक्त भोज्य पदार्थ और दानीकरण औषधियोंको सेवन करके अपनी शक्तिके अनुसार प्रसंग करनेसे शरीरकी विशेष हानि नहीं होती । जो हो, प्रत्येक व्यक्ति को यह ध्यान रखना चाहिए कि दूध, घी आदि पौष्टिक और वीर्यवर्द्धक पदार्थ एवं दानीकरण औषधियां (जिस औषधिको सेवन करनेसे शीघ्र ही वीर्य बढ़कर रतिशक्तिकी वृद्धि हो) सेवन न करके

अधिक स्त्री प्रसंग करनेसे शीघ्र ही राज्यक्षय, क्षय, शूल, खाँसी, वातव्याधि, शूल, उदर, पाण्डू, कामला, कृशता, नष्टवृत्ता आदि कष्टदायक रोगोंसे पीड़ित होना पड़ता है । जो मनुष्य नियमित रूपसे प्रसंग करता है, उसके शरीरकी लक्ष्म्यता स्थिरता और बल अक्षुण्ण रहता है ।

प्रातःनाश, सन्ध्याके समय, अर्द्धरात्रिमें और मध्याह्न कालमें एवं अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा अमावास्या और संक्रांति इन तिथियोंमें प्रसंग नहीं करना चाहिए ।

शुष्क और तृषाके अधिक होनेपर अपवा अत्यंत भोजन करके उसके जीर्ण न होनेपर, अन्य स्त्रीके ऊपर आसक्त होकर, अत्यंत आतुर होकर और रग्गावस्थामें स्त्री प्रसंग करना उचित नहीं है ।

रजस्वला, मैत्रे वस्त्र धारण करनेवाली, अग्निवा, वृद्धा, संन्यासिनी, रोगिणी विशेषकर योनिरोग से युक्त स्त्रीके साथ प्रसंग नहीं करना चाहिए । रजस्वलाके साथ प्रसंग करनेसे जो दोष होता है, वह पहले ही कहा आचुका है । मलिन, अग्नि और वृद्धावस्थावाली स्त्रीके पास गमन करनेसे अधिकतासे शुक्ल क्षय होता है और मनमें दुर्बलता उत्पन्न होती है । योनिरोगयुक्त और संन्यासिनीके साथ संगम करनेसे उपदेश आदि रोगोंसे ग्रसित होना पड़ता है ।

मल-मूत्रके पैग हो रोककर या स्त्रीके नीचे होकर प्रसंग करनेसे अपशय जब वीर्य पतित होनेको होता है उस समय बहुतपूर्वक उसके बगको रोकनेसे पयरी आदि रोग उत्पन्न होते

हैं । गर्भस्थिति होनेके बाद भी तीन महीने तक प्रसंग किया जा सकता है । क्योंकि तीन महीने तक गर्भके अङ्ग-प्रत्यङ्ग परिस्फुटित नहीं होते चौथे ज्ञान महीनेमें गर्भके अङ्ग प्रत्यङ्ग, हृदय पूर्ण और उत्पन्न होनाता है । इस कारण चौथे महीनेमें प्रसङ्ग करनेपर गर्भको पीड़ा होती है । किन्तु गर्भवती स्त्री यदि अत्यन्त प्रसङ्गकी इच्छावाली हो तो उसकी कामना पूर्ण करनेके लिए गर्भकी पूर्ण अवस्थामें भी प्रसंग किया जासकता है । गर्भस्थितिके समय स्त्रियोंकी जिस विषयकी प्रवृत्ति इच्छा उत्पन्न हो उसको पूर्ण न करनेसे उसके मनके कुपित होनेके कारण वायु दूषित होकर गर्भमें अनेक विकारोंको उत्पन्न करसकता है ।

स्त्री प्रसंग करनेके प्रथात् ज्ञान करना एवं हाथ, पैर, उदर आदि अंगोंको धोना और उत्तम शीतल वायुको सेवन करना चाहिए । मिश्री मिठा हुआ दूध, मधुर रसयुक्त अन्यान्य पौष्टिक पदार्थ, मधुर फल आदि मसण करके सुख दुर्बल शयन करना चाहिए । इससे उत्तम निद्रा आती है, पातु अव्यक्त प्रुष्ट होती है और शरीरकी ग्लानि दूर होकर बलकी वृद्धि होती है ।

(इस लेखमें कुछ बातें शास्त्र-सम्मत होने पर भी समयके विरुद्ध प्रतीत होती हैं । इसपर हम अपनी राय आगामी संख्यामें दिलेंगे। सम्पादक "वैद्य")

"वैद्य" दिसम्बर २१ में वैद्य शिक्षनाथ शर्मा द्वारा लिखित ।



नाम-दहीको संस्कृतमें दधि, पयस्य, मङ्गश्य, विरल, दधिद्रव्य, घनेतर, क्षीरज, क्षीरोद्भव, तक्र जन्म और साम्बक कहते हैं । हिन्दीमें दही, बङ्गालमें दह, मराठीमें दही, गुजरातीमें दधि, फारसीमें दोग और आरबीमें जुगात कहते हैं ।

गुण-दही पचने में खटा, गरम, अग्निशील, स्निग्ध, कुछ कपैला, मारी, पट्टरोवक, रक्तपित्त कारक, कफकारक, मेदजनक और शोष पैदा करनेवाला है । यह बोंत विहाको दूर करता है, पेशाबको बढ़ाता, यस्मक अग्निही शान्त करनेवाला, खांसी, श्वास, पीनस, विषमन्त्र और जड़ैया बुखारको दूर करता है । यह शुक्ल कर्षक भी है । हृदयको हितकारी है ।

भेद-दही पांच प्रकारका है, मन्द, मधुर, मधुर, खटा, खटा, और अत्यन्त खटा । जो दही कुछ जमकर गाढ़ा पड़ गया हो और जिसमें पिठास या खटपन कुछ स्वाद मालुप न पड़ता हो उसे मन्द कहते हैं । यह मल मुत्रको बढ़ाता, त्रिदोष और दाहको उत्पन्न करता है । जो दही जमकर गाढ़ा पड़ गया हो और जिसमें स्वादुरस मल्ट हो किन्तु खटाईका अंश जान न पड़े उसे मल्ट दही कहते हैं । यह अमिष्यन्दी, वीर्य-वर्धक, भेदजनक, कफकारी, वातनाशक, पचनेमें मधुर और रक्तपित्तको कुपित करता है । जो दही कुछ मीठा और कुछ खटा तथा गाढ़ा तथा



बपेला हो उसे स्वादम्ल दही कहते हैं । इसमें दहीके साधारण गुण होते हैं । असखी दही इसे ही समझना चाहिये । जिस दहीमें मधुरता नष्ट होकर खट्टा पन आगया हो उसे अम्ल दही कहते हैं ।

यह अग्नि को प्रदीप्त करनेवाला, रक्तपित्त और कफको बढ़ानेवाला है । जो दही आर्यत खट्टा हो और दांतोंको खट्टा करदे जिसके मुखमें रखनेसे रोमांच हो और जिसके खानेसे गलेमें जलन हो उसे अत्यम्ल दधि कहते हैं । यह गुणमें अग्निदीप्तक, खूनको बिगाड़ने वाला, वात और पित्तको उत्पन्न करनेवाला है । खानेके काममें मधुर दही लेना चाहिये, अत्यंत खट्टा दही नहीं खाना चाहिये ।

ऋतुके अनुसार दहीके गुण—बरसातका दही पित्तकारक, वात नाशक, कफको कुपित करनेवाला तथा गुह्य, बवासीर, कुष्ठ और रक्तपित्तमें हितकारी है । शरदऋतुका दही भारी, खट्टा रक्तपित्तको बढ़ानेवाला, सुन्न, तृषा और ज्वरपीडितोंमें विषम पत्रकी उत्पत्ति करनेवाला है । हेमन्तऋतुमें दही भारी, स्निग्ध, मधुर, कफकारक, पल्वर्धक, वीर्यजनक, मेवाकारक, पुष्टिदायक और तुष्टिर्धक है । शिशिरऋतुका दही वीर्यवर्धक, वट्टकारक, पित्तजनक, मकीको नाश करनेवाला, गाढ़ा, खट्टा, बिच्छिन्न और भारी है । वसन्तऋतुका दही, वादी, मधुर, स्निग्ध किंचित खट्टा, कफारी वट्टकारक, वीर्यवर्धक होता है । साधारणतः वसन्तऋतुमें दही खाना अच्छा नहीं है । ग्रीष्म ऋतुमें दही हटका, खट्टा, गरम, रक्तपित्तकारक शीघ्र भ्रम और प्यासको

करनेवाला होता है । शरद, ग्रीष्म और वसन्त ऋतुमें भी दही खाना श्रेष्ठ नहीं ।

अवस्था भेदसे दहीके गुण—भौटायें हुए दुधका दही रुचिकारक, स्निग्ध, गुणोंमें श्रेष्ठ पित्तनाशक, सम्पूर्ण ऋतुअग्नि और मूत्रको बढ़ाता है । जि-दुधकी मछाई निकालकर दही बनाया गया हो वह निस्तार दधि कहलाता है । ऐसा दही मूत्र रोषक, शीतल, वात कारक, हृत्कारक, विष्टम्भी, दीपन, रुचिकारक और संप्रद्वीमें हितकारक है । छाना हुआ और पानी निकाला हुआ दही (गालितदधि) स्निग्ध, वातनाशक, कफकारी, भारी, मूत्रकारक, पुष्टिदायक, रुचिकारक, मधुर, और पित्तको अधिक बढ़ाता है । चीनी मिला हुआ दही पित्त, दाह, तृषा और रुधिर विकारको दूर करता है । गुड़ मिला दही तृप्तिकारक, वातवर्धक, मरी और वातनाशक है । रातमें दही नहीं खाना चाहिये । यदि खाना ही हो तो घी, चीनी मिलाकर खावे । भुंगकी दाह, और आमलेकी वस्तुओंके साथ दही खाना चाहिये । गरम किया हुआ दही खाना निषेध है । बिना नियमके दही खानेसे ज्वर, रक्तपित्त, विसर्प, कुष्ठ, पांडु भ्रम और कामलादि रोग होते हैं । हेमन्त ऋतुमें दहीमें सोंठ, मिर्च, पीपल और सेवानमर तथा राई मिलाकर खानेसे कफ दोष नष्ट हो जाता है । वायु शांत होता है, अग्नि प्रदीप्त होता है, मध्य है, और प्रुष्टि देता है और शरीरकी कांति बढ़ाता है ।

सर और मत्त—दहीके छपरही मछाईको सर कहते हैं । और दहीसे निकले हुए पत्रके पानी

को मस्तु या दहीका तोड़ कहते हैं । दहीकी मट्ठाई स्वादिष्ट, मारी, वीर्यवर्धक, वातनाशक, जठराग्निको मन्द करनेवाली, खट्टी, वस्त्र रोगनाशक, पित्त और कफको बढ़ानेवाली है । दहीका तोड़ कृमिनाशक, बलकारक, रुचिदायक, स्त्रोतस्रोतों का शोधन करनेवाला, आनन्दजनक, कफनाशक, तृपानिवारक, मूत्रनाशक, तृप्ति करनेवाला अवृण्य (शरीरको पतला करनेवाला और मरके हस्तारका भेदन करनेवाला) होता है ।

दधिकूर्चिका—आधा दूध और आधा पानी मिलाकर उसमें खटा दही मिलादेवे उसे दधिकूर्चिका कहते हैं । दधिकूर्चिका वातनाशक, खट्टी, मद्यरोधक और देशसे हनन होनेवाली है । आयुर्वेद शास्त्री पं० शंकर दानीके पुराने कागज पत्रोंमेंसे न.चे छिपी दधि क्रिया मिली है ।

दधि क्रिया कौतुक ।

अमीर लोगोंके योग्य दही बनानेकी ऐसी छद्म क्रिया कहता हूँ जो कौतुकलार्थक है । यह दही नेत्रोंकेलिये हितकारी और आयुर्वर्धक है । यह दही कटियुगमें अमृतके समान है । आपद्रव्य अर्थात् सादे बारह सेर नैसर्ग दूध लेकर काड़ेमें छानकर तबे मिट्टीके बर्तनमें ढल आगपर गरम करे । फिर उसमें लौंग, नायग्री, दाडनीनी, इलायची आधा तोला, सोंठ, मिर्च, पीपर आधा तोला और केशर तीन मद्यो लेकर एक कपड़ेमें सक्की बांध पोतली बनावे और वह पोतली दूरमें डाल देवे । पोतली पड़ा हुआ दूध मन्दा-शिर पकावे । दूधका चपचेमें बराबर चञ्चला रहे । जब दूध इतना गाढ़ हो जाय कि चपचेमें छपने लगे तब उसमेंसे पोतली निकाल लेवे ।

फिर उस दूधको एक दूसरे बर्तनमें रखे और सुन्दोष्य होने पर उसमें थोड़ा मट्ठा मिलादेवे । बर्तनके चारों तरफ रात बिछा दे और दूधके बर्तनको ढांककर रखे । बर्तनको ऐसी सावधानीसे रखे कि बिछी चूहे आदिके उपद्रवसे उसकी रक्षा हो । यह दही बहुत बढ़िया गाढ़ा सुन्दर जमता है । कोई कहता है कि अमृत खियोंके अवतारमें रहता है और कोई कहता कि वह स्वर्गमें है, किंतु उसे किसीने साक्षात् देखा नहीं है; परंतु यह दही प्रत्यक्ष अमृतसे उत्पन्न क्षीर समुद्रके सारांशसे निर्मित हुआ है । यह मनुष्योंके लिये दुर्लभ और इन्द्र ऐसे देवता भी इसकी प्रशंसा प्रशस्त करते हैं । इस दहीको चीनी मिलाकर पुष्टियोंके साथ खावे । यह दही वृद्ध, मधुर, आरुहादकारक, पुष्टिकर्ता, कामोत्तेजक, कांतिक दयक और विदोष नाशक है । यह रानाओंके लिये भी सदावर्ण्य और अतिवर्धक है ।

“ वैकुण्ठेश्वर समाचार ”

सुलभ जैन ग्रन्थमालाके

दो नये ग्रन्थ ।

धर्म-परिक्षा-श्री अमितगति आचार्य कृत मनोवेग पानवेगकी अपूर्व मोक्षदायक कथाका हिन्दी अनुवाद । पृ० १५० और मू० सिर्फ ॥-)

तीर्थयात्रा दर्शक—इसमें अपनी सभी यात्राओंका परिणय है । पृ० २७१ और मूल्य सिर्फ ॥) वैनेजर, दि० जैन पुस्तकालय-सुरत

मंदिरोंमें वर्तने योग्य शुद्ध स्वदेशी

काशमिरी केशर ।

मू० २१) फी तोला

वैनेजर, दि० जैन पुस्तकालय-सुरत ।



(१) बालकके मुखके पास किसीको भी खांसने या छींकने नहीं देना चाहिए, अथवा बालकके मुखसे मुख मिलाकर उसका चुंबन नहीं करना चाहिए ।

(२) बालकके मुखमें नकली स्तन वृत्त (बड़े के बने हुए स्तनाकार जो बानारमें विहते हैं) उसको भुजानेके लिये कभी नहीं देना चाहिए । इससे बालककी शारीरिक शक्ति और वृद्धि कम होनाती है । और उसके शारीरिक गठनमें भी असम्यक् होनेकी संभावना होती है ।

(३) बालकको क्या दिन और क्या रात्रिमें नियमित रूपसे दूध पान कराना चाहिये और प्रति-दिन नियमित रूपसे उसे स्नान कराना चाहिए ।

(४) जहां तक हो सके बालकको खुले स्थानमें रखना चाहिए । बंद या गन्दे स्थानमें कभी नहीं रखना चाहिए । खुली हवासे बालकके शरीरकी उन्नति होती है । तब शीतकालमें अत्यंत शीतल और खुली हुई हवासे विशेषरूपसे बालककी रक्षा करनी चाहिए ।

(५) बालकके लिये मधुर फलोंका सेवन कराना अत्यंत लाभदायक है । केवल दूधको छोड़कर फलोंकी समान बालकके लिये संसारमें कोई भी चीज हितकारी नहीं है । फलोंके सेवनसे बालकका पेट साफ रहता है, और हजिर भी शुद्ध होता रहता है ।

(६) बालकको कभी भी पय पान कर

सुलाना नहीं चाहिये । इससे बालकको उत्तम नींद नहीं आती । बालकको जो नींद अपने आप आती है वही उसके शरीर और मनके लिये उपकारी है ।

(७) बालकका मस्तिष्क प्रायः चार वर्षमें पूर्णताको प्राप्त होता है ।

(८) बालकके पीनेका दूध कभी खुबे हुए पात्रमें नहीं रखना चाहिये क्योंकि इससे बालकके पेटमें पीड़ा होजानेकी संभावना होसकती है ।

(९) बालकके सिरपर जटा जूटकी तरह बड़े बड़े बाल नहीं रखने चाहिये क्योंकि इससे बालककी वृद्धि और जीवनी शक्तिका ह्रास होता है ।

(१०) बालकको थोड़े २ मधुर पदार्थ भी खानेको देने चाहिए इससे बालकके शारीरिक वृद्धि और पुष्टि सहजमें होती है ।

(११) बालकको कभी कोई नशीली चीज नहीं देनी चाहिए । " वैद्य "

दूसरी चार तैयार हो गया !

मोक्षमार्गकी सच्ची कहानिया-

नामक अतीव उपयोगी ग्रन्थ जो विचारविमोक्तों को अतीव उपयोगी है और स्वास्थ्य करने योग्य है उसकी दूसरी आवृत्ति छपकर तैयार होगी है । इसके ८८ पृष्ठोंमें पं० बुद्धिबाल धारक वृत्त चार्मिक २३ कहानियोंका नये ढंगसे संग्रह है । मूल्य तिके ॥३॥ अर्धय मंगा लो ।

मैनेजर, दिगम्बर जैन पुस्तकालय,

चंदावाही-सुरत ।

❀ दिगंबर जैन ❀

THE DIGAMBAR JAIN

नाना कलाभिविविधश्च तल्लैः सत्योपदेशैस्सुगोपेष्णभिः ।

संशोध्यत्पत्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दिगम्बरं जैन-समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १९ वीं. ॥ वीर संवत् २४४८. आपाढ़ विक्रम सं० १९७८. ॥ अंक २वां

क्या करूँ ?

दो दिनकी जिन्दगीमें बताओ तो क्या करूँ ?
दुनियाके गहन वनमें बताओ तो किस तरह बढ़ूँ ?
मोहमान मानसे पळे जहाँ पेड़ खड़े हैं घने ।
सिंहसे भी बढ़के जहाँ विचरें मनुज अनजाने ॥
पग पगपर जहाँ कांटोंके भरे दुःख हैं खड़े ।
विषदाके मदाद सिरपे अढ़े सन कुछ डोलना पड़े ॥
तब निज उद्देश पाछनमें बताओ तो क्या करूँ ?

दो दिनकी जिन्दगीमें

बताओ तो क्या करूँ ?

विद्युत वेगसे भी तेज बहे सोता इस कायका ।
बहते जीवकी नहिं हो पाता बोध भित्तकी चाउका ।
बताओ तो फिर किस किससे व्यवहार करूँ प्रेमका ।
अपवा कैसे कैसे विषवेक चढ़ाऊँ द्वेषका ।
उत्तम ध्येय पानेको सबसे समतामाव धरूँ ।

दो दिनकी जिन्दगीमें

बताओ तो क्या करूँ ।

इस नवीन युगमें विशुद्ध कर्मका उपयोग करूँ ।
उसके कर्तव्य मर्मको समझ शुभ योग धरूँ ।
कर्म कुठार हाथ ले कर्मक्षेत्रमें आगे बढ़ूँ ।
सरस जीवनमें शुभ प्रेमका संचार करूँ ।
वीर का मोक्ष पाऊँ कर्मका महार करूँ ।

दो दिनकी जिन्दगीमें

—वीर—

सत्यका प्रचार करूँ ।

प्रियवर, कर लेहु आत्म विचार ।

सुननता तनि दुर्भनता गहि ।
कैसे यह हुए गए अविचार ॥
गयहु विवेक पाखंड रहहु ।
लई कुरमैठ वृत्ति धार ॥ १ ॥
संपम शुभ मुहुता छांटी ।
रठ धर्मसे करत रे प्यार ॥

नित नए राग करत ।

पावत नहिं द्वेष कायसे पार ॥ २ ॥

गिन शुचिताको अभिमान नहिं ।

कटु स्वार्थ मय व्यवहार ॥ ३ ॥

पतित मए कितने रे अनारी ।

अनहुं चेति मई न अवार ॥ ४ ॥

मय मन्धनके मन्धन तो रहु ।

खल हु स्वगुण गरिमागार ॥ ५ ॥

प्रबल उत्साह वेगु संचारहु ।

उड़ावहु कर्म दुनिया ॥ ६ ॥

घाहुसील संपम मय उपकार ।

काहु निज निज मोह उदार ॥ ७ ॥

बनहु वीर सुखद प्रेममय ।

काहु अहिंसा नेह प्रचार ॥ ८ ॥

—वीर—

—वीर—



व्यावरके सेठ मोतीलालजी काठलीवाठ गत ज्येष्ठ सुदी ५ को व्या-
मोतीलालजीका घरमें बेदी प्रतिष्ठा तथा
लुक्ता हुआ । भारत. खंडेडवाठ दि० जैन

महासभाका दूसरा अधि-
वेशन अपने स्वर्धसे करानेवाले थे और आमंत्र-
णादि सब तैयारियां हो चुकी थीं परंतु देववशात्
वे सब तैयारियां जहांकी तहां रहीं और ८ दिन
पहिले सेठ मोतीलालजी स्वर्धसे व्यावर गाते २
सौदा स्टेशन पर पेशाबके छिपे टूफरी पटरी पर
उतरे तब पैर फिसल गया और उनी पटरी पर
इकट्ठा पड़ गये और आसके शरीरके
दुमड़े २ चिन्नीके वेगसे होते ही आसके प्राण
पल्ले उड़ गये जिसके समाचार खंडेडवाठ समान
व सारी समाचारों मालूम होते ही सारे सभाजमें
हल्ला मड़ा मरी रंज (शोक) फैल गया था, कि,
उसका हम क्या वर्णन करें और इसीछिये तुर्न
ही होनेवाली बेदी प्रतिष्ठा व खंडेडवाठ पहा-
सभा घर रतो गई और वह प्रतिष्ठा थक होगी
या नहीं उम्मा भी पता नहीं है, परंतु गत
माहमें हल पम्पई गये थे तो जो सनाचार सेठ
मोतीलालजीके स्वर्धमें होने सुने उसकी हमें
तो हृदयमें भी आशा न थी । हमको तब
मिजी ही सेठ मोतीलालजी (निवृत्ती आशु
करीव २५ वर्षकी होगी) का लुक्ता स्वर्धमें

गत मासमें तीन दिन तक हुआ जिसमें एक
दिन ब्राह्मण भोजन, दूसरे दिन सारे सराफका
जीवन और तीसरे दिन कुछ दि० जैनियोंका
जीवन हुआ था उसमें हजारों रुपये खर्च हुए थे
और बड़े बूढ़े श्रीमान् पंडित आदि सभीने
उसमें भाग लिया था । ऐसे लुक्तेको अतीव
अनुचित समझनेवाले इसमें नहीं गये थे ।

जीवनमें तरह २ के ऐसे पैकवान बनाये गये
थे कि इसको मृत्युका जीवन कौन कह सकते
हैं : अंगान-आदमी तो इसको शादीका ही
कहे ऐसा ही जीवनका दृश्य था ।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि तुर्नके
मरे ऐसे सुवान मनुष्यका लुक्ता होना क्या
आवश्यक था ? भारत दि० जैन खंडेडवाठ
महासभाके महापंडी, स० महापंडी, उनके पत्र
' १९० जैन हितेच्छु ' के समादक आदि तथा
और अगुए क्या ऐसे लुक्तेसे सहमत हैं ? जब
तबने इसमें योग दिया और इसका छेस मात्र
भी विरोध आने पत्रमें नहीं किया गया है
यहां तककि ऐसे समाचार भी प्रकट नहीं किये
हैं तब वे तो इसमें सहमत ही होंगे । खंडेडवाठ
जैन हितेच्छु जब खंडेडवाठ जातिमें ऐतथ व
आवश्यक सुचार करनेके छिये निकाला गया है
परन्तु हम तो यहां तक देखते हैं तो इस पत्रका
रंगत ही ऐसा पाल्प पटता है कि ऐतथ व
सुचारके बड़े क्षम ही विशेष बढ़ता जाता है
और पाल्पयिक सुचारके तरफ इसका दृश्य नहीं
है । यदि ऐसा न होता तो अश्य ऐसे लुक्तेका
विरोध यह पत्र करता व उनके कार्यकर्ता इसमें
साक्षि नहीं होते । पट्टिने दिनमात्रगों को मोल



खिलाया गया वह मोतीछालनीकी आत्माको सुख पहुँचानेके लिये ही किया होगा या और कोई कारणसे किया होगा वह तो करनेवाले जाने परंतु यह तो निश्चित बात है कि ब्रह्म-जनोंको मोहन दिखाकर घृत आत्माको शांति मिलनेके विचारका घोर मिथ्यात्व खंडेष्टवाल दि. जैन सम्प्रानमें मौजूद होते हुए भी ऐसे रिवानका विरोध न करना ही उसमें अपनी सम्प्रति पताना है ।

कहाँ तो एक मुक्तकी हृदयविदारक अकस्मात् मृत्यु और कहाँ उसका तुरंत ही मुक्तता होना और उसमें शादी जैसे मिष्टान उडना और उसमें जाति हितेच्छुकी हींग मारनेवालोंका मौनसे सामिल होना ! ! उनका वर्तव्य था कि वे सेंट मोतीछालनीके संबंधियोंको उचित संलाह देकर ऐसे मुक्तके न काने देते और जो हजारों रुपये खर्च किये गये उतने ही या इससे विशेष रुपये कोई स्थायी धार्मिक या सामाजिक कार्यमें लगावते ।

हम तो ऐसे मुक्तका पूर्ण विरोध करते हैं और 'सिं० जैन हितेच्छु' के संवाचकोंको संलाह देते हैं कि जातिमें जो ऐसी २ कई मिथ्यात्वी अनावश्यक रीतिरिवाज चले रही हैं उनके बंद करनेका प्रयास ही 'हितेच्छु' द्वारा काले जातिके लक्ष्ये हितेच्छु बनिये । नहीं तो सुबा तो क्या परंतु अनेक कुंवारे और सहे आपकी जातिमें इसीके जरियेसे खड़े हो जायेंगे ।

* * *

गर्तकोंके डाइटेड पृष्ठके समाचारसे पाठकोंको मालूम हुआ होगा कि

१९२१ की जनवरी जैनियोंकी संख्या अनुपम गणनर । १९११ में १२४८१८२ थी तब १९२१ में हम

११७८९९६ रह गये हैं । अर्थात् १० वर्षमें हम ६९९८६ कम हो गये हैं । इसका कारण यदि हम नहीं देखेंगे तो हम देखते १७९ वर्षोंमें समाप्त हो जायेंगे जैसे कि बौद्ध वर्षकी यहां संख्या नहीं रही है । किंतु ही मनुष्योंका वर्षसे विमुक्त होना भी इसमें कारण है । जन इसाई

३८॥ लाखके ४७॥ लाख अर्थात् ८७७८७६ बडे और हम घटे उसका कारण उनमें धर्म प्रचारकी प्रचल भावना है और ऐसे करोड़ों रुपयेके कंड हैं जिनसे कि वे अपनी संख्या बढ़ाते चले जाते हैं । बाळ लान, कन्याविक्रय, वृद्धविवाह, अनमेल विवाह, तथा कुंवारे रह जाना ये चार कारण भी हमारी संख्याके ह्रासके प्राप्त कारणभूत हैं । हम दि. जैनियोंमें परस्पर रोटी तो जीमते हैं परंतु कन्या व्यवहार नहीं हैं इससे इस जाति केवसे भी कई जातियोंमें

कुंवारोंकी संमार रहती है और उनका जीवन वेसे ही पूर्ण होजाता है । एक जातित्री कन्या दूसरी जातिमें देना धर्मविरुद्ध नहीं है इसलिये हम तो कहते हैं कि पास ९६ स्थानोंमें परस्पर कन्या व्यवहार होनेकी आवश्यकता है तथा अनुचित विवाह बंद होनेका पूर्ण प्रयत्न होना चाहिये । कई भाई कहते हैं कि विवाह विवाह न होना ही हमारी यटीका कारण है परंतु यह ठीक नहीं है । बाळ लान, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह बंद होनेसे विधवाओंकी संख्या अतीव घटसकती है । और हमारी जिन दो एका



जातिमें विषया विवाह (घरेजा) होता है उनकी भी संख्या बड़ी नहीं है इसलिये विषया विवाह जैसी धर्मनिघ्न व धर्मविह्वल रीतिको चाल करने की कोशिश न करके जातिमेंसे अनुचित विवाह ही बंद करनेकी पूर्ण कोशिश होनी चाहिये और इस लिये हाएक जाति यदि मिश्रकर इसकी छमछी कार्रवाई न करें तो सबसे सुलभ मार्ग यह है कि अपने खुद तो ऐसे छानोंमें सामिल न होवे । अनेक माई सामिल न होनेसे सबको इसकी घृणा हो जायगी और तब ऐसे छान स्वयं मन्द हो जायेंगे ।

* * *

वर्म्भइमें सेठ सुखानंदनीकी धर्मशाळामें ऐलक पनालादनी सरस्वती मन्सरस्वती भवनमें नका कार्य चालू होगया । पाचनालय । है और उसमें हमारे जैन पथोंके मंगानेकी सूचनाएं हो रही हैं परंतु वे जैन पत्र सिर्फ संग्रह करनेके लिये मंगायें आते हैं या उसका निरय कुछ उपयोग होनेवाला है । जहां तक हम जानते हैं इसमें पाचनालयका कोई प्रबंध नहीं है और हमारे खयालसे इसमें ऐसे पाचनालयकी आवश्यकता है कि जिसमें कोई भी माई बैठकर ग्रंथ पांच सके तथा जैन अक्षपारोंको भी पढ़ सके । जब सब धर्मके ग्रन्थ मंगायें जाकर संग्रह होंगे तो उसके साथ १ एक ऐसा पाचनालय भी होनेकी आवश्यकता है जिसमें सभी धर्मके स्नात २ पद भी मंगायें जायें और सबको इसका निरीक्षण करनेका मौका भी दिया जाय ।

मन्बनके नियमादि अभी तक प्राप्त नहीं हुए हैं

वे शीघ्रही प्रकट होनेकी आवश्यकता है । वंच-ईमें दि० जैनियोंका एक भी वाचनालय नहीं है इस लिये यदि सेठ सुखानंदनी धर्मशाळाके नीचेके भागमें एक सार्वजनिक वाचनालय खोल दें तो दि० जैन समाजको बहुत लाभ होगा और अन्य लोग भी इसका लाभ ले सकेंगे ।

* * *

आपका दि० जैन भाष्योभांलडनगर, दुआध,

अमदावाद, छन्दौर, डानपुर,

सुरतभां देशी जैन आदि अनेक स्थ-
आपधासय. जोअे भरत देशी आपधासयो

आते छे ने ते सर्वेभां देशी

आपधोअ वपराय छे तारे अमारा अने० जैन

आपधोभां डेहलेक शुभ स्थणे छे भरत आपधा-

सयो आते छे तेभां डेहलेकां विलायती अशुद्ध

अने धर्भने अष्ट डरनार दवाय वपराती अमारी

जलुभां छे अने अे भाटे अमेने वारवार अभय

यवुं के अडिंसा धर्भने दावे डरनार आ भां-

धयो लगभग दार भांस मिश्रित आ अष्ट दवा-

ओलुं दान केम करता दरी ? पशु जलुवती

आनंद थाप छे के सुरतना ओक सणी श्रीमंत

अनेरी शेड लुगामाध नवसयदे सुरतभां ओक

भरत, देशी आपधासयन्ती स्थापना आपाड

शुद्ध जने दिनथी करी छे अ आपधासय जोसवा

दवाया अरेयो मेधावरी अनेना असदकारी नेदा

डो० बीधाना दाये दयो दतो, जेभां अमेअे पशु

भाग लीयो दतो. प्रभुअ विलायती दवा आपनार

डेहतर दोवा छतां तेमजे आर्थ चिह्नित आने

देशी दवाती धणी प्रसंसा करी दती तेमअ अने

डेहलेक विवेचन करी जलुअयुं दतुं के

अरीय तवंगर सर्वेअे आ आपधासयनो लाग

सेवा लेधअे तवंगर अभांती धर्भादा पेरीभां

मरद पशु आपी शकरो. आ असदकारीना जभा-

नाभां दणुअयुं शुं विलायती दवा अने दवाभा-

नाओतो लाग करवाती अरर नथी ? विलायती

दवाभां दायो तो शुं अरीडा इपीना अरेय मस-

आप ज्ञाय छे ते धर्म अष्ट थाय छे तथा देशनी
उतमोत्तम आर्ष सिद्धि सा पापमोक्ष यथ गथ छे
अ तद्वै शुं ध्यान आप्रवांनी नरर नथी !
हवे तो दरेके विद्यापती हवा प्राण जती पथु न
देवादी दृढ संकल्प करवे जेधजे अमने तो ज्योती
प्रतिष्ठा डेटवाई परोधी छे अत जेध मुनय सर्वे
अ संकल्प करवे जेधजे तो जे देशी आप्रधा-
ह्योनी कन्ति यथ ब्रह्मम गीस दार गिथित
धन ने धर्म अष्ट करवारी विद्यापती हवायुं हिंदु-
स्तानभाथी निरुद्धन यशे..



परीक्षा होगी—दि० जैन मालवा प्रांतिक
सभाकी ओरसे मादौवदी ८ ता० १६ अगस्तसे
परीक्षा प्रारम्भ होगी । परीक्षा देनेवाले आगण
वदी अमावस तक प्रवेश फार्म भेन देंवें । फार्म
यहांसे मंगा छेवें ।

मंत्री, परीक्षालय —नवरीबाग इन्दौर ।

२००० वर्षकी प्रतिमा मिली—कैन
(निजाम स्टेट) में एक सुसलमान मकान बनानेके
लिये नीच खोद रहा था कि अचानक श्री
आदिनाथजीकी एक विशाल प्रतिमा जमीनमेंसे
निकल पड़ी निसर विक्रम सं० फक्त १९ है
व अद्वै पद्मासन ऊंचाई तीन फुट, सिरपर सुंदर
तीन छत्रोंका आकार व मण्डक भी है । दोनों
तरफ पार्श्वनाथजीकी १ छोटी १ प्रतिमाएँ हैं
और नीचे दो साधारण प्रतिमाएँ हैं । वृषमका
चिन्ह है तथा छातीमें श्रीवास लक्षण छुरा मुआ
है । प्रतिमा अति मनोज्ञ है ।

इस गांवमें जैनियोंके ९-६ घर हैं उन्होंने
यह प्रतिमा 'मांगी' परन्तु हिंदु सुसलमान मार-
नेको तैयार हुए और प्रतिमाको फोड़नेको भी
तैयार थे इतनेमें राज कर्मचारी शंकरराव व
बाबासाहब ब्राह्मण आये उन्होंने कहा कि मेरे
जीतेजी तो हम इस प्रतिमाको फोड़ने नहीं
देगे । हां, यदि आप कुछ मूल्य लेना चाहते
हो तो दिखा दूं । फिर सुसलमानने ९००)
मांगे और अंतमें बातचीत होते२ १००)
देकर भांड बाबाजी देवधरे सेठवाळ जैनने प्रतिमा
को और अपाट वदी ९ ता० १६-१-२२को
गाढीमें बिाजमान करके कुंथलंगिरि पर लाये
और वदी ८ ता० १७ को म० पार्श्वसागरजी
सेठ रायजी सखाराम, ब० आश्रमके छात्राण व
पंच लोग बड़े समारोहसे प्रतिमाजीको पहाड़पर
ले गये और देशभूषण कुलभूषण महारानके
मंदिरमें विाजमान करके १०८ जलते मरे
कण्ठोंसे अभिषेक किया । हरएकको कुंथल-
गिरीकी यात्राको भाकर इस प्रतिमाका दर्शन
करना चाहिये ।

नांदगांवमें रथयात्रा—नांदगांवमें अपाट
सुदी ९को खेडेलवाल पंचपहासमा, सुदी १०को
श्री ऐलक पन्नालालजीका केशलौच व सुदी ११
को लौटती रथयात्रा होगी । रथाजीकीका आठ-
मास यी यहाँ नांदगांवमें ही होगा ।

नेमागिरी पहाड (मिठुर) के मंदिरोंका
जीर्णोद्धार होना अत्यावश्यक है । इसके लिये
म० महावीरमसादनी अनी बम्बई गये थे तो
(५१) सेठ हीराचंद गुमानजी (२१) सेठ चुनी-
टाल हेमचंद तथा और भी सहायता मिली तथा

नितुरमें श्री० सुंदरबाईने (१५००) देकर अपने पिताके स्मरणार्थ एक बावडो बनवा दी है। यहां विशेष सहायताकी आवश्यकता है।

कम्पिल क्षेत्र—में अतीव अप्रबंध है। श्री जीकी पूजन प्रशाल तक नहीं होती ऐसा मालूम हुआ है इसलिये तीर्थक्षेत्र कमेटीको जांच करके इसका प्रबन्ध करवाना चाहिये।

उदासीनाश्रम—इन्दौरसे बई उदासीन उपदेशार्थ घुमते हैं। वे कोई भी खर्चा नहीं मांगते। दूसरे कई २ आश्रमके नामसे घुमकर पैसे मांगते हैं उनके घोकेसे समान सचेत रहे।

अभी दो चार उदासीन उपदेश करनेवालेक और तैयार हुए हैं पान्थ उनके पर्यटनके खर्चकी गुनायश नहीं होमेसे आश्रममें एक उपदेशक विभाग खोला है। जो कोई इसमें सहायता भेजेंगे उससे उदासीनोंके पर्यटनमें खर्च होगा। पन्नाछाड़ गोधा, उदासीनाश्रम तुकोगंम-इन्दौर।

चम्पईमें सरस्वती भवन—गत श्रुतपंचमीको चम्पईमें सेठ सुखानंदजीकी धर्मशालामें ऐलक पन्नाछाड़जीके हस्तसे ऐलक पन्नाछाड़ सास्वती भवन खुल गया। शालापाठनमें इसके लिये त्वागीनीने २०० हस्तलिखित ग्रन्थ इकट्ठे किये हैं व ७००००) का चंदा भी दिया है जिनमें ५८०००) ग्राम पर जमा है। ६२०००) लेना बाकी है और ७०००) मकानमें लगा है। ग्रन्थसूची भी छा गई है। अभी २९० ग्रन्थ बहासे चम्पई लये गये हैं। इस भवनमें सभी संप्रदायके ग्रंथका संग्रह होनेवाला है तथा ग्राम २ पंडित भी शास्त्रशास्त्रके लिये पुर्मेगा। १००) मासिककी सहायता

तो सेठ सुखानंदजीने दी है व सौ २ ह० सेठ शुक्लीलाछ हेमचंदजीकी वहु और पुत्रीने दिये हैं। व्ययस्थाके लिये ३३ महाशयोंकी कमेटी बनी है जिसके सभापति व कोषाध्यक्ष सेठ सुखानंदजी व मंत्री ठाकरसीदास जैन नियत हुए हैं। दफ्तरका कार्य व० पन्नाछाड़जी सीनी करते हैं।

ऋ० ब्रह्मचर्याश्रम—(जयपुर)को श्रुतपंचमी पर ऋ० ज्ञानानंदजीके प्रयाससे चम्पईमें १०२२) की सहायता मिली थी।

मृत्यु और दान—मोदी राकतुलाछ सुनवाए (महरोनी)ने अपनी धर्मपत्नीके मृत्यु समय १००८९)का दान किया है जिसमें ४०००) बड़े बाबा, कुंडलपुर। २०००) पपौरा क्षेत्र २३००) पपौरा पाठशाला तथा तीर्थी गरीबों व मंदिरोंको दिया है। इसमें अपनी संस्थाओंको कुछ भी दान नहीं दिया गया है। ऐसे मौकेपर अपनी संस्थाओं को तो कुछभी ज्ञान दान अवश्य देना चाहिये।

जैनचिद्री—में अब इतनाम अच्छा है। पृथ्वा प्रतिदिन होती है। दोनों पहाड़पर पुनारी हरवस्त रहता है। जीर्णोद्धारका काम चालू है। म० चारकीर्निकी जीर्णोद्धारके लिये कोशिश प्रयत्नशील है। इसमें सहायताकी आवश्यकता है।

अयोध्याजी—तीर्थकी व्यवस्था ठीक हुई है। तीर्थक्षेत्र कमेटीकी ओरसे गुरुचंद पत्तार मुनीम भेजे गये हैं। तथा तीन माहकी सामग्री पूमाने लिये ७०) छा० देवीसहायजी फिरोजपुरने भेज दिये हैं।

हुमच पद्मावती-नामका प्राचीन तीर्थ मेसुर प्रांतमें खूबी प्रसिद्ध है। पद्मावतीकी यहां खास मान्यता है। जिनदत्त सेठकी यह राजधानी है। यहां बड़े २ मंदिर व बड़े २ प्रतिमित्र है। चांदी, सुवर्ण, मोती, माणक, रत्न, गरुडमणी, मुंगा, लीलम आदिकी प्रतिमाएं हैं। पहाड़पर प्राचीन मंदिर व मोमटहामीकी मूर्ति ५ गज सड़गासन हैं। आसपास भी प्राचीन खंडहर देखने योग्य हैं। पद्मावतीका मंदिर तो बाल्य है। जिनको पद्मावतीको न मानना हो वे ऐसा भी कर सकते हैं।

व० मेव्रीलाळ ।

सावधान-धुनि नामधारी धूर्त हर्षतीति (दाहोदवाले)की धूर्त भेषी चेखी चतुर्मती भनी मीड़ (उदपुर) गई थी। वहां मंडळ विधान कराया था व अपना केश छेवग किया था ऐसे समाचार मिले हैं। कुछ भी हो परन्तु वह पुरी धूर्त है। विधात करने योग्य नहीं और इनसे सावधान रहना चाहिये।

शोकजनक मृत्यु व दान-जैन सुपति मिश्रमंडळ रावळपिंडीके समाधि ला० खानवंदजीका स्वर्गास्त ता० २५-६-२९ को हो गया। आप बड़े धर्मात्मा और उत्साही थे। आपके उद्योगसे कई संस्थाएं रावळपिंडीमें चढ़ रही हैं। अंत समय आपने ७७६१ का दान किया है जिनमें २४१) सुपति मिश्रमंडळ व शेष अपनी संस्थाओंको तथा अन्य सारोंको दिया है।

सिद्धक्षेत्र पुजा संग्रह ।

सम ३१ सिद्धक्षेत्रोंकी पुनः हैं। मुख्य ॥॥

मेनेना, दि० जैन पुस्तकालय-सूरत ।

सोछनाभां आविष्ठाश्रमने भट्ट.

वैशाख अश्विनी सोछनाभां लग्नमाणाभां वज्रिणी शुक्लपक्षीभां सुभाहना २-३ आविष्ठाश्रमने नीचे सुगम भट्ट भणी, कृती, आ प्रसज्जं प्हेन भगनप्पेन भास पधायी दत्ता अने छिप देस आये दत्ता,

- २५) शा० नरेशदास गंगादास धसधुप
- ११) श्री भवभाष प्रेमनंददास भोरसदवाणा
- १६) शा० शंकरदास तापीदास आगेद
- ११) शा० श्रीमोहनदास रजुछोडदास करमसद
- १३) शा० प्रभुदास शिवदास दानोस
- १०) शा० परशोत्तम दीभयंद सोछना
- ७) शा० नगछवनदास इगनाथदास भोगरी
- ७) शा० रायचंद दुसयंद सोछना
- ७) शा० भीमनरदास नगछवनदास सोछना
- ७) शा० गणेशदास धुमाल पोपगाव
- ५) शा० नाथारैड जनेरदास भोज
- ५) शा० भागीदास दर्शनादास आगेद
- ५) शा० नरेशभदास गंगादास वेरथर
- ५) शा० श्रीमोहनदास धुमरदास सोछना
- ५) शा० परभुदास धुमरदास पडोदा
- ५) शा० पानायंद भोरदास वेरथ
- ५) शा० नाथाभास मोदीदास करमसद
- ३) शा० छोटालाल दत्तपतभाष आगेद
- ४) शा० रायचंद वल्लभचंद पांड
- ३) शा० परशोत्तम दामोदरदास वेरथ
- ३) शा० लोछछभाष भयुरभाष भडेलीव
- २) शा० नरेशगभाष दीभयंद श्रीभोज
- २) शा० भगसदास देवगदास दानोस
- २) शा० नाथाभाष धुमरदास आगेद
- १) शा० सुल्लछभाष धुमरदास वेरथस
- १) शा० सुल्लभयंद सुगळ भोरसद
- १) शा० सुनीदास सुगळ सोछना
- २) शा० रायचंद दामोदरदास दानोस

१९९) दुस

ઈંદરના શાસ્ત્ર બંદારની શોચનીય દર્શા ।

પ્રિય પાઠકશ્રુ,

(૧) વારંવાર “ દિગંધર જૈન ” પત્રોમાં ખાસ કરીને ઇંદરના જૈન શાસ્ત્ર બંદારના છર્જોદ્ધાર માટે ધણાજ અસરકારક અને આંખમાં પાણી આવી જાય તેવા લેખો આવવાથી હમારી લાગણી ઉશ્કેરાણી. હમારી હવાતી છતાં બહારગામના બાધાઓ આવીને શું હમારા પ્રાચીન બંદારનો છર્જોદ્ધાર કરશે ? શું હમારા ઇંદરના પંચમાં એટલી પણ શક્તિ નથી કે શાસ્ત્રનો છર્જોદ્ધાર ન કરાવી શકે.

(૨) આવા વિચારથી હમો ઇંદરના સિંઘરી કામના આગેવાનો મેલા નાનચંદ બલવજી, દાવડા મોતીચંદ પરમશી ગાંધી, પુનમચંદ શેઠલચંદ તથા મુંગાધના શેઠ લલ્લુભાઈ દક્ષમીચંદ ગોકસ્ત્રી વીગેરેને લખને ઇંદરના શાસ્ત્ર બંદારના વહીવટ દર્તા ગાંધી મોતીચંદ શાંકલચંદની દુકાને ગયા, થોડી ઘણી વાતચીત ચાલ્યા પછી ઉવટે ગાંધી મોતીચંદ શાંકલચંદ વિના દરેક બાધાઓએ બંદાર ખોલી આપવાનું તથા શાસ્ત્ર છર્જોદ્ધાર કરવો જાનુમોદન આપ્યું. આપણું હોવા છતાં મોતીચંદ શાંકલચંદે શાસ્ત્ર છર્જોદ્ધાર કરવાની એકાંખી નાપાકી, તથા બંદારની કુંચી પણ આપી નહીં. કુંચી ન આપવાથી પંચે એનું જણાવ્યું કે આવતી કાલે શ્રી મંદિર-છમાં પંચની સમક્ષ બંદારનું તાણું ખોલી આપીયું પરંતુ બીજે દિવસે હમો તથા પુનરી બે ત્રણ વખત દર્તા પણ કોઈ પણ ગેરું થયું નહિ.

(૩) હમો પંચની સાથે ખાસ દરેને ગાંધી મોતીચંદ શાંકલચંદને ચીનવીએ ઢિએ કે દરે મરપજુવાં પણ તમારાથી સાગેતો છર્જોદ્ધાર થાય તે તમારા આમાનું દયાણું થશે. આવા એવમ દાર્દમાં આશ ન આવતા તથા પાપના જાગીતાર ન થતાં આ કામ તન મન અને ધનથી

બે તમો કરશે તો પ્રુપવના બાગી થશે. પ્રાણી માનવે સાથે કંઈ પણ આવવાનું નથી. ફક્ત “ શુભાશુભ ” કમેનિ આવવાનાં છે. હમોને એમ લાગે છે કે જો તમો આ કામ એકલા માથે લખને કરો તો મારો એટલું કરી શકે એમ છે.

(૪) આ કામ માટે વળી થેર બેઠા ગંગા આવેલી છે. કારણકે જે તમો કોઈ બીજાની પાસે છર્જોદ્ધાર કરાવશે તો વગર પૈસે તે કરશે નહિ પરંતુ આતો “વગર પછસે કામ થાય તેમ છે”

(૫) આ કામમાં આજસુધી કરવાથી એક ઘડી જાય છે તેમાં હમોને બદકે લાખો રૂપીયાનું નુકશાન થાય છે કારણકે હમોને રૂપીયા ખર્ચ કરવા છતાં પણ નષ્ટ થયેલા અમુક્ય રતો મળવા દુર્લભ છે. બંદારમાં નાંખી મુકવાથી કંઈ લાભ નથી, પરંતુ નુકશાનજ છે. જે તમો એનો છર્જોદ્ધાર કરશે તો તેથી બલિષ્ઠમાં તમારાજ સંતાનો તેનો લાભ લેશે.

(૬) આ કામ માટે શ્રીમાન દાનવીર શેઠ સાહેબ લાલા દેવીસદાવજી તથા લાલા જમ્બુપ્રસાદજી સદારનપુરવાલાએ કાનપુર મદાસભામાં શાસ્ત્ર ઉદ્ધારમાં જે ખર્ચ થાય તે આપવાને વચન આપેલું છે તે માટે તે મદાનુભાવોનો ઉપકાર માનવા જ્યો છે. તા. ૨૮-૬-૨૨

લીઁ. સસ્વતિ સેવકા.

લલ્લુભાઈ લખમીચંદ ચોદરી
શા. નાધાલાલ ટુલચંદ
દારી કસ્તુરચંદ સુરચંદ
કોઠારી મણીલાલ જગનલાલ
દારી ચુનીલાલ નાનચંદ

મંદિરોંમેં વર્તને યોગ્ય શુદ્ધ સ્વદેશી
કાશમોરી કેશર ।

મૂ. ૨૧) કી તોટા

મૈનેજર. દિ. ૦ જૈન પુસ્તકાલય-છરત ।

पद्द्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धि।

(जैन साहित्य सर्भा लखनऊका लेख नं० ३)

लेखक-पं० बुद्धिलाल श्रावक जैन पाठशाला लाहौर (मारव ड)

सवैया ८ सगण-

चित चिन्तहु शुद्ध चिदात्मकों, महिमा जिनकी नहिं जाय कही ।
नहिं गाय सके जिनराय अहो, गणराय मती चकराय रही ॥
निरयाध अगाध समाधि मई, सुख सागरता सरसाय सही ।
तिहुँ काल अनन्त समै वरती, "पद्द्रव्य" दशा दरशाय रही ॥ श्रावक.

महानुभावो ! जब कि देशमें चहुँथोर राष्ट्रीय चरचा दीर्घ ज्वलिसे गूँज रही है तब यह पद्द्रव्यकी दिव्य कथा आप सज्जनोंको रुचिकर होगी इसमें सन्देह है । परन्तु यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि पद्द्रव्यका ज्ञान आत्म बलकी प्राप्ति और वृद्धिमें रामबाण औषधि है, और राष्ट्रकी उन्नति आत्मबल पर ही निर्भर है इस लिये कहना होगा कि छद्म द्रव्योंका कथन देश हितके हेतु अमोघ मन्त्र है और आधुनिक आन्दोलनके सर्वथा अनुकूल है ।

हमारे पूर्वज छद्म द्रव्योंके ज्ञानसे आत्मबलमें बढे हुए थे इसी कारण भारतवर्षमें सदा अहिंसा धर्मका डंका बजा जाता था । भारत वसुधारेके शृङ्गार श्री पूज्य महात्मा गांधीजीके श्रीमुखसे सदा यही घोषणा हुआ करती है कि देशको समृद्धिशाली बनानेके लिये अहिंसा और आत्मबलमें उन्नति करो । महात्मानो स्वयं पद्द्रव्यके नामाङ्कित ज्ञाता हैं और श्रीमान्ने देशहितमें जो आशातीत सफलता प्राप्त की है उसके अनेक कारणोंमें पद्द्रव्यका ज्ञान भी एक प्रधान कारण है ।

सारांश यह कि, छद्म द्रव्योंका ज्ञान, अहिंसा धर्म और आत्मबलकी वृद्धि का अद्वितीय साधन है और उससे लौकिक अर्थोक्तिक स्वाधीनताकी सिद्धि होसکتی है । जब कि इससे स्वार्थ परमार्थ दोनों सघने हैं तो ऐसे उभय लोकोपयोगी विषयसे हमें वंचित नहीं रहना चाहिये । कहा भी है-

बोहा-स्वारथ परमारथ सकल, सुलभ एक ही ओर ।

ज़ार दूसरे दीनता, उचित न तुलसी तोर ॥ १ ॥

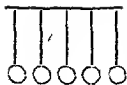
मिसकी कथा करते हुए सर्वधर्मसिद्धिके देवतागण असंख्यकाल समाप्त कर देते हैं मिनका मर्म गणवर महर्षि भी न समझ सके और पूर्ण ज्ञानी परमात्मा भी जिनके अनन्त

धर्म जानते हुए भी संपूर्णतया न कह सके उन अनंत गुणात्मक द्रव्योंका कथन करनेके हेतु मैं तुच्छमति होकर भी लेखनी ग्रहण करता हूं। यह देख विद्वान् लोग मुझे पागल कहेंगे और वास्तवमें ही मेरा प्रयत्न उस बालके समान है जो दोनों हाथ फैला कर समुद्रका माप बतलाता है कि इतना बड़ा है। पर हां ! जो कुछ कहूंगा सो गुरुगम और अनुभवसे कहूंगा। कहीं चूकूं तो छल नहीं समझना और न गुरुका दोष समझना।

(१) एक कटोरेमें दही रखिये। उसे नेत्र इन्द्रियसे देखिये तो उसमें रंग है, नाकसे सुंघिये तो उसमें गंध प्रतीत होती है, जीभसे चखिये तो उसमें स्वाद जाना जाता है, दहीको हाथमें लीजिये तो उसमें चिकनाहट नरमता और बज्रनुका बोध होता है सारांश ! दही इन्द्रिय गोचर है। अब कुछ दही कटोरेमें ही रखो और कुछ दही कटोरेमेंसे हाथमें लेओ तो मालूम हो जावेगा कि दहीके खंड होसके हैं। अब हाथमेंका दही कटोरेमें ही छोड़ देओ तो वह फिर मिल जावेगा। इससे यह भी प्रतीत होता है कि दहीमें इन्द्रिय गोचरताके सिवाय मिलने बिछुरनेका गुण है इस लिये “ **पुर्यांति गल-
यंति पुद्गलाः** ” की नीतिसे दहीको पुद्गल कहना चाहिये। दहीके समान अन्य वस्तुएं भी जो इन्द्रिय गोचर हैं वे सब पुद्गल हैं जैसे छड़ी, घड़ी, धोती, टोपी, कागज, कलम, ताला, तलवार, टका, पैसा आदि।

पुद्गलोंके ये रूप, रस, गंध, स्पर्श, गुण सदा स्थिर नहीं रहते, सदा बदलते रहते हैं। अर्थात् वर्णसे वर्णान्तर, रससे रसान्तर, गंधसे गंधान्तर और स्पर्शसे स्पर्शान्तर हुआ करते हैं। जैसे जिस आमके फलको हमने कल हरा देखा था वह आम मिष्ट पीला दिखता है और थोड़े कालके बाद लाल दिखने लगता है। जिस फलको हमने कल खट्टा देखा था वह आम मिष्ट देखते हैं और थोड़ी देरमें खिस हो जाता है। इन गुणोंके गुणांश भी सदा बदलते रहते हैं जैसे जिस ककड़ीको हमने कल बहुत हरी देखा था आम उसमें कम हरियाली देखते हैं और कुछ कालमें वह पीली दिखने लगती है। ये गुणांश कभी कभी इतने हीन प्रगट रहते हैं कि इन्द्रिय गोचर भी नहीं होते जैसे कि अग्निकी गंध, वायुका रंग इत्यादि। परन्तु यह स्पष्ट है कि वर्ण ५ रस ५ गंध २ स्पर्श ८ इन २० मेंसे जहां १ भी धर्म पाया जावे उसे पुद्गल जानो। पुद्गलोंकी हालतें सदा बदलती रहती हैं जैसे पानीसे भाप, कुहरा, ओस वादल होते रहते हैं। अथवा अन्न, पानी, दवासे शरीर लड़ी चमड़ा गुन मांस धीरे आदि हुआ करते हैं। नभ वे पुद्गल आपसमें टकराते हैं तो वायु मंडलकी दवाकी घर्षण लगता है फिर वह दवा एक दूसरे वायु कणोंको धक्का देती है यहां तक कि दानकी मिट्टी तक पत्त पतुंचता है और आवान मुनाई देती है।

इस चित्रमें देखो-एक लकड़ीमें सुनसे कपी गई गोष्ठियां लटक रही



हैं अब एक गोलीको धक्का देओ तो वह दूसरेको और दूसरी तीसरी आदिको धक्का देगी ऐसा ही शब्दमें होता है । शब्द भीत आदिसे रुक जाता है और कभी उलटकर पुनः सुनाई देता है उसे प्रतिध्वनि कहते हैं । इससे स्पष्ट है कि शब्द मूर्तीक है और मूर्तीक पुद्गल-

लोसे उत्पन्न है । परन्तु शब्दको पुद्गला गुण नहीं कह सकते क्योंकि वह पुद्गलमें सदा नहीं रहता और गुण वही होता है जो पदार्थमें सदा रहता है अतः शब्द पुद्गल की पर्याय याने हालत है । बहुतसे मतान्तर वादी शब्दको आकाशका गुण बतलाते हैं उन्हें हम सम्बोधन करते हैं कि अरूपी आकाशसे मूर्तीक शब्द नहीं निस्पन्न हो सक्ता अगर शब्द आकाशका गुण होता तो लोक अनेक सदा एकसा शब्दावधान रहता और यह प्रदेकी भावान, यह बांसुरीकी तान और यह वीनकी ध्वनि है ऐसा बोव नहीं होता ।

इतने थोड़ेही वक्तव्यसे आप लोग समझ गये होंगे कि जो कुछ इन्द्रिय गोचर है वह पुद्गल है इस लिये अवेरा, धूप, छाया, प्रज्ञाश, शरीर, वचन, जल, वायु, अग्नि, पहाड़, स्वास निस्वास, आदि सब पुद्गल हैं । विजली, टेलीफोन, रेल, तार आदि सब पुद्गलके चमत्कार हैं । कई मतान्तर वादी कहते हैं कि जो कुछ हम देखते सुनते सुनते है यह सब मिथ्या अर्थात् असत् है । इसका निराकरण हम केवल इतनेमें ही करके आगे चलेंगे कि जो वे यह कहते हैं “ कि जगत मिथ्या है प्राप्ति है ” सो उनका ऐसा कहना भी प्राप्ति हुआ अतः उनका मिथ्या प्राप्ति रूप वचन भी प्रमाण नहीं है ।

अब एक चार मिट्टीका टुकड़ा लेओ उसमेंका एक खसखससे भी छोटा टुकड़ा स्लेट पर रखो । उस छोटेसे कणके चाकूसे नितने बल से खंड करो । उन खंडोंमेंसे सनसे छोटे खंडके फिर खंड करो, यदि साधारण प्रज्ञाशसे काम नहीं चले तो धूपमेंसे खंड करो और सबसे छोटे खंडके पुनः खंड करो, यदि साधारण आखोंकी दृष्टि काम न देवे तो चक्षुसे काम लेओ और खंड करो । फिर चक्षु काम न देवे तो माइक्रास्कोपमें देखके खंड करो । जब माइक्रास्कोपसे भी निरुपाय होते देखो तो बहुत बढ़िया सूक्ष्म दर्शक यंत्रसे देरकर खंड करो । और जब सूक्ष्मदर्शक यंत्र भी व्यर्थ होने लगे तो ज्ञानसे खंड विचारो । बस सनसे छोटेमें छोटे पुद्गल अणुको जिसका फिर खंड नहीं हो सके उसे बुद्धिसे विचारो उसीका नाम परमाणु है । ऐसे परमाणु भी स्पर्श, रस, गंध, वर्ण पत रहते हैं क्योंकि किसी वस्तुके गुण कभी नष्ट नहीं हो सके । जब कि इन परमाणुओंमें निगन्धता रसता सदा स्वाभाविक रहती है वो वे एक दूसरे मिला करते हैं और दो वीन चार संख्यायें असंख्यात अनन्तकी संख्यामें भी मिल जाने हैं ऐसी बन्ध रूप दृश्योंमें उन्हें स्केप कहते हैं । अब आप मोच सकते हैं कि परमाणु ही असली पुद्गल है जिसकी

इंट, पत्थर, कागज, कलम आदि हाकते हैं। पुद्गल वस्तुका अस्तित्व वर्तमानमें तो स्पष्ट ही सिद्ध है और पूर्वकालमें उसका अस्तित्व हमारी स्मृति सिद्ध करती है कि कल परसों और उसके पूर्वकालमें हमने पुद्गलोंको देखा सुना अनुभव किया था। इतिहास और पुरानी कथाओंसे अनेक भूतकालके पुद्गलोंका अस्तित्व प्रतीत होता है। अब आगामी कालमें भी पुद्गल पदार्थोंका अस्तित्व रहेगा इसमें कोई सन्देह कर सके हैं अतः प्रधान-तया इसी पर विचार करना है। पदार्थोंमें गुण होते हैं और गुण वही हैं जो पदार्थोंसे कभी अलहदा नहीं होते सदा सहभावी रहते हैं। धनके कारण मनुष्य धनवान् कहलाता है, ऊंटके पास रहनेसे ऊटवान और गाड़ीका स्वामी होनेसे गाड़ीवान कहलाता है, ऐसा गुणों और वस्तुओं अर्थात् गुण गुणीका संयोगी सम्बन्ध नहीं है क्योंकि धनवान् जुदी वस्तु है और धन जुदी वस्तु है। अतः अग्निका उष्णताके साथ, जीवका ज्ञानके साथ जैसा सम्बन्ध है वैसा ही गुण गुणीका सम्बन्ध है, कभी ऐसा नहीं हो सक्ता कि अग्निकी उष्णता तो आप रखें और अग्निको मैं अपने पास रखूँ। इसी प्रकार यह भी नहीं हो सक्ता कि आपका ज्ञान मेरी थैलीमें रखा रहे और आप घर पर बैठे-रहें। वत्स ! इसी प्रकार स्पर्श रस आदि गुणोंका पुद्गलसे सम्बन्ध है-श्री स्वामी कुंदकुन्द मुनिद्रने कहा है कि—

द्रव्येण विना ण गुणाः गुणेहि द्रव्यं विना ण संभवदि ।

अव्वदिस्सो भावो द्रव्य गुणाणं हवदि तस्मा ॥

भावार्थ—द्रव्यके विना गुण नहीं होते और गुणोंके विना द्रव्य नहीं होते इस लिये द्रव्य और गुणोंको अव्यतिरिक्त भाव है। कहनेका अभिप्राय यह है कि पुद्गलके स्पर्श रस आदि गुण कभी नष्ट नहीं हो सके इससे उसका आगामी कालमें कायम रहना स्पष्ट तथा सिद्ध होता है। सारांश ! पुद्गल ये, हैं और रहेंगे। इसी कारण पुद्गल पदार्थ सत् है, सत्का कभी विनाश नहीं होता और कभी असत्का उत्पाद, नहीं होता यही वस्तुका वस्तुत्व है। सूत्रनीमें कहा है कि सत्-उत्पाद, व्यय, ध्वंयुक्त होता है अर्थात् वस्तुकी हालतें बदलती-रहती हैं पर वस्तु कायम रहती है।

मित्र प्रकार पुद्गलमें स्पर्शादि गुण हैं वैसे ही थाली लोटा आदि पर्यायें भी हैं। भेद इतना है कि गुण तो साथ रहते हैं अर्थात् सहभावी होने हैं और पर्यायें क्रमशः होती हैं अर्थात् क्रमभावी होती हैं। भाव यह कि एक द्रव्यमें एक कालमें एक ही पर्याय होती है पश्चात् दूसरी, पश्चात् दूसरी, पश्चात् दूसरी, पश्चात् दूसरी, वत्स ! यही उसका उत्पाद व्यय है अर्थात् एक पर्यायका लय हो जाना और दूसरीका प्रगट होना, फिर उसका भी उसीमें लय हो जाना और तीसरीका प्रगट होना।

अपने हाथमें आटेकी लोई लीजिये वह गेंदके समान गोल है उसे दबा कर चाटी बनाइये अब चाटी पर्याय प्रगट होगई और लोई पर्याय कहा गई ? उसीमें समा गई । अब चाटीको और बढाइये तो रोटी पर्याय प्रगट होगई और चाटी पर्याय उसीमें समा गई । पर लोई, चाटी, रोटी आदि सब हालतोंमें आटा वस्तु मौजूद है । इस थोड़ेसे ही कथनसे आप समझ सकते हैं कि पुद्गल पदार्थोंमें गुण है और पर्याय है इस लिये “ गुणपर्ययवद्रव्य ” की नीतिसे पुद्गलोंको द्रव्य कहना चाहिये । और द्रव्य, वस्तु, पदार्थ, तत्त्व आदि प्रायः एकार्थवाची हैं । समयसारणीमें कहा भी है—

दीर्घा—भाव पदार्थ समग्र धन, तत्त्व वित्त वस्तु सर्व ।

द्रवनि अर्थ इत्यादि बहु, नाम वस्तुके सर्व ॥

यह बात भी प्रत्यक्ष सिद्ध है कि पुद्गल परमाणु अनतान्त हैं जो नाना अवस्थाओंको प्राप्त हुआ करते हैं और कभी भी सर्वथा नष्ट नहीं होते । यदि पुद्गल पदार्थ न होता तो न पानी होता, न हवा होती, न सभा होती न, सभा मडप होता, न शरीरधारी समापति होते, न समासद होते और न व्याख्यान होते । सारांश ! जो कुछ हम देखते सुनते हैं कुछ भी न होता । स्मरण रहे कि पुद्गल अपने स्वरूपसे ज्ञान हीन और वे जान हैं इस लिये वह अजीब हैं । साइसके विद्वानोंने जो अब तक ६५ । ६७ तत्व खोजे हैं और भी खोज रहे हैं वे सब पुद्गल विज्ञानी वा जड़ विज्ञानी हैं । परन्तु हम अपने पाठकोंको आत्म विज्ञानकी ओर झुकाया चाहते हैं ।

(२) आप अपने एक हाथसे, दूसरे हाथमें चीमटी लीजिये और कुछ भादा दबाइये । तो, स्पर्श, रस, गंध, वर्णवत् शरीरके सिवाय एक और विलक्षण पदार्थ ज्ञात होगा जिसे यह बोध होता है कि हमें दुःख हुआ, हमें दबाया है, हमने दबाया है, हम पकड़े गये, हमने जाना, हमने देखा । यह जानने वाला शरीरके लक्षणोंसे भिन्न लक्षणोंवाला है बस ! यही ज्ञायक लक्षण आत्मा है और वास्तवमें यही तुम ही, तुम शरीर नहीं ही आत्मा हो जीव हो । जीवके रहते जड़ शरीरको लोग जीवित कहते हैं । मुख्यतया हमें जीव पदार्थको ही समझना और समझाना है क्योंकि अहिंसा और आत्म बलका सम्बंध जीव पदार्थ ही से है । यह आत्मा शरीरसे इतना तन्मय रहता है कि शरीरको पकड़ो तो आत्मा भी पकड़ा जाता है शरीरको पीटो तो आत्मा पीट जाता है । क्या झाड़ क्या चिटो क्या हाथी सबके शरीरमें आत्मा रहता है । इन्द्रियोंके व्यापार और कायकी चेष्टासे उसका अस्तित्व प्रतीत होता है । परन्तु शरीरकी अचेतन परणमिसे जीव की चेतन्य परणति जुदी देखनेमें आती है । जिसे लोग मरमाना कहते हैं उससे जीव पुद्गलकी प्रथकता स्पष्टता सिद्ध है । गुरु प्रेत, पूर्वभ्रम स्मरण आदिके दृष्टांत जगह जगह

स्वामी दयानंद सरस्वतीका अनुमान था कि मुक्तात्मा परिमित कालमें मुक्तपुरीसे हकाल दिये जाते हैं। परंतु स्मरण रहे कि जिस प्रकार बीजके अत्यंत जल जानेसे उसमें फिर किसी भी कारणसे अंकुर नहीं होता उसी प्रकार कर्मके अत्यंत विदग्ध हो जानेसे फिर भवांकुर नहीं होसक्ता। स्वामीजीको यह भी डर था कि मोक्ष होते होते संसारकी जीव-राशि शून्य हो जावेगी। इसका समाधान उन सज्जनोंकी समझमें शीघ्र आसकेगा जो दशमलवका गणित जानते हैं। यह देखिये १० पूर्णांक जीव राशि है। इसके पीछे दश-मलवविंदी देनेसे (०१) इसका मान दस गुणा घट जाता है। फिर दशमलव विंदीके आगे शून्य ० रखनेसे उसका मान और भी दस गुणा (००१) जावेगा इस तरह आप चाहे जितने शून्य बढ़ाते जाइये मान घटता ही जावेगा परंतु कल्पांत कालतक भी शून्य बढ़ाते रहनेसे दशमलवका अभाव नहीं होगा। उसी प्रकार संसार राशिका अभाव भी नहीं हो सक्ता।

अब यह देखना है कि जो कपड़ा गंदा है वह अपने स्वभावसे ही गंदा है या उसमें कोई दूसरी चीज आ लगी है। यदि गंदापन वस्त्रका निज स्वभाव होता तो वह उज्जल कभी नहीं होता क्योंकि “स्वकं स्वभावं न विनहति” इससे सिद्ध है कि कपड़ेका स्वभाव मलिन नहीं है, कोई दूसरी चीज जिसे मैल कहते हैं कपड़ेसे चिपक गई है। पर यह अवश्य है कि कपड़ेका ऐसा स्वभाव है कि उसमें मैल चिपक जाता है और मैलका ऐसा स्वभाव है कि वह कपड़ेसे चिपक जाता है। वह वस्तु जो कपड़ेसे चिपक गई है कपड़ेके किस्मकी नहीं है, विजातीय है। इसी प्रकार आत्माको गंदा करनेवाली ऐसी वस्तु है जो आत्माके चैतन्य स्वभावसे विरुद्ध अचेतन है और अरूपी स्वभावके विरक्षण अर्थात् मूर्तीक है। वस ! इसे ही कर्म कहते हैं। “कर्म भी पुद्गलकी एक अवस्था सिद्ध हो गई”।

जब हमें क्रोध आता है तब आत्माके अंदर बड़ी खलबली मचती है, हम बड़े रंज और गमका अनुभव करते हैं। जिस तरह समुद्रमें म्बार भाटा होता और दयकर घुसल होती है उसी प्रकार क्षांतिके समुद्र आत्मामें बड़ी बेचैनी होती है। पर थोड़ी देरके बाद वह बेचैनी शान्त हो जाती है और मालूम होता है कि किसी चीनका असर या जो उतर गया। इससे भी प्रतीत होता है कि ये सब दूरकृत करनेवाले आत्म स्वभावमें मित पुद्गल पदार्थ हैं। ये आत्मामें विभाव उपजाते और शरीर आदिमें अद्विष्टि पैदा करते हैं। परन्तु मिहें नीचाजीव द्रव्योंका सत्त्वा ज्ञान है वे आत्मासे शरीरको सर्वभूमिल और कोसों दूरके समान अनुभव करने हैं। ये सत्त्वे महात्माभी हैं। उन्हें मनेका डर नहीं। दमन नीति उन्हें कायुमें नहीं ला सकती। जेलमें और मंदिरमें उन्हें खतर नहीं मिना। चाहे उनसे गुनली बढ़ाओ या चको -

चाहे किरकिरी मिला हुआ आटा देओ, चाहे मोहन भोग देओ । सदा प्रसन्न रहते हैं । उनके हृदयमें हिन्दू, मुसलमान आदि एकसे प्रेम बंधु झलकते हैं और उन्हें कितनी ही तकलीफें और अड़चनें आधे और कैसी कठिन दमन नीतिसे सताये जावें पर वे सत्याग्रहसे नहीं चिगते ।

लाओ जिती हों पासमें, हथकड़ी सांकल बेड़ियां ।
कटि ग्रीव जंघा बांध दो, छाती दिखा पग पड़ियां ॥
पाकी रहै नहिं तन जरा भी, खूब कस कर बांध दो ।
संतर जहलमें सांकचे, ताले लगा कर बांध दो ॥ १ ॥

सारांश । विकट संकट आनेपर भी सच्चे महात्मा लोग परीपदसे नहीं चिगते । वे तपश्चर्याको कर्तव्य समझते हैं और सच्ची स्वाधीनता पानेमें सफल होते हैं ।

इतने वक्तव्यका सार यह है कि जीव पदार्थका अस्तित्व समझना भी एक प्रकारसे स्थूल है क्योंकि वह हमारे अनुभव गोचर है । वह हमारे शरीरमें है । वह ही हम हैं । पानीमें मीन पियासीके समान आत्माको अग्न्यत्र नहीं खोना है । आत्म देव तो देहके देवालयमें ही रहता है । सग्यसारमीमें कहा भी है—

मतायन्द. केइ उदास रहैं प्रभु कारन, केइ कहीं उठि जात कहीं के ।

केइ प्रणाम करै गड़ि मूरति, केइ पहार चढ़े गह छीके ॥

केइ कहैं असमानके ऊपर, केइ कहैं प्रभु हेठि जमीके ।

मेरो धनी नहिं दूर दिशान्तर, मो महिं है मोहि सुखत नीके ॥

यदि जीव पदार्थ न होता तो न तो कोई जानने वाला होता न देखने होता, न स्वाद होता, न पर राट्ट होता । सब अनीब अनीब ही होते ।

अब जीव भी एक द्रव्य सिद्ध हुआ । जिसमें चैतन्यादि गुण हैं और सत्तारी भूत अथवा मनुष्य, पशु, देव आदि पर्यायें हैं । इसके पश्चात् हम आप लोगोंका चित एक सूक्ष्म पदार्थकी ओर आकर्षित करते हैं ।

१-आप देखा करते हैं कि जो कल था वह आज नहीं है जो बालक थे वे युवक हो गये, युवक थे वे वृद्ध हो गये जो वृद्ध थे वे मृतक हुए । जो शांत थे वे क्रोधित हैं जो क्रोधित थे वे शांत हैं । सारांश जो नवीन था सो पुराना हुआ । अथवा यों कहिये कि पूर्व अवस्था लय हो गई और नवीन अवस्था प्रगट हो गई अर्थात् पदार्थोंकी अवस्थाओंमें परिवर्तन हुआ और हुआ करता है ।

यह रीति कबसे और कब तक रहेगी इसका उत्तर मोक्षिये तो यही मिलेगा

कि जयसे पदार्थ हैं और जब तक पदार्थ रहेंगे तब तक बराबर परिवर्तनकी रीति चालू रहेगी अर्थात् अनन्त भूतकालसे यह पद्धति चालू है और अनन्त भविष्यत कालतक रहेगी।

ऐसा क्यों होता है ? यह विचारें तो अवस्थासे अवस्थान्तर होनेका असली अर्थात् उपादान कारण वे ही पदार्थ हैं जो अवस्थान्तर हुए हैं । यदि दूधमें दही बननेका स्वासा न होता तो किसकी मजाल थी कि दूधसे दही बना देता । परं विना बाह्य कारणके भी काम नहीं हो सकता । विना रई घुमाये अर्थात् मथन किये बिना मसखन नहीं मिल सकता है । दूसरा दृष्टांत लीजिये कि जो कुंभकारका चक्र घूमता है उसका उपादान कारण चक्र स्वयम् ही है कुंभकार दंडा-आदि प्रेरक कारण हैं परंतु यदि वह खंडी जिस पर चक्र घूमता है वह न हो तो भी चक्र न घूम सकेगा ऐसे कारणोंको उदासीन निमित्त कारण कहते हैं।

बस ! सब पदार्थोंके अवस्थान्तर होनेमें खंडीके समान जो उदासीन निमित्त कारण है वही काल है । जीव पुद्गलों आदिकी हालतें बदलनेमें वह प्रेरक नहीं, निमित्त रूप है । वह मूर्तीक पुद्गलोसे भिन्न लक्षणोंवाला अर्थात् अमूर्तीक, और जीवके चैतन्य धर्मसे विलक्षण अर्थात् अचेतन ही होना चाहिये ।

मिनिट, घंटा, पहर, वर्ष आदिको लोग व्यवहारमें काल कहते हैं पर वह पुद्गलोंकी परणतिसे पगट होता है अर्थात् घड़ीकी घड़ी सुई जब बारा नंबरोंपर चक्कर लगा देती है तब लोग कहते हैं कि एक घंटा हो गया ।

स्वामी कुन्दकुन्दने कहा है कि "तस्या कालो पटुच्च भवो " अर्थात् व्यवहार काल पुद्गलाश्रित है परन्तु इस व्यवहार कालसे वास्तविक काल जो पदार्थोंको अवस्थान्तर कराता है निराश्रित है वह जीव द्रव्यके समान अमूर्तीक वस्तु है भेद इतना है कि जीव माप में बड़ा है । और कालका प्रत्येक क्षण परमाणुके बराबर है । परन्तु परमाणु मूर्तीक है और कालाणु अमूर्तीक है । चांदीकी एक पाट लेओ जो लाखों परमाणुओंके बराबर है यह जीव पदार्थका दृष्टान्त है । अब चांदीकी एक रेतनका एक बहुत ही छोटा कण लेओ यह कालाणुका दृष्टान्त है । ऐसे कालाणु सब लोकमें भरे हुए हैं । यह स्मरण अवश्य रहे कि चांदीकी रेतन पुद्गल है उसमें स्निग्धता रूक्षता है जो मिलकर पाट बन जाती है पर कालके दानेमें स्निग्धता रूक्षता नहीं है इसमें कालके दाने एक दूसरेसे कभी नहीं भिन्न सके हैं । इसी कारण ये अक्षय्य हैं ।

भिम नरद जीव दुमरोंकी जानता और अपनेको भी जानता है उसी तरह काल पदार्थ दुमरोंको बताता और अपनेको भी बताता है । जब कि वह स्वयम् यदंता है तो उसमें पर्यायें उपगर्भा और व्यं होती हैं । ये अक्षुणी पर्यायें पञ्च गुण पठित हानि गृह्णित स्वरूप ममत्तनेमे गृह्णिमे या पत्नी हैं पण्ठु यह विषय मूर्ख हैं यदा शिष्यनेसे ज्ञेय

बाहुतपता होगी। सारांश कालमें गुण और पर्यायें होती हैं अतः वह द्रव्य सिद्ध होता है।

यदि काल पदार्थ न होता तो निमित्तके बिना पदार्थोंकी हालत न बदलती उनमें उत्पाद व्यय नहीं होता। जो पदार्थ जैसा है वैसा ही रहता जो काम हरा है वह हरा ही रहता पीला न होता न सड़ता और न छोटा बड़ा होता।

हमारे धैताम्बर बंधु इस अतीव आवश्यक द्रव्यका अस्तित्व नहीं मानते। परन्तु जब वे गति स्थिति स्थानके हेतु, निमित्त मूल धर्म अधर्म आकाशको चाहते हैं तो कालके बिना भी काम नहीं चल सक्ता परिवर्तनाके हेतु भी निमित्त होना ही चाहिये।

ब्राह्मण धर्म शास्त्रोंमें भी कालका उल्लेख है। और कहा है—

चौपाई.—सिरंजत काल सकल संसार। करत काल तिहुं लोक संहारा॥

सय सोचत जागत है सोज। काल समान बली नहिं कोज।१।

यह कथन जैन मतके स्यादवादसे सम्यक् सिद्ध होता है। अर्थात् काल पदार्थ ससारकी नवीन पर्यायोंकी उत्पन्न कराता है और प्राचीन पर्यायोंकी लय कराता है। परन्तु यदि कोई यह समझ जावे कि काल ही उत्पन्न कराता है, काल ही नष्ट कराता है तो यह “ही” लगानेसे एकांतवाद हो जाता है और यह दूषित है ॥ कहा भी है—

दोहा—पद स्वभाष्य पूरव करम, निश्चय उच्यम काल।

पक्षपात मिथ्यात सव, सर्वाङ्गी शिवचाल ॥१॥

कालके संबंधमें एक बड़ी भारी शका यह होती है कि काल पदार्थ जब लोक मात्रमें है तो वह आकाशको क्यों कर परिवर्तित करता है। इसका समाधान कुन्द-कुन्द स्वामीने बड़ी बड़ी युक्तियोंसे किया है उनमेंसे एक मोटीसी यह है कि जिस प्रकार शरीरके मध्य भागमें मैथुन होता है और उसका अनुभव सर्वांग होता है। उसी प्रकार काल भी आकाशके मध्यमें रहके संपूर्ण आकाशको वर्तता है।

हमारे ऋषियोंकी कथन शैली ऐसी सुन्दर है कि बार बार द्रव्यानुयोगके शास्त्रों का कथन चिंतन करनेसे अरूंधी काल द्रव्य भी स्पष्टतया समझमें आने लगता है।

४—जब हम चौथे पदार्थ पर आप लोगोंका चित्त झुकाया चाहते हैं। आप देखिये पुस्तक टेबिल पर रखी है, टेबिल स्टैफार्म पर है, स्टैफार्म टेबलीपर है, अर्थात् पदार्थोंमें आधार आधेय वा क्षेत्र क्षेत्रिय भाव है।

जिस प्रकार जीव पदार्थ अपनेको और सकल पदार्थोंको जाननेवाला, ‘ज्ञान’ इस परमधर्मसे सिद्ध है। अपनेको और दूसरोंको वर्तनेवाला काल पदार्थ ‘वर्तना’ इस परम धर्मसे सिद्ध है। उसी प्रकार अपनेको और दूसरे समस्त पदार्थोंको क्षेत्र देनेवाला अवगाहना परमधर्मवाला

पदार्थ होना ही चाहिये । उसके बिना द्रव्योंकी सिद्धि नहीं हो सकती । वस ! उसीका नाम आकाश है । जो सबको क्षेत्र देनेवाला है, सबका क्षेत्रिय है, सबका आधार है । सारांश ! आकाश और सब पदार्थोंमें आधार आधेय सम्बन्ध है । जिस प्रकार जीवके एक प्रदेशमें भी अपनेको और अनंत पुद्गलों, जीवों, काल आदिको जाननेका सामर्थ्य है, कालके एक प्रदेशमें अपनेको और अनंत जीव पुद्गलों आदिको वर्तानेकी सामर्थ्य है उसी प्रकार आकाशके प्रत्येक प्रदेशमें जो परमाणुके बराबर होता है अपनेको अनंत जीवों, पुद्गलों और काल आदिको स्थान देनेका सामर्थ्य है । ५० प्रवर दौलत रामजी साहबने कहा भी है “सकल द्रव्यको वास जाग्रुमें सो आकाश पिछानो” ।

ऊपर आसमानमें जो नीला सा हृद्दे नजर दिखता है अथवा जो लाल पीले रंग बदलते रहते हैं उसे बहुतसे लोग आकाश समझ जाते हैं । परन्तु रंग पुद्गलोंमें होता है आकाशमें नहीं हो सक्ता । आकाश अरूपी वस्तु है ।

जब कि आकाश सबका क्षेत्रिय है तो जहां जहां जीवादि पदार्थ हैं वहां वहां आकाशका अस्तित्व सिद्ध ही है । लोकमें तो आकाश है ही । परन्तु उससे आगे, क्या है इस प्रश्नका उत्तर यही मिलेगा कि उससे आगे आकाश है, फिर उससे आगे, आकाश । फिर उससे आगे ? आकाश ! लोकसे आगे भी आकाश है तो वहां जीवादि पदार्थ क्यों नहीं पहुंच जाते और लोकको और भी विस्तृत क्यों नहीं करें लेते ! इसका समाधान धर्म द्रव्यके ब्रह्मसे हो सकेगा ।

आकाशमें स्थान दान आदि गुण हैं और काल द्रव्यके समान अरूपी पर्यायें हैं अतः आकाशको द्रव्य कहना चाहिये । यदि आकाश न होता तो पदार्थ ही न रह सके । इस लिये लोककी सिद्धिके हेतु आकाशका अस्तित्व मानना ही चाहिये ।

१-६-पाठक ! जीव, प्रकृति, काल और आकाश तो संसारमें प्रायः प्रचलित हैं । अब हम उन अरूपी सूक्ष्म वस्तुओंकी ओर आपकी दृष्टि डालना चाहते हैं जो जैन शास्त्रेण सिवाय अन्यत्र अप्रसिद्ध ही हैं । जिन्हें स्वामी दयानन्दजी जैसे प्रसिद्ध आर्य विद्वान् न समझ सके और धर्म अधर्म द्रव्यकी जीव प्रकृति आदि पदार्थोंके धर्म अधर्म अर्थात् स्वभाव विभाव समझ बैठे और पवित्र जैन धर्मका खंडन अपने सत्यार्थ प्रकाशमें कर गये ।

मद देलिये झाड़से एक फल गिरा और धरती पर ठहर गया । लड़केकी पतंग उड़ने उड़ते कुएंमें पड़ गई । अभिप्राय यह कि जीव पुद्गलोंमें गमन स्थिति क्रिया देखते हैं । इसका कारण तो निम्न तो अंतरंग कारण तो ये ही गमन स्थिर होनेवाले पदार्थ हैं

अर्थात् क्रिया रूप परणमनेकी शक्ति उन क्रियावान् पदार्थोंमें ही है । अगर जीव पुद्गलोंमें गमन स्थितिका स्वभाव न हो तो किसीको वाक्य ही जो उससे मत कर सका । परन्तु अंतरंग कारणके सिवाय बाह्य कारण भी चाहिये । बाह्य कारणके बिना भी कार्य नहीं हो सका यह बात न्यायसे सिद्ध है जिसका यहां लिखनेसे विषयांतर होना संभव है ।

जब रेलगाड़ी चलती है तो उसके चलानेका उपादान कारण तो वह स्वयम् है एंजिन खींचता है सो वह प्रेरक कारण है । इतना होनेपर भी पातोंके बिना रेल नहीं चल सकेगी । अभिप्राय यह कि लोहेकी पातें रेलके चलनेमें उदासीन निमित्त कारण हैं । एंजिन खींचे वा रेल चले तो लोहेकी पट्टी सहायक होती है पर रेलको जबरदस्ती खींचकर नहीं चलाती । और न चलती हुईको ठहराती है ।

साइंसके विद्वानोंका भी मत है कि गति स्थितिके हेतु बाह्य निमित्त अवश्य होना चाहिये । ये लोग बहुत दिनोंसे इसका खोज कर रहे हैं, परन्तु उन वैचारिकों अरूपी पदार्थोंका जो प्रत्यक्ष ज्ञान गोचर है कैसे पता लग सका है । बस ! जो गति स्थितिमें निमित्त रूप हैं उन्हीं वस्तुओंका नाम धर्म अधर्म है । ये स्वतंत्र पदार्थ हैं । जिस प्रकार नींबूका धर्म खटाई है, गुडका धर्म मिठाई है ।

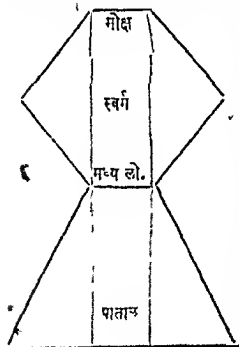
जीवका अधर्म हिंसा वा राग द्वेष है उस प्रकार धर्म अधर्म द्रव्य किसी पदार्थके गुण दोष नहीं हैं वरन जिस तरह आकाश एक द्रव्य है उसी तरह धर्म भी एक द्रव्य है और अधर्म भी एक द्रव्य है । धर्ममें गति सदाई परम धर्म है, अधर्म द्रव्यमें स्थिति सदाई परम धर्म है और दोनोंमें काल द्रव्यके समान् अरूपी पर्यायें हैं । अतः ये दोनों द्रव्य हैं ।

यहां एक प्रश्न होता है कि जैन धर्ममें भी तो अहिंसा आदिको धर्म और हिंसा आदिको अधर्म बतलाया है अथवा "वस्तु स्वभावो धर्मो" की रीतिसे इसी निबंधमें पदार्थोंके चैतन्य आदि धर्म कहते आये हो अब यह निराळे पदार्थ कैसे कहते हैं ? इसका समाधान इस प्रकार है कि एक वाचकके अनेक वाचक होते हैं जैसे सूर्यके वाचक शब्द दिनकर, दिवाकर, दिनेश आदि हैं । और एक वाचकके अनेक वाच्य भी होते हैं जैसे जैसेकि 'मन' हृदयको (दिलको) भी कहते हैं और मन तौलनेका माप भी होता है । पर जहां ऐसा विषय व प्रसंग होता है वैसा ही आशय लिया जाता है । क्योंकि संसारमें पदार्थ और उनके गुण बहुत हैं । और कोषमें शब्द थोड़े हैं । इस लिये जहां गुणोंका कथन हो वहां धर्म अधर्म शब्दसे स्वभाव विभावका आशय लेना चाहिये और जहां द्रव्योंका कथन हो वहां धर्म अधर्म शब्दसे दोनों पदार्थ समझना चाहिये ।

स्वर्गीय स्याद्वाद वारिधि पृथ्य पं० गोपालदासजी बरेयाने श्री जैनसिद्धांत-दर्पणमें एक तर्क निकाला है कि गति स्थितिके हेतु जुदे जुदे दो पदार्थ माननेकी क्या आवश्यकता है ? इसका समाधान भी उस प्रात. स्मरणीय विद्वान्ने किया है कि परस्पर विरोधी धर्म एक ही धर्ममें नहीं हो सक्ते इस लिये जो पदार्थ चलानेवाला है वह ठहरानेवाला नहीं होसक्ता और जो ठहरानेवाला है वह चलानेवाला नहीं हो सक्ता अत. दोनों पदार्थ प्रथक् प्रथक् सिद्ध हैं । और दोनोंकी ही आवश्यकता प्रतीत होती है ।

अब आप लोगोंकी समझमें आया होगा कि धर्म अधर्म पदार्थ हैं अर्थात् धर्मी हैं और गति स्थिति सहायकता दोनों के क्रमशः धर्म हैं । जिस प्रकार साइंसवालोंने लिखा है कि यदि माद्याक़र्पण न होता तो सूर्य चन्द्र अपने मार्गपर न रहते न जाने कहां जाते, यदि परमाणु आकर्षण न होता तो सब चीजें धूलकी देशमें रहतीं । उसी प्रकार जैन ऋषियोंका कहना है कि यदि धर्म द्रव्य नहीं होता तो जो पदार्थ जहां था वहां ही रहता कोई भी पदार्थ नहीं चलते न कोई मोक्ष जाता न कोई देशान्तर जाता । न चरखा चलता, न सूत कतता, न सभा होती, और न आप लोग अपने घरसे आ सजते ।

और यदि अधर्म द्रव्य न होता चरती हुई कोई भी वस्तु न ठहरती । गिहलीकी दंडा मारनेसे वह चली ही जाती फिर न ठहरती । छतरी जो हवामें उड़ पड़ी थी उड़ती ही जाती । और सिद्ध आत्मा जो ऊपरको गमन क्रिये थे चले ही जाते कभी भी विश्राम नहीं पाते । यहां तक कि इन दो द्रव्योंके बिना लोक अलोकका भी भेद न होता ।



यह चित्र देखिये छाहीं द्रव्योंसे भरे हुए लोकका आकार है । छाहीं द्रव्य अपने अपने गुण पर्यायोंमें परणमते हैं कोई भी द्रव्य अपने गुणस्वभाव नहीं छोड़ते और न अन्यके गुण स्वभाव ग्रहण करते हैं । हां ! जीव पुद्गल, स्वभाव विभावस्वरूप होते हैं । विभाव परणति निबंधका विषय नहीं है होता तो हम उसका कथन करने । पर इतना अवश्य कहेंगे कि एक दूसरेके निमित्त नैमित्तिक होनेसे द्रव्योंकी परणति सिद्ध होती है । अतः लोकका या द्रव्योंका कोई कस्ता हस्ता विधाता सिद्ध नहीं हो सका इस लिये सभी द्रव्य स्वयम् सिद्ध हैं । द्रव्योंका समुदाय रूप, लोक, क्रिमिके बहसे अपर महा

है यह कहे बिना; हम नियंत्रण पूरा नहीं कर सकते । एक साइंसके विद्वान्ने एक मनुष्यको त्रिलोक निराधार खड़ा कर दिया था । और उसे हमने स्वयम् देखा है । बुद्धिसे सोचा जावे तो यह जीव अजीव ही की करामात है कहनेका अभिप्राय यह कि इतना बड़ा लोक जीव अजीव ही की विलक्षण विद्युत्से जिसे मायाकरण कह सकते हैं अवर खड़ा है । परमार्थ दृष्टिसे सब द्रव्योंके आधार स्वरूप आकाशके आधारपर लोक है और आकाश अपने परमधर्म आधारके आधार है ।

छह द्रव्योंके स्वयम् नीचे लिखा उद् स्मरण योग्य है ।

सवैया मानिक-

जीव धर्म भूधरम नभ पुगदल, काल सहित पद् द्रव्य प्रमान ।
चेतन एक अचेतन पाचों, रहैं सदा गुण पर्जयवान ॥
केवल पुगदल रूपवान् है, पाचों शेष अरूपी जान ।
काल द्रव्य दिन पंच द्रव्यको, अस्तित्वाय कहते युधिवान ॥ १ ॥

उपसंहारमें हमें यह कहना है कि निबधमें कई जगह मतान्तर वादीको लक्ष्य बनाकर संशोधन किया है तो किसीकी निन्दा वा विरोधकी इच्छासे नहीं किया है । अब ऐसा कीजिये कि एक पड़ी भारको आपही वादी बन जाइये और कहिये लोककी सिद्धिके वास्ते जीव द्रव्यकी आवश्यकता नहीं है और न उत्पत्ता अस्तित्व सिद्ध है । तो मैं कहता हूँ कि आप कौन हैं ।

अब आप कहिये-हम पुगदल है शरीर है । शरीरमें शराब कैसा नशा कुछ काल रहनेसे लोग जीव जीव चिन्ताने लगे हैं ।

मैं कहता हूँ-कि शराबका नशा भी जीव ही की होता है । नहीं तो शराबकी बोतलें भी ललचती तृदती फिरती इससे जीवका अस्तित्व सिद्ध है ।

अब आप कहिये-कि पुगदल नहीं है ।

तो मैं कहता हूँ-कि यह रग बिगने पदार्थ देखने हैं तो क्या हैं ।

अब आप कहिये-संसारमें आकाश नहीं है ।

तो मैं कहता हूँ-जीव पुगदल आदि कहा रहते हैं ?

आप कहिये-हम कालकी कुछ आवश्यकता नहीं समझने ।

तो मैं कहता हूँ-क्या बिना निमित्तके भी कार्य हो सकता है ? ससारमें सभी लोग निमित्तको बलवान मानते हैं ।

आप कहिये-लोककी हृद माननेकी जरूरत नहीं । वह अनंत है ।

मैं कहता हूँ-जब सब चीजोंकी हृद है तो लोक भी हृद सिद्ध है ।

आप कहिये-धर्म अधर्म द्रव्यका अस्तित्व मानना अनावश्यक है ।

मैं कहता हूँ-लोककी हृदसे धर्म अधर्म द्रव्योंका अस्तित्व स्पष्ट सिद्ध है ।

आप कहिये-इन द्रव्योंका जानने कथन करनेवाला ईश्वर नहीं है ।

मैं कहता हूँ-कि यहां और इस समय ईश्वर नहीं है कि सर्व काल और सर्व क्षेत्रमें ईश्वर नहीं है ।

आप कहिये-कि कभी भी और कहीं भी ईश्वर नहीं है ।

मैं कहता हूँ-अगर आप सर्व काल और सर्व क्षेत्रकी जानते हैं तो आप ही ईश्वर हो ।

आप कहिये-कि यदि ईश्वर है तो वह इन द्रव्योंका वा जगत्का कर्ता अवश्य है ।

मैं कहता हूँ-कि आप ईश्वरको “ निरीद ईश्वर विभु ” मानते हैं या नहीं ?

आप कहिये-सब ही ईश्वरवादी प्रभुको निरीद मानते हैं ।

तो मैं कहता हूँ-कि इच्छा रहित प्रभु हम प्रपञ्चमें क्यों पड़ने चला ?

आप कहिये-तो सुख दुःख कौन देता है ।

मैं कहता हूँ-जड़ चेतन अनादि-सयोगी । आप दि कर्ता आप ही भोगी ।

अथवा दोहा-को सुख को दुःख देत है, कौन करै क्षक शोर ।

उरझत सुरझत आपही, ध्वजा पवनके जोर ॥

अब आप कहिये-कि लोककी सिद्धिके हेतु छह ही द्रव्योंकी क्यों आवश्यकता है ? कुछ कमती मानो !

मैं कहता हूँ-कि छहमेंसे जिसको छोड़ दूँ । जिसके बिना पद्योंकी सिद्धि होती नाये और बाधा न पड़े उसे छोड़ दूँ ।

आप कहिये-कि छहमें ज्यादा द्रव्य मानिये ।

मैं कहता हूँ—कि सातवां आठवां द्रव्य सिद्ध कीजिये ।

अस्तु ! अधिक कहनेसे क्या ? लोककी सिद्धिके हेतु द्रव्योंकी आवश्यकता है और वे स्वयम् सिद्ध हैं ।

बहुत लोग रुपये पैसेको द्रव्य कहते हैं । जब मैं विद्यार्थी था तब मैंने द्रव्य-संग्रह ग्रंथ इस लिये मंगाया था कि उसमें रुपये कमानेकी युक्तियाँ होंगी । लोग रुपये पैसा स्वरूप द्रव्यकी उपासना किया करते हैं सो वह भी द्रव्य ही है पर पुद्गल-द्रव्य है उसमें आनन्दका लेश भी नहीं । सदा अपने आत्म द्रव्यका आनन्द लेना चाहिये ।

उन्हों द्रव्योंमें आत्म द्रव्य सारभूत और उपादेय हैं। हे जीव ! तूम् आत्मा हो, आत्मा तुम्हारा है, तूम् आत्माके हो । उसे नमः भूलेप्रकार, जिनो, उसका श्रद्धान करो और उसीमें स्थिर रहो । अथो यधारे सारी रीते द्रो. वधुना समर्थो अपने 'स्व' के ऊपर राज्य करो यही स्व-र है त्यों ही परराष्ट्र अर्थात् कर्म दल तुम्हारे ऊपर कर्त्तव्य करे लता है या नौकरशाह रूप इंद्रियोंकी हुक्मतमें तुम्हें रहना पड़ता है जो तुम्हारे ज्ञान धनका शोषण करती और नाना नाच नचाती हैं तथा तुमसे पूरी पूरी गुलामगारन है भाति रकी चठमटक और चठाचोप मरी विदेशी नस्तुपं दिलाकर तुम्हें रसे कस देती हैं । फिर तुम्हारे फमाइति आध्या । इसलिये उनसे असह-योग करदो जो तुम्हारा असली रक्त चूमते हैं । तुम सचे स्वदेशी बनो एक क्षण मात्रको भी अपने स्वदेश और देशबंधुओंका हित मत भूलो । दमन नीतिसे मत डरो और अहिंसा पूर्वक सत्याग्रह ग्रहण करके स्वात्मबल वडाओ ।

अंतमें यह कहते हुए निवेद्य समाप्त करता हूँ कि—

सय मित्र पवित्र चरित्र धरौ,

अरु शिक्षित पुत्र कलत्र करौ ।

पुनि कौशल काव्य-कला विधिसे,

सजदो इस भारतको निधिसे ॥

समान सेवी—पुष्पिलाल श्रावक—लाटन (जोधपुर)





પુરુષની શારીરિક અવનતિ થી ન જોઈએ એટલે કે જોઈએ, નહીં ભાવતું, હલકા પ્રકારનું ભોજન ખાવાથી અને ખરી ગયેલા ઇસમને સંભારી આર્તધ્યાન કરી કાપા ગાળવાથી શરીરની અવનતિ થાય છે અને તેની અસર તેના મોઢા આગળ ફરતાં બન્ધાં ઉપર ખુરી થાય છે અને શિક્ષા બીજાને ભોગવતી પડે છે. નીતિબ્રહ્મતા થી ન જોઈએ, આ બાબત વિશેષ અગત્યની છે. જૂઠું, જારી, ચોરી, દેવ વગેરે દુર્ગુણોના સમાવેશ આમાં થાય છે. આ વચ્ચાએ એક દાખલો આપવાથી સારી સમજ પડશે. આગમગ્રંથોમાં જોવાની ઉનાળામાં એક બાધ પોતાનો જુનો ધરી કરેલો સાદો પોટલી વાગે પડેલો તે લેવાનો બુધી ગઈ એક વિધવા બાધ તે લઈ ગઈ બીજા

મા જોઈ ગઈ અને પોટલામા જોસરા જતી ની તેવામાં પેલી બાધ આવીને દેવેલા લાગી પડેલો સારો લાવે, પોટલીમા કયા મુકર દે છે ! તેણે જુલાય આખો કાઢ લઈ નાવ તેથી હું લાવી, મારે તમારા સાલવાને શું કરેલો છે. જેસ બહુ સતી નહીં થા, તું તો મારી પછાડે હતી. ત્યારે અને જમ મારી હતીને. ખીસીયાણી થઈ પેલી જેમી ગઈ, આ બાધએ જુના સાલવા ચાતર ચોરી અને જૂઠું બને ગુન્દા કપાં. આવાં કુટુંબને જો આપણે મદદ નહીં કરીએ તો તેઓ નીતિબ્રહ્મ થાય તેમાં શી નવાઈ ! ! મારે નિરાશનો વિધવા અથવા તેવા બીજા કુટુંબને આપણે પ્રથમ મદદ કરતી જોઈએ. ત્રીજા પ્રકારના કુટુંબને કેવી રીતે મદદ આપી શકાય તેનો વિચાર આવતા હોવામાં કરવામાં આવશે. આવી બાબતો ઉપર 'દિગંબર જૈન' મા પૂરેપૂરી ચર્ચા થતી જોઈએ અને બીજા બાધએ અને આ બાબતમાં સદાનુભૂતિ બતાવતી જોઈએ.

મંદિરોંમં ઘર્તને યોગ્ય શુદ્ધ સ્વદેશી

કાશમીરી કેશર ।

મૂ. ૨૧) કી તોટા

મંનેજર, દિ. જૈન પુસ્તકાલય-છરત ।

હુમ્મલ લગ્ન કર ॥

૨૫ ઉલ્લેખ નજર.

સગનસરા આવીને ગઈ. જનતાનો આનંદ માણો સમાયો નહિ, તેમા અમારા શુજરાતમાં દશાહુમલ રાતિમાં સારાં સગન થયાં કહેવાય છે; અને તેમ થવું સંભવિત છે. કારણ કે ગઈ સાલ સિદ્ધરથ વરસથી શ્રાવણ રહેલ લગ્ન, આ વરસમા ચનાર લગ્ન ને ખર્ચાના કારણથી લેવાએલ નાની કન્યાએલા લગ્ન એમ ત્રણ પ્રકારથી લગ્ન થવાથી સુખ્યા વધુ થાય તેમાં શક નથી. તેમાં છેલ્લો વર્ગ તો દર વરસ ચાલુ હોય છેજ. એક તિથિ કે સરાનો લગ્ન આર્થિક દૃષ્ટિથી લાભકારક છે. લગ્ન માસ વૈશાખમાં એકંદરે દરેક માણસ નિઃતિયાનું હોય છે, કારણકે ખેડુન વર્ગને પાક લેવાનો કે ઉત્પન્ન કરવાનો હોતો નથી ને ખેડૂત નિઃતિ હોય ત્યાં તેના પર આધાર રાખતા આ દેખતા ધંધા વિહોણા લોક પશુ નિઃતિ હોય છે, જોયે આવા નિઃતિનાં સમયમા લોકો મોજમગ્ના ના ને બીજા પ્રસંગો માણે છે. લગ્ન પ્રસંગ પશુ તેમનો એક છે. કુદરતી રીતેજ તે માટે આ સમયજ નિર્માણ થયેલો જાયે હોય એમ લાગે છે. આ રૂઢમાં ફળકુવ આદિથી કુદરતનું માર્ગ ઉદય હોય છે. વસંતનો ખડાર પશુ આવી ગયો હોય છે. તેમા આનંદ જનક સમયમા સગનની પ્રથા યોગ્ય રીતે ચાલવાઈ છે. ને આ નિઃતિ સમયે અમારા દશા દુઃખ બાધઓ નિઃતિ હોય તેમા કાંઈ નવાઈ નથી.

આ સગ્ને માટેની તૈયારીઓ તો રચનાત્મક રીતેજ બે ત્રણ માસ આગમયથી ચાલુ થઈ રહી હોય છે. માખાંચો સગનો સામાન લેવામાં, કપડા સોવડાવવામાં, સુખ્યતે પરજી ગાંધી પડાવવામાં છેલ્લે મુદત જોવાની (નાનવું) સગાં સંજોગોએ નિર્મલવામાં રાખાયેલ હોય છે. રચનાત્મક રીતે દુખા બાધઓનાં જુલેજુલ મદારમા માંખીજના પ્રમાણથી દરેક રિવાજ પ્રમાણુ થયેલ ગુજરાતના જરૂરમા અમલવાદ



માં સરસામાનમાં મુખ્યત્વે કાપડ ખરીદવા ઉતરી પડ્યા હતા. અમારા કુમક પુરુષ વર્ગમાં તો મહાંભાગનો આદેશ ખાદી પહેરવાનો થયો છે. અરી મતવાયો છે, પણ સ્ત્રી વર્ગ તો ખીલકુલ એથી નિરાજ છે. અમાન દશાના પડળ તેમને શુદ્ધ ચાન ઉત્પન્ન થવા દેતા નથી. ધોળાં કપડાં તો ધોળાં પહેરે તે તેમનાથી પહેરાય નહીં. રૂઢી કેરની એ તો તેમને ભારે યષ્ટ પડે. બાધુઓએ તો ખાદી પહેરી પણ લગ્નમાં તો વિલાયતી માથા વાપર્યો. એ તેમને સરમાનનાર છે, તેમની કિંમત કરાવનાર છે. કેટલાક બાધ ખાદી વાપરવાના વિચારના હશે, પણ રૂઢીના દાગે, લોહાણાં, ધરના સ્ત્રી વર્ગના દમાણે, ખીલ્લોની, નિંદાથી ડરીને, વિલાયતી વાપરનાર અન્ય જનથી ઉત્પન્ન થયેલ અસરથી ડગી ગયેલ વિચારથી વિલાયતીને તણ ન લાગ્યા. અરેસા છે કે હલ્લુ સ્વદેશીયું રહસ્ય અમારો સમાજ ખરાબર સંમત શક્યો નથી. તેથી 'ખાદીની ખાનદાની' આગાદી ને પરદેવી કાપડથી પેસાની ખરાબાદી" એ સિદ્ધાંત ન સમજતાં રૂઢીના શુભામી પરદેથી રંગ ખેરગી પિંકામણી કાચરચિત્રા રંગોથી ભરપુર તરફવાર કપડા ખરીદી લાવ્યા હતા, તેમણે કન્યા માટેના કપડામાં ને રેન (ખંડ) ખરીદવા પડે છે તે કિંમતે અતિશય મોંઘા ને વપરાણે શકણીયા (ઉપયોગ થતો નથી તેથી પહેરનાર મરીને તે સાચવવા જત થાય છે તેથી) હોય છે. અભેવાનો જો આ રેન વાપરવાનું બધ કરે તો તે આશીર્વાદ સમાન લેખાશે. "કલકતાનું" પોત પણ બધ કરવામાં આવે એ પણ ઇચ્છા યોગ્ય છે. પહેરેથી દેખાવમાં એ ડાંગ ને પહેરનાર સ્ત્રીના શાદકને લગવનાર હોય છે. આમ ધોળી ધોળી પણ બીન-ખરીડે જોના સિવાય આવી શકે તેવી મોંઘી વસ્તુઓ અમ દરી તેને બદલે સાદી ને ઉપયોગી વસ્તુઓ વપરાશમાં લેવામાં આવે તો યોગ્ય અરમાણ્ય મોંઘી સાલ થાય. કાપડા (ચણીયા) આ માટે, મોંઘાઓ, આરજીઓ, સાડીના વગેરેમાં

ખાદીજ વાપરવા બહેનોએ ધીમે ધીમે પગ-રણુ માંડવાની જરૂર છે. એટલે રૂઢી પણ આરતે કદમ અક્ષોપ થશે.

અમારા દલાકુમરોમાં ઘણું ખર્ચ લગન એકજ તિથિએ અથવા તો એકાદ બે દિવસના હરફેરમાં હોય છે. બીજી રીતે કહીએ તો કન્યાના માખણો તે રીતે લે બાથ બ્રાહ્મણો પાસે રૂા ૦-૨-૦ હજાર નાપ કરાવી લગનું મુકૂર્તી લેવાયે છે આ એકજ તિથિના લગનની પ્રથા આર્થિક દૃષ્ટિથી જરૂર લાભદાયક છે ને આવા ખર્ચાગ વરસેમાં તેમ કરાવી જરૂર છે, પણ આ બાબતમાં અમારી કુમક ચાંતિમાં હાલમાં ઘણી અતિશયતા વધી પડી છે, તેથી તેમાં ઘણી જતનખર્ચનો (જેરલામ) ઉપલ્ભવ નેતાના સદુપયોગથી બચવામાં આવ્યું છે તે જ અનુમત થશે. અમારા માટે કરવામાં આવે છે તે કે તે પણ સમજતા હા, અમારા કુમરો એટલું તો જરૂરના કે આ વિનાડ એટલે રમવા ને લગન એટલેથી છે. અને મોક્ષ મેળવવા કાણુ શું નથી જુએ યા અમારા આ મોક્ષ માટે અમારે બંધનો આ કાવા હાવા બેલના પડે છે, ઘણી જાને બેડે જાને મહેરમાન પડે રહેવું પડે છે, પછાસારના એટા તો અમે હોવાજ નેપ્ત્રએ ને કમ નસીએ જો મરીનાઇને વર્ષા હોઇએ તો અમારું મોક્ષ (લગન) બે ડગલા આગળ ને આગળ ખસવુંજ નાથ છે. વળી અમારે તમાચા મારી મ્હેં લાલ રાખવું પડે છે; કારણકે અમારા ગામ-ડાને સંબંધ ને આવક પણ તેવીજ હોય છે; અને આવી રીતે જ્યા લગનનો મુતોજ ઉધો સમજવા હોઇએ ત્યા યોગ્ય રૂા કેમ મને ?

આ અમારી વચવા કહેવાતા વર્ગની રશોતિ ! પરંતુ અમારા ગરીબ વર્ગને કન્યાઓ મજે નહિ. અરે ! ગરીબ ગરીબને કે નહિ, ત્યં ખેરસા-દાર વર્ગ તો દેવ માનો ? આલું ખાસ કારણ મજલસની મહત્વાકાંક્ષા છે દરેક મનુષ્યને આગળ વધવાની-મોટા થવાની-અભિલાષ રહે છે તે પ્રમાણે તે કાંઈ પણ કરે છે, તેથી તે-મોટા



માણસની સોગત-આશ્રય શોધે છે. કહ્યું છે કે:-

મહાજનસ્ય સર્ગઃ કસ્ય નૌવતિકારકઃ ।

પદ્મપત્રસ્થિત વારિ ધમે મુક્તાફલશ્રિયમ્ ।

એટલે મોટા માણસની સોગતથી કોની ઉત્તરિ થઈ નથી ? એટલે કે થઈ છે, દાખલા તરીકે એક પાણીનું ટીપું હોય છે તે પણુ કમળપત્રના મંસર્ગમા આવવાથી (તેના ઉપર હોય છે ત્યારે) રત્નની ઠાતિ મારણુ કરે છે. આ દૃષ્ટિથી વચલા ને ગરીબ ગણાતા વર્ગના પોતાની કન્યાઓ પોતે મોટા થવાની આશામાં મોટાઓને દે છે (આ એક જાતનો કન્યાવિક્રય છે) તેમાએ ગરીબવર્ગની કન્યાને તે લે નહિ, ત્યારે તે બિચારા વચલા મા દે એટલે કે પદ્મસાધરો પોતપોતાની કન્યાઓ એટલે એ... નહિ ને વચલા વર્ગની કન્યામાં બેસી ગઈ અને પોતપોતાને ગરીબ વર્ગમાંથી હતી તેવામાં પેલી બાધુ વર્ગને કન્યા મળી શકે નહિ. એન પેલા સાધરો દક્ષિણ તેમને સૂચના રસ્તાપર દે છે ! તેણે એ આમાંથી યોગ્ય વિચારથી રસ્તા છૂંદી, તો સાડાં તેખડાંમાં પડી ન છુટકે એસ બહુ, આમ પોતે પોતાની બૂલનો ભોગ થઈ હતી. ત્યારે તે તેમાં પડેલા જોવાની દૃષ્ટિથી તેઓ થઈ ને તેમાં પડેલા જોવાની દૃષ્ટિથી તેઓ થઈ ને તે રીતે એક બીજા તરફ દેખી લાગણીથી જુએ છે. ખરું તો એ છે કે માણસે પોતાની બૂલ પહેલી જોવી જોઈએ, ને તે સુધારવી પડે છે ને તે રીતે તે આગળ વધી શકે છે. તો જો ગરીબ વર્ગે પોતપોતાના વિચાર કરી નિશ્ચય કરી હોત કે આપણી કન્યાઓ આપણા વર્ગમાં લેવી દેવી ને પેલાસાર વર્ગ તેમની કન્યાઓ આપણા વર્ગમાં ઉતારે નહિ તો તેમના વર્ગમાં આપણી નહિ. તો તેઓના (ગરીબવર્ગના) હોકરા પરજીત, સાડાં તેખડાં કરવાની જરૂર નહીં નહિ ને ધનીક વર્ગની પણ આંખો ઉઘડત દે જોખુંથી કન્યાઓ લઈએ છીએ તેમાં આપણી કન્યાઓ બુદ્ધિવાદીને હોય. પણ અમારા દલાદુભાઈ એક મનિ સૂચ રહેશે છે તે "હું" બડાં"તો છે. હમણે તે તેમને કહ્યું હમણે ગરીબ વર્ગમાં

ગણાય તેવા માણસો ખોટી મોટાઇથી તે વર્ગમાં ગણાવાની આનામાંની કરે છે પણ છેવટે બપારે વળા છેડે આવે છે ત્યારે તેમને ગરીબ દેખાયા વિના ચોંટાડું નથી. આમ ખોટી મોટાઇના દક્ષિણમાં દક્ષિણથી તે વર્ગ પેતાનું અહિન કરી રહેલ છે. પણ જો ધનિક ગણાતા વર્ગ ! તારે પણ કયા જોખું અહિન થઈ રહેલ છે. તારી માતિ દિવસે દિવસે અધુનતામાં જતી જાય છે. સોટા તેખડાં વધતા જાય છે. તારી સ્વાર્થ બુદ્ધિથી ગરીબોને શોષવું પડે છે ને તેમને છેવટે અંત આવે છે. તે તમારા પાપથી જીતે તમે આજ જે ખાડામાં ધસેલા છો તેજ ખાડામાં કાલે તમારે ધસડાવું પડશે એ ખ્યાલ ફેબશો નહિ. કંઈ નહિ તો એ ગરીબોના શ્રાપથી પણ તમારે ઠગાં ફળ ભોગવવા પડશે. ધર્મમાંથી વિચલતા મનુષ્યને તેમાં સ્થિર કરવો એ જીન ધર્મને ઉપદેશ તમે કા બુદ્ધી ગયા જણાવો છો ? આ તો આપણે પેલા દોષોમાં ઉતર્યા પણ મહા ઉપર આવીએ. ત્યારે લગભગ મહત્ત્વ ન સમજાવું હોય ત્યાં તેના લાભાલાભ જાણેજ દોષ ?

દરેક વ્યક્તિ-આત્મા પોતાનું દર્યાણુ ધરે છે. તે દર્યાણુ તે મોટા (દુમડાનું નહિ હો) છે ને તે માટે દરેક દેહધારી પ્રવૃત્તિથી હોય છે. તે સાધનામાં જળરાન ચારિત્રવાળા આત્માઓ તો સંસારથી નિરાગો મયમુલ હોય છે, પણ જે નિર્જન આત્માઓ ચારિત્ર પાળવામાં શિથિલ હોય છે તેવા આત્માઓએ લગ્ન કરવું યોગ્ય છે ને તે યોગ્ય દૃષ્ટિથી, આત્મ ચિંતનમાં કાર્ય પ્રસન્ને કમવસના તોનપણે દાખવે, તે દાખવી પોતાની ચેકિત બદા છે એમ જાણાય ત્યારે જ શ્રી સાધેના સમાગમ મનુષ્યની પોતાની પ્રતિભાને દાખવા દાખવી યોગ્ય તરફ વાળવી ને આ દૃષ્ટિથી પડેલાંના સ્વચંરનો રિવાજ જરૂરનો છે, ને દોષોના જોઈએ. ને યોગ્ય દૃષ્ટિને અસ્ય કરીએ તો પણ સાંસારિક-અવસ્થા-દૃષ્ટિથી તે પદ્ધતિની જરૂર છે. મારું કે આ સંસારી દેહધારીનાં નજીક જાતની બુલ મુખ



મણીમાંથી પસાર થવાની જરૂર પડે છે. તે તેમાંથી
અથવા સારા સાચીની જરૂર છે, તે પત્ની છે.
ત્રીથી ઘણી ફરતે અદા થાય છે. તે મિત્ર છે.
વેધ છે. ખાતા છે. આદર છે, ધરમાં સચિત્ર છે,
રક્ષક છે વગેરે વગેરે જે કંઈ ઉપમા આપે તે તે
છે. દુઃખમાં તે હરપર સમાન છે. તે પોતાના
ગોત્રે પણ પતિને સુખ આપે છે. પોતાના શીલ-
વતમાં તત્પર રહે છે. તે રીતે પોતાનું ને પોતાના
આત્મિક જીવનનું કલ્યાણ કરે છે તે સાથે પુરુષ
પણ આસ્ત્રિવાન, સત્યપ્રિય, ઉદ્યમી, શાણો ને બળ-
વાન હોવો જોઈએ. આપે પોતાને શોધ પતિ
પત્ની મેળવવા પુત્ર, પુત્રીઓને પોતાની પસંદગી
કરવા દેવી જોઈએ. માખાશોએ તો તેમને તેમની
ચતી જુવોની જ. માર્ગદર્શક સત્યા કરવી જોઈએ
તે એ તો દેખીતું જ છે કે તે સ્વપસંદગી કરવા
ઉપરની બીજા સમજી શકે તેટલી શોધ ઉપરનાં ને
ફળવાએલ આળસ હોવા જોઈએ. પ્રથમ તે પ્રથા
હતી. કાંઈ પણ જો. આ પવિત્ર પ્રથા અનુસર-
વામાં આવે તો ! પણ વૈ. દીન કહારે કિ
મિયાદે પાંચમે જુલિયાં.

આજ કાળે અનુસરીને કન્યું બલિષ્ઠ
આપના હાથમાં આવી રહ્યું છે. પ્રથમ રૂપાંતર
જરૂર તે વખતે અત્યુક્ત લાભપ્રદ દ્રવ્યે, પણ તેનાં
ધર્મે ધર્મે દોષો દાખલ થયા પામ્યા છે. સત્તા
આપના હાથમાં એટલે તેનો સદુપયોગ યા દુરુપ-
યોગ આપની ધન્ય ઉપર અવલભે છે તે સત્તા
થી જ ન ગાય ને દીકરી નવાં દેરે ત્યાં જાય "

જો કહેવત ચાલુ થઈ છે તેથી જ, દીકરીનો જન્મ-
રતી વરત તરીકે વિકસ કરવામાં આવે છે તેથી જ
જાણ પોતાના નીચ સ્વાર્થ ખાતર પોતાના જ
અંસ ને ખ્યાલ બચ્ચાની અમ્મય છંદગીતો બોલે
આપે છે. છોકરી મોકલી જેવા હશે માટે પ્રાણ
વરસાવનારા દેવ દેવીઓને અપાતા ઈશ્વર મેદામાં
લોગ મારે દસાખાતા ને બહારે ધાવા આ જન-
દુખમાં પોતાના વહાલાં બચ્ચાં માટે કુળની મોટા-
છતી આમથી અનુભવ લગીર વિચાર સરજો પણ
કરતા નથી. બરેબર દયા દેવી તે વખતે તેમનાથી

પોતે અપવિત્ર થતી હોય તે ખ્યાલથી તેમનાથી
રીસાદ દૂર બેઠેલી જણાય છે. જે વર કન્યાના
સંબંધ થાય છે તેમાં ધણાખરા બીલકુલ
ધાતકી ને અશુદ્ધાશ્રતા હોય છે. આચારવિચારે
તે ઉપરે કળેડાં થાય છે. બરે ! ઉપરનાં કળેડાં
તો દુઃક મુંઝવે માટે હોય વિચારવું કે નિગાનો
લેવાય પણ આચારવિચારે કળેડાં તો આપો
મનુષ્ય બલ દુઃખમાં વ્યતીત થાય છે. વર
વહુને જારમાં અંદમાં હોય છે. ઉપરથી જોનારને
તે જોઈ કઠાય સૂખી જણાય પરંતુ જો વ્યક્તિ
જોનાં-મનુષ્યોનાં-જીવન ચીરી જોશે તો ત્યાં
કળેડાં નહિ બધે લાગેલી સંખ્યામાં માર્ગિક
યા પડવાથી તેમાંથી 'ટપકટ' રૂપીર નિઃસાચાના
અગ્નિથી અગ્નિ જળું જણાશે. દુઃખમાં નરકગારને
ખ્યાલ આવશે. ક્યારે તે સત્તાનાં સંદુપયોગથી
ઉપરથી ઉત્કૃષ્ટ રંગની અનુભવ થશે. અમારા
દુમક બોધેલા આ કળેડાં યું તે પણ સમજતા
નથી, આથી વાંધનારને ખ્યાલ આવશે કે આ
જનતા કેટલી કેજવાએલી ને આગળી વધેલી છે.
જ્યારે જ્યારે અમારા બધુઓ પંચ મેળેને યા
મેળાવકમાં લોગ થાય છે ત્યારે અમુકનો આ
શુંહો ને તમુકનો તે શુંહો, તે માટે દલાણને
દોરે ને તે વસુલ કરે ને કન્યા લેવા દેવા સંબંધી
કાપવાડી કરે છે પણ સાતિમાં આ આમતમાં
સુધારો કરવા બીલકુલ લક્ષ જળું નથી. જણે
કંઈ કરવાપણું હોય નહિ પણ વિચાર કરે
ત્યારે ?

દરે જારીક વિચારથી જણાશે કે માખાશોની
દાંડની સત્તા તેમને ગળે ખસી વળગના જેવી થઈ
પડી છે, કારણકે અમારા દુમરો પછાસાર કે ગરીબ
હોય તે પોતાને ત્યાં છોડીઆને જન્મ ધન્યતા
નથી, તે જો છોડી અનુવરણી તો તરતજ
ટાકીએ તાર બાંધે છે ! આમ જ્યાં બલિ-
ષ્ઠતા કોઈનાની અરહેલના થાય છે ત્યાં જાણ-
સેનિ જાસ કેમ ન હોય ? આમ માખાશો જો
છોડીને જન્મ મકન ન કરતાં છોડીને મુંઝે છે
તો હું કમિયું છું કે તેમ જનનું અવકાશ છે છતાં



કુદરતથી તેમની એ અભિવાધા પૂર્ણ, યાચ તો અમારા હુમક બાધઓ બધા હોકરાજ પામે ને એક પણ હોકરી નહિ. ને પછી બધા હોકરા ખેડા ખેડા માળાઓ ફેરવે. સાતિબહારની કન્યા ખર્ષે નહિ એટલે બધા કુવારાનું ઘત આદરે, તેમ યાચ તોજ તેમની આખો ઉઘાડે. હાલ તેમની વસ્તી ૭૦૦ ઘરથી ઘટીને કટલી રહી છે ને તેનું કારણ શું તે જાણવાની પણ તેમને દરકાર નથી. પર્ણ જે તેમને સાતિયા કન્યાઓ કેટલી છે તો તે તરત કહી આપશે, કારણ તે અમારૂં મોક્ષ છે. જ્યેષ્ઠ કે અમારે ભાં કન્યા જન્મે નહિ ને બીજાની કન્યા મારા હોકરા માટે જોઈએ, એમ ક્યાએ બન્યું સાબળું છે? ને દરેક એવી ધન્યા કરે તો શું યાચ?

આમ હોકરી પારખા ધરની વસ્તી ગણાય છે. તે તો પરધેર જવાની તો તો આપણે તેને માટે નોકક ખર્ચ શા માટે કરવું ને પરણાવવાનું ખર્ચ તો 'બીજા ખર્ચનો જ ઉપારી થયો તે ખર્ચ. વળી હોકી કહી એટલે હુખ્તો ફરીઓ, ને જેથી હુખ યાચ તે વગર તરફ માણસની આહવા કેવી હોય? અને ખરેખર માણસનું આલવુંજ હોય તો આ હોકીઓને ન્યાય દેશપાર કરે આગર દુધ પીતી કરે. આતી પરિસ્થિતિ ને બેદરકારીથી હોકરીને અક્ષર જાનથી અજાન રાખવામા આવે છે. કારણકે તેમને ક્યા રાજા જનું છે કે પાટને (બેવાર કરવા) બેસવું છે? વળી ધરના કુસકારાથી તે કુમળી વયની છોકરીઓ કુસકારી બને છે ને તેથી જન્મદેવ જન્મદારકુલાગ રખે છે. આમ તે અમુલ્ય રત્નને પાથર બનાવી મરે છે. ને ખર્ચના દિસામી હુમકા ઉમર થતા પહેલાંજ લગાતી દે છે. ને તે પછી દ્વારદાસવર્ધિ એ સિદ્ધ સિદ્ધ કરી દેખાડવા પડેથીજ જાને રસ્તો કરી મૂકતા હાલ એમ જાણાય છે. આ વખતે પણ તેનાં બાળા લગન ૧૦ સ્ત્રી ૧૨ થયાં આંસન્યા છે. ખરેખર બેનો વિાચ છે. તે જન્મેલાઓના મગામાં તે નમ્યા દેખાતા મિત્રાલ કેમ કવશે દમો? આમ

અપરિપક્વ ઉમરે થયેલ લગનથી વરવધુ ઢીંગલા ઢીંગલી (બીજાં) શુ કહેવાય) બોની શારીરિક ને માનસિક સ્થિતિ પર શું અસર થાય ને તેનું કેવું પરિણામ આવે તે કહેવાની બાબેજ નજર હોય. આમ પરીણીત બાળકો અજાન રહે છે. અપવિત્ર સરકારો ને વિચારોથી તેમનાં ચોરિત ખગડે છે. ને અનેક છુપા દરોનાં બોમ થઇ પડે છે, પીકાય છે, રીયાય છે ને ધણીજાં અદ્યવનુમાં મેટા ધરના મહેમાન થઇ જાય છે, માખાપના પર અકથ્ય કન્યા-વિધવાનું અસહ્ય દુખ નકતા બેય છે. આ વિધવાઓને આ બાળા ધિગતા અંગારાથી સગાગતી સગડી ગણે છે અને આ વિધવાની છી દયા? સાસરે સંપ નહિ ને પિયરે જંપ નહિ. અનાથ ને ઝોલિં બાળ કેટલી? મેંજા હુણા ખમવા પડે. પોતાની આજીવિકાનો વિચાર વગેરે વગેરે દુખનો પારાવાર નહિ. આ વિવધ માટે કોઇ અન્ય પ્રસંગ લઈશું તે સિવાય આ લખાણ ધણું લાંબુ થઇ જાય એમ છે. વેળા બચેલ વર-વધુ ગેવિષ્યમા પોતાની સંતતિને કેમ ઉગેરવી કેળવવી વગેરેથી અજાન હોવાથી કંઈ કરી શકતા નથી ઉલટું તે સંતતિ જન્મીને મરવાને ચેલ્યું હોય છે ને જીવે છે તો તે અજાન કુસકારી, રોગિષ્ટ, અદ્યાણુવી, સત્ત્વીરીજ, ખામથી, બોકણ, માયકાદમી, વગેરે કુર્જિયાથી બરેલી નીપજ ફનીયામા ભારકતાં થઇ પડે છે. અરે ત્યા છે હાલ પહેલાંના મકારીર જાતુમલ રવામી, અમય કુંવર, શીવાજી, પ્રતાપ ને ભામાચાંદ જેવા વીર રાજા. વળી નાની ઉંપરમાં સત્ત્વીરીય થનાથી દંપતિને ગવિષ્યમા બાળક નથી થતા ત્યારે પ્રવચનને ચકતા દિસતી રોક જોનાર માખાપ ભૂથી જાય છે કે તેમનું સત્યાનાથ તેમનાજ તલે થયેનું છે ને તેથી બાવા, જાતિ, ધાર્મ મંતર કરે છે ને પછી વખત તે માટે ખર્ચ રોગાય છે ને કુટુંબમા ક્રોધ અવનન કરે છે. વળી વરપ્રમા પંસાદીં માણસ હોય તો ઉપર પ્રમાણે રીયોતિમાથી ઉપનન થયેલ પરિણામે કમનું હોકરું ન થયું તો નિચાી વડવા જોય

❀ दिगंबर जैन ❀

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वे सत्योपदेशैस्तुगोपयामि ।

सबोधयत्यधमिदं प्रवर्त्तताम्, दिगम्बर जैन समाज मासम् ॥

वर्ष १९ वॉ.

वीर सवत् २४४८. श्रावण विक्रम सं० १९७८.

अंक १७३३



हमारे पाठक अच्छी तरहसे जानते हैं कि हमारे परमपूज्य तीर्थक्षेत्र, सि-
तार्थ-रक्षा फंड । दक्षेत्र, अतिशयक्षेत्र तथा प्राचीन धर्म स्थानों व प्रतिमाओंकी रक्षाके लिये हमारे पूज्य नेता स्व-
र्गीय दानवीर जैनकुलपुत्र रैठ मणिकचंद हीराचंद जोहरी अतीव परिश्रम काके भारत वर्षीय दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी स्थापित करागये हैं जिसका कार्य सुचारु रूपसे चल रहा है और अभी इसके महामंत्री श्री सेठनीके धर्मप्रेमी और परोपकारी बनने सेठ चुफोटाळ हेमचंदजी बरीवाले हैं जिनके पुत्र सेठ रतनचंदजी बी० ए० इस कमेटीके कार्योंकी देखभाल अच्छी तरहसे कर रहे हैं तथा कमेटीकी पांच बर्षोंकी रिपोर्ट भी छपा रहे है जो शीघ्र ही प्रकाश होगी परंतु हमारे सब भाई जानते हैं कि इस कमेटीका चालू खर्च निम ने तथा तीर्थोंकी रक्षाके लिये कोई स्थायी फंड न होनेसे कमेटीक

कार्यकर्ताओंने पांच वर्ष हुए एक ऐसा सुष्ठु प्रस्ताव प्रदर्शित किया है कि जो किसी गरीब भाईको भी मारी न लगेगा । यह प्रस्ताव सिर्फ यही है कि तीर्थ रक्षामें स्थायी व्ययके लिये प्रत्येक दि० जैन गृहके पीछे सिर्फ एक २ रु० प्रति वर्ष लेना और यह एक २ रुपया सब दि० जैनी भाई दश लाखों वर्षमें अपने २ यक्ष एकत्र करके तं थंक्षेत्र जमेटीको भेज देने । प्रति वर्ष घर पर छे १) देना कोई बड़ी बात नहीं है । तो भी हम महा तक जानते हैं इन प्रस्तावका अमल बहुत ही कम हुआ है अर्थात् आज तक बहुत ही कम रकम तीर्थ रक्षा फंडमें वसूळ आई है इसीसे इस वर्ष कमेटीके महामंत्रीने एक अपोल प्रकाशित की है कि दशलखों वर्षमें सब भाई अपने २ मदिरोंमें एकट्टे होते हैं और मदिरके लागकी उगाही होती है तथा धार्मिक कार्योंके विचार भी इसी मौके पर होते हैं उसी समय सब भाइयोंको जताकर पचापती द्वारा इस तीर्थ रक्षा फंडका एक २ रुपया वसूळ कानेक प्रवर्ष करें जिससे हाएक शहरकी समूची एक साथ भेती जायके । बम्बईके गुजरात डीके मंदिरमें ऐसा ही प्रवर्त्तन हुआ है अर्थात् मदिरमें ही मदिरके



वहिवटकर्ताओं द्वारा सबका एक २ रुपया इकट्ठा होनाता है और इन्ट्री रकम कमेटीको भेजी जाती है इसी प्रकार सब स्थानोंपर प्रबंध होनेकी आवश्यकता है । हमारे अनेक तीर्थोंपर अनेक प्रकारके अण्डे चालू हैं जिसकी रक्षाके लिये द्रव्यकी आवश्यकता पडती ही है इस लिये आशा है कि तीर्थरक्षा फंडका एक २ रुपया देनेके लिये हमारे भाई प्रमाद नहीं करेंगे । इस फंडकी रसीद बुकें भी बम्बईसे भिज सकती हैं । पत्रव्यवहारका पता—मेनेजर भारत० दि० जैन तीर्थक्षेत्र बमेटी, हीराबाग, गिरगाव—बम्बई है ।

*

*

*

हम कई दिनोंसे सुन रहे हैं कि विलायती कपड़े तैयार करनेमें गाय विलायती कपड़े की चर्बी का उपयोग होता है घोर पाप । है परंतु विलायतके एक संसाधकाने यह लिखा था कि इसमें गायकी चर्बी नहीं परंतु कुछ अश्व में डेकी चर्बी का उपयोग होता है इस पर विहार की साधु महाशयके मंत्रोने ध्यानस्थान वेशरी पत्र (वर्ष)में एक पत्र प्रकाशित कराया है उसमें लिखते हैं कि—'एक निश्चेष्ट दिवसी श्लोक सारनिग' नामक अंग्रेजी पुस्तकके देखनेसे पता चलता है कि मानचेष्टर (इगड)के बने हुए कपड़ोंमें जाह्न और चर्बी की जाती है । यह पुस्तक का जनवरी १९२२में छपी है । मा चे स्ट इमोर्ट एन्ड कंपनी ६९ स्ट्रिट लंदनमें मिलती है । इस पुस्तकके ७ और ९ पानमें चर्बी लगाई जानेकी चान लिखी है । पान ११-१२ और २२में साफ २ लिखा है कि

चैल, गाघ और बैसोंकी चर्बी जाती है । कोबील और छुम साहबकी पुस्तकों में लिखा है कि विलायती रंगीन कपड़ोंमें १०० गैलनमें १०० गैलन गाय खूनअरका खून (लोह) दिया जाता है जिससे रंग पका होनाता है आदि ।

यह एक ऐसी विथ्वत बात प्रकट हुई है कि जिसको बांचकर हर एक जैन, हिन्दू, पारसी, मुसलमान सभी हिंदुवासियोंके हृदय कंपावमान होंगे कि जिस विलायती चटकमटकदार कपड़ोंकी हम वापरते है उसके तैयार होनेमें तो पारोवार हिंसा होती है जिसके पापके मागी हम भी होते हैं और जिसके वापरनेसे हमारा धर्म और धन लुप्त जा रहा है ।

ऐ जैनियों ! अब तो सचेत हो जाइये और अपने घर और मंदिरोंमें जहां २ विदेशी अस्पर्श कपड़े रखे हों उनको पहार कर दीजिये और प्रतिज्ञा कर लीजिये कि हम अब कभी भी विलायती कपड़े नहीं खरीदेंगे । अब देशमें हमारे पुण्य कर्मवीर नेता महात्मा गांधीके उपदेशसे हाथसे बने और हाथसे बुने टिकाउ गांधी प्रचार हो रहा है और ग० गांधीजीका कहना है कि यदि सारा हिंदुस्थान विशुद्ध गांधी ही उपयोग करने लग गाय तो प्रतिवर्ष हिंदुके १९०००००००० (सवा जनम २०) परदेश जाते बच जायेंगे और हिंदुके प्राचीन शिवाका उदार हो जायगा । स्वदेशी गांधी वापरनेमें धन धर्म समीका बचाव होता है तब क्यों नहीं अब विलायतीका मोह छोड़ जाय ? यहाँकी मिलोंमें भी कपड़ा साफ करनेमें गायकी चर्बी का उपयोग

होता ही है इस लिये हिंदकी मिल्की कपड़ोंका वर्तव भी न करना चाहिये तथा रेशमी वस्त्र हिंसात्मकी अतीव अपवित्र है यह सब कोई जानते हुए भी खुशी से वापरते हैं उसका मोह अब तो त्याग करना चाहिये और विशेष करके हमारे मंदिरोंमें तो रेशमी या विशयती सूती कपड़ेका एक भी वेष्टन, धंदोवा, तोरन, घोती कुपट्टे आदि नहीं होने चाहिये । शास्त्रोंके समी रेशमी वेष्टन बदल कर उसपर विशुद्ध गाढ़का वेष्टन पीला रंगके चढ़ा देना चाहिये । आशा है हमारे इस दशकाशणी पर्वमें हमारे अनी माई इस बातका घर २ उपदेश करेंगे और विशुद्ध गाढ़का ही प्रचार होनेके लिये घर तथा मंदिरोंमें प्रयत्नशील होंगे ।

* * *

हमारा सोलहकारण पर्व इसी वद्री १ से प्रारंभ हो चुका है और आश्विन पौडशकारण पर्व वद्री १को इसकी पूर्णा में कर्तव्य । हुति होगी । इस पर्वमें

हर एक मंदिरमें अभिषेक, मंत्रपूजा, सोलहकारण पूजन, तत्पार्थसूत्र पाठ, सहस्रनाम पाठ आदि होते हैं परन्तु हम जहां तक जानते हैं ऐसे बहुत ही कम मंदिर होंगे जहां सोलहकारण धर्मकी अलग २ मावनाओंका गित्य अर्थ सुनाया जाता हो । कई माई बहिन यह मन भी करते हैं परन्तु वे सोलह मावनाओंके नाम तक पूरे नहीं जानते हैं तो अर्थकी तो बात ही कहा रही और विना मंत्रका माहात्म्य जाने उसका फल कैसे इसलिये हर एक मंदिरमें

इन दिनोंमें नित्य दर्शनविशुद्ध्यादि सोलह भावनाओंका अर्थ सुन कई बहिनोंको सुनाना चाहिये तथा तत्त्वार्थके अर्थ भी नित्य होने चाहिये । सोलहमावनाकी अलग प्रस्तुत भी मिलती है तथा श्री रत्नकरंड श्रावकाचार टीकामें भी इन भावनाओंका विस्तृत वर्णन है उसका वाचन अवश्य होना चाहिये ।

* * *

हमें जहां तक मालूम है हमारे अनेक मंदिर और तीर्थ ऐसे हैं जिनमें भंडारका द्रव्य । हजारों तो क्या लाखों रुपयेका फंड है परन्तु

उनके शास्त्रमंडार देखेंगे तो वहां इनेगिने ही शास्त्र होंगे । हम समझते हैं कि जहां तक हो हर एक शास्त्रकी एक २ प्रत तो अवश्य होनी चाहिये इसलिये जहां २ के मंदिरोंमें जो २ ग्रंथ न हो उसकी एक २ प्रति मंगा लेनी चाहिये । लिखित न बन सके तो गितने शास्त्र छप चुके हैं उनकी एक २ कापी मंगा लेनी चाहिये । हमारे घरके द्रव्योसे नहीं तो मंदिरके भंडारके द्रव्यसे शास्त्र खरीद कराना पूरा कर्तव्य है और भंडारके द्रव्यका सूचा उपयोग करनेका है । द्रव्य गमा रखकर व्याज बढ़ा २ कर खुब रकम इकट्ठी काना और धार्मिक कार्यमें उपयोग न करना कुछ भी कार्यकारी नहीं है । आशा है इस पर्वमें भंडारके द्रव्यका उचित व्यय करनेके लिये हर एक पंचावती प्रयत्नशील होंगी ।



हइने गतारुमें : ऐलक पत्रालाठ दि० जैन
सास्यती भवन ' बम्बईकी
हमारी अंतरंग प्रशंसा करते हुए लिखा था
भावना । कि इसमें ऐसे वाचनालय
(लायब्रेरी) का प्रवव हो
नेकी भी आवश्यकता है कि जिसमें सब जैनपत्र
'मगाये जाय और नियत समयमें वेठकर सब
जैनी माई उस वाचनालयका लाभ लेसके तथा
ऐसा प्रवव नहीं हुआ है सो होना चाहिये
आकि, इसपर इसके मैत्री ठाकरदासजीने " जैन
गजट " अंक २० में " वापडिगानीकी अंतरंग
भावना " नामक लेख छपाया है उसमें लिखा
है कि वापडिगानीने तो चारों ओर हल्ला मचा
दिया है, जैनमित्र और दिगंबर जैन न देना
हो तो नहीं दधें परंतु वाचनालयके विषयमें ऐसा
बाहिरमें क्यों लिखा आदि, परंतु समाजने हमारा
लेख पढ़ी ही होगा उसमें हमने सिर्फ वाचना-
लयके प्रवव होनेकी ही सूचना लिखी थी, पत्र
देने न देनेकी रायके विषयमें बात ही नहीं थी।
राईय पर्वत बनाना और जरा २सीबातमें समा-
जको बार २ मदकाना, ठाकरसीदासका ही
काम है ।

सुलभ जैन ग्रन्थमालाके दो नये ग्रन्थ ।

धर्म-परिक्षा—श्री अमितगति आचार्य कृत
मनोवेग पश्चवेगशी अर्धम बोधशयक कपाका हिन्दी
अनुवाद । १० २५० और मू० सिर्फ ॥२॥

तीर्थयात्रा दर्शक—इसमें अपनी सभी
यात्राओंका परिचय है । १० २७५ और मू० सिर्फ ॥१॥
मैनेत्र, दि० जैन पुस्तकालय मुरत



कुंथलगिरी—के श्री कृष्णभूषण ब्रह्मचर्या-
श्रमका दशरां वार्षिकोत्सव श्रावण सुदी १३-
१४-१५ को होनेवाला था ।

'विश्वबंधु'—नामक नवीन मासिक पत्र
गोलाछारीय दि० जैन समाजकी ओरसे पं० बशी
वरनीके संम्प्रदायमें जलौरा (झासी) से शीघ्र
ही प्रकट होगा ।

कुंरकुंथ (सोलापुर)—में देवी कीरंगीबाईको
बकरे, भैंस, मुर्गका वध होता था वह वध होकर
पुष्पा (पूणपोली)का नैवेद अर्पिते चढ़ेगा ।

अपभ्रंश ब्रह्मचर्य आश्रम—हस्तिनापुरसे
जयपुर आगया है और सुचारु रूपसे चले रहा
है । आश्रमकी जनवरीमें (८३४॥२॥) फरवरीमें
(१००) मार्चमें १७४॥१॥-अप्रैलमें ११९७)
मईमें १५४ और जून माहमें २००६॥१॥ की
सहायता मिलीथी । तथा १००० भोती जोड़े शेट
मदनमोहनजी, २० थान गांवके विवीचदनी,
तथा श्री शंकर मिठाई आदि दानमें मिले थे ।
दातारोंको कुछ न कुछ सहायता हम आश्रमकी
दरखास्तगी पत्रोंमें भेजनी चाहिये ।

कामा—में मासो पदी १ से मासो सुदी
१५ तक राठवासे तीन छोड़ विधान होगा ।

सतना—के महावीर जैन औपचारिक गव
वर्षमें १६९ दसिबोने लाभ दिया था ।

सिद्धवरकूट— क्षेत्रमें इस साल माधुवा (गिजाई) की उत्पत्ति नहीं हुई है इस लिये यात्री गण यात्राको आसके हैं । इस क्षेत्रसे २ चक्रवर्ती और १० कामदेव कौन २ मोक्ष गए ।
उन्के नाम चिनको मालूम हों भेजना चाहिये ।

म्हैसुर—में गत ता० ९ को जैन एन्गुके-शन फंडकी सभा हुईमी उसमें नातेपुते निवासी शेट रामचंद धनजीने ५०१ सहायता की थी ।

दशलाक्षणी पर्व—में ५० देवकीनेदननी दा श्री देहलीसे कूचामें ठहरेंगे और धर्मोपदेश करेंगे ।

आवश्यकता—ऐलक पत्रालाठ दि० जैन सरस्वती मनेन बम्बईके लिये एक उपदेशककी आवश्यकता है जो वर्नाटक म पाका ज्ञानकार हो । पता—ठाकरसीदास जैन, सुखानंद धर्मशाला मुंबई नं० २

तारंगाजी—में तारंगाहिउ स्टेशनपर धर्म शाला बनानेके लिये शेट डाह्यामाई प्रेमचंद जौहरी (बम्बई) ने तीन हजार रु० देने स्वीकार किये हैं ।

तीर्थ क्षेत्र कामेटी—के महामंत्री सुचित करते हैं कि जुगमदिरदास जैन माराबंकी वम टीके कुछ रु० का पुत्राला करके चला गया है । सब माई ऐसे आदर्मीसे सावधान रहें ।

प्राचीन आवकोट्टारिणी सभा—जन माममें व० शीतलप्रसादजीने रांची मानभूम भिलेमें भ्रमण करके मानभूम सिंहभूम गेजेष्टि-रसे प्राचीन आवक तथा प्राचीन प्रतिमाओंका पता लगाया है कि मयूरभूममें बहुत जैनी थे व वही २ प्राचीन प्रतिमाएँ, २००० वर्षकी हैं । उनके चित्र पार्श्वनाथ व महावीर स्वामीके मयूर

गन अर्किलोभी पुस्तकमें दिये हुए हैं तथा मानभूममें पाववीरमें ५०७ मंदिरके अवशेष ९—दृश्य उंची पत्रप्रभु व अन्य मूर्तिवा है । यहां मानभूम-रांचीमें १०००००से अधिक प्राचीन आवक हैं जो पार्श्वनाथ भगवानको कुलदेवता मानते हैं, जीवदया पाठते हैं, आमिष मोहन व मद्यभान नहीं करते, शुद्धके हाथका जल तक नहीं पीते, गूरर आदि कुछ नहीं खाते, दिनमें मोहन अच्छा समझते हैं । इनको आवक धर्म समझानेकी आवश्यकता है तथा जहां २ ग्रामोंमें चैत्यालय नहीं है स्थापित होने चाहिये तथा प्राचीन मंदिरोंका जीर्णोद्धार होनेकी तथा प्राचीन प्रतिमाओंके संग्रह करनेकी आवश्यकता है इस लिये कलकत्तामें स्याद्वाद प्रचारिणी सभाकी ओरसे रा० व० लाल लक्ष्मीचन्दजीके समापतित्वमें एक विराद समा हुई थी जिसमें २० शीतलप्रसादजीने इन मानभूम व रांचीके प्राचीन मंदिर व आवकोंका वर्णन करके इनके उद्धारकी आवश्यकता बताई जिसका समर्थन ५० जयदेवजी, शेट बेननापजी, ५० शमनलालजी आदिने किया और सर्वसम्मतिसे “प्राचीन आवकोट्टारिणी सभा” की स्थापना होगई जिसका उद्देश यह निश्चित हुआ कि बंगाल और बिहार प्रातमें जो प्राचीन आवक हैं उनको आवक धर्म समझाकर उद्धार किया जाय, उनके स्थानोंमें चैत्यालय व पाठशालाएं स्थापित किये जावें, पुस्तकोंका प्रचार किया जावे व प्राचीन मंदिरोंका जीर्णोद्धार किया जावे । इसके कार्यकर्ता इस प्रकार नियत हुए संरक्षक, व० शीतलप्रसादजी, समापति शेट रतनलाल राजी, उपसभापति—शेट दयाचंदजी,



शेठ रामचन्द्रजी वं शेठ मदनलालजी पांड्या, मंत्री शेठ बैमनाथ ध्रावगी नं० १६० सुतापट्टी (कलकत्ता), उपमंत्री शेठ मानमलजी, कोषा-
ध्यक्ष शेठ प्रेमचंद पन्नालालजी, समासद पं० जय-
देवजी, पं० हम्ममलालजी आदि २९ महाशय ।
इस कार्यके चलानेके लिये अपीठ होते ही
२५०) स्याद्वाद प्र० समाने दिये और तुरंत ही
नई २ रकमें बोली गई अर्थात् करीब ६०००)
का चेदा हो गया जिसमें १०००) सेठ चन्द-
नमलजी ८००) सेठ जोर्खाराम गुंगरान, ९००)
सेठ प्रेमसुलतजीने दिये हैं । इस वर्ष प्रभावनाके
कार्यमें भारतके सभी जैन माइयोंको, सहायता
चाहिये । मंत्रीसे पत्र व्यवहार करना चा-
हिये व प्राचीन श्रावक नामक पुस्तक (इसके
विवरणकी) प्रवृत्त हुई है वह कार्ड लिखकर मंगा-
लेनी चाहिये । पुन्य-प्र० शीतलप्रसादजीने
कलकत्तामें ही चातुर्मास किया है और इसी
कार्यमें अपना विशेष योग दे रहे हैं ।

रतलाम योर्दिगमें आवश्यकता-
सेठ माणेरुचंद पानाचंद दि० जैन बोर्दिग रत-
लाममें दि० जैन कौमके विद्यार्थियोंकी आवश्य-
क्ता है (हमइके विद्यार्थियोंको प्रथम पसंदगी दी
जायगी) । प्रवेश होनेवाले तुरंत ही सुप्रिन्टेण्डन्ट
को अर्जी में ।

घम्पईमें-गत ता० १५ जुलाईको शेठ
नरयुता पामुता एडीचपुर, पवार वं और समा-
वरके सहित मुलागिरी क्षेत्रके मुद्दमैला हाथ
मुनाया था ।

लेखक चाहिये-प्रेतक पन्नालाल दि० जैन
सारस्वती मानने लिये कई लेखकोंकी आवश्यकता

है तथा ऐसे लेखकोंकी भी आवश्यकता है जो
कानडी लिपिसे नागरी लिपिमें लेख लिख सकें ।
पत्रव्यवहार-मंत्री सरस्वती मवन, सुखानंद धर्म-
शाला बम्बई नं० २ से करें ।

परीक्षा-मालवा प्रां० दि० जैन परीक्षा-
लयकी ओरसे परीक्षा मार्दों वदी ८ ता० १६
अगस्तसे सभी कक्षाओंकी ली जायगी ।

जैनन्याय-की परीक्षा लेनेका प्रबंध ईन्दौर-
के सं० साहित्य मवन परीक्षास्थाने किया है ।
परीक्षा जनवरीके अंतमें होगी । पता-मंत्री परी-
क्षास्थ, चिवाचानी-ईन्दौर ।

मद्रासमें-सेण्ट्रल जैन लाइब्रेरीकी स्थापना
जैन गेष्टके स्मृदाक सी० मल्लोनाथके प्रयत्न
से प्रारंभ हुई है । जैन माइयोंको पत्र व पुस्तकें
भेंट भेजना चाहिये ।

महाविद्यालय-मधुरासे व्यावरमें छाया
गया है । और अविद्यता व० ज्ञानानंदजी हुए
हैं । व्यासके माइयोंने १५०) मासिक सहाय-
ता देना स्वीकार किया है ।

स्यागियोंका चातुर्मास ।

निम्न लिखित स्यागी ब्रह्मचारियोंने नीचे लिखे
स्थानों पर चातुर्मास किया है ।

मुनि चंद्रसागरजी-परतापुर (बांभारा, मेवाड़)
प्रेतक पन्नालालजी नांदगाँव (नासिक)

व० शीतलप्रसादजी नं० २ रामा उदमनस्ट्रीट कलकत्ता
उदासीन नांदपट्टी " " "

" मेबीयालजी " मंदसोर (मालवा)

" पं० पन्नालालजी गोवा " "

" घामीलालजी " " "

व० छोटेराजजी व्यास (रामपुतान)



त्र० ममीरधनी वर्णी व्यावर ॥

मुनि आदिमागरजी—बाहुबली पहाड

(हापकलंगडा—कोटहापुर)

मुनि शातिमागरजी—ऐनापुर (कुडची, हुबली)

त्र० ज्ञानानंदजी—नयपुर (६० त्र० अथप)

उदासीन ५० दीपचंदजी मास्टर—दाहोद

त्र० सुखानंदजी—हांसी (हिसार)

प० सुरेंद्रकीर्तिजी—सोनोजा (पेटवाड)

विशेष त्यागी ब्रह्मचारियोंके चातुर्मासका ह्रास
जिनको मालुम हो छिल भेजें तो प्रकट करेंगे ।

सावधान—जिस अनंतकीर्ति मुनि
नामधारी धूर्तका समाचार हर्म आगे प्रकट कर-
चुके हैं उसीके विषयमें कुडलपुरके त्यागी
गोकुलप्रसादजीकी सूचनसे मौजा किरये
(सागर) से हमारे पास खबर आई है कि यह
धूर्त जेठ मासमें यहां आया था व शास्त्र विरुद्ध
विपरीत क्रिया व बहुत अनर्थ करगया था, मांस
पक्षी मांस के बरोंमें, शुभकर मोहन तक छिया
था इसलिये इस धूर्तसे सब माई सावधान रहें ।

(२) दूसरे मुनिनामधारी धूर्त हर्षकीर्ति (दाहोद)
की चेष्टी चतुर्मास (आनिष्ठा नामधारी) ने
मीटर (मेराड) में जाकर चातुर्मास कर दिया
है और स्त्रियोंको बहकार कर खून द्रव्य जमा
कर रही है । मुना है कि केशलोंचके बहनेसे
अमी अभी करीब ५००० रु मोली समाजसे छुटकर
हर्षकीर्तिके पास पहुंचाये हैं । हमारी महासमाके
उपदेशकोंको ऐसे स्थानपर भेजकर लोगोंको
सचेत करना चाहिये ।

जैन जेलमें—विठोरिया (सागर) में हरि-
श्रद्धा जैनको सराज्य कार्यमें योग देनेके लिये
३ माहको सजा हुई है ।

नियमनो भंग.

गुजराती दिगम्बर दशा दुभुड आटे.

दरेक कोमनी अदर निराह तथा लगन जेवा
उपयोगी, व्यवहारि प्रसंगो भा कोमना डाव्या
नेवाजो पोसानी ओकनीन स्थिति पर नदि वीथी-
रता कोमना दरेक अनुज्योनी स्थिति ध्यानमा
छध समय सज्जो तथा वातोवरण वीगेरे दरेक
आगतो जेष्ठ आत भेनधी विचारी डेवण निरनार्थ
सेवा, डेवण कोमना दितार्थे जलनवा साह, दह
व्यतथी नियमोनु अधारणु रये छे, अने ते
नियमोनु कोमना दरेक अनुज्यो पासे पावन करावी,
कोमने जनन दिशामा कमे कमे लक्ष जवातु-
सोभाग्य प्राप्त करे छे

आज सुधीमा आपणु धव्ते रथजे ओछर यध
अहु गहु उडापोड करी तेमज दर वरें सभाज्या
भरो सभाज्य दितनी अर्थी करी सारा सुधारा
धर्मा छे, वधारे, पडती तेमज भयान इदियोने
उपेडी इधी दानो छे, निवाह, लगन, सज्जधी,
ने इदियो अधोगतिमां लक्ष जनार दती, तेने
लक्ष सुधारी सहेज आगण धध्या छीजे
ओम भानी आपो भोथी, तेधामा तो लगननी
सरभात यध, आजसुधी डेकना दोग छेजाने,
दतो आ वरे उमड दोग छेजाने वगर सुधते
लगनना ददावा सेवाने जप जप करी करावी.
ओक जे भीतिजे लगनना वाज्य धेरधेर वाग्या,
बडाणु सेवाना कोमने कयास रही नदी. तेमज
पहला सेवाना के आपरामा पणु म्यास
रानी नथी

कथावागोओना सहेज दयाधुथी धव्ता रथजे
लगनवेता वरपसे सवया, देदा, पहला आपी
उत्साव वधार्थो छे, तयारे डेटनेक डेकाजे श्रीमता
भनो यगडाट डेकनी राभवा साउ अपग ददा-
रता दलोनी प्रेरा यध लीधो छे, आरी, गुप्त
द्वार इतिव अविचारी नसतर अतावी द्वा आटे
नियमनो भंग करता दतो

समाजनेओ अवधार—जे अधनी अजान छे,
साथो अने अनुकुल उपदेश ददाया पडी राम-

નાયકો અથવા સમાજ શુભેચ્છકો અથવા કવિને આદરણીય રૂપે ગણવા, આર્જન પાછળના વિચાર ક્યો સિવાય, દૈવી આવાજને શા માટે ઠોકરે-મારતા હશે ? આવી ઠોકરોથી તો અનેક નિય-મોતું ઉલ્લંઘન થઈ કોમમાં અધેર-વધશે, અને તેથી ઉત્તરિને બદલે અધોગતિ થશે.

કર્તવ્ય ભંગ—માણસ થાય છે તેના મુળ રોગ કોણ તપાસે છે. નખો ધણી આખળા પર શુરો, જે ગત આપણે કરી રહ્યા, હિંમે. સુખ, દુઃખ કર્મોધીન છે, જેવું કરો તેવું ભરો, જે નિય-માનુસાર આપણે આ “સંસાર મોઢાની સફર કરી રહ્યા છીએ, સફર કરીએ છીએ, એટલું” સમજીએ છીએ, પરંતુ નથી સાચા સુકાનીને જોળખતા, કે નથી જોળખતા દિશાજ્ઞાને. આપણે તો જીવન પુરું કરી રહ્યા છીએ. પછી બધે દરિયામાં રહીએ. કે જંગલમાં ફરીએ, તે કયા જોવું છે ? બિચારો નિર્દોષ કન્યા-સનોનાં જીવન વિઠાવવાનો માર્ગ (યોગ્ય લગ્ન સમય) શોધવાને અસત્ હોવાથી યાદ પશુ સમયમાં, યાદ પશુ વયે, અને ગમે તેવા પર દિલ્લે દેખાડેલા, માનેલા, વર સાથે અમુક કન્યા-સનોનાં આપી (વિપર કહેલી કહેવતને) ખરી પાકી તમારું બગાડી ખીંચવું બગાડી રહ્યા છે, યોગ્યયોગ્ય લગ્નમંથાને વિમળી કન્નેડા રૂપી હીંગલ હીંગલીની રમતમાં કન્યાના જીવનની રૂપરેખા દોરતાં ખરેખર આંસુ આવે છે. અદ્યોસ થાય છે કે પુત્ર અથવા પુત્રીને સમાર સીડીની સાચા અનેક ધમધોએ ચડવનો મત્ર આપવાનું કહી, કર્મ બંધને જુલો પહેલે-વ પગધોએથી અટાક રાખી ગો, બમો, રૂપીઆની નજીવી રકમ પદ્મમાં આપી અપાવી આપણો કેલ્કા કૃતબ્ધ બને છે અને કર્તવ્ય બન થાય છે.

વ્યાય કોણ આપે—જ્યારે મળ પાપી થાય છે, ત્યારે પ્રભ પશુ પાપી થાય છે. પ્રભ પાપી થાય, તેમા મળની મમતિ દોષ તો ને તાટ્ટની પુરી રહ્યા થાય આવા પરિવર્તનમાં મમાજો મરે આમોતો, પ્રભને મરે મળ

અને વિશ્વને માટે મેધરાજ કર્તવ્ય ભંગ નીવડે તો જગતનું બેલી કોણ રહે !

સાવિ સેવક,

જીવિલાલ વીરચંદ ગાંધી—રણસણવાળા.

હરિરત્નો દુઃખદ બનાવ.

‘દિગંજ જૈન’ના ગત જેઠા આસના આઠમા જહેર (મહીકાંઠા) મામમા ગયા પશુસંજ્ઞના વખત. નાં એક ભય કર બનાવ બન્યો હતો તે વિષેની એક ચોપડી કે જેનું નામ ‘ધર્મ’ કે ‘અધર્મ’ નામે પેચ્છેટ છપાવ્યા હતા અને તે બનાવનો હતો સુધી નિર્ણય આપ્યો નથી તેમ એક મિત્ર લખે છે, તો તેના જીવાખમાં નીચેના જીવાશે પ્રગટ કરવા મહેરબાની કરશો.

વિશેષ આ ચર્ચાપત્રીએ પોતાનું નામ પ્રગટ કર્યા સિવાય ચર્ચા કરવાનું શરૂ કર્યું છે તે ધણી અસોસની વાત છે. હતો સુધી તેવજી મિત્રનામાં દિગંજ આવી નથી તેવું દેખાય છે પણ દુઃખ અરજ કર છું કે હવે તેમણે સ્વરાજ્ય માટે તૈયાર થઈ દિગંજવાન બનવું જોઈએ અને મને આશા છે કે હવેથી જ્યારે જીવાખ તથા ખીંચી લખાણ લખશે તો નામ સહિત લખ્યા વિની રહેશે નહીં.

‘ધર્મ’ કે ‘અધર્મ’ .જેનો નિર્ણય હતો : સુધી મામ રસિંદપુરા બાધ્યો લાખ્યા નથી, તો હું સમજ રિંગરી બાધ્યોને અરજ કર છું કે બાધ્યો, તમે આ જગતનો નિર્ણય લાવો, નહિ તો આ પશુસંજ્ઞ નહીં આવે છે અને તેમાં નિર્ણય નહિ થાય તો આના કરવા પણ ગંભીર બનાવ બનવા સમજ છે તો મહેરબાની કરીને આનો નિવેડો લાવશો.

દરેક દિગંજ તેમજ રસિંદપુરા બાધ્યોને અરજ કરવામાં આવે છે કે આ બનાવનો નિવેડો ફરી રીતે લેમો લાવવા પ્રયત્નો તો પત્ર દ્વારા આ લેખકને જરૂરથી અથવા તો આ લેખકમાં પ્રગટ કરશો એવી આશા છે. મી. દરજી વન રાવચંદ તેમજ અમ્ય નિહાન ગુડમો મળીને આનો નિવેડો લાવશે તો હું મને આભારી રહશું. એમ અરજ.

જી.મ. ડી. શાહ નરમીપુરવાળા,

श्री स्याद्वादविद्यापतये नमोऽस्तु ।

जैन काव्योंका महत्व ।

(जैन साहित्य सभा लखनऊका लेख न० ४)

(लेखक—प० बनवारीलालजी स्याद्वादी—गोरेना ।)

चन्दारुन्दपारिघटविलोलिताक्ष चन्दारकेश्वराकिरीटतटावकीर्णः ।
मन्दारपुष्पनिकरैर्विहितोपकारं चन्दामहे जिनपतेः पदपद्मयुग्मं ॥
मुकुरविमलगण्ड चन्द्रसंकाशतुण्डं गजकरभुजदण्ड कामदाहाग्रिकुण्ड ।
वितुतमुनिपण्ड गोमठेशप्रचण्ड गुणनिवहकरण्ड नौमि नामेयपिण्ड ॥

आध्यात्मिकजननी, अहिंसाधर्मप्राणा, साहित्यसुन्दरी, परोपकारशीला, विज्ञाननयना भारतवर्षीधार्यजातिके पूर्वतिहास पर दृष्टि वृष्टि करनेपर यह जाति चारित्र्योन्नता, अक्षयजानरत्नोंकी प्रसवित्री सुन्दरतया प्रतीत होती है, किन्तु निरपेक्ष हम यह भी कहेंगे, कि तत्सामयिक कुछ विषयलक्ष्यटियो एव च स्वधर्मोन्मत्तगणोंने प्रज्वलित-द्वेयाग्निसे दग्ध कर इस आर्यजातिके सर्वोत्तम पूर्वतिहासको कलक-कालिमामय बना दिया है । इस प्रज्वलित विशेषाग्नि हीके कारण गगनस्पर्शी उत्तमशृङ्गसमन्वित हिमधवलपर्वतमाला, एव भीतिजनक नीलवर्णसलिलराशिपूर्ण समुद्रसरोखे प्राकृतिक आत्तरसकोंके उपस्थित रहने पर भी, सुसम्पन्न ज्ञानालोकसे प्रकाशित अत्यन्त बलिष्ठ धार्मिकवसुन्धरा भारत पर विजयी और विजातीय नीच वैदेशिकदस्सुदलके पुन पुन आक्रमणोंसे, भारतवर्ष विध्वस्त विषमस्त और परपदान्त होकर अपनी अतुल्यनराशि विद्या, प्राचीनमम्यतासम्पत्ति, ऐश्वर्य, आत्म-गौरवको पश्चिमीय सागरमें समाधिस्य कर अज सुदृढीभर पश्चिमीय जनोकी तन्त्रता (परतन्त्रता)के जैंगलमें फँसा हुआ अपने जीवनमरणके प्रश्न दल करवानेकी अवस्थामें उपस्थित हो गया है । प्रिय पाठकवृन्द ! यहापर ही मेरे अनुपपान होकर समाप्त नहीं हो जाते । किन्तु—

इस चिह्नेषाग्नि तथा च स्वधर्मोन्मत्तता ही के सचसे श्री अहिंसारातायुक्त, मान्यक्षमामाणिस्य, मार्दव्य द्र, गानीवाचार्य, शौच्यतीर्थमूमि, सत्यरत्नविभूषित, सयुग्म परिस्तावेष्टित, तपोमूमि, त्यागजननि, आर्किचन्य मूलसे शोभायमान, विश्वमेमचन्द्रकी उग्रोन्माका प्रकाशक, ऐसे जैाधर्मका सार्वभौमिक प्रसारन करनेके हेतु, विपक्षियों जैनधर्मके प्रचारकोंके नि भीम कष्ट प्रदानके साथ साथ सदस्यों निमन्त्रितोंको लिय विन्तित, जैनसाहि-

त्यके लाखों ग्रंथराजोंको नष्ट कर, जैनप्रभित्विसे जो संसारको वंचित किया है। शायद इसीसे दैवने प्रज्ञोपकर भारतमाताके ३० कोटि जनोकी स्वतंत्रताको अपहरणकर दारुण दुःखसे दुःखित किया है। बौद्धमतकी राज्यसत्ताके समयमें जब कि भारतवर्षने प्रशान्त जैनधर्मको विदा फानेमें किसी प्रकारकी भी कसर नहीं रखी थी, वृहद्ग्रंथराजोंके साथ २ जैनमहाकाव्योंका भी वृहदंश नाशको प्राप्त हो गया था और जब कि श्री शंकराचार्यने जैनधर्मको नष्टीभूत करनेके हरादासे वर्षों गरम पानी कराकर असंख्य जैनग्रंथराजोंको अग्निदेवकी भेंट करदी।

हम नहीं लिख सकते हैं कि जैनसाहित्यके प्रसार करनेके कारणभूत महाकाव्योंका इस पूर्वतिहासमें कितना प्रक्षय हुआ होगा।

अब हम अपने विचारशील पाठकोंको इस वृहत् पूर्वतिहाससे अलग कर प्राप्त अभीके करीब ३०० वर्ष पहिले (अर्थात् मुगल बादशाह औरंगजेब) के जमानेमें ही लिखे चलते हैं।

मुगल बादशाहतकी जड़को काटनेवाले इस बादशाहके जमानेमें हिंदू ग्रन्थोंकी तरह बितने ही महीनों तक जैनग्रंथराजसमुदाय गाँवोंकी तरह जलते रहे। भारतवर्षीया-ध्यात्मिक क्षय करनेके लिये जो भारतके असंख्य ग्रंथभंडार पवनगणोंने नष्ट किये उसमें भी महाकाव्योंका प्रबल क्षय हुआ।

उस ग्रन्थराजोंके प्रक्षय युगके समय धार्मिक वीरोंने जो ग्रन्थराजि कंदरा गुहादि गुप्त स्थानोंमें छिपाकर रक्षा की थी, उसमें भी बहुग्रंथराशि हमारे विद्याप्रिय पश्चिमीय विद्वान् (जर्मनी, इंग्लैंड, आस्ट्रेलियादिके रहनेवाले) प्रलोभन या दरसे परतंत्र जैन संसार एवं च कईव्यपधसे विचलित भारतवर्षसे लेगये। इसमें भी वृहद्वशिष्टभाग भट्टारकों, अन्य भंडारोंमें दीमक, अथ श्रीदोंका आहार हो रहा है। अतः जो कुछ-भी काव्यशास्त्र समुपस्थित है, उन जैन काव्यग्रन्थोंका गहरा भव्य पाठनोंकी ही भेंट करता हूँ।

‘ जैन काव्यका महत्त्व ’ इस शब्दके उच्चारण करनेसे सहायके हृदयमें जो भाव प्रादुर्भाव होता है, वही ‘ जैन काव्यका महत्त्व ’ इसका विमलम्भार्थ है। इसमें शब्द हैं जैन-काव्य-महत्त्व।

यहां जैन शब्द संबंधी वाचक होनेपर भी इसका अर्थ मुख्य होनेसे इसके व्याख्यानकी स्थिति न करके ‘ काव्य ’ शब्दका लक्षण लिखनेसे प्रारंभ करते हैं। किसी भी चीज़का लक्षण या स्वरूपमें जबतक सम्पूर्ण उदात्त नहीं होता है; तब तब सहायकोंके हृदयाकाशमें उस पदार्थकी सुनिर्मल उज्ज्वल छवि नहीं बनसकी है। अब उस काव्यका लक्षण ‘ काव्यप्रकाश ’ ग्रंथके रचयिताने हम प्रकाश किया है—

“तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्घनी पुनः क्वापि” (काव्यप्रकाश)

अर्थात् गुणसहित दोषरहित शब्दार्थको काव्य कहते हैं । वह शब्दार्थ सर्वत्र सालंकार हो कहीं ? अस्फुट अलंकार होनेपर भी काव्य कहा जासकता है । •

पंडित जगन्नाथने “रसगंगाधर” नामक ग्रंथमें इस प्रकार कहा है—

“रमणीयार्थप्रतिपादकशब्दः काव्यं” (रसगंगाधर)

इसका अर्थ प्रायः स्पष्ट ही है ।

और “साहित्यदर्पण” नामक ग्रंथके कर्ताने काव्यका लक्षण इस प्रकार किया है—

“वाक्यं रसात्मक काव्यं” (साहित्यदर्पण)

अर्थात् रसात्मक वाक्यको काव्य कहते हैं । लेकिन जब हम उपर्युक्त लक्ष्यके ऊपर दृष्टि वृष्टि करते हैं, तो हमसे यह सब लक्षणोंकी विलक्षण सृष्टि सृजनी है । क्योंकि काव्यका प्रयोजन इस प्रकार कहा है—

“काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये ।

सत्यः परानिर्वृतये कान्तासंमिततपोपदेशयुजे ॥”

अर्थात् जिसमें कीर्ति हो, अर्थप्राप्ति हो, लोक व्यवहार ज्ञान हो और असंगलका विनाश हो, झटिति (जल्दी) विलक्षण सुख हो, कान्ता संमिततासे उपदेश मिले, यही काव्यका प्रयोजन है ।

इस प्रयोजनकी सिद्धिका जो कारण है उसका लक्षण दोष रहित गुण सहित अलंकारविशिष्ट शब्दार्थ इतने ही कहनेसे पर्याप्त नहीं हो सकता है । क्योंकि ऐसा कतिपय वाक्य यदि केवल शृंगाररसात्मक लिखा जायगा तो उपर्युक्त प्रयोजनमें “शिवेतरक्षतये” अर्थात् असंगलविनाशके लिये क्या हो सकता है ? या उससे कोई सच्चा उपदेश मिल सकता है ? इसलिये काव्य प्रकाशकारका उक्त प्रयोजनको लिखते हुये इस तरह लक्षण बनाना, अयुक्त मालूम पड़ता है । ऐसे ही साहित्यदर्पणके रचयिता श्रीयुत विश्वनाथ महापात्र रसात्मक वाक्यको काव्य कहते हुए ठीक नहीं जचते । उसमें भी हम यही कह सकते हैं कि कोई शृंगारादिक रसात्मक वाक्यसे ही उक्त प्रयोजनकी सिद्धि नहीं हो सकती है । अतः यह ठीक नहीं है । इसी तरह “रमणीयार्थप्रतिपादकशब्दः काव्यं” कहते हुए रस गंगाधर-कार भी हमारे मान्य नहीं हो सकते हैं । क्योंकि पूर्वोक्त दोष भी उनका पीछा नहीं छोड़ता । और भी अनेक आलंकारिकोंने काव्योंके लक्षण बनाये हैं, किंतु हम उनका खंडन मंडन कर लेखको विस्तृत करना नहीं चाहते । किंतु पूर्वोक्त काव्य लक्षणोंमें दोषा-नुसंधान करते हुये काव्यसे उक्त प्रयोजनकी सिद्धि जिस काव्यसे हो उसका अनुसंधान

करते हुए जैनालंकारिक काव्यका लक्षण अलंकारचिन्तामणिके अनुसार कहते हैं।—

“शब्दार्थालंकृतोऽङ्गं नवरसकलितं रीतिभावाभिरामं ।

व्यंग्याद्यर्थं विदोषे गुणगणकलितं नेतृसद्वर्णनाढ्यं ॥

लोकद्वन्द्वोपकारी स्फुटमिह तनुतात् आव्यमध्यं सुखार्थी ।

नानाशास्त्रमवीणः कविरतुल्यतिः पुण्यधर्मोऽहेतुम् ॥

(अलंकारचिन्तामणि)

यह जैन कवि श्रीमद्भगवज्जिनसेनाचार्यका कहा हुआ निर्दोष एवं च मान्य काव्यका लक्षण है । इस श्लोकका अर्थ इस प्रकार है—

शब्दालंकार, अर्थालंकारसे दीप्त, नवरस सहित, रीति और भावसे सुन्दर व्यंग्यादि अर्थवाला, दोषरहित गुणसहित नेताकी सद्वर्णनसे पूर्ण, इह तथा परलोकका उपकारी, पुण्यधर्मका बड़ा भारी कारण, ऐसे काव्यको नानाशास्त्रप्रवीण, अनुपम बुद्धिवाला कवि करै ।

इस काव्यलक्षणसे लक्षित काव्य ही वास्तविक काव्य कहा जा सकता है । इस तरहके काव्यसे उपयुक्त प्रयोजन अथवा अन्यत्रोक्त—

“धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलायु च ।

करोति कीर्तिं प्रीतिं च, साधुकाव्यनिपेवण ॥ (साहित्यदर्पण)

इस प्रयोजनकी सिद्धि हो सकती है ।

अतः अब विचार करना चाहिये कि भारतीय काव्य भंडारोंमें ऐसे कितने काव्य-रत्न हैं जो कि उक्त पूर्व लक्षण लक्षित हों । इसका विचार करनेके लिये सबसे पहिले “लोकद्वन्द्वोपकारी पुण्यधर्मोऽहेतुम्” इन दोनों विशेषणोंको हम उपस्थित करते हैं । जो पुण्यधर्मोऽहेतु है । वास्तवमें वही काव्यचिन्तामणि उभयलोकका हितकारी होकर मनवांछित फलप्रद है ।

अब हमको यह विचार करना चाहिये कि पुण्य और धर्मकी शिक्षा जिनसे मिल सकती है ऐसे काव्य कितने हैं । सर्व प्रथम हम अजैन नैपयादि लोकप्रसिद्ध सरस काव्यों-पर ही दृष्टिपात करते हैं, तो उसमें एक पुरपका स्त्रीके साथ किस तरहका प्रेम होता है और उसका कैसे निर्वाह होता है इत्यादि विषयोंको छोड़कर धर्मादि शिक्षाकी प्राप्ति नहीं हो सकती और जो जो प्रसिद्ध प्रसिद्ध काव्य हैं उनमें माघ किरातादि तथा रघुवश कुमारसभवादि हैं । उन्हींमें कोई तो शृंगाररस ही से स्वात्न्य भरे हुए हैं । कोई वीररस प्रधान तथा च कोई वधवर्णनात्मक हैं । उसीको सुष्ट करते हुये ग्रहण करते हैं । उन्हींमें आदिसे अन्ततक अवलोकन करने पर भी धर्मोपदेशकी गन्ध भी नहीं मिलती । पूर्वोक्त प्रयोजनके लिये हम जैनकाव्यमार्गमें पदार्पण करते ही उक्त प्रयोजनकी पद पद पर

दृष्टिगोचर करते हैं। क्योंकि जैन काव्योंमें ऐसा कोई भी काव्य नहीं है जिसमें धर्मोपदेशके साथ साथ समग्र लौकिक व्यवहार दिखाते हुये अन्तमें मोक्ष प्राप्तिके लिये केवलीभगवान्के मुख निष्ठित वचनावली सरस श्लोकोंसे सज्जित नहीं की गई हो। इस बातकी सत्यता प्रमाणित करनेके लिये हम उन्हीं सहृदयोंसे प्रार्थना करते हैं जिन्होंने उभय काव्य (जैन, जेनेतर) रसका आश्वादन गवेषणा पूर्वक किया हो। यही जैन काव्यका सर्व प्रथम सुख और शांतिको प्रदान करनेवाला महत्त्व है। इस सर्व प्रथम महत्त्वका हम लोगोंको कम मूल्य नहीं समझना चाहिये।

एक बार एक पंडितराजने ऐसा कहा था कि “धर्मप्रधान काशीनगरीमें अव्ययन करनेवाले काव्यरसिकवृन्दोंमें बहुतसे रसिक वेदपागमनादि दुश्चरित्रोंको सेवन करते हैं। इसका खास कारण यही है कि उन काव्योंमें श्रृंगाररसकी प्रधानताके साथ २ योग्य शिक्षा, धर्मोपदेशका नितान्त अभाव है।”

वह काव्य अनेक प्रकारका होता है, किन्तु दृश्य, श्रव्यके भेदसे दो प्रकारका है। दृश्य नाटक प्रकरणादिको कहते हैं। और श्रव्य काव्यके भेद बहुतसे हैं। यथा—महाकाव्य, खंडकाव्य, चम्पू—गद्यकाव्य, आख्यायिका इत्यादि हैं। इन्होंने खासकर काव्य शब्दका उच्चारण करनेपर लौकिक प्रतीति महाकाव्यकी होती है। इसी महाकाव्यमें नेताचार्यसे कहा हुआ पूर्व काव्यका लक्षण याथातथ्येन घटता है। अतः नाटक, भाण इत्यादिसे उपर्युक्त काव्यलक्षणोंका प्रयोजन सुष्ठुतया, सिद्ध नहीं हो सकता। अतएव हम प्राधान्येन महाकाव्योंकी ही उत्तमता बतलायेंगे। इससे पहिले काव्यलक्षणमें “नेतृसद्वर्णनाख्यं” यह जो विशेषण है इसका अर्थ नेताका जो सद्वर्णन है अर्थात् जिससे पूर्वोक्त धर्मार्थका-ममोक्ष प्रयोजनोंकी सिद्धि हो सकती हो ऐसे वर्णनसे प्वाङ्ग्य=प्रचुर हो।

जिसके ऊपर कवि अपनी शब्दार्थालंकारोंसे विभूषित तथा गुणोंसे सुशोभित सरस्वतीको सजाता है वह नेता कैसा होना चाहिये ? नेताका लक्षण “साहित्यरत्नाकर” में ऐसा कहा है—

“महाकुलीनत्वमुदारता च तथा महाभाग्य विदग्धभागे।

तेजास्विता धार्मिकतोज्ज्वलत्वमभीगुणा जाग्रति नायकस्य ॥”

अर्थात् महाकाव्यका नायक वही होसकता है जो महाकुलीन और बड़ा भारी उदार और महाभाग्यशाली, अतिशय विदग्ध और महा तेजस्वी, धार्मिक हो। संसारमें उपर्युक्त गुणविशिष्ट महाकाव्यके नायकको अनुसंधान करते हैं तो हमको अष्टादश दोष-रहित, अनंत चतुष्टययुक्त तीर्थंकरोंको छोड़कर मानव जातिमें कोई भी दृष्टिगोचर नहीं होने। अतः द्वितीय सर्वोत्तम जैन काव्योंमें उत्तमता यही है कि प्रायः सम्पूर्ण महाका-

व्योंके नायक तीर्थकर या तद्रवमोक्षगामी ही हैं। उन तीर्थकरोंको छोड़कर संसारमें ऐसा कौन माताका लाल है जो उनसे गुणशाली प्रमाणसे प्रसिद्ध हुआ हो। उनके सहर्षनोंसे आद्य जैन महाकाव्यपुंज ही हैं। यथा महाकाव्य धर्मशर्माभ्युदय, महाकाव्य चंद्रप्रभचरित्र, महाकाव्य पार्थनाथचरित, नेमिनिर्वाण इत्यादि।

अब हम यह दिखाते हैं कि महाकाव्योंमें वर्णनीय विषयोंका सन्निवेश किस पांडित्यके साथ जैन कवियोंने किया है उसका भी थोड़ा नमूना सहृदयकाव्यरसास्वाद-निपुण पाठक महोदयोंकी सेवामें उपस्थित करते हैं। महाकाव्योंमें १८ वर्णनीय विषय हैं। वैसा ही अलंकारचिंतामणिमें कहा है—

भूभूक्पत्नी पुरोधाः कुलवरतनुजाऽमात्यसेनेशदेश— ।

ग्रामश्रीपत्तनावजाकरशरीधनदोयानशैलाटवीन्हाः ॥

मंत्रो दूतः प्रयाणं समृगपतुरगेभर्त्विन्धाश्रमाजि— ।

श्री धीवाहाधियोगास्सुरतवरसुरा पुश्ववार्नर्मभेदाः ” ॥

(अलंकारचिंतामणी)

ये १८ वर्णनीयका यथा स्थानमें निवेश जैन महाकाव्योंमें जिस ढंगसे किया गया है, उसे जैन महाकाव्योंके अध्ययन करनेवाले समझसक्ते हैं।

यहांपर प्रत्येक वर्णनीयका उद्धृत करनेसे यह लेख महत् अंधाकार स्वरूपमें परिणत होनायगा अतः चुनेहुए विषयोंका नमूना दिखाकर आगे बढ़ेंगे। भृगुभूक्, रानाका वर्णन हरएक जैनमहाकाव्योंमें भिन्न भिन्न रीति तथा भिन्न भिन्नालंकारोंसे सजाकर भिन्न कवियोंने वर्णन किया है। उसमेंसे पाठकोंके मनोरंजनके लिये महाकाव्य धर्मशर्माभ्युदयमें हरिश्चन्द्रकविके पद्य दिखाते हैं।

गतेऽपि दग्गोचरमत्र शत्रव स्त्रियोऽपि कंदर्पपत्रपा दधुः ।

किमद्भुतं तद्धतपंचसायकं यदद्रवन्संगरसंगताः क्षणात् ॥

(म० धर्मशर्माभ्युदय)

इस पद्यमें रानाका वर्णन वीररसके साथ २ सौन्दर्यका वर्णन श्लेषमंगीसे जिस प्रकार किया है सो सहृदय समझसक्ते हैं। तथा च

न मंघ्रिणस्तंघ्रजुषोऽपि रक्षितुं क्षमाः स्वमेतद्भूजगायसेः क्वचित् ।

इतीष भीत्या शिरसि शिपो दधुस्तपदिघचञ्जलखरत्नमंडलम् ॥

(धर्मशर्माभ्युदय)

इस छोकमें शिष्ट रसक मूल उपेक्षाका निवेश किस चातुर्यके साथ किया है, उसे चतुरशीरोमणि समझ सक्ते हैं।

तथा च—“तदीय निस्त्रिंशलसद्विधंतुदे बलाद्गिलत्युद्यतराजमंडलम् ।

निमज्ज्य धारासलिले स्वमुचकैर्दुर्दार्दिजेभ्यः प्रविभज्य विद्वपः ॥

(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोक छिद्रपरम्परितरुपकका निवेश करते हुये कवि उस मार्गपर चले हैं कि शायद ही कोई कवि उस मार्गमें पहुँचा होगा। इस तरह नायक (राजा)का वर्णन कहाँ तक बताया जाय। एकसे एक सुन्दरसे सुन्दर पंथरत्न जैनमहाकाव्यसमुद्रमें इस विषय पर उपस्थित हैं।

द्वितीय राजपत्नीका वर्णन महाकाव्यमें कहा गया है। इस वर्णनमें उसी धर्मशर्माभ्युदयमें कविने कैसा प्रतिभापाटव दिखलाया है। विनोदके लिये उसका भी २ या ३ पद्य उद्धृत करेंगे।

“प्रयाणलीलाजितराजहंसक विशुद्धपार्ष्णि विजिगीषुवास्थितं ।

तदंग्रिमालोक्य न कोपदण्डभाग्भिरेव पद्मं जलदुर्गमत्यजत ॥

(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोकमें एक विजिगीषु नरेशके साथ राजपत्नीके पादका साम्य श्लेषोपमालंकारसे कैसा दिखाया है।

चक्रुःका वर्णन करनेमें अनुपम श्लोक सहस्रक महीदर्योंकी सेवामें पेश करते हैं—

जितास्मदुक्तं समहोत्पलैर्युवां क पाथ इत्यध्वनिरोधिनोरिव ।

उपात्तकोपे इव कर्णयोः सदा तदीक्षणे जम्मतुरन्तशोणताम् ॥

(धर्मशर्माभ्युदय)

इसकी उत्प्रेक्षा क्या ही अनोखी है।

तथा देश वर्णनमें चन्द्रोपल (चन्द्रमणि) के मासाद पंक्तिके साथ एक श्लेषरीतिमें परवर्णनीयका साम्य देखिये।

व्यापार्य सज्जालकसंनिवेशे करानभिप्रेक्षति यत्र राज्ञि ।

दवत्यनीचैस्तनुकूटरम्या कान्तेव चन्द्रोपलहर्म्यपङ्क्तिः ॥ ”

(धर्मशर्माभ्युदय)

इसी प्रकार ग्रामवर्णनमें स्वर्गसे व्यतिरेकको दिखाते हुये एक यथ कित रीतिसे लिखा गया है। इसकी उत्तमता हमारे मध्य सम्य पाठकवृन्द ही विचारे।

“अनेक पद्माप्सरसः समन्ताथास्मिन्नसंख्यातहिरण्यगर्भाः ।

अनंतपीताम्बरधामरम्या ग्रामा जयन्ति त्रिदिवप्रदेशान् ॥

(म० धर्मशर्माभ्युदय)

यद्यपि शैलके वर्णनके उदाहरणमें बहुतसे जैन महाकाव्य उपस्थित हैं, हम इसके उदाहरण स्वरूप महाकवि श्री हरिश्चन्द्रदत्त धर्मशर्माभ्युदयका दसवां सर्ग सम्पूर्ण देना चाहते हैं क्योंकि कविने ऐसी उत्तमताके साथ शैल वर्णन किया है कि शायद ही किसी कविने ऐसा वर्णन अपने काव्यमें किया हो लेकिन लेख बृहद् न होनेकी चिंता हमको रोकती है, फिर हम इसका उदाहरण अवश्य देंगे ।

“ पत्राम्बुजेषु भ्रमरावलीनामेणावली सत्तमरावलीना ।

पपौ सरस्याशुनरं गतान्तं न चारि विस्फारितरङ्गतान्तरम् ॥ ”

(महा. धर्मशर्माभ्युदय)

इस पद्यमें यमकालंकारके साथ २ स्वभावोक्तिका कैसा मणिकांचन योग हुआ है यह देखकर चित्त गद्गद होता है । तथा च—

“ दूरेण दावानलशङ्कया भृगास्त्यजन्ति शोणोपलसंचयद्युतीः ।

इहोच्छलच्छोणितनिर्झराशया लिहन्ति च प्रीतिजुषः क्षणं शिवाः ॥ ”

(धर्मशर्माभ्युदय)

पर्यंत तपस्या करनेका प्रधान स्थान है । इस बातको दिसानेके लिये मोक्षनगरका अत्यंत दुर्गमार्गमें जिनेन्द्ररूपी सार्धेवाहको प्राप्त कर अगाड़ी पैर रखनेके लिये यह पर्वत प्रथम स्थान है । यह रूपक शांतरसको पिलाता हुआ कैसा आश्वादकारी है ।

अतु वर्णनका भी जैन महा काव्योंमें सर्वत्र वर्णन किया गया है । उसमें भी हरिश्चंद्र कविका चारुतिर्युक्त वर्णनके श्लोक प्रियपाठकोंकी भेंट अवश्य करेंगे ।

“ कतिपयैर्दर्शनैरिव कोरकैः कुरवकप्रभवैर्विहसन्मुत्तः ।

शिशुरिव स्वलितस्वलितं मधुः पद्मदादमदालिनि कानने ॥ ”

इस श्लोकमें वसंतका आगमन हास्य करते हुए शिशुके साथ उपमा देते हुए पया दी अच्छा वर्णन किया है ।

इसी तरह इसी अन्य धर्मशर्माभ्युदयमें मीनवर्णनमें कुत्तोंकी नीम निकलनेमें कवि-
राजने पया दी अच्छी उत्प्रेक्षा की है ।

“ इह शुना रसना घटनादूषादिर्निरगमन्नपहवचक्षलाः ।

हृदि त्वरांशुकरमकरापिताः किमकशालुकुशालीशम्वाः शुग्री ॥

(महा. धर्मशर्माभ्युदय)

तथा वर्षावर्णनमें भी इसी कविका उत्तम श्लोक उद्धृत करते हैं ।

वास्तवमें कोई निरपेक्ष सज्जन सुहृदयवर काव्यपरीक्षक जिस समय निरपेक्ष चश्माको लगाकर यदि काव्योंकी उत्तमताका विचार करेगा तो हम इस बातको दावेके साथ कह सकते हैं कि जैन काव्योंकी ही सर्व प्रथम उत्तमता उसे ज्ञात होगी क्योंकि जैन काव्य-समुदाय, शब्दालंकार, अर्थालंकारोंके पुंजोंसे विभूषित एवं चनवरस सहित, सुरीति भावोंसे मनोहर, पद पदके व्यंग्यादि अर्थसे आश्चर्यको करनेवाला, गुणोंकी पंक्ति बद्धमालासे घिरा हुआ एक अद्वितीयताको लिये हुए है। वास्तवमें जिस समय मेघमालासे आच्छादित सूर्य रूपी जैन काव्यसमुदायकी एक किरण त्रैमासिक पत्र "जैनसिद्धांतभास्कर" में प्रकाशित हुई उसी समयसे ही जैनकाव्यकी उत्तमता सिद्ध हो चुकी थी। हम भी अपने पाठकवृन्दोंके लिये इस किरणको देकर समस्त हृदयकर्मलोंको प्रकाशित किये देते हैं:-

“ तातां ताती ततेतां ततति ततो तता ताति ताती ततत्ता ।

तात्तातीतां तताती ततति ततितता तत्ततत्ते तितंतिः ॥

तातातीतः तिताती तततु ततिततां ततितता तृति तत्ते ।

ताते तिनो तुतात्ता ततुतति तुत्ततितं तत्तु तोत्त ॥

यह श्लोक त्रैमासिकपत्र "जैनसिद्धांत भास्कर" में प्रकाशित हुआ था, और उसका अर्थ लगानेके लिये २५०) पारितोषिक मिलनेके लिये भी सूचना थी। अर्वाचीन दुनियाँके समस्त संस्कृतके विद्वानोंमेंसे किसीने भी इसका अर्थ न लगा पाया। अवधिके पूर्ण होनेपर पत्रके सुयोग्य सम्पादक एवं च देशकी वेदीपर त्यागधर्मको करनेवाले देश-भक्त पदमराजजी रानीचौलोंने इसके लिये द्विगुणित पारितोषिक बढ़ाया पर भी आनन्दक किसी भी माईके लालने इस श्लोकका अर्थ न लगा पाया।

पाठक महाशय ! इस श्लोकका अर्थ जैनसिद्धांतभवतम उपस्थित है । एक समय जिनेन्द्रभूषण भट्टारक श्री तीर्थराज सम्भवसिखरजीकी वन्दनार्थ काशी होते हुए पालकी द्वारा जा रहे थे । जैनोत्तर वैष्णव विद्वानोंको यह सत्य न होकर उन्होंने पालकी रोकली और कहा कि जब तक आप शास्त्रार्थमें हम लोगोंको नहीं हरा देंगे तब तक हम आपको पालकी द्वारा नहीं जाने देंगे । क्षमाभार नम्र भट्टारक जिनेन्द्रभूषणके हृदयमें श्री तीर्थराजकी वन्दनाके लिये बहुत व्याकुलता तथा च जल्दी थी । अतः उन्होंने काशीके विद्वत्समाजसे यह कहा कि “ आप जयनक इस श्लोकका अर्थ लगावें तबतक मैं वन्दना करके वापिस आता हूँ और शास्त्रार्थ करूँगा ” बादमें श्री १००८ भट्टारकजी श्री तीर्थराजकी वन्दनाकर वापिस आये । तब मालूम हुआ कि किसी भी पंडितराजसे यह श्लोक नहीं लगाया । इतनेमें एक नैयायिक महाशयने कहा कि इस शब्दोंके दितण्डवावादको त्यागकर आप अपनी प्रतिज्ञानुसार हमसे शास्त्रार्थ कीजिये । तब शास्त्रार्थ हुआ और ‘सत्यमेव जयति नानृतनं’ इस नीतिके अनुसार जैनियोंकी विजय तथा विपक्षियोंकी पराजय हुई ।

विजपाठकचूद । काव्य शब्दका अर्थ केवल महाकाव्य ही नहीं है किन्तु वन्दनीय जेनालंकारों और इतरालंकारोंकी अपेक्षा दृश्य श्रव्य डम तरह दो प्रकारका है—

प्रथम काव्यमाग दृश्यको मतलाते हैं । नाटक सट्टक भोंड प्रकरण इत्यादिको दृश्य काव्य कहा है । प्रियपाठकचूद ! नाटकादिकी उत्तमता तभी ज्ञात होती है जब कि वह रंगमंच पर खेला जाकर मध्य नाट्यदर्शकोंकी अपनी उत्तमताका प्रदर्शक हो, क्योंकि नाटकी उत्तमता रंगमंच पर ही खेले जाने पर प्रगट होती है। फिर भी हम इस बातको स्वाभिमानके साथ प्रियपाठकोंकी हृदयस्थलीमें बैठाने हैं कि जो जैन नाटकचूद विक्रांत-कौरवादि हैं वह जैनोत्तर शकुन्तलादि नाटकोंसे विशेषोत्तम हैं । मेरे ख्यालसे अज्ञानावस्थामें सोती हुई जैन समानके पर्यटके नीचे स्थित, तथा थोड़े कालसे प्रोद्भूत जैन नाटकचूद अभी तब निपेक्ष पश्चिमीय संस्कृत विद्वत्परिषद्के पास नहीं पहुंचा । नहीं तो अवश्य ही ये निपेक्ष समालोचना कर इस जैन नाटकचूदको उचस्थान देते । जिस समय हम विक्रांतकौरवादि जैन नाटकोंकी पंचमंथि, पताकास्थान, प्रवेशक, विष्कम्भकादिका निवेशचातुर्य, पद्मनोहारितापर दृष्टिपात करने हैं तो इतिमहि कविके नाटकों परसे दृष्टि उठना नहीं चाहती । तब कालिदासका “शकुन्तला” नाटक बिल्कुल फीका हो जाता है ।

हमारे पाठकचूद इस बातसे परिचित हो होंगे कि जैन नाटक रचयित्वा पूज्याचार्य श्री इस्तिमहिलके दृश्यकाव्य लीलाकी तारीफ प्राचीन विद्वानोंने बहुत

' यत्र च मधुकरकुटुम्बिनीनिकुरम्वाडम्बरचुम्ब्यमानमकरन्दकदम्बस्तम्बविलम्बितनिज-
 नितम्बिनीविम्बाधरपानपरच्छाविलासिनि, सुरतसुखोन्मुखमुखरपरिखेलतस्त्रीसरवानेकलग्ने-
 ह्वलखमुत्सावलिख्यमानफटितशिखरैः समीपशशिभिः स्थलितप्रसंख्यपिमत्तसंमुखीनैवेरवान-
 समानमे, कितम्बितवसहचरोपरचितकरवाचलयलास्यमानमधुगत्तसीगन्तिनीसमालोकनकुतूहल-
 मिलहूनदेवताभराभुग्नककुम्बविटपिनि, वटविटपविटद्वमंरुट होटरोपविटवाचाटशुकपेटकपट्य
 मानेन विटविकटरताटोपचाटपाटवेन विद्यमानमुनिमनःकपाटपुटसंधिग्रन्थे, विकिरकुरुकह-
 लवशविशीर्यमाणकुरयकतरुमुकुरमुक्ताफलितवितर्दिकाबलिर्नणि, चपलकपिसंपातलुप्तमानम-
 राभिर्निर्भरविभ्रमार्मसंभ्रमाभिर्भीमिनीभिः परिरम्यमाणनिभृतसरसापराधबल्लभे, भुजमृलपुल-
 कवितरणरतक्रान्तकैवशान्तरावितयुवतिपुष्पावचितिनि, सरलद्रुमस्तम्भसंभूतसंभूतलताशोकत-
 तिनिनिर्मितासुपीनस्तनलिखितपत्रलाञ्छितोरः स्थलरमणसरभसोच्छलदुत्तालचलनासुलीलान्दो-
 लासु विलसन्तीनां विलासिनीनां सुसरमणिमेसलानालवाचलिमनहलपचमालसिपल्लवितविरह-
 धीरुधि, जम्बुकुङ्कुजगुञ्जत्यारापतपतझसञ्जीवितमदनमददरिद्रितसुन्दरीसंभोगहुतवदे,
 कदलीदलातपत्रोत्तम्भनगारभरितभर्तृभुजाभोगसंभावनयिकटकुचकुम्भमण्डलानामितस्ततो
 निहरन्तीना रम्भोरूपांमनवरतदागजनापमानमणिमंजीरशिञ्जिताकुण्डितगलकेलिवीर्यका
 कलहंससंघदि, रमणरतितरनितारतिरमोस्तेकविचलद्विकचविचकिन्मालम्बामोदसुरभितसु-
 मगभुजङ्गनाभीबलीभगर्भे, तमालदलनिर्घासरसपूरितकरकिशलयपुटेन यमितनखलेखनीधारिणां
 सचरनिचयेन रच्यमानसहचरीकपोलफलकृतलिलकविचित्रपत्रमङ्गिनि, खलरताभियुक्तकुटहा-
 रिकातालुतलोत्तरलतररुतोत्थावितनिचच (नु) लमूलविलनिलीनोल्बकपालालोकनाकुलकाकोल-
 कुलकोलाहलकाहले, वहलकौकिलप्रलापगलितलज्जत्यनिसर्गादुत्तालतरसुरतसंरम्भिण्याः पण्याङ्ग-
 नाजनस्य कलगलोहसल्लोहलोहपितानुलपनपरसारिकाशावसंकुलकुलायकरलोपकण्ठनरठिना-
 भिनवाज्ञानारतिचेतसि गान्धमअरीमकरन्दविन्दुस्यन्दुदुर्दिनेन मुचकुन्दमुकुलपरिमलोला-
 सिना प्रचलाकिङ्कलपसीमन्तोचितेन वानचातकेनाचम्पमानसुरतश्रमखिन्नखेचरीपयोधर-
 मुखलुलितधनपर्मजलमञ्जरीमाले, निधुवनविधिविधुरपुरन्ध्रिकाधरदलदपितदीपमानाननचपक-
 चारितदर्शरीकभीजसीधुनि, पुण्ड्रेक्षुकाण्डमण्डसंपातिनीभिः पिङ्गपरिपद्मिश्चण्डतरमुडुगरितडि-
 ण्डमारवाकाण्डताण्डवितशिराण्डमण्डले, मृद्वीकाफलगलनचटुलकामिनीकरचलयमणिमरी-
 चिमेचकितकिरातरानिनि, गालिकेरफलसलिलविलुप्यमानमियुनमन्मथकलहावसानपयःपा-
 नातुच्छमाच्छे, कन्दुकविनोदप्याजविस्तारितविभ्रमेणतरुणजनसंनिधानविद्वद्भ्रमरमत्सरेण भ्र-
 मविभ्रमोद्मान्तभासत्परिमलिलन्दसुन्दरीसंदोहनण्डितापाङ्गपातेन विव्भोकिनी समाजेन य-
 वकासगचरणपाटलिनङ्कुलालनानमुमिनि, रमनिरसपिञ्जरितकुचकलशमण्डलाभिर्महीरुहग्विह-
 मङ्गिलाभिरिव परिपात्रपेशलफलविनतगव्यभिर्नीगपूरयल्लरीभिरपराभिश्च वृक्षौषधिवनस्पति-

लताभिरतिरमणीये, नरस्रवराभराणां मिथः संभोगलक्ष्मीमिव दर्शयति निखिलभुवनवनानां
 श्रियमिवादाय जातजन्मनि, रोधवरागवेधचयनीरन्ध्रतकेतकीरजःपटलनिर्मलितकपोलदर्पणेनवि
 विधकुसुमदलविनिर्मितलज्जानकर्मणा कुटनकुटुमलोख्वणमल्लिकानुगतकुन्तलकलापेम तापिच्छगु-
 लुच्छविच्छुरितशतपत्रीमृक्षसंनद्धचिकुरभङ्गिना मरुचक्रोद्वेदविदभिमतदमनकाण्डशिखंडितकेशपा-
 शेन प्रियालमंजरीकणकलितशर्णिकारकेसरविरामितसीमन्तसंततिना चम्पकचितविक्रचक्रच-
 (काञ्च)नाराविरचितावतंसेन माधवीप्रसूनगर्भगुम्फितपुद्गामालाविलासिना रक्तोत्पलनालान्तरा
 लमृणालवलया कुलशकोदेन (?) सौगन्धिकानुवद्धकमलकेपूरपर्यायिणा, सिन्दूरवारसरकुसु-
 न्दरकदलीप्रवालमेरुलेन शिरीषवशवाणरुतजंघालंकारचारुणा मधुकानुविद्ववन्धूकध्रतनूपुरभूष-
 णेन अन्यासु च तामु तासु कामदेवकिलिकिञ्चितोचितासु क्रीणासु वद्धानन्देन सुन्दरी जनेन
 सह रमन्ते कामिनः ”
 (यशस्तिलकचम्पू १ आश्राप्त)

भो काव्यरसिकगण! यह चम्पूकी वनक्रीड़ाके वर्णनका कुछ थोड़ासा अंश आप लोगोंकी
 सेवामें भेंट है। जिससे कि आपको गलीभांति समझमें आसकता है कि चम्पू अद्वितीय ग्रंथ
 है। उपरिलिखित हृद्यगद्यमें कविने कैसी अनुपम अनुपासमाला पहनाई है। काव्य पाठकवृ-
 न्दोंको यह तो विदित ही होगा कि उपमा, विरोध, श्लेष, परिसंख्या आदिकी रचना तो
 प्रत्युत सरल है किन्तु अनुपासोंका बनाना उच्चतम भूषण है। कादम्बरी तथा मायकवि-
 के शिशुपालग्रथमें ऐसी अनुपासोंका अद्भुत छटाटोप नहीं पाया जाता। इस उपर्युक्त हृद्य-
 गद्यमें पृथ्वाचार्यने ऐसी अनुपम और अद्वितीय अनुपासमाला पहनाई है उसी प्रकार
 प्रियकाव्यरसिकवृन्दोंके आस्वादेके लिये माधुर्यगुण कैसा पद्य पद्यमें अद्भुत भरा हुआ है।
 जहाँतक आप काव्यसागरमें गोते लगायेंगे आपको यह बात अच्छी तरहसे ज्ञात हो जा-
 यगी कि माधुर्यगुण, उत्तमतासे जैन काव्योंमें ही पायाजाता है। शायद मैं इसका कारण
 जैन काव्योंकी रचयिता आचार्यगणोंकी दम्या, अहिंसा तथा वैराग्य समझता हूँ। यह
 बात बिना दृष्टांतके शायद आप लोगोंकी समझमें नहीं आवे। हम प्रसिद्ध जनेतर काव्य
 “ काव्यप्रदीप ” के दो श्लोक इस बातके निर्णयके लिये देंगे—

“ स्वच्छन्दोच्छलदच्छकच्छक्रुद्धरच्छातेतराम्युच्छटा ।

मूर्छन्मोहमहर्षिहर्षविहितस्नाहिकाहाय वः ॥

भिन्नादुब्यदुदारददुरदरी दीर्घादरिद्रद्रुम-

‘ क्रोहोद्रेकमयोभिमेदुरमदा मन्दाकिनी मन्दताम् ॥

(काव्यप्रदीप प्रथम टल्कात्)

अन्यच्च—

“ कः कः कुत्र न बुधुरापितधुरीधोरो धुरेत्सूकरः
कं कं कः कमलाकरं विक्रमलं कर्तुः करी नोद्यतः ॥
के के कानि वनान्परण्यमाहिपा नोन्मूलयेयुर्वतः ।
सिंहीस्नेहविलासवद्धवसतिः पंचाननो वर्तते ” ॥

(काव्यप्रदीप ७ वां उल्लास)

इन श्लोकोंमें हम अनुप्रास बहुल कह सकते हैं । लेकिन साथमें रीदरस भी पद पदपर टपकता है । किन्तु हमने जो ऊपर “ यशस्तिलक ” की मनोहर गद्य अनुप्रासमय दी थी उसमें पद पदपर माधुर्य भरा हुआ है । आप इस गद्यके दृष्टान्तसे पचशय ही समझ गये होंगे कि “ यशस्तिलकम् ” एक, अद्वितीय काव्य है । किन्तु इस काव्यमें कादंबरी, शिशुपालवध, नीलचम्पू, आदिकी तरह श्रृंगारस ही नहीं भरा किन्तु यह लोकोपकार-शिक्षाओंका निकेतन है ।

प्रायः पाश्चात्य विशारद भारतीय काव्यरत्नोंकी समालोचनाओंमें सर्व प्रथम यह दोष निकालते हैं कि इनमें स्त्रियोंका सौन्दर्य, स्त्रीपुरुषोंका प्रेम तथा उसका निमाना आदि निरुपयोगी विषयोंपर ही भारतीयकाव्यरचयिताओंने शब्दार्थालंकारोंसे शोभायमान सरस्वतीको समाया है, कोई अच्छे १ विषयों पर रचते तो कितना अच्छा उपकार होता । आदि ।

वास्तवमें यूरपीय सज्जनसमालोचक जो इस दोषको प्रचलनस्थान देते हैं वह प्रायः ठीक ही मायूम पड़ता है, क्योंकि कालिदास कविके ग्रंथोंमें तथा कादंबरी आदि काव्य-ग्रंथोंमें आदिसे अतदर्थ यह ही श्रृंगारस पाया जाता है । हम अपने पाठकोंको कालिदासका श्रृंगारसकी मदोन्मत्ततामें एक उदाहरण भेंट करते हैं—

वागार्थाविवर्त्तप्रज्ञौ, वागर्थप्रतिपत्तये ।

जगतपितरौ चन्दे, पार्वतीपरमेश्वरौ ॥

इस श्लोकके अनुसार कवि कालिदासने महादेव पिता, तथा माता पार्वतीको मानकर नमस्कार किया है किन्तु ये ही कवि कालिदासनी अपने “ कुमारसंभव ” में क्या वर्णन करते हैं—

गम्भीरनाभीहृदस्तनिधाने, रराज नीला नयलोमराजिः ।

सुखेन्दुभीक्ष्णतनचक्रदाकन्यचञ्चयुता शयलमंजरीच ॥

इस श्लोकमें “ श्रृंगारसोन्मत्त ” कवि कालिदास उसी माता पार्वतीकी योनिका वर्णन

वरनेमें शमाते नहीं है यह अत्यंत घृणास्पद है। किंतु हम इस बातको बड़े स्वाभिमानके साथ कहते हैं कि जैन काव्योंमें शृंगार रसको प्रायः निम्न स्थान ही मिला है। तथा शक्ति वीर करुणादि लोकोपयोगी रसोंको प्रधान स्थान मिला है। तथा जैन काव्योंकी रचना शृंगाररसको प्रधानकर सप्तासौ व्यभिचारादि अशुभ परिणामोंके निमित्त जैनतर काव्योंकी तरह नहीं हुई, बल्कि लोकोपकारी विषयोंको उच्च स्थान ही मिला है। उदाहरणार्थ हम यशस्विलकचम्पूको ही लेते हैं। इस काव्यमें लो दिनचर्या, ऋतुचर्या आदिका जो वर्णन किया है वह अत्यंत उत्कृष्ट है। किसी काव्यग्रंथोंमें तो यह विषय पाया जाता ही नहीं, बल्कि किसी भी वैद्यग्रंथने ऐसी चारु सरल मधुरीतिसे वर्णन नहीं किया होगा। पाठकोंके विनोदार्थ हम चम्पूके कुछ श्लोक अवश्य देंगे—

स्थाल्यां यथा नावरणाननायामघटितायां च न साधुपाकः ।

अनासनिद्रस्य तथा नरेन्द्र ! व्यायामहीनस्य च नान्नपाकः ॥

अर्थ—हे राजन् ! जैसे बिना ढके हुए गुस्सवाली तथा नहीं ढारी गई ऐसी भ्याली (बटलोई) में अच्छा पाक नहीं बनता तथैव बिना निद्राको लिये हुए, तथा बिना व्यायाम किये हुए पुस्तको अन्न नहीं पचता ।

अभ्यङ्गः श्रमवातहा पलकरः कायस्य दाईर्घ्यावहः ।

स्वादुर्लभममङ्गकान्तिकरणं मेदः कफालस्यजित् ॥

आयुष्यं हृदयप्रणादि दण्डः कण्डूहमहोदि च ।

स्नानं देयं यथार्तमेवितमिदं जीतैरजीतैर्जलैः ॥ (यशस्विलकचम्पू)

ઓરાણ પ્રાંતિજ વિભાગની આધુનિક સ્થિતિ

(લેખક—શા હાથીભાઈ માલેજ્યદ-સોનાસપ્ત)

આજના જમાનામાં દેશના ખુબે આગરે ઝેનારી અબધ પ્રજા પચુ, પોતપોતાની સ્થિતિની ક્ષતિ કરવા માટે અનેક ઉપાયો કરી રહેલી જણાય છે, પરંતુ અમારા ગુજરાતના કુમડો, તેમાંથી મુખ્યત્વે ઝોગણ પ્રાંતિજ વિભાગના બાધજો, ધાર્મિક, નૈતિક આર્થિક અને સામાજિક આનંદમાં સજાજ પછાત જોવામાં આવે છે. આ તેના અનેક કારણો, ખારિજીથી નિચારતા દ્રષ્ટિએ પડે છે, તે કાળવાને ધીરે ધીરે પ્રત્યક્ષ કરવામાં આવે તો જરૂર દર્શાવિત્ર્યક શકે, પણ કોને પડી કે સ્થિતિના ક્ષતિ માટે, 'તન મત અને ધનનો ભોગ આપે । આપરે, તો " સંપત્તિની સમાધાને મેરી કાઢતા હું " જેવું જણાય છે. વસ્તીની ક્ષતિગ્રસ્ત હોવાથી, કોષ્ટકોથી જોડેલી ધાર્મિક પાઠશાળાઓ ચાલી શકતી નથી કેળવણીના આદર, જૈન સમાજમાં હોવા છતાં, અર્થિક સ્થિતિ ને બાળવનના કારણે, લાભ લઈ શકનાર નથી અને કદાચ કોઈ કેળવણેલા માતા પિતા, દિન તમો પોતાના બાળકને કેળવણી આપે, પણ બાળકના અભિચારી કાર્યથી, ત્રિસક્રી મરફ, તે બાળકને અધવચ લટકવું પડે છે, જેથી તેમની હાલત " ધોળીને કારો નહિ ધરના કે ધાટોના " જેવું બને છે.

આ જમાનાના ચલુ પ્રવાહ પ્રમાણે ઉત્તરિ પ્રવાહ, અને જુના રીઝાને સુમારવાનું કાર્ય, આરિવન ધર્મચારી, તેમજ સાધક વર્તમાનપરો કરી શકે છે. આને આરિવન (પાલ ને નજા) (વર) ધર્મચારી જણાતા નથી તેમજ કોણે દેશ કાળ ક્ષેત્ર ને બાધથી અગ્રાન, બાળી હાલેશ કોઈ કોઈ લેણા બાધ કરતા જણાય છે. અમારે પણ તેઓને ઉપદેશ મે તેમ કારો હોય છતાં, તેઓ આધિ વધિ ને કાપી મરેલા ને નાહી,

પ્રમા પડી શકતી નથી. તેમજ વરસમાં એકાદ બ્રમણ (દોરો) યનું, હોવાથી જનતા પર નહિ જેની યજોથી અમર તરતજ બુ સાધ જાય છે. ગુજરાતમાં આર પાચ તરે વડે ચાલતી વસ્તીના મળી આશરે ગણ દળર ધરતી અપ્પા છે, છતાં તેના દિન રે પ્રસિદ્ધીમાં આવેલું, " દિગંધર હેન " માસિકે પણ, તેો નેવશાત્ આપત્તિને લીધે, ઉત્તેજનના અભાવે, તથા અમાગ દુર્લભથી દિવસે દિવસે પોતાની દિશા બદલી જણાય છે. કારણ કે રાષ્ટ્ર ગાથા દિંદો ધનાથી, આપણુ ગુજરાતીઓને, દિંદો બાપાનું વાચન, તે બાપાની અવધામાં ધણું અગત્યનું થઈ પડે ઉપનું પત છે તો ગુજરાતી, ને તેને દાગ ભાત ખીચડી પર સારો પ્યાગ પણ છેજ, પણ સાદો અને જોડા અર્થવોજો ખોરાક, પીરસનારાઓની દિન પર દિન જોગ પડતી ગમેલી જણારાધીજ સાચારીજો, પોતાની દિશા બદલી પડી હોય, એમ અમો તે જણાય છે પણ જો ગુજરાતી બાધજો, બાધક થાય, અને ખીજોને પણ બાધક થવા પ્રેરણા કરે, અને લાગણી પૂરક તેને વગમી રહે, તો તે હિંદો થતુ અટકે, ને પ્રથમની આક્ર, સારી રસીતમાં આવી જતી વળી તેના જેવો, મરવા, અગ, સોરા ને વળી જુજ લવાજો, વારિક પુરતના જેમમાં આગર ઉત્તમો સપાટકન દારો લખાઈ તેવા કતા પત્રને વિસારી ગુણુ, તે અમો ગુજરાતીઓને તો, શ આવનાર છે, ગુજરાતીઓ માટે દળુ તેમ થોડી થોડી જગા તો ચલુ છેજ, નો તેનો વ. લાભ લઈ, સંપૂર્ણપણે પોતાનું જમાની તેમ કારોમાં જાતેલી ચર્ચા કરી, સમવાનુકુલ લાભ ગુજરાતીઓ શા મટ ન હોયે ? પણ જુના નજ પ્રમાણે—

"તમરી સુદિએ તમે લાખા કરો લાખ પણ
ઓ તો અમાગ દળા દળ તેમ લાખુ"
એ પ્રમાણે ૧૯૧૭ માંની રહેતો જણાય છે
"બા શાશુ મામા નથી ત્ર કા મામા દળાર
દળાજે ભાગ" એ મુજબ હાલેશો દળે જુ

રથને ભ્રમણ કરે, સમાજો ગરે ને ઉપદેશ આપે; પણ ઉપદેશ સાંભળે ડાણા દિંદી ઉપદેશકોને પણ, અનેક જાતની હાહારીઓ ભોગવતી પડે છે અને તે, ઉપદેશ દિંદી ભાષામાં મળતો હોવાથી, તેનો રસ ગુજરાતના બાઈઓને ઠીક લાગતો નથી ને તેથી તે જોઈતું પોપણ આપી શકતો નથી. ને તેજ કારણથી દિંદી ભાષામાં લખાતા, “દિગ્-ગર જૈન” માસિકને ગુજરાતીઓ વિસારતા જાય છે. આ અમારા દુર્ભાગ્યનીજ નિશાની જણાય છે.

કોઈનો ગુનો ખોળવો હોય, દંડ કરવો હોય, કે માતી બદલ કરવામાં પહેલ કરવી હોય, આ કન્યા લેવાની જાજ પાશરતી હોય તો અમને એકત્ર થવામાં, વાર લાગતી નથી. પણ ઉપદેશકોના ઉપદેશ વેળા કે પત્રો વાચવામાં નવરાસ મળતી નથી. પણ લગ્ન, મરણ, અથવા મેળાવાડા પ્રસંગે ગાંતિ સુધારણાની આવતો પર લક્ષ ન દેતાં, નાદાન ખાજક જાગડીઓને સગપણની ગાંડરી જોડી દેવામાંજ યેષ્ટતા મતે છે, જીંદગીના અવ-હારમાં અગમ્ય કાર્ય લગાડું હોવા છતાં, પોતાની અર્ધાંગના તેમજ જાજક જાગડીનો મન મેળના મિલય, જીંદગીના દરતાવેજ ખુશમાં બેસી દરી આવે છે.

ઠેકણુ ૮૪ ગામડાંઓમાં, વરતી છૂટી છવાઈ વેગ-મથી જણાઈ હતી, જેમાં ફક્ત બે ગામડાંમાં આશીસ ચાવીસ ધર સંખ્યાગ્રાહ કરતાં, ખીન કેળવણીએલા લોકસ્મુદ્ધમાં, આપણી નજીવી સંખ્યા જણાઈ ગયેલી, જેથી હંચ સંસ્કાર છુટી જઈ, લોક સંસ્કાર દાખલ થયેલા જણાય છે. કિપર જણાવેલા વરતીના આંકડા જોતાં, ધર-દીદ ચાર મણસની મરેરાસ આવે, તે મણી ચિંતાનનક ખીના છે.

આ વિભાગનું વરતીપત્રક ટરી કરાવવાની જરૂર છે, તેમજ ખીન વિભાગોની પણ ગણતરી કરી આંકડા નહો કરવા જોઈએ, જે જણવાથી અનેક જાતની ખામીઓ, દૂર કરવાનું સુગમ થઈ પડે, જેથી આપણા વિભાગમાં આર વરસમાં શું તફાવત પડ્યો, તે પણ જણાય. થોડા સમય પહેલાં કિંદુરતાનમાં જૈનોની સંખ્યા, પંચીસ લાખની ગણતરી હતી. તે ધીમે ધીમે ઘટીને, આજે ફક્ત સાડાં અગીઆર લાખનીજ રહી છે તે જણી થયા જોતને દુઃખ નહિ થાય ?

ચોવીસો માણસની વરતી સંખ્યા હોવા છતાં, અને અમદાવાદમાં પંદર સોળ વરસથી, બોર્ડિંગ હોવા છતાં; એક પણ માત્ર પૂત એવો નીકળી આવેલો જણ્યો નથી કે જેણે પોતાના બાળકની કેળવણી પાછળ, દબાર કે એ દબાર રૂપિયા ખર્ચી; તેમને આસ્તિત્વના બનાવવા સ્વપ્ને પણ ખ્યાલ જોઈ હોય, ૧૭૦૦ ધરના ગોળમાં ફક્ત એ કે, પણ વ્યક્તિઓએ મેટ્રીક સંધીની સાધારણ પરીક્ષા આપેલી જણાય, ત્યાં કેળવણીના દેશાને કેટલો દશે ! તેનો વિચાર વાંચકને સોંપું છું.

મુના વિચારનાં માતા પિતા, પોતાનાં નિર્દોષ બાળકોને, ઉંચ કેળવણી ન આપતાં, ઉલટી રીતે, મુજબની ચોથી કે પાંચમી ચોપડીથી જણ્યો અટકાવી, લગની વરમાણા પહેરવે છે. માતા પણ કીંમતી વસ્ત્રો પહેરી, મોઢ ધાલી, મનુષ્યોના ટોળામાં મલકાતી મહાલે છે. અને લગનના કોડ પુરા કરે છે પણ તેને ખર્ચ નથી, કે; હું મારાં લાડકાં બાળકોને, કાચી ઉમરે મુદસ્સાગ્રમાં બેડી, મધકાકણ ને રેભાથી ભરેલાં, હાડ પોલર સમાન, બાળકો ઉત્પન્ન કરવાનું, મવીન કારખાનું ઉજીરવાની આવી, અમૂલ્ય હાંદગીઓને, પુણપાણી કરાવી મૂકું છું. પિતાથી પણ પોતાના બાળકના હાથનું, મીંદળ જુટુ ન જુટુ. તેટલામા તો હાથિયાર થયને પ્લાને, મુંબાઈની ગાડીએ રવાના કરે છે. જેમ ચાર ખૂજીઓ ઇંટોળો, અઢણાઈ કુદ ગોળ બને, તે મુજબ થોડા ધણા સંસ્કારોથી મોહલેલું બાળક, પોતાના કુટુંબ માટે કીંમતી, કુઠા એકઠા કરવામાં, અદમીની સાધકેતા માતી અંકુશ પુરું કરે છે, જેથી ખરી મનુષ્યપણાની જવાબદારી સમજવામાં આવતી નથી અને એવું તો સમજાવજ દર્પાથી કે અનેક બેગીમાંનું બાકી રહેલું, પાપરથી ત્રણ સુવચન આ મનુષ્ય બન હતી; અને એવો કેલું મૂખ મનુષ્ય હોય કે રતને કામ ઉઠાવવાના ઉપયોગમાં વાપરે, પણ કરે શું ?

આજે આર્થિક પ્રવૃત્તિ પંકાએવી, ચોવીસી અંદરનો વારો ધરાવનારો, મુંબાઈ નગરીમાં રહેનારો, મુદિદાન મેળવવાની ઉંઠા ધરાવે તો અનેક જાતનાં સાધનો ઉપરાંત અનેક વિદ્વાનોની મુલાકાત અને યોગ્ય સલાહ મદત મેળવો શકેજ, પણ બેદરકારીએ, “ચાર વરસથી દિલ્હીમાં રહે પણ બાકાતું જાની દુકાનમાં” એ મુજબ એવા મનુષ્યો બને મોટા પગારદાર હોય; બાવતાં બેજાન જમે, કે પછી મોટરોમાં મનમગતી સહેલ કરે, અથવા તો વારસામાં મળેલા ધર્મના અંગે ટીલાં ટપકાં કરે, ધર્મી ધમખાનો ડોળ દેખાડે, તેથી કંઈ કુટુંબનું, નાત જાતનું, સમાજનું, કે દેશનું કલ્યાણ કરી શકતા નથી. બાળક અને તારના વૃક્ષ ઉંમર પહોંચતાં જાય તેમ ટયાર ઉચાં વધે જાય છે; છતાં રાહગમીઓ નિર્મયતાથી તેની નવે બેસી રક્ષા નથી, પણ આંગાનું વૃક્ષ ઉગરે પુગલું જાય છે; તેમ તે નવું નમતું જાય છે, તે બેઠ વેને કોણ હેદ છે, કાપે છે, પ્રકાર કરે છે, છતાં પૌપકાર જીતે ન તાજતા, દરેક સામે મિટ ફગ આવવાં ચાલુજ રાખે છે. વિદ્વાનો કહે છે કે “નમ્રતાનું નીચાણ કલુષ રાખવાથી શ્રીમંતાઇના ઉચ શરૂ પાસે થાય છે.” જ રૂપાણે પણ પક્ષીઓ ને જુદી જુદી જાતના કીડી જેવાં જંતુ પણ અનેક જાતના ઉપકારો કરે છે, પણ જે મનુષ્યો પૌપકાર જીતે તો દષ્ટ, સ્વાર્થ મા રચ્યા પચ્યા રહી, કાળજી કરે તો તે મનુષ્યની મજાનામાં શણી ચકાવજ કેમ ?

કોઈ પણ નાત જાતનો કે દેશનો ઉત્કૃષ્ટ, મદના ટીપાની માફક, રાહ જોઈ બેસી રહેવાથી યશ નથી, આપણામા કેટલાક નામકિત સદ્ગુણસ્થો છે, છતાં તેઓ પ્રમાણે વય, તેજસ ધર્મા માપામાજ રાખુ. હોવાથી નિ નિ મુદરણીનો વિચાર મરજો પણ કોઈ વેળા લગી રાકવા નથી. તે પણ જોયનીય છે. તે સિવાય બધારા વિચારના માણસો, મોટી સંખ્યામાં મુંબાઈ જેવા આગમ પાતા ચકેરમાં શ્રીગજ છે. તેઓમા કેટલાક હંચ વિચાર ધરાવનારા, ચારા સ્નેહી વિદ્વા છે અને તેઓ ધારે તો ગાંધીને



આ ખીના સાચીજ હોય તે આપણે તેવાં અપ-
વિત્ર, તે ધર્મ બ્રહ્મ કરનારાં કપડાં પહેરી, આપણા
શરીરને હરગીજ અપવિત્ર ન કરીએ; સાપતી
કાંચગાની માફક તેનો તો ત્યાગજ કરવો પડે. જો
આટલું જાણ્યા છતાં આપણે વિદેશી કાપડ
વાપરીએ તો આપણી પામરતા તે અધમતાનો
છેડો કયાં ?

આ વિદેશી વસ્ત્રોને બદલે, આપણા
સમાજમાં, ઘેર ઘેર રેડીયા (ચર્યા) લાખણ
કરી તે પર સુતર ખનાવી, તેમાંથી કાપડ તૈયાર
કરી, તે પવિત્ર ઇશ્વર અર્પણું કાપડ પહેરવું
જોઈએ, જેથી ધર્મ, અર્થ, અને કામ સાધી
શકાય તેમાંજ આપણી ને આપણા દેશની, આખા
સમાજેલી છે. હમેશાં રેડીએ જેલી સુતર કાપડું એ
આજનો આપણો ધર્મ છે. તે દલકું કામ નથી
તે પવિત્ર ને ક્યામું કામ છે, જેનાથી દેશનું
કલ્યાણ થાય, ગરીબોનું પેપણું થાય, આપણું
ફાંખું ફરે થાય, ને કુટુંબના કપડાં મક્કમાં પૂજા
પડી શકે, તેવા કામ તરફ આપણું લક્ષ્ય દોરી
રસો દેખાડી મહાત્મા ગાંધીજીએ, આપણા પર
મહાન ઉપદેશ કર્યો છે. ખાદીની હીજયાલ આખા
દેશમાં પચગર થવા આવી છે, ત્યારે આપણા
દેશમાં બાઈઓ તેવું રહસ્ય સમજતા નથી, પણ
તે ખાદીમાં ખાનદાની ને સાદાં નજરે તરી
આવે છે. ખાદીમાં દેશભિમાન, પવિત્રપણું,
સ્વધર્મનો ઉદ્ધાર, અને આપણું બાળ બચ્ચાંઆનું
કલ્યાણ છે. ને એજ ખાદીમાં સ્વરાજ્ય શપાદ
બોલેલું છે. ખાદી પહેરી આપણે કાંઈનો દોષ
કરતા નથી, કાંઈનું બગાડવા મંગતા નથી,
પણ કરેલા પાપનું પ્રાયશ્ચિત્ત કરીએ છીએ આજ
સુધી આપણે પરદેશી મોદનીમાં કસાઇ આપણું,
આપણા સમાજનું. ને આપણા દેશનું, ને ઉલ્લે
ધર્મનું મોટું અપમાન કરેલું છે, તેના દડ
આપણા પશ્ચાત્તાપ કરી, ખાદી પહેરી આજ શુદ્ધિ
કરીએ છીએ, તેમાં બીજાને ખોટું લગાડવા નેવું
કંઈ નથી. ખાદી પહેરવી એ ખાનદાનીનું હલ્લુ
જે, આપણા દેશનું શુદ્ધ છે, આપણું ધર્મનું

ગૌરવ છે, ખાદીમાં પરદેશી બગાડવું જોર નથી,
ખાદીમાં નારિતકપણની ગંધ નથી, તેમાં તો
પવિત્રતા બરેલી છે. અને તેમાંજ અમૃત રહેલું
છે. જ્યારે આખો દેશ ખાદી પહેરતો થશે ત્યારે
આપણને સ્વરાજ મેળવવા માટે ખટપટ, કરવો
નહિ પડે, ત્યારેજ આપણો ધર્મ આજખતા
મધ્યમ અને ત્યારેજ આપણે આપણાં બાઈ બાંદે-
નોને સાદાં ને ખરા ધર્મને રસ્તે ચલાવી શકીશું.
એજ કારણથી આજ દેશનામકો અને ઉત્સાહી દેશ-
જનુઓ આધારે વીસથી પચીસ હજારની સંખ્યામાં
દેશના ઉદ્ધાર માટે તન મન ને ધનથી પોતાના
પ્રાણની આહુતી આપી પુરંગ વાસ ભોગરી ફા
છે તેમને મુક્ત કરવા આપણા સમાજ ને આપણું
દેશમાંથી પરદેશી વસ્ત્રોને તિલાંજલી આપી
સ્વદેશી વસ્ત્રોને પ્રચાર કરવા કટિમદ્ધ યત્ન
અને ઘેર ઘેર ખાદી વાપરી મનુષ્યપણની જવા-
બદારી સમજવી જોઈએ. ઉલ્લેખે દરેક દેશવાસીએ
પરમાત્મા સદૃશ્ય આપે કે જેથી આપણી ભવિ-
ષ્યની જોશાલું કલ્યાણ થાય.

દુસરી વાર તૈયાર હો ગયા.

મોક્ષમાર્ગની સચી કહાનિયો-

નામક અતીવ ઉપયોગી ગ્રંથ જો વિચાર્યોજો
તો અતીવ ઉપયોગી છે જોર સ્વાધ્યાય કરને યોગ્ય
દે ઉસની દુસરી આવૃત્તિ છપ્પક તૈયાર હોઈ છે.
સ્કે ૮૮ પૃષ્ઠોને ૧૦ બુદ્ધિલાલ શ્રાવક કુલ
વાર્ષિક ૨૨ કહાનિયોના નવે ઢંગતે સમૃદ્ધ છે.
મુલ્ય સિંકે ૧૩) અવશ્ય મળા હો.

મૈનેન-દિં જૈન પુસ્તકાલય-સુરત.

સિદ્ધક્ષેત્ર પૂજા સંગ્રહ.

સ્કે સિદ્ધક્ષેત્રોની ૧૧ પૂજા છે. મુલ્ય ૧૦)
મૈનેન, દિગંધર જૈન પુસ્તકાલય,
ચંદાવાલી-સુરત.



स्त्री समाज ।

अवस्था और गुणका विचार न करने, विवाह मार्गदात्री नष्ट दीवी पड़ाने तथा अवर्ण और अनीतिकी हवा फेक देनेसे विषयवाचनाकी सीमा टूट गई है और लोगोंके शरीरके भीतरी उपयोगी तत्त्व निर्वृत्त पड़ने लगे हैं। शारीरिक और मानसिक शक्ति नष्ट हो जानेसे आजकल मनुष्य जाति जो प्रार्ण मात्रमें सरसे ऊंची होनेका अभिप्राय रखती है उसकी दशा नष्ट होनेकी अतिशय और सबसे नीचेकी सीढ़ीपर आ पहुँची है। ऐसे समयमें यह बात ध्यानमें रखने योग्य है कि संसारमें जीवन तत्वोंको टिका रखनेका मूल साधन उत्तम क्षेत्र और उत्तम बीजका संवन्ध है। बीर पुरुषोंको उत्पन्न कर देशकी वाहवाही कराने और कुटुम्बको संपत्तिदा सुवाद घटानेकी यही एक मात्र बाणी है।

ऋतु, क्षेत्र, पानी और बीज ये चारों योग्य हों तो जीवनमेंसे उत्तम अङ्कुर निकलता है। वैसे ही प्रवृत्तगी स्त्री रूपी ऋतु, गर्भाशय रूपी

परलोकमें सुखी होता है। इस प्रकारका वह ज्ञान साध है उसका मिटना कठिन नहीं है परन्तु इनने पर भी उसकी कुछ परवाह न रखकर विरुद्ध इच्छाको देवी प्रेणा समझ वेहद विषय मुक्तका सेवनकर शारीरिक और मानसिक बलको क्षय करके और जीवनका प्रायश्चिन कहीं दूँदने पर भी न मिले ऐसे भयंकर पापमें पड़नेके बराबर और कौनसी सुखिता होगी ?

अगर और अगर होनेकी इच्छा मनुष्य मात्र को होती है। इसके लिये (अपने लिये और अपने बच्चोंके लिये) देवी नियमके अनुसार चल कर, व्यसनरूप दूषित सपागमको बंद करनेमें यदि प्रायेक दम्पतिकी प्रवृत्ति हो जाय तो कैसा अच्छा हो ? परन्तु अफसोस ! इस वर्तमान समयमें वैसा अनुकरणीय तथा नमूना स्वर्ण नोड़ा क्वचित् ही मिलता है। तम्बाकू आदिके व्यसनवी लोग अपनी इच्छाको अधिकर तृप्त करनेके लिये उसी व्यसनमें लिपटे रहते हैं, वैसे ही कामी पुरुष अपने दूषित मनको तृप्त करनेके लिये (यद्यपि उससे सच्चा सुख और तृप्ति मिटना संभव नहीं है) तथापि न करने योग्य दृष्टपतक कर डालते हैं।

यद्यपि यह नहीं समझते कि ऐसा करनेसे मन वर्ष क्षय होकर नीच बन जाता है। मदिशान और जुआ खेडनेखेकी तरह काम-रासना कभी शांत होती ही नहीं है। यान् विषयमोह द्वारा उसे शांत करनेका उपाय करनेसे बल और अधिक २ पड़ती जाती है निम्नके परिणाममें शरीरका नाश हो होता है। पुरुष न्यों २ स्त्री संगमें अधिक २ छीन होता जाता है, यों यों

ही उसका वीर्य क्षीण होता जाता है । परन्तु तब भी उसका मन तृप्त नहीं होता । अतः वीर्यके बदले रश्मि निच्छलने लगता है । और इस तरहपर वीर्य तथा रश्मि दोनोंके कम हो जानेसे जोड़ ढोले पड़ जाते हैं, शरीर निलेना और दुर्बल होने लग जाता है, भोजनसे रश्मि हट जाती है, अन्न पचता नहीं, ज्वर, खांसी और आखिर क्षय रोग तक उत्पन्न होकर शरीर निकम्मा कर देते हैं ।

स्त्री समागममें नियमित रहनेवाले पुरुषोंका जीवन सुख, शांति और आरोग्यमें व्यतीत होता है और काम सुख भोगनेकी शक्ति अधिक समय तक बनी रहती है । तथा जवानोंमें ही गुदापेके द्वारा भोगकर मृत्युके दश नहीं होना पड़ता ।

यद्यपि मानसिक सुखकी अपेक्षा शरीरिक सुखकी योग्यता कम है परन्तु तब भी उस सुखका भोगना संभाके नियमसे विरत नहीं है । इसमें शास्त्रीय निषेधका भग नहीं होता और न उसमें किसी प्रकारका अनर्थ है । परन्तु भेदे मनुष्यको अपने अन्यान्य कर्मोंके साथ नीति-शास्त्रके नियमोंका पालन कर । आवश्यक है । वैसे ही समागम का शरीरिक सुख भोगनेमें भी नीतिके नियमावली चरमकी बहुत ही आवश्यकता है । हम बहुतसे आचार्योंमें कहते सुनते हैं कि विषयसुख भोगमें पशु-वृत्तता त्याग करना चाहिये । परन्तु ऐसा करना हमारी मूर्खता है । क्योंकि इन विषयके नियमोंका पूरा पालन तो पशु ही करते हैं । इसलिए हम ज्ञातम पशु वृत्तिक व्यवहार ही सीखना है । मृदुलमे जायसी

जानते होंगे कि गर्भ रहने योग्य स्थितिके सिवाय दूसरे समयमें पशुओंमें मादा, नरको अपने पास नहीं आने देती । दूसरे प्राणियोंमें नर नारीके समागमका जो हेतु है वही हेतु मनुष्य जातिमें भी मुख्य गिनना चाहिये । मनुष्य जातिमें नर नारीके सम्बन्धमें ऊपर लिखे हेतुके साथ प्रेम और धर्म भी मिला हुआ है । इस तरह स्त्री समागममें जो गर्भधारण, प्रेम और धर्म ये तीन हेतु मिले हुए हैं, इनको बराबर सार्थक करनेके लिये स्त्री और पुरुषकी उभर योग्य होना और साथ ही में उनको इस विषयका ज्ञान प्राप्त कराना आवश्यक है ।

स्त्री पुरुषके समागम सम्बन्धमें वैद्यक शास्त्रोंमें बहुत थोड़ा लिखा गया है परन्तु वैद्यक शास्त्रोंमें जो कुछ लिखा गया उस सबको इकट्ठा किया जाय तो उसमें विज्ञान की परम्परामें विरोध भी पाया जाता है । और जिसमें विरोध आता है वह सर्मगन्ध हो नहीं सकता । इसलिए हमको परस्परके विरोधी विषयकी जाय करने अन्तिम विज्ञान निराश लेना चाहिये । मनुष्यका स्व बुद्धि से रहित हो तो आश्चर्यजनक अज्ञान समागम करनेकी उगमो इच्छा ही नहीं होगी ।

स्त्री समागमकी सीमा शरीरिक मन्वृत्ती, सम्भाव, वय, उमर, पुराक आदि बहुतसी बातोंपर निर्भर है । मन और शरीरको स्थिति हो औ। मन मन्त्रसे चलेने की क्षमता हो, तब ही समागम सम्भव है । समागमकी क्रिया दोनोंके लिये लाभप्रद होनी चाहिये । यह दोनोंमेंसे एकको भी मृदुल्यही हो तो दोनोंको क्षति पहुँचानी है । और दोनोंकी



इच्छासे दोनोंहीके अरुक्छ हो तो आनन्ददायक और निर्दोष प्रजाको उत्पन्न करनेवाली होती है । दोनोंमेंसे एकको भी मानसिक अथवा शारीरिक पीडा हो, सोम हो, बेचैनी हो, अथवा दूसरे कारणोंमें मन लगा हुआ हो तो उस समय का समागम हानिकर होता है । स्त्री और पुरुष दोनों हीको समागमकी इच्छा हो, तब ही समागम करना चाहिये ।

जो पुरुष स्त्री समागमके सम्बन्धमें अपने मनको यशमें रखकर योग्य नियमका पालन कर सकते हों वे बड़ी उमर वाले, कुसमयमें बुढ़ापेसे न दूबनेवाले, तेजस्वी, दृढवान और मजबूत होते हैं । किस हालतमें और दिन २ स्त्रियोंसे विषयमोग नहीं करना चाहिये, उसका खुलासा इस प्रकार है ।

रमस्त्रला, विना इच्छावाली, मलिन, अप्रिय, पुत्रकी अपेक्षा ऊँची जात वाली, उमरमें बड़ी, रोगी, विरुद्ध अगवाली, द्वेष करनेवाली, गर्भिणी, पुम इत्यादि किसी भी रोगवाली, गुरुकी स्त्री, सप्ताहसे विरक्त, अप्रिय, आर्तव अपना गर्भाशयके दोषवाली, अनिष्ट रूपवाली, अनिष्ट आचारवाली, सूना प्रेम दिग्ग ने वाली, फूलर, विना प्रीतिवाली, दूसरेपर प्रीति रखनेवाली और पाई स्त्री, बेइयाँ इतनी स्त्रियाँ समागमके लिये निषिद्ध हैं ।

सूर्योदय और सूर्यास्तका समय (मत काल, मध्यकाट) अथवा रात्र, अमावस्या, पूर्णिमा, रावोच छोड़नेका समय, मध्यरात्र, सारा ही दिन और वर्षक दिन भी समागमके लिये निषिद्ध हैं ।

कामका वेग आये बिना, मूखे, प्यासे, पेट बहुत भरा हो तब, दवा खाने, बाद, अप्रिय शरीरसे; ऊँचे नीचे होकर, टेढ़े-सीधे होकर, मूत्रनाषा और किसी प्रकारकी थकावटके समय भी समागम निषिद्ध है ।

ऊँचे पुरुषको नीची स्त्रीसे और नीचे पुरुषको ऊँची स्त्रीसे समागम नहीं करना चाहिये । योग्य उमरको न पहुँचा हुआ हो, बुढ़ा, रोगी, उदास, दुबला और अशुद्ध वीर्यवाला पुरुष समागमके योग्य नहीं है । जो स्थान रमणीय हो, जहाँ स्त्रियोंके सुन्दर गायन सुननेमें आते हों, नहा मद्य सुगन्ध पवन आनेका अवकाश हो और जहाँ एकान्त स्थान हो वहाँ समागम करना ठीक है ।

जहा पर पास ही माता पिता आदि मड़े रिस्तेदारोंका निवास हो, जहा जगह खुली हो, जहा धर्म आती हो अथवा जहा दुस्तरके शब्द सुननेमें आते हों, वहा पर समागम करना ठीक नहीं है । स्त्रीको शरीर उल्टा या काबट लिये वीर्य कदापि ग्रहण नहीं करना चाहिये । काण शरीर उल्टा काँके नोन ग्रहण करनेसे उसके गुण अगमें पीडा होती है । दाहिनी पसलियोंके चक्र छेदकर ग्रहण करनेसे आयुशयमें से निरनेयला कफ गर्भाशयको बन्द कर देता है । और बाई तरफके करकसे पित्ताशयमें से पित्ताश गिरकर रज और वीर्यको भगा देता है ।

गोरे घातु परिवर्तन न हुए हों ऐसी अवस्थाका बाटक, स्त्री समागम की तो उसका शरीर थोड़े पानीके छेदोंकी तरह तृप्त होकर सूखने लगता है और उसे सुनरा और दुःख होता है ।

❀ दिगंबर जैन ❀

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधैश्च तत्तैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणामिः ।

सद्योपयत्नमिदं प्रवर्त्तताम्, देगम्बर जैन समाज मासम् ॥

वर्ष १८८८ ई. ॥ वीर संवत् २४४८. भाद्रपद विक्रम सं० १९७८. ॥ अंक ११५५

“ आत्म विकाश ”

गड़े अन्न राश्री हुआ प्रमात । करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ।

नींदमें गाफिल होकरके ! तना सब पागल हो फाके ।

गमाई भारतीय सब लाभ । समीचे क्या अन्न नूनन साग ।

नहीं है गगन कुसुमकी आश । करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ॥१॥

मोह ममताको तनबाढो । समी सत्याग्रह वृत्त पाढो ।

बरो मिथ्या आशा चक्कूर । बरो तुम योद्धा अन्न भापूर ॥

नहीं रखो जीवनकी आश । करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ॥२॥

मीन सम हुए इसी भूपर, उमे जो निपमिन दृढ मनपर ।

बताया योद्धाका सब साग । गाद बरलो सब तुम वह आन ॥

छोड़ काके भोगोंकी आश, करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ॥३॥

भुलते मरे समी जाते । दूधनसे दूध समी जाते ।

हवन समाननरमें होता । लाभ परदेशोंका होता ॥

उठो खोदोगे फिर क्या वस ! करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ॥४॥

जैत्रमें जाकर भारत पूरा । कातर हैं क्या निन सुन ।

वहा भी देश बार्थ करते । नहीं विपदाओंसे ढाते ॥

जगो ! काते किसकी अन्न आश । करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ॥५॥

नहीं इसका हे फल अति युग । नींदना मोहा यह विषमता ।

सम्हालो शेरों कैसी देह, छोड़ दो मिथ्या समी सनेह ॥

बना नदि, कोई शा है पास, करो अन्न आत्मोन्नती विकाश ॥६॥

“ माणि ”



समाजोन्नति

तजे यदि ईर्ष्या वि । समाज । समुन्नत होवे जन समाज ॥१॥

कठ से हुआ दिलों पे फेर । द्वेषने लिया दिलों को घेर ।

छो, दो शीघ्र दिलों से दे । ही अब रहा सब व्यवेश ॥

मना हो शक्ति सपर सर आर — मुखा होवे नैन समाज ॥२॥

दृव ही माला कर दाग । नहीं कुछ भी देता माला ।

हुं है उगड़ से यह क्षती । रही नहि सहोदरों में स्ती ॥

एक पर पड़ते हैं इक गान । सीमें दृवी जैन समाज ॥३॥

वि । बाघ भी हैं रेंठे । विचारा जो कुछ कह बैठे ।

रंवा जनन का अभी न लक्ष्य । अंगी हस्ते क्या वह दक्ष ॥

समृद्धा । भी सजाया जान । अत दरदी सब नैन समाज ॥४॥

इधसे शस्त्रीण बोले । चान नहि हृष्य वीन तौले ।

१ अस सखा क्या होगा । शांतिसे क्या अर्थ खोजेगा ॥

या ने रक्त निखेल समाज । सखा या सखा ही यह सान ॥५॥

वि । दि में रह रघो । हृद छल हृष्य न हृष्याओ ।

“ दरहको तजना ही होगा । रात रात भनका ही होगा ”

• साहालो सरी जैन समाज । मच दो शांति हमर नव आन ।



हमारा सबसे महत्त्वपूर्ण धार्मिक पर्व श्री
दशलाक्षणी पर्वमें
दशलाक्षणी पर्वमें दिन चल होगये हे।
कर्तव्य। ये १० दिन इतने
पवित्र है कि इनमें

सोलह वाराण, दशलाक्षणी, रत्नत्रय, अनन्त,
सुगम दशमी, श्रवण द्वादशी, ऋषि पंचमी,
निर्दोष सप्तमी आदि अनेक नव रासी दिनोंमें
अते हैं। ऐसे तो पर्वके १० दिन बड़े जाते
हैं परन्तु हमारे इन पुण्य पर्वकी समाप्ति आश्विन
वदी १ को ही सोलह कारण या पूर्ण होकर
होती है।

इन पुण्य दिनोंमें हमारे भाई व बहिनो यथा-
शक्ति नव पुत्रा आदि करते हैं यहा तक कि
बहुतसे भाई व बहिनो दशर सोलहर या एकर
माहका उपवास करते हैं जिनसे जैन धर्मकी
विशेष प्रभावना होती है। हर एक मंदिरमें नित्य
पंच पूजा, रात्रीकी पूजा, सुत्रपाठ आदि होता
है परन्तु अब भी ऐसे बहुतसे स्थान हैं जहा
नित्य शास्त्र समा नहीं होती है न सुत्रकी व
दश धर्मपर विचारन होता है। बिना अर्थ और
माहात्म्य समझे पूजा करनेवा। कुछ भी फल
नहीं है इन लिये हर एक मंदिरजीमें इन दिनोंमें
नित्य दश धर्मोंसे से एक २ धर्मका तथा
तत्पर्य सुत्रजीका एत २, अथवा यथा
सुत्र भाष्योंकी सुनाया चाहिये। हमारे

मठारकोठा तो नान ही जने दीजिये
क्योंकि गरा ये हाते हैं वहा किन प्रचारका
किता उपदेश देते हैं यह तो हम जानने ही हैं
परन्तु गरा कहीं स्वागी ब्रह्मचारीने चतुर्मास
रिखा है वहा तो धर्माष्टकी अच्छी वर्ण होवेगी
ही और गरा नहीं है वहाके वहे लिखे भाई
नित्य दो, दफे मंदिरमें सत्र भाष्योंको धर्मका
स्वरूप सुनवे और यथा शक्ति धर्मप्रधान करने
दान श्रुत्य करें।

अब इन पवित्र पर्वमें हमारा सबसे प्रथम
कर्तव्य यह भी है कि हमारे मंदिरमें एक भी अप-
वित्र वस्तु पहिने हुए न गावें और न मंदिरके
पुनन व उपकरणदिमें एक भी वस्तु अविवश न हो।
बिलायती व यहाकी मिठोंके बने सफे चरबी
और लोहके स्मरकसे तैयार होते हैं तथा रेशमी
वस्त्र किनकी रिखा होकर तैयार होता है वह
सभी मठों माति मानते हैं इसलिये हमें अब
मंदिरजीमेंसे विदेशी व मिठके रूपडे तथा रेशमी
वस्त्रको उपयोग बिल्कुल बंद करके हाथके काने
और हाथके बुने शुद्ध स्वदेशी सुती कपडे
अर्थात् पादियन माहेशा हा उपयोग
करना चाहिये। विदेशी वस्त्र तथागही
प्रतिज्ञा जिन २ मई व बहिनो नही की है
उनका इन पवित्र पर्वमें अक्षय ले लेनी चाहिये।

अब इन पर्वमें उत्तम समा धर्मक सत्र २
उत्तम स्वयं धर्मका माह स्वयं कुछ कम नहीं है।
लग धर्मक पत्रसे ही हम ज्ञाते कर मरते
हैं इसलिये स्वयं धर्मक पाठवाचन इन पर्वमें चाहिये।
प्रकारक यथा शक्ति दान हम सब भागों को
करना चाहिये। तथा हजार मई व बहिनो जो



दश २ उपवास करते हैं उनका तो खास कर्तव्य है कि इस व्रतके उपलक्षमें अच्छी रकम दानमें निभाके तथा प्रभावनामें बतासे आदि न बांटेकर पुस्तकोंकी प्रभावना करें। हमारी संस्थाओंमें दान करनेसे चार दानका प्रण्य होता है इसलिये हर एक स्थान पर संस्थाओंके लिये खास चेदा इकट्ठा करके सभी संस्थाओंको प्रमाणमें भेज देना चाहिये। हमारी खास संस्थाएँ ये हैं—अथप ज० आश्रम जयपुर, मोरेना सिद्धांत विश्वविद्यालय, काशी स्यादाद महाविद्यालय, कुण्डगिरी आश्रम, सागर विश्वविद्यालय, अनायाश्रम देहली, अनायाश्रम औषधालय बडगगर, महाविद्यालय व्यावर आदि।

इन संस्थाओंमें काफी स्थायी फंड नहीं है और सर्व तो नियम बालू ही है और हमारे माई यदि अपनी कमाईका सौभाग्य हिस्सा भी दान करदे तो हमारी संस्थाएँ अच्छी तरहसे चल सकें। इसके साथ २ एक विशेष कर्तव्य यह भी है कि हमारे सब तीर्थोंकी रक्षा होती रहे इसलिये तीर्थक्षेत्र समितीकी ओरसे जो प्रबंध होता है उनका बालू सब बचानेके लिये प्रतिवर्ष प्रत्येक घर पीछे केबल १) तीर्थरक्षा फंड इसमें कमेटी सूचना हो रही है उसका पाठन करना हमारा कर्तव्य है इसलिये हम वर्षमें पंच द्वादश तीर्थरक्षा फंड का या पीछे एक २ र० की उग ही करके बम्बई तीर्थक्षेत्र समितीको भविष्य में भेज देना चाहिये।

कारण बिना कार्य नहीं होता इस लिये नही नहीं किसी प्रकारका भी अनैक्य हो उसको हम वर्षमें उत्तम क्षमा गुण प्राप्त करके निष्ठा देना चाहिये तथा मंदिरों का दिन पर प्रवृत्त करना

चाहिये तथा चतुर्विंशतिके दिन सब माई व्यापार छोड़कर उपवास करते हैं व धर्म ध्यान करते हैं उस दिन मंदिरके शास्त्र मंडारकी सम्हाल करनी चाहिये और जो २ शास्त्र मंदिरजीमें न हों उनको अपने द्रव्यसे या तो मंदिरके मंडारोंके द्रव्यसे मंगा लेने चाहिये। यह पर्व कहां किस तरहसे मनाया गया, क्या २ नवीन कार्य हुए आदिके समाचार सब माई हमें आश्विन वरी १ तक भेज दें ताकि वे आगामी अंकमें प्रकट कर सकें।

* * *

व्यापारमें प्रतिष्ठा बनानेकी भावनाका रतन करते २ अवस्थात सुकता और शास्त्र। अकाल मृत्युको मत्त होनेवाले १६ वर्षके एक नामी श्रीमान् सि० मोतीलालजीका सुकता बम्बईमें हुआ था उसकी चर्चा हमने की थी और ऐसे सुकते शास्त्र सिद्ध हो तो बतावे ऐसा हमने लिखा था उस पर संदेहवाचक जैन रितेन्द्रने अ० १२में 'सुकता और शास्त्र' नामक छेप लिखकर तोड़ मरोड़ कर सुकताको शास्त्र सिद्ध दिखानेका यहां तक प्रयत्न किया है कि अंतमें यहां तक छिपटाया है कि "सुकता करना न मंदि है न कुरीति है और इसे बंद करना मानों पापके पापशिक्षका बंद करना है और सुन मनुष्यके प्रथादि पर दुना पारका भोज आद देना है ।" उल्लेख बावय छिप कर संवाद-बन्धने यह अनजया है कि हाएक छोटे बट्टेकी मृत्युका सुकता करना शास्त्र सिद्ध है और जाना ही चाहिये और न ज्ञान भी दृष्ट

दिको दुना पाप दमेगा तो जब खडेब्रवाल
महासमा धर्मसे खविरुद्ध चउनेकी पूरी डींग
मारती हैं और उसने ६० वर्षकी आयु तकका
सुखता न करनेका प्रस्ताव कर रक्खा है वह
क्या उनके विचारसे धर्म विरुद्ध नहीं है ?
सुखते न करनेवालेको ये मापी और अधर्मी कहते
हैं तब ऐसा प्रस्ताव क्यों कर रक्खा है ? और
बंगाल आसाम खे० समाने ३० के स्थान पर
४९ वर्ष तककी आयुवालेका सुखता न करनेका
जो प्रस्ताव किया है वह भी उनको बूझ लगा
हे यह कैसी मजेकी बात है ! इससे ही पता
लग सकता है कि खडेब्रवाल जैन हितेच्छु कैसे
सुधार जातिमें करना चाहता है !



दाहोदमें ऐक्य-यागद, प्रातका केन्द्र,
दाहोदमें ९१ गृहजैनियोंके हैं। वहा कई दिनोंसे
परस्पर फूट थी और दशदशसणी पर्वमें कई बाघाएँ
उपस्थित होनेकी शंका थी परन्तु अतीव हर्ष है
कि मार्दो वदी ११ को बहाके जुने मदिमें
सब माइयोंने बैठकर अपना झण्डा बडे प्रेम
भावसे निवटा लिया और एफता होगई जिपके
विहरूप ब्रतासे भी बाटे गये । बहाके मंदि
रमें रेशमी खविर वज्रोका उपयोग-होता है
तो भी बद होना चाहिये ।

मृडविद्री-में बडे मदिाके जीर्णोद्धारका
कार्य पूर्ण होने आया है और म० चारुकीर्तिनी
और पंचोंके प्रयत्नसे वहा आगामी माघ मासमें
पंचकल्याणक प्रतिष्ठाका बडा पारो उत्सव होने-
वाला है ।

साकरोदामें विद्यालय-ब्रह्मचारी चांद-
मलनीके उपदेश व प्रयत्नसे साकरोदा (उदय
पुर, मेवाड) में एक वर्ष हुए बोडिंग व ऋतु
दि० जैन विद्यालयकी स्थापना हो गई है और
खूब उन्नति पर है । अभी ७० विद्यार्थी पढ़
रहे हैं । इस बातके जैनियोंका कर्तव्य है कि
अपने बालकोंको इस विद्यालयमें पठनार्थ भेजें व
यथाशक्ति सहायता भी देते रहें ।

उपदेशक चाहिये-गुजरात तथा दक्षिण
प्रातमें उपदेश करनेके लिये बम्बई दि० जैन
प्रातिक समाको एक उपदेशककी आवश्यकता
है । सफर खर्च और वेतन योग्यतानुसार ।
लिखो-माणिकचंद बैनाडा, महामंत्री, हीरानाग-
बम्बई ।

पावागढ़-सिद्ध क्षेत्रमां गत वर्षमा यात्री
ओठा आवेला हता तेथी आचक करता खर्च
बहु थयो छे तेमन धर्मशाला बगेरेनु देव गणुं
छे ने न्यान मायु पडे छे माटे ए तीर्थनो रक्षाना
फड माटे मुनीम बंदुछाल मधुसदासने गुजरात
मालवा खने निमाडमा मोक्लेला छे. ए मुनीम
बैष्णव छे माटे तेमनापर शाका ने लावता सर्वए
यथाशक्ति मदद आपवी अथवा अमने मोक्तवी ।
छालबन्द कहानशम मंत्री, नवीपोछ-बडोदरा ।

तिलक जघंती-के दिन गन २१ अगतवो
सागरकी पाठशाळाके छात्रोंने सम्प करके स्वदेशी

वस्त्र ही पहननेकी प्रतिज्ञा ली थी ।

रामटेकमें खं० सभा-नागपुर प्रां० दि०
जैन संकेतवाल समाका ७ वाँ अधिवेशन ता०
१०-११-१२ अक्टूबरको होगा । सब तैयारी
होरही है ।

भिड-में मदावर दि० जैन विद्यालय अच्छी
तरह चउ रहा है । इसकी प्रबंधक कमेटीने
नियम बनाया है कि ६) साल देनेवाले २६०
- व १०१) देनेवाले १०० मुख्य मेम्बर घेनाये
जावें । सब माइयोंको मेम्बर बनना चाहिये ।
१०० तो बन चुके हैं ।

उंदौरमें उत्सव-दा० सर सेठ हुकमचंदजीकी
आरमाथिक संस्थाओंका ८ वाँ वार्षिकोत्सव इस
साठ विशेष रूपसे मनाया जायगा अर्थात्
मार्च सुदी १० से तेरहद्वीप पूजन विधान
होगा व आखिर पदी ४ को जलयात्रा महो-
त्सव, विद्वानोंके व्याख्यान व संस्थाओंका वार्षि-
कोत्सव होगा तथा भंवरीबाग धर्मशालाकी दूसरी
संजिष्ठ तैयार होगई है उसकी उद्घाटन किया
होगी और शामको सर सेठ हुकमचंदजीकी
ओरसे उपस्थित दि० जैनियोंका प्रीतिमोन होगा
सभी मई व मासकर संस्थाके पूर्व कार्यक्रम
व छत्र धाना अवश्य २ पनारें ।

हनागिठाल, महाप्रां० ।

दशालाक्षवर्षीय पर्वमें-पं० श्रीगंगाजी व राव-
जीप ई दोशी एनाइमें मुनि शक्तिपागरजीके पास
उपदेशार्थे जायेंगे । वरा २० २००-२००
जैनियोंके गृह हैं । पं० निम्नराय शास्त्री कोरहा-
पुर जायेंगे व सोलापुरमें सुबर्णिका रूप माने-

कचमदजी बी० ए०, पं० पण्डु शास्त्री व गुश-
वचन्द दोशी कहेंगे ।

कलकत्तामें धर्म-प्रभावना-पूज्य ब्र-
ह्मचारी शीतलप्रसादजीने इस साठ कच्छत्तेमें
चातुर्मास किया है इससे वहां धर्म प्रभावना
खूब हो रही है । ब्रह्मचारीजी नये मंदिरमें नित्य
दोनों समय साख पढ़ते हैं तथा चाखल पट्टीके
मंदिरमें ब्र० चांदमलजी शास्त्र पढ़ते हैं । स्था-
नाद प्र० सभाके जम्मे हरेक १४ को होते हैं ।
कार्तिकी महोत्सवपर यहां महासपाका अविरो-
धन करनेका भी विचार हो रहा है । रक्षाबंध-
नके दिन सभा होकर संस्थाओंमें दान करनेकी
अपीठ की गई थी नितसे पांच संस्थाओंके
छिये बरीब ७००) का दान हुआ था नितमें
सर सेठ हुकमचंदजीने २५०) दिये थे । श्री
समानने भी (१००) इकट्ठे कर बम्बई आश्रमको
भेजे थे । तथा २२ माइयोंने विधि पूरेक पं०
ग्रामनछालजी द्वारा यज्ञोपवीत धारण किया था
यहां धर्मशाळा व औपचल्यकी बड़ी भारी
आवश्यकता है । क्या ब्रह्मचारीजीके चातुर्मासके
स्मरणमें कलकत्तेके घनिष्ठ माई ऐसा कोई बड़ा
दान नहीं करेंगे ? हमें तो इस साठ इन माइ-
गोसे बहुत उम्मेद है ।

महान्मभाकी-प्रबंधक कमेटी देहलीमें
ता० २९ जुलाईको नैरित्य नवनगरजीके समा-
पतित्वमें हुई थी उसमें ८ प्रस्ताव दिये थे नि-
सर्वासांशय है कि जैन गस्टके छिये ५०००)
के जेष्ठोंमें प्रेप खोजा जाय । ध्या कंदला ट्य-
टोट जय टोका रजिस्टर काला निश्चित
हुआ, व० नरकेशोर्जा कोषावधारण जार्न

देह महीनेमें न दें तो दीवानी या फौजदारी सामानकी सूची भी 'जैनमित्र' में प्रगट हो उचित कार्यवाई करनेके लिये नवीन कोषाध्यक्ष गई है ।

निर्मलकुमारजीको सत्ता दी गई, महामन्त्री ल० मगवानदासजीका स्वीकार अफगोससे स्वीकार किया गया आदि ।

ग्वेम्बडा—में मदिरेके कार्यकर्ताओंने व पंचने पस्ताव किया है कि भिन मदिरेकीने विदेशी वस्त्र किसी भी निमित्तसे न चढाया जाय । इसका अनुकरण वहाके दैण्यव मदिरेमें हो गया है ।

परतापगढ—में व० गेबीलाळजी, उदासीन प० पन्नालाळजी गोधा व घासीलाळजीका चातुर्मासमें वहरनेसे बहुत धर्म प्रभावना हो रही है । नित्य दो दफे शास्त्र समा होती है ।

जितुर—में नवीन प्राचीन तीर्थ नेमगिरी पर्वतपर श्रा० सु० ५ को व० महावीरपत्ता वनीके उद्योगमें नेमिप्रभु नयंती पनाई गई थी ।

व्पावरमें सत्समागम—महासभाका मटा विद्यालय व्पावरमें आ गया है और इस सल वहा दशछात्रगी पर्वमें व० मगीरपीजी दर्षी, व० ठांडार सती, अ० च० उस्ता व० ज० न० जी, व० छोटेलाळजी (मलपुर), आदि त्यागियोंके उपदेशानुसार अच्छा काम होगा । सेठ हुक्मचंद नगापरपटजी व मुन्शी मामनभि हजी गोहाना तो धर्म साधनार्थ बहा पहुच गये है व अन्य कई भी जा सकने है ।

अयोध्याजी—नेत्रका प्रवच सुचारु गया है और नवीन सूनीम मूडचंद परब ररो ना० फर्न चरमी व दवालासजी मोदशाओने जाकर सत्र चर्चा ता० २४ पुरखो दिया दिया है । यहक

बडनगर अजाथालय—के अनाथ छात्रोंको रक्षावतन पर्वके दिन उत्सव समा आदि कर विधिवर्षक दृष्टोपवीत् धारण कराया गया था ।

नांदगांव—(नासिक) में ऐलक पन्नालाळजी महाराजका चातुर्मास है । वहा भी ऐक्यता हो गई है और खूब धर्म प्रभावना हो रही है आसपासके भाई दयागीजीके दर्शन व उपदेश लाभार्थ वहा अवश्य पवारें ।

जैन जेलमें—पिठौरिया (सागर) में हरिचंद्र जैन स्वशास्त्र्य कार्य करते हुए ६ माह जेलको गये हैं ।

छूटे—महात्मा मगवानजीनजी देतूळ जेलसे छूटे ह बी। व० कुचर दिगंबर भिक्षुजी आगासी मासमें छुटेंगे । बर्जुनलाळजी सेठी अममेरमें वीमेप वमेटीके मजो हैं और वीमेरका खूब कार्य कर रहे हैं ।

परतापुरमें—मुनि चंद्रसारजीका चातुर्मास नहीं हुआ है, पाल परतापुरमें तो शुद्ध शांति सागरनान चातुर्मास किया है और एक मासका उपवास कर रहे हैं । उस दिनके बाद सिर्फ जल रेंगे हैं । नींदरीमें प० चुन्नीलाळजी द्वारा अच्छा धर्मावदेश हो रहा है तथा समोसरण विधान व मल्लभाया उत्सव भी हो गया है और जैनवर्मेका उत्तम उपदेश देते हैं तथा साथ दशक्रासगी पर्वमें १० उपवास करनेवाले हैं ।

संपन्न पन्ना, गटियाकोट ।

रक्षाबंधन-पर्वमें जेठमल सदामुख लखनऊने संस्थाओंको ६७) का दान किया था ।

सिद्धवरकूटमें-कोट बननेका काम चालू हो गया है । सेठ हुकमचंदनीने १०००) भेज दिये हैं । जिन सज्जनोंके पास क्षेत्रकी रकम बाकी हो भेज देनी चाहिये ।

छूटे-उपरौली (मेरठ) निवासी ठा० मंगतराय जैन (कॉंग्रेस कमेटीके मंत्री) ६ माहकी जेल पूर्ण होनेपर गत ता० १९ को मेरठ जेलसे छूटे हैं ।

महोपदेशक-५० कस्तूरचन्दनी दशलाक्षणी पर्वमें उज्जैनके माइयोंके आग्रहसे वहां ठहरे हुए हैं और धार्मिक व्याख्यान व आम समाए हो रही हैं ।

ॐ क्षमा धर्म । ॐ

क्षमा नाम सत्कृत मापामें पृथ्वीका भी है । पृथ्वी पर राज्य करो, इसको काटो, चीरो जलाओ कुट भी क्यों न करो, मगर पृथ्वी न वो किसी पर क्रोध करती है और न किसीका गुना चाहती है । ठीक इसी प्रकार मनुष्य का स्वभाव होता सो ही क्षमा धर्म है । यह क्षमा धर्म क्रोधरूपी मेरीकी जीतनेसे प्रगट होता है । क्योंकि क्रोध है तो आत्माके क्षमा धर्मको तो देता है । और माय, संदम, सतोष, निराकुलता आदि स्वभावको भी नष्ट कर देता है । क्रोधीके धर्म अवधर्मका, हित अहितका, विचार नहीं रहता है । गुस्सा करनेवालेके अपने मन, धन, दाय, काममें नहीं रहते हैं । वे गुस्सा जड़ान चढ़ान काटका प्रीतिकी क्षमामें दूर करके मित्रोंको भी दण्ड बना देता है । क्रोधका बहुत प्रभाव होकर मृत वनन, लोकनिश, भीषण पशुओंके

बोझने लायक वचन बोझने लग जाता है । क्रोधी धर्मको छुपा देता है । क्रोधी मनुष्य पिता, माता, पुत्र, स्त्री, माणिक नौकर, मित्र, बंधु आदिको मारनेमें पाप नहीं समझता । निहायत गुस्सेवाला आदमी, जहर, हथियार आदिकसे अपघात तक कर लेता है । कमजोरीका विश्वास कभी नहीं हो सका । क्रोध ही यमराजके सपान है । क्रोधके असरसे बड़े कपियुनि भी, धर्मसे भ्रष्ट होकर नरक आदि दुर्गतिमें चले गये । क्रोध बुद्धिमें भ्रम कर देता है । क्रोधसे पागल हो जाता है । निर्दयी बना देता है । गुस्सेकी चानर जगतमें कोई भी पाप नहीं है । गुस्सेके बराबर अपना घात करनेवाला कोई भी नहीं है । जैसे किसी जलता हुआ ध्वजार फेंककर मारे तो उसे लगना न लगना उसके होनी (शुभ या अशुभ कर्मों) के आधीन है । मगर जिसने अगारा हाथमें लेकर मारना चाहा उसका हाथ तो प्रपण ही नष्ट जायगा । इसी तरह जो कोई गुस्सेके वशमें होकर दुमरेका गुना करना चाहेगा वह अपने क्षमा, शीघ्र, सत्य, सन्तोष, आदिक गुणोंको नष्ट कर देता है । जिसने अपने क्षमा धर्मको नष्ट कर दिया है उसीको आश्चर्याही बहने हैं । क्रोधरूपी मेरीकी जीत लेना, कभी भी गुस्सा नहीं करना उभीको क्षमा कहने है । क्षमा है तो आश्चर्या गृह्य धर्म (स्वभाव) है । क्षमा धर्म ही सनातन दुर्लभ है दुर्लभेशास्त्र है, दुर्गतिसे बचनेवाला है, क्षमा धर्म भिमके होता है उसके सारे गुण सदन धर्ममें प्रगट हो नये हैं । इसलिये सबको चाहिये कि उत्तमव्रत धर्मको चरण करें । ॐ क्षान्ति क्षान्ति क्षान्ति ॥

उलफनराय जैन-मोक्षाना ।

श्री दशलाक्षणिक पर्व

या

जैनियोंके सत्याग्रह दिवस ।

जैनियो ! बनवानेकी आवश्यकता नहीं कि आनेवाला श्री दशलाक्षणिक पर्व किनना पुनीत है ? जैनोका प्रत्येक बालक २ मी इन पर्वसे मली-मांति परिचित है । ज्यों २ पर्वके दिन समीप आने जते हैं त्यों २ भाषोंमें पवित्रता आती जा रही है । पहिले मैं इस पर्वको मलीमांति पूर्ण करनेके लिये निम्नलिखित सामग्री परम आवश्यक समझता हूँ । आशा है कि आप उस सामग्रीको सधिया कर पर्वके परम पावन दिवसों वर्ममय व्यतीत करेंगे ।

ठीक इसी भांति सत्याग्रहके लिये भी अपनी हार्दिक पवित्रताकी आवश्यकता है । बिना क्रोधादिको वशमें किये पूरा सत्याग्रही कदापि नहीं कहा जा सकता है । सत्याग्रही यदि जेष्ठमें भेन दिया जावे, देशमें निष्ठा दिया जावे या अपने घ में सज्जुष्ट रहे, कदापि द्वेष भाव और प्रेय पात्र न रखकर सपता भाव ही धारण करेगा जो कि उत्तम सेमा धर्मका पूर्ण परिचायक होता है ।

वस्तुतः । संसारमें ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो सदा सुखकी खोजमें न रहा करता हो किन्तु पुण्य मंदिरके यथार्थ मार्गका ज्ञान न कर व्यर्थ हो, इधर उधर भ्रमण किया करते हैं जिसका परिणाम दुःखपग ही होता है और उस दुःखके फटको मोचने हुये दुःखके बीजों पर प्यास न डेकर दूधको दूर करनेके लिये प्रयत्न किया

करते हैं तब दुःख दूर करनेके प्रयत्नके विफल होनेपर हताश मो हो जाया करते हैं ।

जिम मनुष्यके घाँमें खग लगी है उसका सरसे पहिला प्रयत्न यह ही होना चाहिये कि जहासे आग लगी है वहासे जड़ सिद्धनादि उपायोंसे आग शान्त करे, शान्त होनेपर अन्य सर्व सामग्री स्वयंसे सुरक्षित रह सकती है किन्तु अन्य अज्ञानी पुरुष पहिले मुख्य स्थानको शांत न कर इधर उधर फैली हुई सामग्रीको घाँसे, बाहिर ले जाया करता और उठाने रखनेके अवसर तक अग्निके अधिक प्रभावित हो जानेके कारण घरकी समस्त सामग्रीसे हाथ धोकर, मरम ही प्राप्त कर सकता है । उसी प्रकार हम सुखकी परम अभिलाषा रखने हुये भी उसके बीजको न प्राप्तकर सुखके फलको प्राप्त करनेमें विफल प्रयत्न हुवा करते हैं । इस परम सुख फलके सधन बीजको हमारी क्रोधाग्नि, मानसिलरि (पर्वत) माया जल और लोभ गर्भ सदा ही नष्ट किया करते हैं । कहनेकी आवश्यकता नहीं कि मनुष्य को घेके वशमें होकर अपना व दूसरेका कितना अनिष्ट कर डालता है । जोधो, मानी, मायावी और लोभी पुरुष मान व अपमानका विचार न कर हित व अहित एक ही समझ बैठते हैं । जो मनुष्य जोष द्वारा दूर पर कोष प्रकट कर अपना जेब दूर करना चाहता है, वह सर्वथा मूर्ख करता है । जो मनुष्य हाथमें अज्ञा । छेकर दूधरेको मछा दूध देखना चाहता है वृद्ध मय पहिले अपना मछा बैठता है, पीछे चाहे दूधरेकी गांठि हो या न हो ।



क्रोध केवल आत्माकी हीनता है। जो मनुष्य दुर्बल और रोगी हुआ करते हैं, तथा जिनको अपने अधिक शक्तिधारियों का सामना करना पड़ता है आत्म दुर्बलताके कारण ही क्रोध पिश चिनीको पाम बुला लाया करते हैं। जो मनुष्य गंभीर होता है वह कदापि क्रोध नहीं करता सदा समता धारण करता है। समुद्र न तो वर्षाकालमें अधिक होजाता है और न गर्मियोंमें सूख ही जाता है तभी तो उसका माहात्म्य संपन्न संसारमें विदिन हुआ है क्रोध और मानकी अधिष्ठाता शान्तिके अभावमें फूट-फूट उत्पन्न हुआ जाता है। आज इस फूटके प्रत्यक्ष अनेक उदाहरण उभरिपन हैं। प्रत्येक व्यक्ति फूटकी हानिको समझता हुआ भी उसे त्याग नहीं सकता, न जाने कैसी विवशता देश है। यह दशा ठीक साव नरैन्द्रके समान है। जिस तरह साव नरैन्द्रको छोड़े तो स्वयं मर जाना है और निगल जाने तो बच ही नैसे सका है।

हमारी घट छूटे है। हमारा कोई गतिभक्त नहीं है। यदि आपने अपना अनादित्व स्वीकार कर लिया तो महान् सबको प्रसन्न कर दिया, यदि नहीं किया तो संसार रक्त ही बहेगा। आपके सामने दोनों पथ उलरिपन हैं। जहाँ आप मुझ समान माइये।

यदि पारस्परिक विद्वेद रहें तो भी फूट नहीं किन्तु फूटका प्रभाव कि उपद्रव विहाय, यदि दो, सप्ताशों प्रति य ममतामयीगी संसार-ओमें ही स्थान पा सकते हैं।

धर्मकी अहर्निश (दिनरात) चर्चा हम करते रहते हैं, अपने आप समझते हैं, दूसरोंको समझाते हैं पर आचरणको सर्वथा भिन्न समझते हैं किन्तु वाचक वर्ग। “ज्ञानं भारः किर्या विना” अर्थात् किर्याके बिना ज्ञान होना निष्फल है।

उस ज्ञानका फल प्रेम अथवा वात्सल्य अङ्क होना चाहिये बिना सहचरिणियोंमें प्रेम क्रिये धर्मकी प्रभ बना होना अच्छा (बांझ)के सुन्दर सुतकी आशाके समान है। हम अपने प्रत्येक व्याख्यानेमें, लेखमें, पारस्परिक वार्तालापमें भी “प्रभावना” को महत्ता देते हैं लेकिन परस्परमें विद्वेद होनेके कारण सबको विदित हो जावे कि “ये जैनी हैं” इतने कहाये जानेसे ही इतिश्री नहीं हो जावेगी। हमको वास्तविक धर्मकी (क्रोधादिको मन्वकर) आचरणपर भेन धर्मकी प्रभावना करना चाहिये।

आत्माकी दृष्टिसे प्रत्येक स्वतन्त्र है कि वह शुभ अशुभ कार्य करे और करावे अतः उस उपयोगको मञ्जूरी और उपायसे ही मञ्जूर हो सकती है। अन्तिम मार्गपर चटना ओज-कल हावता हो गया है। हमारा सामान्य अनतिश्री और (उद्धो, एक दृष्टिको मञ्जूरी बुद्धिकी ओर) मञ्जूरी चला जाता है, उन्नतिकी ओर शतशः प्रयत्न भी निष्फल होजाते हैं। इस प्रकार संसारमें गुण-राशी और अवगुणराशि दोनों प्रचलन हैं, जिस निराशा स्वभाव करने आजावे सो ही ठीक है। हेतु कदलीवन (जिम उपवनमें कोमल, मधु, मृगनिन फल हैं उपर) से मार

बहुवृत्तको ही मक्ष्य समझता है। अन्य है इस स्वभावको ? उंटमें इस अवगुणके कारण उसके आकार (देह) में भी कुरूपता आदि अवगुण प्रकट दीक्षते हैं। जैसा कहा है -

“रक्षं वपुर्न च तिलोकनहारि रूपां,
न श्रोत्रयो मुखदमारयति कदापि।
उर्यं न साधु तन किञ्चिदिदञ्च साधु,
तुच्छे रतिः करभ कण्टकिनि-द्रुमे च ॥

अर्थात् ऊटका शरीर छूनेसे रुखा (रठोर), रूप देखनेमें असुन्दर, शब्द अश्रुनामिय (न सुननेयोग्य) लगना है। उसमें इतने अवगुण हैं कि बड़े पेड़में न समाकर बाहिर तक निकल आये। कहनेका मार यह है ठीक इसी प्रकार फूट आदि के रहनेके कारण हमारी जाति व समाजके शरीरमें भी उसी प्रकार रूपहीन्ता-प्रभावनाका अभाव है। जो हम शब्द निकालते हैं व सुनते हैं वे भी देह परिपूर्ण, इस लिये कोई सम्मन (निष्पक्ष) सुनना नहीं चाहता है। हाँ, आप-ममें (पक्ष २ वालोंमें) तो उसकी सुन्दरता आदि सभी गुण मालूम होते हैं वह भी प्रकृति विरुद्ध नहीं। देखिये-

“उप्यानां विवाहेषु गीत गायन्ति गर्भया।
परस्पर प्रशंसन्ति, अहोक्षयमहो-वनिः ॥

अर्थात् उंटोंके विवाहमें गधे गीत गाते हैं। वे दोनों आपसमें रूपही और ध्वनि (शब्द) की प्रशंसा करते हैं। गधेने उन्हे कहा “छाम-देव। आपके रूपको क्या कहना है ?” फिर क्या था, ऊन्हे अपनी प्रशंसा सुन धोतीसे बाहर होखे और गधेसे कहते हैं “और आप तो कौंकित हो रहे हैं” निम्न विचारो तो

न इनमें रूपा ही है और न शब्द मनोहर ही किन्तु एक दूसरेको प्रशंसा कैसे किया जाय ?

इसलिये उपर्युक्त दृष्टान्तसे आपको हृदय-मन्दिरमें श्रमा (उसकी बहिन शान्ति) मिश्रको अवश्य स्वीकार करें और सदा सत्य प्रेमोद्यानमें फल फूलोंका मधुर आस्वाद लेते रहें। देखिये -

“प्रेमका प्याला नहीं जिसने पिपा,
सार है, निस्सार है, नीचनी उसकी ॥”

अर्थात् जिसने प्रेमके प्यालेमें सा दुआ अमृत नहीं पिपा उसका जीवन लोहेके समान कृष्ण (मलिन, चारित्र्य और रूपमें) होता है और पशुओंके समान उनका जीवन निरर्थक है।

अतः जब आवश्यकता एक, एक (१, १) होनेकी नहीं है लेकिन नौ और दो ग्यारह-एक पर एक (११) होनेकी आवश्यकता है। समान व जातिके वर्णनका प्रत्येक व्यक्ति उसका धुन (होरा-धारा) है बिना प्रत्येक व्यक्तिके मित्रे समुदाय कैसे बड़ा जा सकता है ? बाढ़ (रेती) को पहचान (रेगिस्तान) नहीं कहते और न मिट्टी २ को समुद्र ही कहते हैं आदि।

इसलिये जिन प्रकार जलमें रेखा करने पर एक होना है-पाराके सेकड़ों टुकड़े करने पर भी एक होना है, वस्तुओं, उसी प्रकार हम भी एक होनाओ। भिन्न २ दहकारी हो केवल इसी अनेक समझे जाओ। हार्दिक प्रेम वासना एक ही हो तभी जैनधर्मकी प्रम बना होसकी है।

दूरसे देखनेमें मनोहर रेखाभी चट्टीका, तपामा सर्वथा कर देना चाहिये। इसका विवरण दिगम्बर जैन, जैनमित्रादि समाचार पत्रोंमें



બહુકામણી કપડાંના મોઢમાં વિલાસ લુબ્ધ થઈ રહેલા બાઈઓ તમારાં જૈન તીર્થો બધામાં સપડાય છે અને સપડાય છે. તમને અમન-અમન સિવાય કશું છે ક્યાં મુજે છે ? જ્યારે તમે તમારાં દેહ સ્વદેશી જતાવશે ત્યારે તમારો અનન્ય પ્રવિન થશે. અને ત્યારેજ આત્મજગ મેળવી તમારા ધર્મનું રક્ષણ કરશો.

ખાદી ઉત્પન્ન કરવા માટે આપણે રેડીયસ શાળા-વણાટશાળામાં લાભ લઈ જતા હામ શીખવું જોઈએ અને તેના મુદ્દપરોઈ રેડી ખાતી કરી આપણે જોઈએ કે જે મરીતી બહુકામણી કપડામાં હવી તે નહ થઈ છે. સ્વદેશી પ્રચારનું કાર્ય પચ્છાસર થાય તો સારું કામ થાય, અને કામનાં અમલ બરાબર કરી બતાવે તો ખાણ રહી ગયેલાં સમાજમાં પ્રાપ્ત થયેલા તેમની હરકતે આનંદ થાય.

ઉદ્ધર્મ ગરા થયા પછી કામ બરાબર કરી બતાવવું. એમ તો ન થયું જોઈએ કે ગુજરાતના હંમોરા દિગંધર દસા હુમક બાઈઓએ ઉદ્ધર્મ ગરા થઈ નાણાંની ટીપો બરાબર પછાસા સારા એકઠા કરી શ્રી ૧૦૦૮ શ્રી મંદ્રસાગર જોડિંગ રથાપી અને પોતાનાં બાળકોને તો ઘેરજ રાખી મુક્યા છે. વિધવાદિરમાં તો વિદ્યાર્થીઓ મોઢો કંઈવણી માટે સરથા રથાપી પછી તો બાળકોને પૂર્ણ ભોજે પણ બહુવવા મેલવવાને પ્રતિનંદ પડે કરવો જોઈએ. દતો, ને તો બુદ્ધ્યા પરંતુ ઉદ્ધર્મ ગરા અને કાર્ય અંકરા એ દેવતને ખરી પાડી છે તેમના કરતા, હવે તો અમલ સમજને પમજુન બરે તોજ સમાજની પ્રતિષ્ઠા છે, સત્ય કાર્ય કરનાર બાઈ કોઈની રાદ ન જુએ. તે તો પોતે કરી ચોતારી દરજ બળવે. કાંઈ મુક્તિ મેળવે તે પછીજ દુઃ મેળવું એમ ન-કરે. જેમ તમારો દેખવામાં નાથી પડેલા બધ પડેલું રથાપન મેળવવાનો એમ રાખોજી જોઈએ તેમજ સમજાઈ ગાલવામાં પૂરમાળાની મદદ સિવાય કોઈની સદ ન જોઈએ.

દેશીમાં ચાવી રહેલા દિગંધરજીનાં જતારે ખાતી-સેવકા એ અંકરવને છે. અને તેનાજ

પ્રભાવે ને તેજ ન સહી શકનાર સરકારે આપણા પચીસ હજાર દેશ બાઈઓને કેદ કર્યા છે, અને કરવી જાય છે.

પરદેશી વસ્તુઓ વાપરી આપણે દેશદ્રોહી બન્યા છીએ. આપણા ઉદ્યોગોને જમીનદોસ્ત કરી પરદેશીના ઉદ્યોગ પોષ્યા છે. ધનવાન બનવાના હોમે હજારોના રહેતો રોટકો છીનવી કંગાળ કોષા છે, હજારોને ઘરખાર વિનાના બનાવ્યા છે, હજારો ભારતના યુવોને એક ટંક ખાવાના સોંસા છે, અને હજારો બાઈઓ એકાદુકાની બિલા માગતાં મરણભાગે છે. પેટને ખાતર ન કરવાનાં કાર્ય કરી ધણીએ પ્રાણ ત્યાગે છે, સ્ત્રીઓ સ્ત્રીયગ વેચે છે, પુરુષો પુરુષાર્થ વેચે છે.

આવી મુરકેલીમાં આપો દેશ સંઘોવાયકો છે. ત્યારે બાઈઓ તમે શું પૈસા બચાવવાનો સરળ માર્ગ જે સ્વદેશી છે, તેનો સ્વીકાર પણ શું નહિ કરો ? આપણે તો ચુર્મસાવી નહીં કપડાંના પહેરનારા અર્ધ સ્વદેશી છીએ. તો આપણને સંપૂર્ણ સ્વદેશી બનતાં સમય પછે શું લાગવાનો હતો ? આપણે એટલો તો નિર્ણય જરૂર કરીએ કે હવે પછી વિલાયતી કપડાં ન ખરીદીશું. આપણો ખેડુત, વર્ગ, ધણા બાંને જે આપણો આદક વર્ગ છે, તેને કોઈ પણ રીતે સત્યાગ્રહી સમજવશે તો સમજ જાય તેવો છે, માટે વિલાયતી ખરીદો તેજ બદલે દેશીજ ખરીદશે તો જરૂર તેમાં સરગતા મેળવશે.

સાચો પંથ પકડતા વિદ્યો વર્ગને નરો છે. પરંતુ અગ્ર રહેતાથી સાત જાણે ખડું સરગમ થાય છે. મહાત્મા ગાંધીજી તમેને વારંવાર યાદ કરે છે કે મારા ગુજરાતી બાઈઓ સ્વદેશી કપારે જનવશે, અને કરે છે કે-સ્વદેશી ચણાનો ચરમી અને સોડીના ઉપયોગ માટે કપાતાં લાખો પ્રાણીઓની રક્ષા થઈ, દેશ આત્મા થાય છે, મારેજ સમાજમાં નિયમ જાય, ને પોતે હુદનાથી પાનો-તોજ અદિમાત્રી છે એમ કહેવાને તમને ખવિહાર છે.

અદ્ય પ્રતિએ લખાએલા આ લેખમાં કામ જુદ માને તો મુધારી સાત વાત મદજ કરી કહીને, કામને અને દેશને વફાદાર તીવરો તથાજુ-

श्री दशलक्षणी पर्वमें जैन समाजका आवश्यकीय कर्तव्य ॥

विद्या नाम नरस्य रूपमाधिकं प्रच्छन्नं गुणं धनम् ।

विद्या भोगकरी पशः सुखकरी विद्या गुह्यां गुहः ॥

विद्या बन्धु जनो विदेशगमने विद्या परं वैतम् ।

विद्या राजसु पूजिता न हि धनम् विद्यानिहीनः पशुः ॥

संसारमें अनादि कालसे अखिल जन प्रथमतः विद्या (ज्ञान) के लिये ही आश्रय देते आ रहे हैं। अर्थात् सबसे प्रथम ज्ञान प्राप्त करनेके लिये ही चेष्टा करते हैं, उसका कारण यही है कि जब तक किसी भी वस्तुके गुण दोषका परिज्ञान नहीं हो जाता तभी तक उस वस्तुमें हेयोपादेयकी बुद्धि नहीं होती, अतएव दुःखदायी वस्तुका त्याग वा सुखदायी वस्तुका ग्रहण नहीं हो सका। इसलिये मुखसे वर्णित रहना पड़ता है, इससे ज्ञात होता है कि संसारमें ज्ञानके अतिरिक्त सुखदायी पदार्थ दूसरा है ही नहीं, जैसा कि एक "कवि" ने कहा है "ज्ञान समान न आग जगतमें सुखको कारण" अतः उक्त सन्देशास्त्रके वाक्यानुसार हमारी जैन समाजका यही कर्तव्य है, कि जिस प्रकार बने उस प्रकार अपनी सन्तानको हाएक तरहसे अर्थात् धार्मिक शिक्षा तथा पारमार्थिक शिक्षासे शिक्षित बनाने। यह शिक्षा वर्तमानके सामाजिक विद्यालयों व पाठशालाओंमें मौजूद है, अतएव उन्हीं विद्यालयोंको स्वकीय द्रव्यकी सहायता द्वारा चिरस्थायी रखना समाजका मुख्य कर्तव्य है। तदनुसार बुद्धेलखंड पान्तिमें "सागरस्य ओसत्तकं सुधातरङ्गिणी दिग्म्भर जैन पाठशाला" जो कुछ विद्याकी मागृति कर रही है वह समाजके समक्ष है। किन्तु विना झिंके कूप भी खाली हो जाता है। इस नीतिके अनुसार इस पाठशालाकी मासिक आय १००) तीनमौसे भी कम है, और द्रव्य ५००) पांचमौसे भी अधिक है, क्योंकि वर्तमानमें लगभग ४० चालीस छात्र विद्याध्ययन करते हैं जिनमें सिर्फ ६ छात्र ही ऐसे हैं जो कि शहरसे पढ़ने मात्रके लिये आते हैं, शेष सर्व छात्र छात्राश्रममें रहकर भोजन भी करते हैं। इसलिये अब तक ५००) पांचमौकी आम्दनी पाठशालाकी चिरस्थायी न हो तब तक पूर्ववत् कार्य सुचारुीतिमें नहीं कर सका, समाजसे आश्रय निवेदन है कि यदि अपनी जातिकी वास्तविक समुल्लेखन कर्तव्य है तो "कथनीस करनी भली" इस नीतिके अनुसार श्री-ध्वज-शान्ति धर्मका अनुशीलन करते हुए स्वकीय द्रव्यको "विद्याद" तथा क्योंकि आप ही लोगका लगाया हुआ यह पौजा यदि सदैव दरया-शिक्षाका अद्वितीय प्रभाव फला देगा। निवेदन कालेष्ट भैता

करोड़ालाल सराफ, जेजी-भो सत्तक सुभा

जैन काव्योंका महत्त्व ।

(गतावसे आग)

स्नानं विधाय विधिवत्कृतदेवकार्यः ।

संतर्पितातिथिजनः सुमनाः सुवेपः । ०

आर्तैरृतो रहसि भोजनकृत्तथा स्यात्

सायं यथा भवति भुक्तिकरोऽभिलाषः ॥ (यश०)

अर्थात् स्नानको करके विधिके अनुसार निनेदार्चाको कर अपने अतिथिननोंको संतुष्टकर, निराकुलचित होकर अच्छे वेपको धारणकर अपने हितजन गुण आदिकोंसे युक्त एकान्तमें यदि भोजनको करै तो संध्याके समयमें उसकी भोजन करनेमें रुचि होती है ।

चारायणो निशि तिमिः पुनरस्नकाले

मध्ये दिनस्य धिषणश्चरक प्रभाते ।

भुक्तिं जगाद नृपते मम चैष सर्ग-

स्तस्याः स एव समयो ध्रुधितः यदैव ॥

अर्थात् हे राजन् ! चारायण नामक वैद्यने रात्रिमें भोजन करनेके लिये कहा है तथा तिमि नामक वैद्यने संध्याकालमें, धिषण नामक वैद्यने दोपहरके समयमें, तथा चरक-नामक वैद्यने सुबहके समयमें भोजन करनेको कहा है । लेकिन मेरा तो इस विषयपर ऐसा मत है कि जिसको जब भूख लगे उसी समय भोजन करे ।

अधिगतसुखानिन्द्रः सुप्रसन्नेन्द्रियात्मा ।

सुलज्जठरवृत्तिर्भुक्तपक्तिं दधान ॥

श्रमभारपरिखिन्नः केहसमर्दिताङ्गः ।

सवनग्रहमुपेयाङ्गपतिर्मज्जनाय ॥

अर्थात्—प्राप्त किया है सुखनोदको जिसने, अच्छी तरह प्रसन्न है इन्द्रिय, आत्मा जिसकी, तथा बहुत थोड़ी है मज्जकी वृत्ति (कुवा) जिसकी, भोजनको पचाता हुआ ऐसा और बहुत श्रमसे खिन्न ऐसा भूषति, तैलको शरीरमें मर्दनका साग करनेकेलिये स्नान गृहको जावे ।

आदौ स्वादु स्निग्धं गुरु मध्ये लघणमम्लमुपसेव्यम् ।

रुध्नं द्रवं च पश्चात्त च भुक्त्वा भक्षयेत्किञ्चित् ॥

भोजनके आदिमें सब दमुक्त, घृणयुक्त भारी भोजन करना चाहिये । बीचमें लघण युक्त आम्बेके रससे युक्त भोजन करना चाहिये, पीछेसे रसाहार करना चाहिये, तथा भोजन करके कुछ नहीं खाना चाहिये ।

शिशिरसुराभिवर्ध्मश्वातपाश्च शरत्सु, क्षितिप जलशरद्धेमन्तकालेषु चेतो
कफपवनहृताशा नञ्जय च प्रकोप ॥

हे राजन् ! शिशिर ऋतु (माघ फाल्गुन) में कफका संचय होता है, सुरभि (वसन्त चैत्र वैशाख) ऋतुमें कफका प्रकोप होता है, और धर्मऋतु (ज्येष्ठ, आषाढ) में कफ शान्तिको प्राप्त होता है, गर्मीमें वीर्य संचयको प्राप्त होता है, श्रावणपास, भादोमासमें पवन प्रकोप होता है, शरद ऋतु (आश्विन कार्तिक) में पवन शान्तिको प्राप्त होता है शरदऋतुमें पित्त संचय होता है, मार्गशीर्ष पौष मासमें पित्त प्रकोप होता है, माघ फाल्गुन मासमें पित्त शान्त होता है ।

तदिह शरदि सेव्यं स्वादु तिक्तं कषायं ।

मधुरलवणमश्लं नीरनीहारकाले ।

नृपवर ! मधुमासे तीक्ष्णतिक्ते कपायं !

प्रशमरसमधानं ग्रीष्मकालागमे च ॥

अर्थात् हे सम्राटवर ! इस शार्दकतुमें मिष्टान्न, तिक्त, कषायरसको सेवन करना चाहिये, तथा नीनीहार ऋतुमें गीठा तुलसी आम्रदेके रसको सेवन करना चाहिये । वसन्तकालमें तीक्ष्ण, तिक्त कषायरसको सेवन करना चाहिये, तथा ग्रीष्मऋतुके प्रारम्भ होने पर प्रशगासन्न (मिष्टान्न) को सेवन करना चाहिये आदि लोकोपकारी विषयोंका इसमें बहुत ही योग्य रीतिसे दर्शन किया गया है । इस ग्रंथके अष्टमध्यायमें समस्त आचार निनपुत्राका दर्शन नड़े विस्तारके साथ तथा साहित्यभी टाडित्यको दिताते हुए जिस योग्य सुचारुरीतिसे किया है वह कोई दूसरे ग्रन्थमें नहीं मिलता । यह भी इसके अनन्यदृष्ट्य महत्त्वसे यो-न करनेके लिये उदाहरण होगा अतः पाठकोंके मनोविनोदके लिये स्नानवि-धिता एक विशेषण दर्शाने हैं ।

“ ॐ मन्त्रमविनतोरगदरसुर मुनेनाशिरत्रिरीडकोटिस्वपतहृदवायमानचरणगुग
 म्, ॐ मृताशनाद्गनाकादिकीर्यमाणमन्त्रास्मैरपारिजातसंतानववनममुनस्त्वन्मानमकरन्दस्वादो
 न्मदमिहमत्तालिङ्गलेखेत्, पोत्तालिदनिदिम्वाटसि पापारगिहन् वरचात्रमारहेलास्कादितवेणुवह-
 कीषणवानकमृदस्तरह्म गहटत्रिविज्जालदहरीभेरीमन्मामभूः नभधिवः शु परततावनदवादानाद
 निवेदिनिराटविष्टिपिपोप सनासम्, अनेनामविक्किरुलकीर्णनिशटपाशोकानोक हेहमन्त्र
 सवरागपुनर्यमर उटिनाहृदमपरागप्रमम् अरिन्मुनेनैर्यल्लनातपप्रयशिशिष्टमणोमयवसना-
 निधुगोत्तल्लमामन्त्रगुणानेनगीमात्तउत्तिटस्वप्रम्, अनवरतदक्षविशिष्टमणोमयवसना-
 मरवाग्नाशुनात्तात्तिवनेयनननमानाटनरिप्रम अजोपमकाशिनवदार्दीति शायी शारीरमप-
 रिण्डुपिपगिद्वन्मास्त्रामनिनिदिरनिधम्, अनवरचित्तुविस्तारामतातातासारविस्तारित-
 मास्त्रीन ज्ञानार्थिदम्पदत्तापरोनाम्, इमात्तिपरिष्टोपशान्तवानामनावसानान्न-
 न्नान्नपरा एतित्रिविज्जालदवादानापोम्, ॐ नन्वमानान्यमममरगतमाभीनमनुमदिविन्मुन-

क्षेत्रद्वन्द्वन्यमानपादारविन्दशुगलं ।

“ मङ्गाविलक्ष्मीलतिकावनस्य, प्रवर्धनावर्जितवारिपूरैः ।

जिनं चतुर्भिः स्नपयामि कुम्भैर्नभः सदो वेश्म पयोधराभैः ॥ ”

(यशस्तिळकचम्पू ८ वा अन्वयार्थ)

पाठकवृद् ! इस स्नानविधिके विशेषणसे आप अनुमान कर सकते हैं कि “यशस्तिळ-
कचम्पू” को किस ताहसे अनन्यलभ्य महत्व प्राप्त है ।

यद्यपि यशस्तिळकचम्पूके विषयमें यद्गतसे पंडितज्ञानों की शुभ सम्मतिया हमको उद्धृत
करना चाहिये थीं, परन्तु लेख वदनेके पक्षसे हम एकका ही सिर्फ उल्लेख करेंगे । काशीके
प्रसिद्ध पंडित गुलाबशाही यह सम्मति है—

“यशस्तिळकचम्पूकी सृष्टि मानवी बुद्धि द्वारा नहीं हुई बरिफ किसी अनुपम देवीय
बुद्धिसे हुई है । इत्यादि ”

मित्रपाठकवृद् ! अब हम आपको इस “यशस्तिळकचम्पू”की उत्तमताका सिंहावलो-
कन कर “जीवन्धरचम्पू” के लिये कुछ कहेंगे ।

वास्तवमें इस “चम्पू” प्रणके वैसे तो सवही गद्य और पद्य उल्लेखनीय हैं तथापि
मन्य पाठकोंके सम्मुख कुछ इसकी भी उत्तमताके दृष्टात स्वरूप श्लोक भेंट देंगे किन्तु इसके
पहिले हम इस काव्यके नेता “जीवन्धरस्वामी”के चरितके बारेमें कहेंगे । वास्तवमें इनके
चरित्रोंपर “गद्यचिंतामणि, जीवन्धर चम्पू, सत्रचूडामणि, जीवन्धर चरित, जीवन्धर
पराणादि काव्य रचे हैं । वास्तवमें इनकी जीवनीका वृत्तात विशेष कोतुहलवर्द्धक, पतनसे
उन्नत बनानेको आदर्शनेता चरित्रक लिये सर्वोत्तम है । इस ही कारणसे इनकी जीवनीके
वृत्तातसे प्रजिगत अनेक काव्यरत्न हैं अब हम जीवधरचम्पूकी वानगी देते हैं—

चक्रं चन्द्रप्रभं यद्भुजयुगमजितं यस्य नात्रं सुपार्श्व
कृत्यं स्वाधीनधर्म्यं हृदि पुरुचरितं शीतलं सुवृताढ्यं ।

राज्यं श्रीवर्धमानं कुलमतिविमलं कीर्तिवृन्दं त्वनन्तं
सोऽयं प्रत्यक्षतीर्थंश इव विजयते विश्वविद्याविनोदः ॥

अर्थात् चन्द्रप्रभ, सुपार्श्वनाथ, शीतलनाथ, सुवृतायादि तीर्थंशोंकी तरह विजयको
प्राप्त होता है । नामके एक देश कथनसे संपूर्णका ज्ञान हो जाता है ।

और भी हम इस चम्पूकी विशेषताका दृष्टात देंगे । अक्षर देखा जाता है कि कालि-
दास कादि कवि अपने अपने काव्योंमें शृंगाररसकी महत्ता दिखानेके लिये स्त्री, पुरुषके
हावभावोंको बड़ी निर्लेजताके साथ दिखाते हैं किन्तु महाकवि हरिश्चन्द्रजी कैसी अनुपम
रीतिसे अपने चम्पूमें बताते हैं । आशक्त गुणमात्र कीडाशुकके द्वारा किस तरह अपने

प्रेमी जीवंधाको पत्र लिखती है। तथा विरहाग्नि दुःखसे दुःखित स्वामी जीवंधर उसका नया उत्तर देते हैं—

मदीयहृदयाभिधं मदनकाण्डकाण्डोद्यतं

नवं कुसुमकन्दुकं चनतटे त्वया चोरितं ।

विमोहकलितोत्पलं रुचिररगसत्पल्लवं

तद्वय हि वितीर्यतां विजितकामरूपोज्ज्वलः ॥ जी० च० ४

तथा स्वामीजी उसके उत्तरमें पत्रद्वारा यह भेजते हैं,

“ मम मयनमराली प्राप्य ते वक्रपदमं

तदनु च कुचकौशप्रान्तमागत्य हृष्टा ।

विहरति रसपूर्णं नाभिकासारमध्ये

यदि भवति वितीर्णा सा त्वया ते ददामि ॥ जी० च० ४ छ०

काव्यरसिकमंडल ! जरा निरपेक्ष दृष्टिपर पसपातफा एनक न टगाकर कहिये । प्रेमी

प्रेमिकाओंके ऐसे सुन्दर पत्र क्या, और किसी कविने अपने नेता उसकी प्रेमिणीके साथ कराये हैं; इसका सौभाग्य जी० च० के रचयिता श्रीयुत महाकवि हरिश्चन्द्रजीको ही प्राप्त हुआ है ।

पाठकों ! “जीवन्धरचम्पू” उत्तमतामें प्रायः सम्पूर्ण उल्लेखनीय है । अतः और हमको उल्लेख करना चाहिये या किन्तु भंगलतक पहुंचनेमें मार्ग सभी विशेष तय करना है; अतः हम चम्पूको छोड़कर अथकाव्यके प्रधान भेद “महाकाव्य” में उत्तमता दिशाते हैं ।

पाठकवृन्द ! जिस तरह वैष्णव महाकाव्यपुंज आनकृष्ण आप लोगोंकी निगाहमें आते हैं उसी तरहसे जैनमहाकाव्य पुंज भी उपसे किसी हालतमें भी कप नहीं है । यद्यपि जैन लेखके पूर्व मागमें हम बातकी दिक्कत दिया है कि बौद्ध तथा शंकराचार्य, महामुदगज्जुनी, औरगनेव आदिके जमानेमें जैन ग्रन्थार्योंके साथ २ जैनकाव्योंका भी प्रशय हुआ था फिर भी इस प्रशय युगसे गृहदक्षिण दक्षिण माग भारतमें उपस्थित हैं ।

आज लोगोंको जो काव्य दृष्टिगोचर होते हैं वह प्रायः सम्पूर्ण निर्णयसागरके छेपे हुए ही होंगे, क्योंकि जैनसम्मान अपने घनके सामने ऐसे रत्नोंको थोड़ा ही कुछ मूल्यवान् समझती है ! नहीं तो भारतविदेशोंमें रक्ते हुए अपने काव्यरत्नोंको प्रकाशित न कराती ! देखिये जिसने भी जैन काव्य “निर्णयसागर”से प्रकाशित हुए हैं, वह सब जपपुरकी सरकारी लायब्रेरीसे प्राप्त हुए हैं । यह लायब्रेरी श्राईवेट तथा बन्दर है । इस लायब्रेरीमें जैन काव्योंकी उपस्थिति बहुत है, उसमेंसे बहुत थोड़े प्रकाशित हुए हैं किन्तु वैष्णव काव्य

निर्णयसागरमें बहुलतासे पाये जाते हैं इसलिये अपनी दृष्टिमें बहुत कम आते हैं, किन्तु यदि आप प्रकाशित तथा अप्रकाशित दोनोंको मिठाकर वैष्णव का योंसे तुलना करेंगे तो जैन काव्योंकी गणना किसी प्रकारसे भी कम नहीं हो सकती ।

जैन महाकाव्य समुद्रके अन्दर जो विचित्र रत्न स्वरूप एकाक्षर वा द्वायाक्षरके श्लोक उपस्थित हैं, पाठकोको हम उन्हेंका सिंहावलोकन कराते हैं ।

रौरौरा रैरैरेरी रोरो रोरररररः ।

रुरुरुरुरुरुरोरारारैरुरोररम् ॥ (महा० चन्द्रम १५ संगे)

अर्थ—चिह्नाते हुए शत्रुके त्यागशील कुबैरको, तिरस्कृत करनेवाले शत्रुको, चर्कोके आक्षेपसे प्राप्त कर लिया (अथवा चक्राक्षेपोंके द्वारा शत्रुका शत्रु स्वयं आगया ।)

" ककाकुक्कुकेकांककोकिकोकैरकुःककः ।

ककुकौकःकाककाकककाकुक्कुक्काङ्कुकुः ॥ (महा० नेमिनिर्वाण)

अर्थात् देखिये विचित्र एकाक्षरसे समुद्रका कैसा सुन्दर वर्णन किया है ।

कंकः किं कोककेकाकी किं काकः कोकिनोऽककं ।

कौकः कुकैककः कैकः कः केकाकाकुंकांकक ॥ (महा० धर्मशर्माभ्युदय)

अर्थ—चक्राक्षर हंसके समान गमन करनेवाला वगुलाके आकार तथा मयू के समान स्वरूप धारण करनेवाले कौएके आकार, स्वर्ग, पृथ्वी जलमें अद्वितीय होकर कुटिलतासे मयूरके समान शरीरको समान बनाकर कुटिलतासे युद्ध करता मया ।

" गंगोरगगुरुग्रांग गौरगोगुरुगग्रगुः ।

रागागारिगैरैरैरग्रेगं गुरुगीरगात् ॥ (धर्मशर्माभ्युदय)

अर्थ—गंगा, शेषनाग तथा हिमालयके समान गौर वाणीवाले बृहस्पति तथा प्रखर है प्रकाश जिनका ऐसे बृहस्पतिके समान गानसे महानादके कारण विषके समान महानाद होता मया । (अर्थात् जिस प्रकार शरीरको विष दूषित देता है इस प्रकार कर्णोंके लिये कटुक नाद)

रैरोऽरिरीरुरारारोकरारारिरैरिरत् ।

रुरुरुरुरारारारुरुरुरुरैरुरः ॥ (महाकाव्य द्विमाघान)

अर्थ—घन देनेवाले, और शत्रुओंके समूहको अच्छी तरहसे नष्ट करनेवाले, शब्द करनेवाले प्रतिविष्णु (श्री बलभद्र) बड़े १ आरोंको शत्रुओंके प्रति प्रेरित करते मये और शत्रुओंके हृदयको घायल करते मये ।

यथा समापण पक्षमें (द्वितीयायं) घन देनेवाले, शत्रुओंके समूहको नष्ट करनेवाले,

शब्द करनेवाले प्रतिविष्णु लक्ष्मणजी बड़े २ आरोंको शत्रुओं (रावण पक्षवालों) के प्रति प्रेरित करते मये और शत्रुओंके हृदयोंको घायल करते मये ।

वीरारिर्वैरवारी वै चमे रविरिवोर्वराम् ।

विवोयरैरविविरैरवोवाचा विराववान् ॥ (५० द्विसंज्ञान)

अर्थ—वीर शत्रुओंके वैरको नष्ट करनेवाले अपराधियोंके अंधकारको मगानेवाले गम्भीर ध्वनिवाले सूर्यके समान कृष्णजीने अच्छी तरह घान्यसे पूर्ण पृथ्वीको अपने प्रखर तेज मंडलसे आच्छादित कर दिया ।

द्वितीय अर्थ—वीरशत्रुओंके वैरको नष्ट करनेवाले अपराधियोंके अंधकारको मगानेवाले, गम्भीरध्वनिवाले केशवके समान रामचन्द्रजीने अच्छी तरह घान्यसे पूर्ण पृथ्वीको अपने प्रखर तेजोमंडलसे आच्छादित कर दिया ।

ऐसे विचित्र एकाक्षर व्यंजन, द्वायाक्षर व्यंजनके अनेक श्लोक हैं । इस बानका हम लोगोंको विशेष गौरव मानना चाहिये । त्रिष पाठवृंद ! जैनेतर कवियोंने मुख्यतया अष्ट रस माने हैं तथा पीछेसे यह भी कह देते हैं कि “ शान्तोऽपि नवमो रसः ” किन्तु पुन्य अनाचार्योंने शान्तरसको खूब अपनाया है । वास्तवमें यह ही योग्य तथा न्यायुक्कल भी है । क्योंकि बिना रसके काव्य ऐसा ही जैसे अच्छे भोजनोंमें निमक्का नहीं होता

साधुपाकेऽप्यनास्वादां, भोज्यं निर्लवणं यथा ।

तथैव नीरसं काव्यमिति ब्रूमो रसान्हि ॥ (वाग्मटालंकार.)

तथा वाग्मटालंकारमें रसोंको कहा है ।

शृंगारवीर करुणाद्भुत हास्य भयानकाः ।

रौद्रभीमत्सशान्ताश्च, नवैते निश्चितायुधैः ॥ (वा० अ०)

अर्थात्—शृंगार, वीर, करुणा, उद्भूत, हास्य, भयानक, रौद्र, भीमत्स, शान्त ये नव रस बुद्धिमानों द्वारा निश्चित हैं ।

सब महाकाव्योंमें इस शान्तिरसको प्रायः उच्च स्थान ही दिया है । अब हम “ बंदरप्रमहाकाव्य ” के टिप्पे कहेंगे । यह उत्तम काव्य श्रीशुत वीरचन्द्रिने बनाया है । इसका तथा कालिदास द्वारा विचित्र रसुवंश महाकाव्य । हम मिलान करते हैं ।

रसुवंशके दूसरे सर्गका श्लोक तथा बन्दरप्रमके चतुर्थे सर्गका प्रथम श्लोक देते हैं ।

अथ प्रजानामधिपः प्रभाते जायाप्रतिप्राहितमन्धमान्पां ।

घनाय धीतप्रतिचक्ष्यत्सां यशोधनो घेनु ऋषेर्मुमोच ॥

(रसुवंश)

अथ प्रजानां नयनाभिरामो लक्ष्मीलतालिङ्गितसुन्दराङ्ग ।

वृद्धिं स पद्माकरवत्प्रपेदे दिनानुसारेण शूनैः कुमारः ॥

प्रिय पाठकवृन्द । देखिये वीरनन्दि, कालिदासकी कव्यरचनाके विषयमें शैलीकी उत्तमता यहीं देखिये । कालिदासकी कल्पना शक्ति, बुद्धि पाटव, आलंकारिक रचना देखकर वीरनन्दिके शिष्यकी तरह मालूम होते हैं । तथा चंद्रमंके प्रथम सर्गमें देशवर्णन ऐसी उत्तमतासे लिखा गया है कि, रघुवंशमें तो क्या ? बल्कि कालिदासके दूसरे काव्योंमें भी पाना असंभव है । उदाहरणके लिये हम कुछ श्लोक देते हैं—

मदेन योगो द्विरदेष्टु केवलं विलोक्यते घातुष्टु सोपसर्गता ।

भवन्ति शब्देष्टु निपातनक्रियाः कुचेष्टु यस्मिन्करपीडनानि च ॥

अर्थात् उस नगर (रत्नसंचयपुर) में हस्तिओं ही में मद केवल था, तथा घातुओंमें ही उपसर्ग पाये जाते थे तथा निपातनक्रिया शब्दोंमें ही पाई जाती थी, करपीडा (हस्त-पीडा) कुचोंमें ही पाई जाती थी । अर्थात् उस रत्नसंचयपुरमें हस्तिओंमें ही केवल मद था किन्तु मद=मद=शोरूममें नहीं था तथा घातुओंमें ही उपसर्ग पाया-जाता था । किन्तु उस नगरमें उपसर्ग, उपद्रव नहीं पाये जाते थे । शब्दोंमें ही निपातनक्रिया थी किन्तु उस नगरमें निपातन मारण नहीं था, तथा कुचोंमें ही करपीडा हस्तपीडा थी, किन्तु उस देशमें करपीडा=‘मकरवाय’=नहीं थी ।

ऐसे ही बहुत अच्छे २ श्लोकोंमें देशवर्णन, राजाका वृत्तांत दिया है । द्वितीय सर्गमें उद्यानका कैसा अच्छा वर्णन किया है तथा इसमें न्यायका बृहदंश दिया है जो कि विशेष गम्भीर तथा सरल श्लोकोंसे सुसज्जित है । चंद्रमंकाव्यमें राजनीतिका कैसा उत्तम वर्णन किया है जिसको देखकर बहुत अश्चर्य होता है । पाठकोंके लिये हम देते हैं ।

वाञ्छन्निवभूमीः परमप्रभावा मोक्षीविजस्तवं जनमात्मनीनं ।

जनानुरागं प्रथमं हि तासां निबन्धनं नीतिविदो वदन्ति ॥

समागमो निर्व्यसनस्य राज्ञः स्यात्संपदां निर्व्यसनत्वरमस्य ।

वश्ये स्वकीये परिवार एव, तस्मिन्नवश्ये व्यसनं गरीयः ॥

विधित्सुरेनं तदिहात्मवश्यं, कृतजतायाः समुपैहि पारम् ।

गुणैरूपे तोष्यपरै कृतघ्नः समस्तमुद्वेजयते हि लोकं ॥

धर्माविरोधेन नयस्व वृद्धिं त्वमर्थकामौ कलिदोषमुक्तः ।

युक्त्या त्रिवर्गे हि निषेवमाणो लोकदयं साधयति क्षितीशः ॥

वृद्धानुमत्या सकलं स्वकार्थं भदा विषेहि प्रहृतप्रमाद ।

विनीयमानो गुण्णा हि नित्यं सुरेन्द्रलीलां लभते नरेन्द्र ॥
 निगूहो वायधरात् प्रजानां भृत्यास्ततोऽन्यान्नयतोऽभिवृद्धिम् ।
 कीर्तिस्तवाशेषदिगन्तराणि, व्याप्नोतु बन्दिस्तुतकीर्तनस्य ॥
 कुर्याः संदां संवृताचित्त्वृत्तिः फलानुमेयानि निजोहितानि ।
 गूढात्ममंत्रः परमंत्रभेदी भवत्यगम्यः पुरुषः परेषाम् ॥

(चंद्रप्रम ४ सर्ग ३६-४२)

अर्थ—हे पृथ्वी उत्कृष्ट प्रभाववाली विभूतियोंको चाहते हो तो अपने जनों (प्रजा)को कभी दुःखित मत करो, क्योंकि नीतिज्ञ कहते हैं कि उन सम्पत्तिओंके आनेका प्रथम कारण जनोका अनुसाग ही है ।

(प्रजासुरंजन शासन शासन है, नहीं तो सन निष्कासन हैं)

[तथा सम्पत्तिओंका मयागम निर्यसन राजाके होता हैं]

निर्यसन नरेशके सम्पत्तिओंका आगमन होता है, तथा राजाका निर्यसनत्व, अपने परिवारके वश करनेपर ही होता है, अपने परिवारके वशमें न करनेसे व्यसन (दुःख गरीय (अतिशय बढ़ा) होता है । अपने परिवारके वशमें रखनेकी इच्छा रखनेवाला राजा कृतज्ञताके पात्रको प्राप्त होवे । क्योंकि दूसरे २ गुणोंसे सहित होने पर भी कृतज्ञ (किये हुए ऐशानको न मानने वाला सनमत् लोकको दुःखित करता है ।

कलिकाशके दोषोंसे रहित हे राजपुत्र ! तुम वर्माविरुद्ध धन, कामकी वृद्धिको प्राप्त करो क्योंकि युत्तिसे धर्म, अर्थ, कामको सेवन करनेवाला नरेश इन लोक, पात्रोके दोनोंको भिन्न करता है । अपने प्रसादको नष्ट कर अपने समाप्त कार्य वृद्धोंकी अनुपनिसे सदैव करो क्योंकि वृहस्पतिते विनीयमान (नहा हुआ) इन्द्र, सुरेन्द्र, लीलाको प्राप्त होता है, अथवा वृद्धसे विनीयमान राजा इन्द्रलीलाको प्राप्त होता है । प्रजाको बाधा करनेवाले ऐसे राज्यके नौकरोंको निग्रह, और प्रजाकी उन्नति करनेवाले ऐसे राज्य नौकरोंका अनुग्रह करनेमें बन्दिननोंसे स्तुति होनेवाले ऐसे राजाकी (तुम्हारी) कीर्ति सम्पूर्ण दिशाओंमें व्याप्त होवेगी । (स नरोक्ते अनुवार वर्तमान नौकरशाही को कि प्रजाको बाधा कर रही है, उसके छिपे निग्रह स्वल्प असहयोग गिरफ्तार प्राण अहिंसा है काना जन समानता धर्म, कर्तव्य एवं न अनुपनीति प्रतीत होती है ।

हमेशा अपनी वित्तवृत्तियों प्रकाशित मत करो जिससे कि तुम्हारे विचार केवट कार्यके पटसे अनुमान किये गये; क्योंकि गूढ विचारवाला पुत्र भी है सो दुम्हके विचारको जान सक्ता है किन्तु दूसरे लोग उनकी भावनाओंको नहीं जान सकते ।

प्रथम पंडित दर्श विचारों निम्नी नहीं सही हईं, उच्छकोटिनी गामनीति है, यदि

यह रामनीति काममें लाई जाय तो आम भारतवर्षकी यह दशा नदी होती । प्रिय पाठक-
 प्रेद, मैं अब "धर्मशर्माभ्युदय" की उत्तमता दिखाता हूँ। इस महाकाव्यके रचयिता श्रीयुक्त
 कवि हरिचन्द्रकी प्रशंसा बहुतसे प्राचीन विद्वानोंने की है, उपमेंमें हम "कादम्बरी"के
 रचयिता श्रीयुक्त बाणकवि "हर्षचरित"में कहेगये पद्यको दिखाते हैं ।

पदघन्योज्ज्वलौ हारी, कृतवर्षकृमस्थिति ।

भट्टारहरिश्चन्द्रस्य, गद्यघन्यो नृपायते ॥ (हर्षचरित)

प्रिय पाठकचन्द्र ! प्रसिद्ध बाणकवि भी कहता है कि पदघन्योतेटज्ज्वल, हारी, ऐसी
 भट्टारहरिश्चन्द्रकी गद्यघन्य नृपकी तरह आचारण करती है । उन्हीं श्रीयुक्त कविराम हरिश्च-
 चन्द्रकृत यह एक मनोहर पद्यकाव्य है ।

इसकी हम क्या प्रशंसा करें इसके प्रथम सर्गमें सज्जनदुर्जन वर्णन बहुत चारु-
 गीविसे किया जाता है । उदाहरणार्थ हम दो पद्य उद्धृत करते हैं ।

गुणानघस्तान्नयतोऽप्यसाधुपद्मस्य यावाद्दिनमस्तु लक्ष्मीः ।

दिनावसाने तु भवेद्गतश्रीं राज्ञः सभासोनिधिसुद्वितास्यः॥ धर्मशर्मा०

उद्यासनस्थोऽपि सतां न किंचिन्नीचः स चित्तेषु चमत्करोति ।

स्वर्णाद्विश्रृङ्गाग्रमघाटितोऽपि काको वराकः खलु काक एव॥ प. अ.

प्रिय पाठक शुद्ध ! ऊपरके श्लोकमें श्रेयसर्हित स्वभावोक्तिको दुर्जनके लिये कैसा
 दिखाया है सो विचारिये । तथा दूसरेमें दुर्जनके लिये कैसा अर्थात्तर दिखाया है ।

तथा इसी तरह इस ही पड़िले सर्गमें जम्बूद्वीप, सुवर्णगिरि तथा रत्नपुर नामके
 ग्रामका वर्णन पदलालित्य, अलंकार, रस, उपमा, उपमेय आदिसे अधिकतम सुन्दर बना
 दिया है । जो कि नैपथ्य माघमें नहीं पाया जा सकता । तथा पांचवें सर्गमें स्वर्गसे उतरती
 हुई देवांगनाका अत्यंत मनोहर ऐसा वर्णन किया है जो कि नैपथ्य, माघमें उन देवांगना
 ओका ऐसा वर्णन ही नहीं मिलता तथा सुन्दरके साथ २ गृहदाविचमके साथ किया है;
 जिसको कि बहुतसे महाकाव्यों सिर्फ ३-४ श्लोकोंसे किया होगा । तथा इसी तरह इस
 महाकाव्यके कुल दसवें सर्गमें विन्ध्याचल पर्वतका कैसा उत्कृष्ट उत्तम वर्णन किया है जो
 कि किसी काव्यके अन्दर नहीं पाया जाता है; तथा ११ वें सर्गमें ऋतुओंका वर्णन
 विशेष ललितस्वनीय है किन्तु हम उसका दृष्टांत स्वरूप देनेमें बिलकुल असमर्थ हैं; क्योंकि
 'अभी बहुत दूर पड़ाव है;

अब हम हर्षकवि, श्रीयुक्त हरिचन्द्र कविगीकी काव्यरचनाका मिलानकर "महा-
 काव्य" के आगको खतम करेंगे ।

श्रीयुत हर्षकवि राजा नलकी विद्याके वर्णनमें कहते हैं—

“अधीतिबोधचरणाप्रचारणै, दशः चतुस्त्रा प्रणेयन्तुपाधिभिः ।

चतुर्दशन्त्वं कृतवान् कुतः स्वयं, न वेद्मि विद्या सुचतुर्दश स्वयं ॥

अर्थ—महाराजा नल अधीति, ज्ञान, आचार, प्रचार से विद्यार्थोंमें ४ पनेंको करते

तथा उन्होंने स्वयं १४ विद्यार्थोंको प्राप्त कर लिया । मैं नहीं जानता कि राजा नलने १४ विद्यार्थोंको कैसे प्राप्त किया ।

तथा कविवर हरिचन्द्रजी राजाकी विद्याका वर्णन करते हैं ।

ततः श्रुताम्भोनिधिपारट्पवनो, विशंकमानेव पराभवं तदा ।

विशेषपाठाय विधृत्य पुस्तकं कराज्ज सुश्रुत्यधुनापि भारती (धर्म०)

अर्थ—श्रुतसागरके पारको प्राप्त ऐसे इस राजासे पराभव(हार)की आशंकासे ही मानों विशेष अध्ययनके लिये सरस्वती अपने हाथसे आज भी पुस्तकको नहीं छोड़ती है । विचारिये पाठक उमयकाव्योंकी उत्तमता । अब हम और भी इस विषयमें मिलान करते हैं ।—

हरिचन्द्र कवि राजाके वर्णनमें कहते हैं —

कृतौ न चेत्तेन विरंचिना सुधानिधानकुम्भौ मुदशः पयोधरौ ।

तदङ्गलग्नोऽपि तदा निगद्यतां स्मरः परासु कथमाशु जीवितः ॥

अर्थ—उस मुद्रताके दो स्तन यदि ब्रह्माने अमृतके कोप नहीं बनाये । तो

फिर कहिये उसके शरीरमें लगा हुआ मृद कामदेव किस तरह जीवित हो गया । तथा हर्ष कवि कहते हैं:—

अपि तद्वपुषि प्रसपतोऽमितै कान्तिझरैरगाधितां ।

स्मरयौवनयो खलु जयोः लवकुम्भौ भवतः कुचायभौ ॥

अर्थ—कातिरूपी झरानामे अगाधित दमयन्तीके शरीरमें विद्यमान कामदेव यौवनके लिये उसके कुचयुग ढेरनेके लिये दो षड़ोके समान होते मये ।

कपोलहेतोः खलु लोलचक्षुषो विधिर्व्यधात्पूर्णसुधाकरं द्विधा ।

विलोप्यतामस्य तथा हि लाञ्छनच्छलेन पश्चात्कृतसीवनव्रणं ॥

अर्थ—पंचक है चक्षु जिसके ऐसी राजीमें ऐसे कपोलोंके कारणसे ब्रह्माने चन्द्रमाही द्विधा निभक्त कर दिया । अतएव कर्णके उरसे मिलाईका निशान दीप्त पड़ता है ।

तथा हर्षकवि कहते हैं—

‘हतसारमिवेन्दुमण्डलं, दमयन्ती चदनाय येधसा ।

कृतमप्यविलोप्यते, घृतगम्भीरावनीम्वलीलिम्” ॥

अर्थ—ब्रह्माने निधाय इसके दमयन्तीके गुनके बनानेके लिये चन्द्रमाहा म

सार खींच लिया अतएव सार खींचनेसे श्याम हुए चन्द्रमामे पुतीहुई सफेदी के छुटजा-
नेसे बीचमें कालिमा दिखाई पडती है ।

पाठकवृन्द देखिये कवि हरिचन्द्रजीकी कवितामें कितना रससौन्दर्य है ।

इमामनालोचनगोचरां विधिर्विधाय सृष्टेः कलशार्पणोत्सुकः ।

लिलेख चक्रे तिलकांकमध्ययोर्भुवोर्मिपादोमिति मंगलाक्षरं ॥

(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोकमें कविने स्वीकृति वाचक 'ॐ' शब्दको किम अद्वतीयरूपसे दिखाया है ।

इन्ही कवि हरिचन्द्रजीकी एक उत्तम कल्पना दिखाते हैं ।—

उदीरिते श्रीरत्तिकीर्तिकान्तिभिः श्रयाम एतामिति मौनवान्विधि ।

लिलेख तस्यां तिलकांकमध्ययोर्भुवोर्मिपादोमिति संगतोत्तरं ॥

अर्थ—श्री, रति, कीर्ति, वाति इन्होंने जिस समय ब्रह्माजीसे प्रार्थना की उसी समय मौनी बृहाने तिलका चन्दित भों इसके बहानेसे ॐ (अर्थात् मैं स्वीकार करता हूँ) ऐसा समुचित उत्तर लिखा दिया । इसी तरह इनकी प्रत्येक कवितामें नवीन १ सुन्दर कल्पना भरी हुई है ।

प्रियपाठकवृन्द ! इसी तरहसे महा० द्विसंघान जिसमें कि एक साथ महाभारत, रामायण दोनोंका एक साथ ही श्लोकोंसे अर्थ लगता चलता है । उदाहरणार्थ हम इसका भी उद्देश अवश्य करेंगे ।

केवरपार्थामधुरा न भारती कथेव कर्णान्निमुपैति भारती ।

तनोति सालंकृति लक्ष्मणान्विता सतां मुदं देशरथे रथ्या तनु ॥

१ संग

प्रियपाठकवृन्द ! इस काव्यके उपर्युक्त श्लोकसे आप अनुमान कर सकते हैं । तथा इस काव्यके अन्दर विशुद्ध, तथा उच्चकोटिके राजनीतिक वृत्तांत आया है । जो कि ऐसे नाजुक जमानेमें उसका कथन भारतके लिये अच्छा होता । प्रियपाठकवृन्दद्विसंघानकी तरह चतुःसंघान, चतुर्विंशति संघान उपस्थित हैं जो कि कवि जगन्नाथने बनाये हैं, इनमें-से चतुःसंघानके हरएक श्लोकका अर्थ चार चार कथाओंके अनुसार चार ४ अर्थवाला होता है तथैव दूसरे चतुर्विंशति संघानके हरएक श्लोकका अर्थ २४ कथाओं (२४ तीर्थ-कर) के अनुसार चौबीस २४ होते हैं । और इसीतरह "सप्तसंघान" के भी सात ७ अर्थ लगते हैं । यह महत्त्व जैनतरंगी नहीं मिलता लेकिन लेख विस्तर होनानेके कारण हम इस विषयको न कहकर अब खडकाव्योंकी मनोहर वाटिकामें आप लोगोंको लिये चलता हूँ "पार्थाम्भुदय" काव्य जो कि श्रीयुत जिनसेनाचार्यने कालिदासके "मेघदूत"

अन्याकृत्यमलोवरो भवयमः कुर्वन्मतिं तापसे ।
 तत्त्वा चित्यमतीशिता तयशितः स्तुत्योरुवाणि पुनः ॥
 जिष्णूतष्फुटकीर्तिवारवशमः श्रेयोऽभिधे मण्डने ।
 धीर स्थापय मां पुरो गुरुवर त्व वर्धमानो रुधी ॥

खडकाव्यमें क्षत्रचूडामणि नामक ग्रंथ है इसमें जो महत्त्व है यह किसी कविको नहीं मिला है । इसमें अर्द्धश्लोक मय जीवधर अनुपम विचित्र चरित्र और अर्द्धश्लोकोंमें नीति है । वास्तवमें ऐसा नीतिशास्त्रका काव्य शायद ही सस्मृत काव्योंमें हो जब कि हम इसका स्वाध्याय करते हैं, तो यह मिलता है जिसको कि प्रातःकाल पढ़ना चाहिये ।

जीवित्तान् पराधीनाज्जीवानां मरण धरं ।
 मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रत्वं वितीर्णं केन कानने ।

अब हम आपको कालिदासके रघुवशकी तथा क्षत्रचूडामणिकी नीतिकी मिलान कराते हैं ।

प्रजानां चिनयाधानाद्रक्षणाङ्गरणादपि ।
 स पितः पितरस्तापां केवलं जन्म हेतवः ॥
 रात्रिदिवविभागेषु यदादिष्टं महीक्षितां ।
 तत्सिपेव नियोगेन, स विकल्प पराङ्मुखा ।
 स वेलाचप्रवलयार्, परिरक्षीकृत सागरं ।
 अनन्यशासनमुर्वी, शशासैक महीमिष ॥ (रघुवशे)
 सुखदुःख प्रजाधीने, नदाभूतां प्रजापते ।
 प्रजानां जन्मवर्जं हि, सर्वघ्नपितरो नृपाः ॥
 रात्रिदिवविभागेषु नियतो नियतिं व्यधात् ।
 फालातिपातमात्रेण, कर्तव्यं हि चिनश्यति ॥
 प्रमुद्देश्मिन् सुयं कृत्स्नां रक्षयत्पेव पुरीमिव ।
 राजन्वती भूरासीदन्वर्थं, रत्नसूरपि । (क्षत्रचूडामणि)

मिलानकर देखिये कितना रस, आरित्य, सरसता क्षत्रचूडामणिमें उपपत्ती है, "गणकाव्य" भी एक, काव्यका भाग है यद्यपि हय हय गद्यके दृष्टांतको पूर्वमें दे चुके हैं फिर भी "गणधितामणि" कादम्बरीसे बदलाहित्य, सरसतामें उत्तम है । कादम्बरीमें गृथा ही असिद्ध शब्दोंको देखर, कटिगता बढ़ा दो है । हन ही इसकाव्यको नहीं कहते । बल्कि एक निरपेक्ष प्रोत्साहका भी ऐसा ही मन्त्र है । हम उनके वाच्योंको नीचे उद्धृत करते हैं—

“ जैसे भारतके वनमें उन सघन वृक्षोंके नीचेमें पैदा हुई छोटी १ झाड़ियोंके मोर रास्ता गमन करनेमें असाध्य हो जाता है । और किसी तरह मार्ग निकाल भी लिया जाय तो दुष्ट भयंकर जन्तुओंसे पिंड छुटाना पड़ता है । उसी प्रकार वाण कविकी गद्यमें अप्रसिद्ध शब्दोंके भारे कथोपयोगी समझना कठिन पड़जाता है । और कठिन शब्दोंके समझनेके लिये वृथा ही कष्ट उठाना पड़ता है ” ।

वास्तवमें यह बात वाण कविके लिये बिल्कुल ठीक प्रतीत होती है, हम लोगोंको बड़ा भारी गौरव समझना चाहिये कि हमारे यहाँपर क ख ग आदि १२ अक्षरोंका क्रमसे ऐसा श्लोक भी है ।

ऐसे श्लोक अन्य काव्योंमें नहीं देखे जाते हैं । यह महत्त्व जैन काव्योंमें ही पायः मिलता है ।

प्रिय पाठक महाशय ! हमारी इस काव्योंकी महत्ताको स्वयं हम ही नहीं कहते बल्कि विनातीय भी कहते हैं “निर्णयसागरमें जितने काव्य निकलते हैं वह सब प्रसिद्ध काशीनाथ पादुरंग द्वारा संशोधित किये निकलते हैं । इन्होंने कईवार एक प्रसिद्ध जैन कार्यकर्तासे कहा था कि “जैन काव्योंके सामने वैष्णवकाव्य निष्प्रम मात्सर्य पड़ते हैं । ” यद्यपि पश्चिमीय निरपेक्ष विद्वानोंकी इस मत पर बहुसंख्यी सम्मतियाँ हैं किन्तु मैं उन सबको यहां कहना नहीं चाहता किंतु कितनी ही भाषाओंका चेत्ता, जगत्सिद्धान्तोंका अनुशीलन करनेवाला प्रसिद्ध डाक्टर हर्दलका कहना है—

“Now what would sanskrit poetry be without this large Sanskrit Literature of Jains. The more I learn to know it, the more my admiration increases”

अर्थात्—यदि जैनोंका महान् संस्कृत साहित्य अगल कर दिया जाय तो संस्कृत कविताकी क्या दशा होगी । जितना कि मैं जाननेके लिये पढ़ता हूँ उतना ही अधिक आश्चर्य होता है ।

यद्यपि जैन काव्य भारतीय समस्त प्राचीन भाषाओंके अन्दर पाया जाता है किन्तु हम भारतकी होनेवाली राष्ट्रीय भाषा हिन्दी काव्यके महत्त्वका दिग्दर्शन करानगे । क्योंकि भारतकी स्वाधीनता दिलानेवाले “असहयोग”का मूल प्राण अहिंसाका धारिकतासे इसी काव्यकुलमें निर्देश पाया जाता है ।

नानान्नन्तनुतान्त तान्तिननिनुन्नान्त नुन्नान्त ।

नूतीनेन नितान्ततानितनुते नेतोत्ततानां ततः ।

नुन्नातीतिनुन्नतिं नितनुतात्तीति निनृतातनु-

न्तान्तानीतिततान्तुतानन नृतात्तो नृतनैनोत्तु तो । (भिनसतकं)

माननीय विचारशील सुहृत्तम पाठकवृन्द ! जिस समय हम बहुविस्तृत हिन्दी जैन काव्यसागरकी तरफ दृष्टिपात करते हैं तो हमारी दृष्टि वहांसे हटती नहीं है। और वहां पर चंचल मनको भी अपने स्वभावको बाँध होकर बंदलना पड़ता है। और वह अपने द्वारपाल चक्षुगुलको बढ़ापर खड़ाकर आप इस विस्तीर्णसागरमें मनोनीत माण्डव्य-पुंजकी प्रबल ग्रहणेच्छासे प्रवेश होता है। धैर्य विमूर्षित सज्जनवृन्द ! आप शांतचित्त होकर थोड़े समयके लिये आप भी इस अनन्तसागरके तट पर एकाग्रचित्त हो बैठिये। थोड़े ही समयमें यह सेवक हिन्दी जैनकाव्योत्तमरत्नपुंज भेंटमें सम्मानित कर आपसे विदा लेगा।

प्रथम जिससमय हम जैन हिन्दीपुराण काव्य, आदिपुराण, महापुराण, हरिवंश-पुराण, पौडवपुराण, पुण्यामव, यशोधरचरित पुराण, आदि जैन पुराण काव्यनिकुंजमें घुसते हैं तो शब्दार्थालंकारोंकी शोभासे पूर्ण, एवं च नूतन नामागुणोंकी सुगन्धित मालाओंसे सजे हुए एक ऐसे निकुंजमें पहुँचते हैं—जहाँ पर धर्म, शान्तिका वायुमण्डल प्रतिसमय हमारे त्रस्त, चंचलहृदयको, अनुपमशान्त बैराग्यमें स्थित बनाता है। इस पवित्र निकुंजमें अवर्ण्य, हिंसादुर्गन्धयुक्त वायुका प्रवेश अन्य परिकल्पित लिंग पुराणादिककी तरह कहीं भी किसी सूक्ष्माति सूक्ष्म छिद्र द्वारा नहीं हो पाता, क्योंकि इन पुराणानिकुंजोंकी चारों दीवारें अहिंसारूपी ईंटों तथा शान्तिके गिलाओंसे बहुत मजबूतीके साथ बनी हैं। जिस-तरहसे अन्यपुराणोंमें कपोलकलित, नितान्तासंभव, अमोत्पादक तथा हिंसा घणा क्रूरतादि विषयोंकी, अत्याधिक्य मर्यादाके उलंघन करनेवाला वर्णन पाया जाता है। जैसे कि ब्रह्मानी की उत्पत्ति पद्मजसे हुई है (१) सीता की उत्पत्ति विना माता पिताके हुई है (२) तथा एक गौमें ३३ कोटि देवता वास करते हैं इत्यादि असंख्य मिथ्या तथा विशेषयासनाओंके जात्रमें फैसलेवाली कथाओंका वर्णन जैसे बैष्णव पुराणोंमें पाया जाता है। तैसा वर्णन मत्स्य, सन्ध्या, काव्यनिकुंजवृन्दमेंसे किसी भी काव्यके सूक्ष्मतामयमें भी अनुपधानकारियोंके दृष्टिपथ नहीं होता। प्रायः इन बैष्णव पुराणोंकी ऐसी निर्मूल, अत्यतासंभव हिंसासे व्याध (पवुर) देखकर ही हमारे यूरोपीयलोग मनगदंत, मिथ्या, अमोत्पादक, मकारके वर्णनके लिये उपमाका काम लेते हैं। "अस्तु"। हम दृष्टांतस्वरूपमें इनके (जैन पुराणोंके) दृष्टगद्य इस लेखमें लिखकर इस लेखका पद-दाकार न करेंगे। किंतु दिग्में सदैव जुमनेवाले (दृष्टोत्पादक) यशस्विलकचरित पुराणके बारेमें अवश्य शिरोगे। इस पवित्र पुराणको पढ़नेसे राक्षसी प्रश्रुतिवाले मनुष्यके भी हिंसासे घृणा होकर पवित्र अहिंसामय नीतिनका सगठन होगा। तथा इस पुराणमें कविने किम सौन्दर्य अनुपम-अहिंसासे वर्णन किया है कि पांडव गद्गदयोंके रोमान खड़े होपाने हैं

❀ दिगम्बर जैन. ❀

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभि ।

सबोधयत्यत्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बर जैन समाज मानम् ॥ •

वर्ष १५ वाँ.

वीर संवत् २४४८. आश्विन विक्रम सं० १९७८.

अंक १२वा



परमपूज्य दशलाक्षणी पर्व सानंद वीत गया
और हमारे परम पूज्य अंतिम
वीर निर्वाण। तीर्थंकर श्री महावीर प्रभुका
निर्वाण दिन भी सच स्थानोंपर

निर्विघ्नतासे मनाया गया होगा। हमारे वीरनिर्वाण
पर्वका माहात्म्य इतना जगद्व्यापी है कि इस
पर्वको हम तो क्या सच हिंदू लोग दिवाली (दीया-
बली) पर्वके नामसे मानते हैं। इतना बड़ा भारी
पर्व कबसे चालू हुआ और उसको कितना समय
बीत गया यह जाननेके लिये और हमारे पूज्य
वीर प्रभुकी अहर्निश स्मृतिके लिये श्री वीर
प्रभुका संवत् चालू हुआ है। वीर प्रभुको निर्वाण-
गये २४४८ वर्ष हुए हैं और तबसे ही वीरनि-

र्वाण संवत्का प्रचार है। अब विक्रमसं० १९७९
शाखिवाहन १८४४, इस्वीसन् १९२२ है व
पारसी सुमलमानोंके सन् इससे भी कम है तब
हमारा वीरनिर्वाण संवत् २४४९ हुआ है।
परन्तु खेद है कि अब भी हमारे कई जैन भाई

वीर संवत्का प्रचार नहीं करते अर्थात् अपनी
बहियों, पत्रव्यवहार आदिमें वीर संवत्का व्य-
वहार नहीं करते। अब तो इस प्रमादको हटाना
चाहिये और सर्वत्र वीरसंवत्का, प्रचार करना
चाहिये। आशा है सब जैनी भाई इस साल
वीर सं० २४४९का व्यवहार चिट्ठीपत्री बहियों
आदिमें अवश्य करेंगे।

* * *

'दिगम्बर जैन'का १५ वे वर्षका यह अंतिम
अंक है। अर्थात् इस बलकने १५
वर्षोंके। वर्ष पूर्ण किये हैं। इसका नाम वीर
निर्वाण संवत्क प्रारम्भसे ही हुआ है
इस लिये नवीन १६ वें वर्षका प्रारम्भ भी वीर
सं० २४४९ कार्तिक माससे ही होगा। नवीन
वर्षका सचित्र खास अंक हम मगसिर मासमें
निकाल सकेंगे मरन्तु यह अंक करीब ८० पृष्ठोंका
कई चित्रोंसे सुशोभित प्रकट होगा। इस खास
अंकके लिये हिन्दी, गुजराती, मराठी, अंग्रेजी
लेख व कवितायें जो भाई भेजना चाहें वे ८
दिनके भीतर २ अक्षम भेज देंगे धन्यवाद वे
स्थान नहीं पा सकेंगे। सबके सुभीतेके लिये
नये सालका जैन तिथिदर्शन तैयार करके इसी

અંકકે સાથ ચાંટ દિવા હૈ સો સર્વ પાઠક સમાજ
લેવે । જહાંતક હો નવીન વર્ષકા અંક શીઘ્ર હી
પ્રકટ હોગા । તિથિદર્શનકે ચિત્રકા પરિવય મી
નવીન અંકમે પ્રકટ હોગા ।

* * *

‘દિગંબર જૈન’કા વીર સં. ૨૪૪૭ વ ૨૪૪૮

કાદો સાલકા મૂલ્ય વહુત ગ્રાહકોસે

મૂલ્ય વ લેના શેષ હૈ । યહ ન વસુઝ કરનેમે
ઉપહાર । હમારા હી પ્રમાદ હૈ । ઔર વહ પ્રમાદ

સિર્ફ ઉપહાર ગ્રંથ તૈયાર ન હો સક-

નેકા હૈ । અવ વીર સં. ૨૪૪૭કે દો ઉપહાર
ગ્રંથ તૈયાર હુએ હૈ ઔર ગ્રાહકોકો વીર સંવત
૨૪૪૭ કે મૂલ્યકી વી. પી. સે મેજે જાંવો ।

વર્ષ ૧૧ વીર સં. ૨૪૪૮ કા એક ઐતિહા-

સ ઉપહાર ગ્રંથ તૈયાર હો રહા હૈ વહ તૈયાર

હોનેપર ઉપકા મૂલ્ય મી વી. પી. સે વસુઝ ક્રિયા

જાયગા । તથા વીર સં. ૨૪૪૯ મેં કોઈ ન

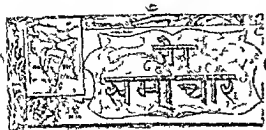
કોઈ ઉત્તમ ગ્રંથ ઉપહારમે દેનેકા હમ અવશ્ય

પ્રવેશ કરેગે । વાર્ષિક મૂલ્ય સિર્ફ ૧૥૫૫ વાવપ

રહેગા ।

* * *

જન યજ્ઞની જરૂર છે. અત વર્ષે નાતેપુત્રે (સિદ્ધા-
પુર)માં સભા થઇ ગઇ હતી અને આ વર્ષે ગુજ-
રાતમાં થાય તો તે વાસ્તવિક છે. નિયમ પ્રમાણે
કોઇ ન જોશાયે તો મુંબાઇમાં યજ્ઞની જરૂર છે.
પશુ જે લાભ ગુજરાતમાં કોઇ મોટા રથજે
થકતે થાય તે મુંબાઇમાં નજ થઇ શકે. આ માટે
મહુવા (સુરત)માં અવિશય ક્ષેત્ર શ્રી વિઘ્નહર
પાર્શ્વનાથ પર અધિવેશન કરવાની બં. સુદેશ-
કીર્તિ ગમેરની અભિલાષા છે, પશુ ત્યાંના બાધ-
ઓ એ કામ ઉપાડી શે તોજ તે થઇ શકે પશુ તે
કરતાં વિશેષ સફળતા તો ગુજરાતના પાટનગર
અમદાવાદમાંજ થઇ શકે એમ છે. અમદાવાદમાં
૨૦ વર્ષ થયા બોર્ડિંગ નીકળ્યા પછી એક પશુ
ઉત્સવ થયો નથી તે અમદાવાદ એવું મધ્યસ્થ
રથજ છે કે જ્યાં જે ઉત્સવ થાય તો ગુજરાત
ના જૈન બાધયો તે બહેનો હજારોની સંખ્યામાં
લાભ લે ને ત્યાંના ૨૦૦૦૦ થે. જૈન બાધયોની
સમક્ષમાં જૈન બાધયોની પશુ પ્રભાવના થાય.
આવા પ્રસંગ બની શકે એવાં કારણો ઉપસ્થિત છે
અને તે એજ કે અમદાવાદમાં પનામાનીપીળમાં સેક-
ન્ટ્રીંગબાઇ દરજીનગસના અધાગ પરિશ્રમ અને
ઉત્સાહથી એક મોટી ટીપ થઇ દેરાસર તૈયાર
થયું છે તેની વેતી પ્રતિષ્ઠા યજ્ઞની તૈયારી છે. એ



श्री हस्तिनापुरजी-में वार्षिक मेला व रघोत्सव आगामी अष्टान्हिका पर्वमें होगा। रघुयात्रा १९ को होगी। ठहरनेको धर्मशाला ढेर तथा मोननके लिये मोननालयका प्रबंध होगा। सेवासमिति व स्वयंसेवकोका भी प्रबंध हुआ है।

सिद्धवरकूट-सिद्ध क्षेत्रमें भी वार्षिक मेला अष्टान्हिका पर्वमें सुदी १९ व वदी १ को होगा।

औरंगाबाद-की पार्श्वनाथ दि० जैन पाठशालाका वार्षिकोत्सव कार्तिक सुदी १९ को श्री कचनेरजी अतिशयक्षेत्रपर होगा।

वहाड मध्य प्रा० दि० जैन सभा-का पंचम वार्षिकोत्सव ता० ९-१० नवम्बरको श्री मातकुली सिद्ध क्षेत्रपर होगा। पाठशालाओंके छात्रोंकी परीक्षा भी इस समय ही नायगी मनोहर बापूजी बकौल।

महासभाकी-मनवंक व टूट कमेटीकी अलग २ मीटिंग आगामी ता० ४-५ नवम्बर मिति कार्तिक सुदी १९ व मगसिर वदी १ को कानपुरमें होगी। समासद अवश्य पधारें।

चैनसुखलाल छावड़ा महामंत्री।

उत्तर धंगालमें-मयानक नाटके कारण हजारों आदमी व पशु मरगये। करोड़ोंका नुकसान हुआ तथा लाखों आदमी व मकान, अन्न, वस्त्र, धातु आदिसे पीड़ित हैं। इनकी रक्षाके

लिये मावाडी रिलीफ सोसायटी जगमोहन महि-
लेन कळकत्ताने फल खोला है जिसमें १८०००
रुपए हैं तथा कळकत्तेके दिगम्बर जैन साहयों-
करीब ६०००) इकत्र करके भेजे हैं। हमने र्म
१९) भेजे हैं। हरएक पाठकका फर्ज है कि
कुछ न कुछ द्रव्य इन दुःखितोंको उपरोक्त पतेसे
अवश्य भेजें।

जैन महिलादर्श-नामक मासिक पत्र
बहुत उत्तमताके साथ श्राविकाश्रम जुबिलीबाग
तारदेव बम्बईके पत्तेसे ६ माहसे २४ पृष्ठोंमें
प्रकट होता है। वार्षिक मूल्य सिर्फ १।)
है। हरएक बहिन व माइको इसका ग्राहक
होना चाहिये।

सिद्धक्षेत्र श्री कुंभलगिरि-में वार्षिक
मेला व रघोत्सव मगसिर सुद १९ को होगा।
उसी मौकेपर बहाके देशभूषण कुलभू० ब्रह्म-
चर्य आश्रमका उत्सव व कसरतके खेल गायन
संवाद आदि होंगे। इस आश्रममें ८४ अत्यन्त
अनाथ विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। २९ कर्मचारी
व १२००) मासिकलव है। कुंभलगिरिकी आबो
हवा उत्तम है तथा यात्राका अर्घ्य स्थान उंची
पहाडीपर है। बार्सी (सोलापुर) स्टेशनसे १०
कोसरर है। गाडीका प्रबंध होता है।

कलरुत्तेमें-नवरात्रीपर होता हुआ पाटे
बकरे आदिका चष बंद करनेके लिये इसबार
दि० जैन साहयोंने ४०००० नोटेश बंगला
व हिंदी मापामें बाटे थे जिसमें हिन्दू शास्त्रातु
सार ही पशु नलि करना धर्म विरुद्ध बताया था
इतका ज्वर इतना हुआ कि गत वर्षसे साढ़े
छभानी नव इस वर्ष कम हुआ है। रिपोर्से



मालूम हुआ है कि इस वर्ष कम होते हुए भी इस वर्ष ९ मैसे व ९१० धकरेका वष हुआ था। यदि पहिलेसे विशेष प्रयत्न हो तो और भी सफ़लता मिल सकेगी।

समाधान-हमारी महासभा व उसके प्राने कोषाध्यक्ष बाबू नवलकिशोरजीके चीनमें जो वैमनस्य चल रहा था उसका निवृत्ते हो गया। अभी कानपुरमें सं० प्रा० दि० जैन समाजी प्र० बैठक ता० २३-२४ सिम्बरको हुई थी उसमें बा० चंपतराजी बेरिस्टर समापति व नवलकिशोरजी मौजूद थे और एक महात्मा-शुभा बा० नवलकिशोरजीने महासभाके १००००) के नोट वे० चंपतराजीको दे दिये हैं। हिसाबका निवृत्ते भी अब होनायगा।

नये संचालक-भारत दि० जैन महासभाके महामंत्री सेठ जैनमुखदास छावड़ा नियत हुए हैं। महासभा संबंधी मंत्रव्यवहार अब सि-धनेसे होगा। महासभाका मुखपत्र 'जैनगन्ध' भी अब देहलीमें छपकर देहलीसे ही प्रकट होने लगा है। सहायक सम्पादक पं० लालारामजी धारत्री प्रकाशक हो गये हैं। अब गमटकी दशा सुवरनेकी उम्मेद है।

जैन मित्र मंडल-देहलीका ७वां, वार्षिकोत्सव रा० बा० मुक्तानसिंहजीके समापति-रामें मार्चो सु० १९को होगया। पं० लालारामजी देवकीनंदनजी आदिके व्याख्यान हुए। कानूनी प्रकरणोंमें जैनीमम मुक्तन बांटेनेका प्रस्ताव पास हुआ व समापतिने जैन छो बनानेकी सहा-यामें ११) दिये।

विजयादशमी-के दिन सोलापुर और कारंजाकी व्यायामशालामें खास उत्सव होकर तारवार पटा, लाठी जनीर आदिके कसरतके खेल हुए थे।

महाराजपुर-में ब्र० परमानंदजी हैं और चार माहसे आंतरेसे उपवास कर रहे हैं। आपके उपदेशसे वहां खूब धर्म प्रभावना हो रही है।

नातेपुतेमें-लेमचंद मयाचंद गांधीने अपने पुत्री लपि संख्यान क्रिया महाप्राणानुसार अभी की थी।

मांगीतुंगी-में कार्तिक सुदी १५ को व कुंथलगिरीमें मगसिर सुदी १५ को वार्षिक मेला होगा।

कम्पिलाजी-तीर्थका मंत्रव अब सुवर गया है।

परताचगढ-में ब्र० गेवीछालजीके चातु-र्मास होनेसे बड़ी धर्मप्रभावना हो रही है। कई आम समापें भी होती हैं।

विना मूल्य मंगालो-अष्टहस्तो, श्लोक-वार्तिक, जैनेन्द्र प्रक्रिया, पार्श्वाम्युदय काव्य और विद्योचन कोष ऐसी ११(॥३) की संस्कृत-तभापाकी पुस्तकें हम विना मूल्य भेजते हैं। सरका पोस्टेन १(॥३) भेजकर मंगा लीजिये।

नापारंगजी गांधी सोलापुर।

नये त्यागी-परतापुरमें सुल्लुख शांतिशा-गरजीने चातुर्मास किया है और १ माहके उप-वासका पारना मार्चो सु० १९को गवनाबाईके यहां किया था तब गवनाईने आभिज्ञानके धन जिये धारावन कपन्ने धनवर्ष मन धारण किया है।



इसका नाम हीरालाल ब्रह्मचारी रखा गया है । और भी बहुतसे व्रत नियम लिये जा रहे हैं । कन्याविक्रय करनेवाले व कन्या विक्रयवाले लग्नमें मोहन न करनेकी बहुतोंने प्रतिज्ञा ली और ज्यादा देहन देनेवालेके यहां भी कई माई व बहिनोंने त्याग किया है ।

कलकत्तेके-अनायबधरमें बहुतसी पाचीन दि० जैन मूर्तिएं खंडित व अखंडित हैं । इनमें बहुतसी मूर्तिएं दो हजार वर्ष पहलेकी है । पुण्य व० शीतलप्रसादजीने वहां जाकर निरीक्षण करके इसका हाल जैन मित्र अ० ४५ में प्रकट किया है । अखंडित मूर्तिमें अपने कवचेमें लेनेका यत्न महासभा व तीर्थक्षेत्र कमेटीको करना चाहिये ।

तीर्थ रक्षा फंड-मास दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटीकी ओरसे प्रतिवर्ष फी घर १) लिपा जाता है जिसमें इस वर्ष ता० २८-९-२२ तक कमेटीको १६० स्थानोंसे रु० १२७१=) प्राप्त हुये हैं । सबसे बड़ी रकम ४७१) कलकत्तेकी है । यहां भी तीर्थरक्षा फंडके रुपये इकट्ठे हुए हों बम्बई भेज देने चाहिये ।

सागर-पाठशाळाके अनुभवी महामंत्री सि० बालचंदनीका स्वर्गवास हो गया ।

‘जैन प्रभादर्श’-नामक मासिक पत्र बम्बईसे प्रकट होनेवाला है ।

तीन जातियोंका पता-रा० सुरजलजी जैनने नागपुर प्रान्तमें भ्रमण करके पता लगाया है कि इन प्रान्तमें अलग २ स्थानोंपर जैनकला १, मानमाउ व जैनकोष्टी नामक जातियां हैं जो पूर्वमें जैन थी व उनके कई आचरण

अभीतक जैन धर्मसे मिलते जुलते हैं ।

अनंतकीर्ति-सुख ग्रन्थपालाका दूसरा ग्रन्थ भी अभितगति श्रावकाचार करीब ४५० पृष्ठमें प्रकट होगया है । मूळ व मापाटीका सहित व मूल्य सिर्फ १॥=) है ।

एनापुर-(नेलगांव)में मुनि शांतिसागरजी निरानते हैं । आपके उपदेशको मादों सु० १४ को आणप्पा लेंगे ब्रह्मचारी हुए हैं ।

ब्र० दिग्विजयसिंहजी-ता० २१ सितम्बरको छूटे और अभी विधुपुरांमें हैं ।

कल्याण जैन छात्राश्रम-इन्दौरमें सर सेठ हुकमचंदजीके हस्तसे रा० बा० दान-वीर सेठ कल्याणमलजीने उपरोक्त बोर्डिंग ता० १२ सितम्बरको खोल दिया है । अब कल्याण-मलजीके हास्तूकमें पढ़नेवाले आज इस बोर्डिंगमें रहसकेंगे ।

डॉ० गौड-का सिविठ मेरेन बिठ बड़ी घासमामें पेशकर चुनी हुई कमेटीको सुपुर्द किया गया है जो जैन व हिंदु धर्मसे विरुद्ध होनेसे इसके विरोधमें कलकत्तेमें बड़ी सभा होकर इसके विरोधमें बाइसरायको तार भेजा गया है और हरएक स्थानसे भी ऐसे तार जाने चाहिये ।

६२५०)का दान-इन्दौरमें मादों सुदी ४ को सौ० गुटाबगई धर्मपत्नी सेठ फतेचंदनीका स्वर्गवास हुआ था इस माईके दश बालक है, पति भी है तौमी बईने अपने हाथसे ६२५०) का दान किया है (इसमें ५००) बम्बई श्राविकाश्रम तथा सौ२ दो१सौकी रकमें संस्थाओंको दी है यथा १०७५०) के हुकमचंद मीलके ६



શેરકા વ્યાજ મરીબોંકો વ્યપારાર્થે સહાયતા વ વિદ્યાર્થિયોંકો ઇનામમેં સર્વ કર્યા જાયગા ।

દાહોદ—મેં જૈન પાઠશાળાકા વાર્ષિકોત્સવ પં. દીપચંદ્રની વર્ગોંકે સમાપતિત્વમેં ગત માસમેં બડે સમારોહસે હુઆ યા । વિદ્યાર્થિયોંને ડાડે-શાસ્ત્રક કઈ સંવાદ કિયે થે ।

અનંતચતુર્દશી—કી આમ હુટ્ટી હોનેકે લિયે મહાસમાને પ્રસ્તાવ પાસ કિયા થા ઉસકા અમલ હોનેકે લિયે મહાસમાકે સમાપતિ વે. ચંપતગયની સરકારસે લિખા પટ્ટી કી તો ઉત્તર યહ મિલ્યા હૈ કિ સન્ ૧૮૮૧કે કાનૂન અનુસાર પવિત્રક છુટ્ટીકે દિન મંજૂર કરનેકા અધિકાર પ્રાન્તિક સરકારકો હૈ ઇસલિયે ડન પ્રાન્તીય સરકારોંકો જહાં અનંત ચતુર્દશીકી છુટ્ટી ન હોતી હો ઉસકે લિયે ડનસે પત્રવ્યવહાર કરે ।

મૃદાવિદ્યી—મેં બડે મંદિરકે જીર્ણોધારકા કાર્ય પૂર્ણ હુઆ હૈ ઔર આગામી માસ માસમેં પંચરચાળક પ્રતિષ્ઠા હોનેવાલી હૈ ।

૦ દાન—ભાવનગરમા અપાડ માસમાં મોતીચંદ ગોક્લદાસની વિધવા કંકુઆઇએ પોતાના અવસાન સમયે નીચે પ્રમાણે ૫૦૭૫ તુ દાન કર્યું હતું— ૧૨૦૭ ગેડુજ્ય પર ઇર્ષોદાર માટે, ૧૨૦૭ ભાવનગરના દેદરાસરમ. ચાદીની દીવી માટે, ૨૦૭ પાડાલા, ૨૫ કાથી વિદ્યાલય, ૨૫ ધન આશ્રમ, ૫૫ કુંથસગિરિ આશ્રમ, ૨૫ મોરેના વિદ્યાલય, ૨૫ સુખાઇ આધિકાશ્રમ તથા પરચુરજ.

ભાવનગર—મા સતોહ બહેન પાડશાળાનું કામ શરૂ થાય છે. ૨૬ વિદ્યાર્થી છે. શાળાને અંગે ઇનામી ફંડ છે, તેમા આ વર્ષ ૧૧૫૫ પેટલા સર્થે આપ્યા હતા. વારંવાર ઇનામો વધ્યા છે પશ્ચિમી જરૂર છે.

અમદાવાદ—ની નેહ પ્રેમચંદ મોતીચંદ દિ. દોન

બોડિંગની આતરિક વ્યવસ્થા સારી રીતે ચાલી શકે તે માટે સુજરતના બાઇથોલું એક વ્યવસ્થાપક મંડળ નીમવાનો વિચાર કરવાને એક મીટિંગ અમદાવાદ બોડિંગમાં આસો વહ વ પર પોલીકનલ કમેટીના મંત્રી શ્રેઃ હરજનભાઈ રાયચંદે બોલાવી હતી જેમા સુજરતભાઈ ૨૫-૩૦ આગેવાનો એકત્ર થયા હતા અને શ્રેઃ મંગળદાસ નાથાભાઈના પ્રમુખપણા નીચે મીટિંગ થઇ હતી અને તેમાં હરજનભાઈ, મુલચંદભાઈ કાપડિયા, છોટાલાલ થે. ગાંધી વગેરેના વિવેચનો પછી એક વ્યવસ્થાપક મંડળ નીચેના ૧૧ સભ્યોનું નીમવામા આવ્યું હતું. શ્રેઃ તારાચંદ નવલચંદ (પ્રમુખ), શ્રેઃ લક્ષ્મુભાઈ લખમીચંદ, શાં હરજનભાઈ રાયચંદ ઉપપ્રમુખ, ચીમનલાલ નરસિંહદાસ વઘીલ (એકેટરી), મુલચંદ કમનદાસ કાપડિયા, છોટાલાલ થેલાભાઈ ગાંધી, શકરચંદ તાપીદાસ, ડાં. માધવલાલ, ચીમનલાલ જયંગભાઈ, રતીલાલ જગજનદાસ અને ડાયાભાઈ હરજીવનદાસ. આ પ્રમંત્રે રૂપાભાઈ સમારક મંડળની વાપિક સભા પણ શ્રેઃ રતનચંદ પ્રેમચંદ એવેરીના પ્રમુખપણા નીચે થઇ હતી તેમાં રિપોર્ટ વંચાળો દનો ને વિદ્યાર્થીઓના ભાષણો થયા હતા. તેમજ 'સ્વતંત્ર' વિદ્યાર્થી નામનું લેખિત માસિક વિદ્યાર્થીએ બહાર પાડવા માંડ્યું છે તેનો પ્રથમ અંક રજુ થયો દનો. વિદ્યાર્થીઓમા બાનુ આવ, દેશ એવા ને એક દીવી વિશેષ થયેલી માલમ પડતી હતી. વળી વ્યવસ્થાપક મંડળના સરચાતના અર્થ માટે ૨૫ મંદિરમાહે બરાખા હતા. તેમજ શ્રેઃ મંગળદાસે બે દિવસનો રમેડા અર્થે આપ્યો દનો.

પૂજનોપયોગી શુદ્ધ સ્વદેશી-
પવિત્ર કાશ્મીરી કેશર ।

૨૧) ફી તોલ

મૈનના, દિ. ૦ જન પુસ્તકાલય-સુરત ।

પર્યુષણ પર્વ ।

આમોદ-માં પાચેમ આઠેમ ને પૂતમે ખાસ સમાઓ બરાધ દશ ધર્મ તથા આદી વાપરવા શેક દરજ્જન રાયચંદ વગેરેના વિષે બાપણે થયા હતાં જેની અસરથી દહેરાસરમાં વપરાતું બ્રહ્મ કેશર બંધ કરનામાં આવ્યું, વિદેશી બ્રહ્મ ખોડના પતાસાં ને સહિર બંધ થયાં, તથા વરથોડો સ્વદેશી પોષાકમાં નીકળ્યો હતો. અત્રે ખાદીનો પ્રચાર વિશેષ છે.

અક્લકેડા-માં નિત્ય તત્વાર્થ ને દશ ધર્મના વિવેચનો થતાં ને ચાર જાહેર સભાઓ થઈ હતી તેમાં વિદ્યાન્નતિ સંવાદ નાટક રૂપે ચર્ચાઓ હતો. વરથોડાની શોભા અપૂર્વ હતી. તેમજ મોટા દહેરા સરનો શિખર પૂરો કરવા માટે ૧૭૭૬ની ટીપ થઈ છે જેમાં છસો રૂની બે રકમો મેતા રામ-ભાઉ કરદુરચંદ ને નાનચંદ સખારામની છે ને કામ ચાલુ છે.

સીતવાડા-માં ૧૫ બાહ્યોએ જુદા જુદા વ્રત કર્યાં હતાં. ઉત્સાહ સારો હતો.

તલોદ-માં ૧૩ જાણે વ્રત કર્યાં હતાં પણ શાં તેમચંદ જેચંદ દહેરાસરમાં આપણું ઘર ન આપવાથી અધરો હોવાથી વિશેષ પ્રભાવના થઈ નહોતી.

વરોદરા-માં નિત્ય વાછાંત્ર સાથે પૂજન ચતુરે રોજ શાસ્ત્ર વંચાતું તેમજ ખાસ સભા થઈ એકતા વિષે બાપણ અપાયું હતું તથા પાઠશાળાના વિદ્યાર્થી ને જાલકોએને ધનામ વેચાયા હતાં, મંડળને લીધે અત્રે ઉત્સાહ સારો છે. તીર્થરક્ષા ફંડનો એકેક રૂપો બધાએ તરતમ આપી હોધો હતો.

ઠાણીસા-માં ઉત્સાહ ખડું સારો હતો. શાસ્ત્રની મુચી તૈયાર થઈ. ખંભાત મીંદર માટે ટીપ થઈ. વરથોડાની શોભા અપૂર્વ હતી.

પાદરા-માં એક બાહ્યો પાંચ ને બેષ ત્રણ ત્રણ અપવાસ કર્યાં હતાં. પાઠશાળા બંધ હતી તે જ્યેં મુનિ કેશરવિજયજીના કપદેશથી ચાલુ થઈ ને પાંચ વર્ષ માટે ટીપ થઈ છે. સંસ્કૃત અધ્યાપકની જરૂર છે.

ઝાંઝેર-માં ગયે વર્ષે ગંબીર મનાવ બનેલો તેનો નીચેડો હજી આબોજ નથી જ્યાં બધાઓ પર્યુષણ કરવા બહારગામ ગયેલા ને દહેરાસરમાં પૂજા, પ્રભાવના, શાસ્ત્ર વરથોડા કે પાખી કંઠપણ થયેલું નહીં !! કોઠપણ રીતે આ અવકાશ નીકાલ થવો જોઈએ અથવા નો નરસીપુરમાં નવું દેહરાસર બંધાવવું જોઈએ. એમ. ડી. શાહ.

ગુજરાત-માં જુદે જુદે સ્થળે ઉજવાયેલા પર્યુષણ પર્વના સમાચારનો લેખ મુંબાઈના ગુજરાત ડિ૦ જૈન યુવક મંડળ તરફથી મળ્યો છે તે સ્થાનાભાવને લીધે આવતા અંકમાં આપો પ્રકટ થશે.

મુરત-માં નવાપરાનાં મંદિરમાં નિત્ય અમો શાસ્ત્ર વાંચતા હતાં ચાર દાનની ટીપ થઈ હતી તેમાં રૂ૦ ૫૨૫૦ સ્ત્રી સમાજ તથા આશરે ૧૫૦૦ પુરુષ સમાજ તરફથી થયેલા તે જુદી જુદી સંસ્થાઓને મોકલવામાં આવ્યા હતા તેમજ તીર્થ રક્ષા ૪૬માં પછે બરાબા હતા. સ્ત્રીઓની પાઠશાળા ચાલુ છે ને છોકરાઓની પાઠશાળા બંધ હતી તે પાંચી બાદરવા વડે પ થી ચાલુ થઈ છે જેમાં રૂ૫ વિદ્યાર્થી લાભ લે છે. અત્રે સ્ત્રીઓમાં ધર્મપ્રેમ વિશેષ છે.

ચંડવા-મેં એકને ૧૦ વ કઈ નાદયોને પાંચ ર ઉપવાસ 'કિયે યે । પરતાવગઢ-મેં જ૦ ગેત્રીજાળનીકે ઠહરનેસે લૂવ વર્ષે પ્રભાવના હૂઈ થી । ભિવાની-મેં ગ્યા૦ ૫૦ પ્રાણિકચંડનીકે પવા-રનેસે ચર્નામૃતકી વર્ષા લૂવ હૂઈ થી । નાદગાંવ-મેં થી એક પત્તાજાળની વ જ૦ હીરાજાળનીકે

होनेसे अपूर्व आनंद रहा । दाहोद-में पं० दीपचंदजी वर्णी होनेसे तत्त्वचर्चाका काम अपूर्व था । पाठशालाका उत्सव भी हुआ तथा कई भाइयोंने यज्ञोपवीत संस्कार कराया था । कुचामन-में तेरह द्वीप ढाई द्वीपकी पूजन भी हुई थी । झालरापाटन-में मुनि चंद्रसागरजीने १६ उपवास किये थे । कोपरगांव-में तात्या केशव चोपड़े कीर्तनकार पधारनेसे खुब आनंद रहा था । बोधेगांव-में जलवात्रा अभिषेक पूजन व्याख्यानका आनंद अपूर्व था । खेखडा-में जैन कुमार समाके प्रयत्नसे मंदिरमें भी खादीके वस्त्रका व्यवहार प्रारंभ हो गया । पचई-में सब मंदिरमें स्वदेशी वस्त्र रखनेका ही प्रस्ताव हो गया । रायपुर-में फूट मिटकर एकता हो गई । छिंदवाडा-में ब्राह्मणका प्रयास उत्तम था । पाठशालाका पंचायतीकी ओरसे प्रबंध हो गया । रेशम व विदेशी वस्त्र मंदिरमेंसे निकाल देनेका प्रस्ताव हुआ । पवित्रताका निर्गम न होने तक केशव बंद किया गया । बहिर्योशर कपड़े गत्ते लगाये जाय आदि महत्त्वपूर्ण कार्य हुए । लाडनू-में व्रत नियम उपवास खुब हुए । शास्त्र नित्य होता था व संस्थाओंके लिये १००) चंदा हुआ था ।

खातेगांव-में पं० मेमरामजीने उपदेशसे दि० जैन मंडळ स्थापित हुआ, ११ स्वयंसेवक हुए व पाठशाला चालू हो गई । सोलापुर-में व्रत उपवास खुब हुए थे । नित्य शास्त्र होता था । जैन गार्सन समानका मेडेमें प्रथम नंबर था । जितुर-में व० महावीरप्रसादजीके उपदेशसे १५-वाया हुई थी । नेमगिरी फंडमें १०९) भाये थे

कलकत्ता-में पूज्य व० शीतलप्रसादजीका चातुर्मास होनेसे यह वर्ष अपूर्व सफलतासे पूर्ण हुआ था । आप व० चंदमलजी, पं० शम्भुनारायणजी, पं० मुन्नालालजीका उपदेश अच्छा हुआ था । कई माई बहिनोंने ८-९-१० तक उपवास किये थे । स्त्रियोंमें जैन कन्याशालाके लिये १२००) का चंदा हुआ । दो आम समाएं हुई थीं । सेठ रामजीवनदासजी आदिके उद्योगसे संस्थाओंके लिये १०००) का चंदा हुआ था जो संस्थाओंको लाभ करके बड़ी २ रकम भेजी गई । तीर्थरक्षा फंडकी उगाही हुई थी । सामाजिक पाठ व नियम मोथी सबको पटि गये थे ।

नये २ ग्रंथ मगाइये ।

वृ० निर्वाण विधान पृ० ९६' (३)
अमितगति श्रावकाचार-पाणचंदनी कृत टीका सहित, अनंतकीर्ति ग्रन्थालाका दूसरा सुठप ग्रन्थ, पृ० ४४० मूल्य मात्र १॥२)
श्री पद्मपुराणजी (संवित्र पृ० ९२९) ११)
पार्श्वनाथचरित्र पृ० ४२९ (पकी जिरद) २॥)
जैनार्णव (१०० मंथका संग्रह) १॥)
दौलत पदसंग्रह १-२ (नवीन) ॥)
शांतिसोपान (व० ज्ञानानंदनी कृत) ॥)
जैनपालघोषकप्र० भाग (पं० पनालालजी कृत) ॥२)
" " दूसरा " " " ॥२)
महिलाओंका चक्रवर्तित्व १)
धर्मसंग्रह श्रावकाचार १)
पवित्र केशव व सभी दि० जैन ग्रन्थ मिलनेका पत्र भेजना, दि० जैन पुस्तकालय-सूरत ।

जैन काव्योंका महत्व ।

(गताङ्घ्रे आगे)

इस बातको हमारे मन्दनीय स्वाध्यायिगण तथा मरके विद्वान् स्वाध्याय कर अपने हृदयक्षेत्रोंमें विश्वस्त्रको बो सोंगे । मे अत्र पुण्याश्रवादि उत्तमोत्तम जैनकाव्योंको उत्तमता बतलानेके लिये समय नहीं रखना । फिर भी काव्योत्तम पार्श्वनाथपुराणकाके कुछ चुने हुए कुसुमोंसे आप सज्जनोंपर वर्षा करताहुआ इस प्रकरणको सान्त करूँगा ।

वास्तवमें कविवर मूढादासजीने श्री पार्श्वनाथ पुराणको काव्य दृष्ट्या अति मनोहर काव्य बनादिगा है । दृष्टांतके लिये हम उनका आधका संप्रप देते हैं—

भुवनतिलक भगवंत, संतजन कमल दिवापर ।

जगतजंतु बंधव अनंत, अनुपम गुणसागर ॥

रागनाग मयमंत, दंत-उच्छेपन बलि अति ।

रमाकुंत अरहंत, अतुल जसवंत जगतपति ॥

तथा च-विमलबोधदातार, विश्व विद्या परमेश्वर ।

लछमीकमलकुमार, मार मातंग-मृगेश्वर ॥

मुखमयंक अवलोकि, रंक रजनीपति लाजै

नाममंत्रपरताप, पाप पन्नग डरि भाजै ॥

वया ही आदरणीय तथा आलंकारिकभूषणोंमें सज्जि । है । पाठक क्षमा करें, हमें इन कविकी इस देखनेशैलीकी उत्तमताको देखकर आश्चर्य होता है तथा हम इसी पुराणके और श्लोक कुछ देंगे जिससे कि इनकी विद्वत्ताका पूर्ण पता लगे—

जय अश्वसेन कुलचंद्र जिन, सन्त चक्र पूजित चरन ।

तारो अपार भवजलधिते, तुम तरंड तारन-नरन ॥

बाघ सिंह बस होयहि, विपम विपथर नहि डकैं ।

भूत प्रेत वेंताल, व्याल वैरी मन सकैं ॥

साकिनि टाकिनि अगनि, चौर नहि भय उपजावैं ।

रोग सोग सब जांहि विपत नेरे नहि आवैं ॥ (पा० पु०)

पाठ-वृत्त, कविकी हम अनुपम कविनामें शब्दालंकार, अर्थात्कारको देवशर वया नहीं कह सकते कि जैनतर काव्योंमें ऐसे पुराणालेन उपस्थित होंगे ? अत्र इ-ही कविका बनाया हुआ “ जैनशतक ” ग्रंथ है । इसकी उत्तमताका वर्णन वया करें यह हि दीर्घ पद्य मय अत्यंत काव्य है जिसकी कि कुछ वानगी हम आपको दते हैं—

चितवत चदन, अमल चंद्रोपम, तजि चिंता चित होय अकामी ।

अभुवन चंद पाय तप चंदन, नमत चरन चंद्रादिक नामि ।

तिह, जग छई चंद्रिका कीरति, चिह्न चंद्र चिंतित शिवगामी ॥

चन्द्रौ चतुर चकोर चन्द्रमा, चन्द्रवरन चंद्रप्रभस्वामी ॥

इसी तरह और भी चतुर्विंशति स्तुति कैसी उत्तम की गई है इसको हमारे पाठकवृंद ही विचारें ।

इस कविने यज्ञके हिंसानिषेधार्थ कैसे अनमोल बोल कहे हैं—

कहै पशु दिन सुन यज्ञके करैया मोहि,

होमत हुताशनमें कौनसी बडाई है ।

स्वर्गसुख में न चहौं “देह मुझे” यों न कहौं,

वास खाय रहौं मेरे यही मन भाई है ॥

जो तू यह जानत है वेद यों बखानत है,

जग्य जलौ जीव पावै-स्वर्ग सुखदाई है ।

छारै क्यों न वीर यामें अपने कुटुंब ही काँ,

मोहि जिन जारै जगदीश की दुहाई है ॥

प्रिय पाठकवृंद ! कविकी जब यह सत्य, ह्युक्ति यज्ञमें हिंसाका निषेध, अन्य-प्रायश्चित्त देसने हैं तो दांतों तले उँगली दबा लेते हैं । जब इन कथ्युक्तके दो ही ग्रंथोंकी चानगी देकर हम आगे बढ़ते हैं । हम स्वर्गीय कविराज घानतराश्रीकी कविताकी अप्र उत्तमता बतावेंगे। हम उदाहरणके लिये इनका “धर्मविलास” पेश करते हैं। वास्तवमें हिंदी संसारमें यह एक उत्तम पद्य ग्रंथ है । इसकी भी थोड़ी कानों मध्य पाठकोंके निमित्त पेश करता हूँ । ज्ञानीका बड़ा धर्म आधे उपपद्यमें इस प्रसार किया है—

धाम तजत धन तजत, तजत गजवर तुरंग रथ ।

नारि तजत नर तजत, तजत भुवपति प्रमाद पथ ॥

अधि भजत अध भजत, भजत सब दोष भयंकर ।

मोह तजत मन तजत, सजत दल कर्म सज्जुवर ॥

अरि चट चट सब कटकरि, पट पट महि पट किय ।

करि अट नट भवकट यदि, सट सट सिव सट लिय

तजत अंग अरधंग करत थिर, अंग पंग मन ।

लखि अमंग सरपंग, तजत घननि तरंग मन ।

जित अनंग धिनि सैलसिंग, गहि भावलिंग घर ।

तप तुरंग घटि समा रंगरधि, करम जंघ करि ।

अरि झट झट मदहट करि, सटसट चौपट किय ।

करि अट नट भव कट दहि, सटसट सिच सट लिय । इत्यादि

विचारक गण ! विचारिये वैसी अनुपम कविता है। इसके रस वैराग्यके चढ़ावको देखिये तथा जैनेतर नागरी काव्य पुंनमेंसे शायद ही इस दंगकी उत्तम कविता मिले। ऐसी कविताओंके पुंनका पुंन इनके काव्योंमें पाया जाता है।

अब हम आपको कविवर मगवानदासजीका भी परिचय देंगे। आपका वृद्धमंथ समुच्चय हिन्दी जैन काव्योंमें पाया जाता है। आपकी कविताकी पाँदे हम यहाँ पर दें तो ठीक होगा। विचारशीलविद्वदुत्तम। प्रायः कवि केशवदासकी प्रायः सब हिन्दी संप्राप्त जानता होगा। कवि केशवने अपना "रसिकप्रिया" नामक काव्य बनाकर समालोचनार्थ कविवर विद्वच्छिरोमणि मगवानदासजीके समीप भेजा। कविवर, मगवानदासजीने इसकी समालोचनामें भेजा। यह पद्य आपकोके लिये दिया जाता है जिससे कि आपकी उत्तम कविताका पता लगेगा।

घड़ी नीति लघु नीति करत यह, चाप सरित वद घोष भरी।

फौज आदि फुनगुणीमंडित, सफलदेह मनु रोग दरी।

श्रोणित हाड़ मांस मय मुरति, तापर रीजत धरीय धरी।

ऐसी नारि निरपि कर केशव, रसिक प्रिया तुम कहा करी।

प्रिय पाठकवृन्द ! देखिये कैसी उत्तम कविता तथा अर्थ (केशवने रसिकप्रिया एक खीर मोहित रची थी) स्फुट है। वास्तवमें हमने जितना भी संस्कृत साहित्यकी तरह हिन्दी जैन काव्यको देखा है, कहीं भी शृंगार रसकी प्रधानता नहीं देखी। अक्सर जैनेतर हिन्दी काव्य शृंगाररसमय ही होते हैं। कृष्णजीकी स्तुति भी राधाके कटाक्ष, गोपियोंकी आसक्तता तथा नीच पावोंसे परी हुई होती है लेकिन जैन काव्यपुंनमें कहीं भी शृंगार मय कविताका आविर्भाव नहीं पाया जाता है। अतः यह बात विद्वच्छिरोमणि अक्षरशः सत्य है कि जैन काव्योंके निर्माणमें श्रीयुत मृषदासजी, दीक्षतरामजी, बनारसीदासजी, श्री वृन्दावनदासजी आदि कविश्रेष्ठोंने शृंगार रसकी निंदा करते हुए वैराग्यमृतहीको रचा है जिसको पढ़कर हिन्दीके विद्वान् प्रतिदिन वैराग्य नदीमें स्नानंद गोते लगाते रहते हैं तथा केशवादि द्वारा रचे हुए, जैन काव्योंमें वैराग्यका नाम तक नहीं पाया जाता। बल्कि इन लोगोंके काव्यपुंन भारतवर्षकी अवतारमें ही प्रधान कारण हुए हैं।

मान्यवर पाठक ! अब हम आपको कविश्रेष्ठ बनारसीजीकी कवितापुंन पान कराते हैं—

"गुणविचार श्रृंगार वीरें उद्दिप्त उदाररुख ।
 करुणा समरस रीति, हौंस हिरदै उछाह सुख ॥
 अष्ट कर्मदल मलन, रङ्ग घरते तिहि धानक ।
 तन विलेच्छ वीमत्स, ठन्ठ दुख दशा भयानक ।
 अर्धुत अनंत बल चिंतवन, शान्त सहज वैराग ध्रुव ।
 नवरस विलास परकाश तव, जय सुबोध प्रगट हुव ।

पाठक, जिस तरह जैनैतर कवि श्रृंगारन विषय पर ही कविता रचकर सुकवि बननेका दावा करते हैं। किन्तु हमारे कविश्रेष्ठ श्रीशुत बनासीदासजीने उपर्युक्त पद्यमें आत्मामें ही नवरस अति सुंदर रीत्या घटित किये हैं। पर वृहत्पात्राका यह नवरस मुक्त अपूर्व चिंतवन अविद्वानोंको अभूतपूर्व आनन्दमय बनाता है।

ऐसी जैन कवियोंकी अतुल्य सुन्दर कविता बना अनैन काव्योंमें मिल सकती है। हम इन्हीं कविश्रेष्ठकी कविता ऐसी पेश करते हैं कि संप्रति हिन्दी संसारमें इस ढंगकी कविता नहीं मिलेगी।

भावान पश्वनाथ और सुपश्वनाथकी स्तुतिमें आपका

(सर्वहस्ताक्षर) मनहरण

करम भरम जग तिमिर हरन खग ।

उरगल खन पग शिष्य मग दरसि ।

निरखत नयन भविक जल चरपत ।

हरपत अमित भविक जन सरसि ॥ १ ॥

मदन कदन जित परम धरम हित ।

सुमिरत भगत भगन सय डरसि ।

सज्जल जलद तन सुकुट सपत फन ।

कमठ दलन जिन नमत धनरसि ॥ २ ॥

(मर्ष हस्तकागन्त) पदार्थ

मफल करम गल दलन कमठ शठ पयन फनक नग ।

घषल परम पद रमन, उगत जन असल कमल खग ।

परमन जलधर पयन, मजल धन ममनन समकर ।

पर अघर जहर जलद, सकल जननत भय भय हर ॥

यम दलन नरक पद छपकन, अगम अनट भय जल तरन ।

पर सपल मदन धन हरद हन, जय जय परम अनय करन ॥३॥

प्रिय पाठकवृन्द, विचारिये कैसी उत्तमतम कविता है। क्या ही पदछालित्य अर्थ-गोमीश्रमय एवं च अलंकारोंसे सुसज्जित है। इन कवीश्वर श्रीयुक्त बनारसीदासजीद्वारा जैन काव्यपुंज बहुवृत्तासे रचा गया है। इन कविवरकी कविता देखकर श्रीयुक्त रामायण लेखक गोस्वामी तुलसीदासजी भी इनपर प्रसन्न, प्रेम, श्रद्धा करने लगे थे। एक दफे गोस्वामी तुलसीदासजीने अपनी "रामायण" की समालोचनाके बारेमें पूछा तब पूज्य कविवरजीने उत्तर दिया।

राग सौराष्ट्र-दावनी ।

विराजै रामायण घट मांहि, मरमी होय मरम सो जानै ।
मूरख मानै नाहि विराजै, रामायण घट मांहि ॥ १ ॥
आतमराम ज्ञान गुन लछमन, सीता सुमति समेत ।
शुभपयोग वा नर दल मंडित, वर विवेकरण खेत, विराजै० ॥ २ ॥
ध्यान धनुष टंकार शोर सुनि, गई विषयदति भाग ।
भई भस्म मिथ्यामत लंका, उठी धारणा आग, विराजै० ॥ ३ ॥
जरै अज्ञान भाव राक्षसकुल, लरे निकांछित सुर ।
जुझे रागद्वेष सेनापति, संसै गढ़ चकचूर, विराजै० ॥ ४ ॥
विलखत कूभकरण भव विभ्रम, पुलकित मन दरपाव ।
धाकित उदार धीर महिरीयण, सेतुबंध समभाव, विराजै० ॥ ५ ॥
मूर्छित मंदोदरी दुराशा, सजग चरन हनुमान ।
घटी चतुर्गति परणति सेना, छूटे छपक गुण वान, विराजै० ॥ ६ ॥
निरखि सकति गुन चक्रसुदर्शन, उदय विभीषण दीन ।
किरै कबंध मही रावणको, प्राणभाव शिरहीन, विराजै० ॥ ७ ॥
इह विधि सकल साधुघट अंतर, होय सहज संग्राम ।
यह व्यवहार दृष्टि रामायण, केवल निश्चय राम, विराजै० ॥ ८ ॥

तुलसीदास इस अनुपम आध्यात्मिक वातुयको देखकर अत्यंत प्रसन्न हुये और अपनी कविताको " किसी भी छायक भी नहीं " यह कहकर कविवरजीकी भक्तिसे " भक्ति विरदावली " नामक सुन्दर कविता (पाश्चात्ताब (तोत्र) प्रदान की। वास्तवमें इन कविवरकी जितनी भी कविता कुतुम्ब वाटिका है वह सब आध्यात्मिक गीतसे सुशोभित है। आपका बनाया हुआ " समयसार " कैसी सुंदर कविताओं आध्यात्मिक रससे मरा हुआ है इसके लिये हम आप लोगोंको एक पत्र भेद करते हैं—

राम रसिक अरु रामरस, कहन सुननको दोय ।
 सब समाधि परगट भई, तब दुविधा नहि कोय ॥
 नंदन वंदन श्रुति करन, अवण चितवन जाप ।
 पठन पठावन उपदिशन, बहुविधि क्रिया कलाप ॥
 शुद्धात्म अनुभव जहां, शुभाचार तिहि नाहि ।
 करम करम मारग विपे, शिवमारग शिव मांहि ॥

और भी जैनसाहित्यमें अच्छे २ ग्रंथ हैं उनमें से श्रीयुक्त कवि वृन्दावनजीके पुत्र अजितदासने जैन रामायण जिसमें कि ७२ अध्याय हैं, रची हैं । काव्यदृष्टिसे यह भी अनुपम कविता है । इसमें तुलसीदासजीकी तरह निर्भूठ विवेचन नहीं किये गये हैं ।

जैनकाव्यनिकुंजमें "बुधजनस्तसई" भी बहुत उत्तम ग्रंथ है । इसकी वानगीके लिये हम नीचे लिखते हैं—

आपने पहिले १०० श्लोकोंमें जिन स्तुति की है उनके दो श्लोक यह हैं—

तीन लोकके पति प्रभु, तीन लोकके तात् ।

त्रिविधि शुद्ध बन्धन करे, त्रिविधि ताप मिट जात् ।

मन मोहो मेरो प्रभु, सुन्दर रूप अपार ।

इन्द्र सारिखे धकगये, करि करि जैन हजार ॥

आगे जाकर इसी ग्रंथमें बहुत ही अच्छी २ शिक्षायें, तथा शुभ नीतिपुंज हैं । जिनको पढ़कर आश्चर्य होता है ।

प्रिय पाठको, अब आपका समय नहीं लेना चाहता हूं । बल्कि इसी कथनको उपसंहारसे कहता हूं ।

संसारमें संस्कृत काव्यसागरके समान कोई भी काव्य इस जगतमें नहीं है, तिस परसकृत काव्यसागरमें भी जैन काव्यसागर अत्यंत विनीत है । वास्तवमें यह यह रत्न उपस्थित हैं कि यदि काव्यरसिकवृन्दोंने इसको छाना तो उन रत्नोंको प्राप्त होगी, जो कि जैनियोंके लिये ही वे भूषण नहीं होये बल्कि इस ३० कोटि जनसंख्यावाले भारत-वर्षके लिये अनुपम प्रदर्शनीयता स्थापन पावेंगे । तथा जैन हिन्दीकाव्यपुंज भी हिन्दी काव्यनिकुंजमें अनुपम, वैराग्यके रससे अमृतको पिलाता हुआ, दीन हीन भारतके रक्षक असहयोगकी जान अहिंसाके सूक्ष्म-तत्वोंकी शिक्षा देकर इतिहासमें अपना सर्वोपरि नाम लिखवा सकना है ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

भयवधरगामुन्यन ।

स्वतंत्रशुक्र-चन्द्रपारिलाल स्यामादी, शायीरसंद, मोरना (गयाजिपरा)

❖ उपवास-महिमा ❖

पाठक ! चंचल चित्त 'समालो-करो' दूर 'अविवेक' ।
 'स्वास्थ्य' सर्वदा जीवन-जीवन संपन्न 'सिद्ध-विवेक' ॥
 'गाँठमें बाँधो' मंत्र महान्-करो उपवास-वनो बलवान् !
 काम-अर्थ पुन धर्म-मोक्षकी, सिद्धि 'स्वास्थ्य'के हाथ ।
 कभी न 'स्वास्थ्य' रहेगा निश्चय, यदि उपवास न साथ ॥
 सुनो यह आयुर्वेदिक गान-करो उपवास-वनो बलवान् ।
 खाना पीना मौन उड़ाना, यही नहीं है कर्म ।
 कुछ तो शर्म शेष ही रहती, कुछ तो रहता धर्म ॥
 'मानवी' जीवन दुर्लभ ज्ञान-करो उपवास-वनो बलवान् !
 'आधा' पेट कीजिये भोजन, सो भी सादा पुष्ट ।
 'आधा' परो पवन 'पानीसे', हटे अजीर्ण दुष्ट ॥
 बना जो आज 'बवाले' ज्ञान-करो उपवास-वनो बलवान् !
 प्रति हफ्तेमें एक दिवस तो अवश करो उपवास ।
 पाचक-यंत्र 'चकावट' खोवें मलका होयें खटास ॥
 'शुष्क'का होवें सूच्चा ज्ञान-करो उपवास-वनो बलवान् !
 मन मलीन त्यों विकसित होवें, कर निज 'हलका' मार ।
 मरा हुआ 'एसाग्र' उत्तम, जग-जीवनका सार ॥
 कि जिससे दृढ़ हो नाता क्यान ! करो उपवास-वनो बलवान् !
 क्रोध दूर होनाता बिटकुल, 'आजाती' है शान्ति ।
 और दीख जाती है सचमुच, वह अभिमानी भ्रान्ति ॥
 कि जिससे दूर हुआ कल्याण ! करो उपवास-वनो बलवान् !
 भूलोंके प्रति दया उमड़ती, रहे दानका 'रूपा'ल ।
 देकर ही लेना होता है, यों हल हुआ सवाल ॥
 शीघ्र ही बन जाओ धनवान् ! करो उपवास-वनो बलवान् !
 हिंसा-वृत्ति दूर हो इससे, ऐसा सरल उपाय ।

दिल्लाना विज्ञान विधवा, ईश्वर भी दिल्लाय ॥
 गृहस्थोंको ये योग समान—ररो उपवास—बनो बलवान् !
 दुख पाते यदि नित रोगोंसे, लगता जीवन मार ।
 पड़े हुए हैं कार्य अधूरे, तो इस ओर निहार ॥
 शास्त्रकी बात छीजिये मान । करो उपवास—बनो बलवान् !
 निज नारीके सिवा, सभीको देखो मात समान ।
 बन गार्हस्थ्य—ब्रह्मचारी यों, चमकाओ निज शान ॥
 मित्र ! पुन बनिये निष्ठावान्—करो उपवास—बनो बलवान् !
 शक्तिहीन क्या कर सकते हैं, कोई पशुके कार्य ?
 शक्तिहीन कब कहला सकते, जीवित मानुष आर्य ?
 क्रिया यह समग्र शक्ति-निधान—करो उपवास—बनो बलवान् !
 “ वैद्य ”] [नयन ।

स्वार्थीयतापर दो मित्रोंकी वार्तालाप-

(छे० दीपचन्द पांड्या—छिंदवाडा)

ज्ञानचंद—कहो माई प्रेमचंद कुछ तो हो !
 प्रेमचंद—भी हां । मित्र कुछ छुं ।
 ज्ञान—और आपका चचेरा माई ?
 प्रेम—भी हां, मित्र वह भी कुछ छुं है परन्तु...
 ज्ञान—रकर, क्यों ? मित्र आगे तो कहो ?
 प्रेम—क्या कहूं मित्र समानेकी खूबी, उत्की
 ।च्छा तो बहुत कुछ विद्य दायन करनेकी
 है परन्तु उसके कर्म बढ़े आमागी हैं ।
 ज्ञान—कैसे ?
 प्रेम—आमकछकी सामाजिक रीतिके अनुसार
 उसके स्वार्थीयताकी दृष्टि तक ही पड़ा-
 नेकी है ।
 ज्ञान—स्वार्थीयताकी दृष्टि याने क्या ?
 प्रेम—यापार ।

ज्ञान—व्यापार तो थोड़ीसी मात्र माया और
 गणितके जानने से ही आ जाता है ।
 प्रेम—वस ! वहीं तक हृद भी हो चुकी !
 ज्ञान—तो फिर माई ऐसी अधूरी शिक्षासे क्या
 होता है ?
 प्रेम—ऐसी शिक्षासे मनुष्य किसी हालतमें भी
 मनुष्यताको प्राप्त नहीं कर सकता ।
 ज्ञान—यदि वह व्यापारिक शिक्षा छे, परिपूर्ण
 हुआ तो ठीक ! अगर नहीं हुआ तो ?
 प्रेम—ऐसी हालतमें एक पितावर (स्वार्थरूपी-
 भृत) सवार हो जायगा, उसे कई प्रका-
 रके कट्टाचन सुनने पड़ेंगे ।
 ज्ञान—ये कैसे बचन ?
 प्रेम—आमकछके सामाजिक रीतिरिवाजके
 अनुसार याने कुछ मूर्ख, हमारे पास
 निश्चय जा, कइत बहसि हमारे यहां
 पैदा हुआ, जो तू अपना भी पेट नहीं



पर सकना तो फिर हमारा कहाँसे पर
सकेगा इत्यादि ।

ज्ञान—तो फिर ऐसी बातोंसे उसपर क्या अपरा
'पड़ेगा ?

प्रेम—माई ऐसी बातोंसे वह अपने तक्रारकी
परीक्षाके लिये विदेशोंमें चला जावेगा ।

ज्ञान—तो आश्चर्य है ! उसके पिताके पंथपर
समान कठोर दिलको जो स्वार्थका
गुलाम बनकर निग 'पुत्रको अपनेसे
सदैवके लिये छोड़ता है ।

प्रेम—माई साहेब, आनकाछके जमानेकी ऐसी
ही खूबी है ।

ज्ञान—माई प्रेम देखो ! जिसपुत्रको बड़े प्रेमसे
'पालनपोषण किया और आन उसीकी
साथ यह अत्याचार; आश्चर्य है ।
निर्दयी 'स्वार्थ' जरा भी मुझे दया नहीं।

प्रेम—माई दया कि है की, यह (स्वार्थ) जिसके
हृदयमें बास करता है उसे निर्दया कठोर
परिणामी बना देता है ।

ज्ञान—माई प्रेम—कहा यह मातापिताका धर्म
है और कर्तव्य है कि वह अपने
प्यारेसे प्यारे पुत्रको घासे निकाळ दें ।

प्रेम—किंतु माई यह सब इसी (स्वार्थ) की
करामात और लीला है ।

ज्ञान—बहुतसे पुत्र अपने मातापिताकी
बदौलत बाल्यावस्थामें विवाहके नाछमें
कंप जाते हैं और अपने मायकी परीक्षा
अपने मां बापके मर जाने पर लिया
करते हैं ।

प्रेम—मित्र सब है ! कि छोटी अवस्थामें बाल-
कोंकी शादी कर देनेसे उनका कच्चा
बौर्यपात हो जाता है जिससे वे बुद्धि
हीन, बलहीन तथा निष्क्रमे होकर थोड़े
ही दिनोंमें अपने मायके परीक्षक बन
जाते हैं ।

ज्ञान—माई प्रेम, जिन बाळकोंका विवाह ब'-
स्थावस्थामें हो जाता है उनके द्वारा
सन्तानोत्पत्तिकी क्या आशा है ?

प्रेम—जित तरह खाद्य रहित खेतसे घान्ध
उत्पन्न होनेकी आशा नहीं की जा
सकती उसी प्रकार उनसे भी नहीं ।

ज्ञान—यदि किसी प्रकार संतानोत्पत्ति हो भी
जाय तो ?

प्रेम—वह संतान बहुत कमजोर और रोगी
होगी इसलिये वह ज्यादा दिन न जी
सकेगी और पाबापके भी अधिक दिन
जीनेमें शंका ही है ।

ज्ञान—तब तो माई प्रेम, मुझे बाळविवाहमें
अनेक दोर मालूम पड़ते हैं ।

प्रेम—इस बातको तत्त्व माननेमें कपर ही
क्या है ?

ज्ञान—इतने पर भी मातापिता अपनी सन्तान-
की शादी छोटी अवस्थामें कर देते
हैं इसका भी कोई कारण नजर होगा ?

प्रेम—माई मुझे तो एक मात्र यही कारण
मालूम होता है कि, जिन्होंने (स्वार्थ
रूपी अमृत पिया है) वे यह समझते
हैं कि शायद अगर हप मर जाये तो
हप री सन्तानकी शादी विवाह कौन



करेगा ?

ज्ञान-इसके सिवाय और भी कोई कारण है क्या ?

प्रेम-ज्ञान, मुझे एक कारण और भी मालूम पड़ता है कि कई लोग अपने सामने पुत्रकी बाछ लीरा वो छोटीसी बहूकी घामें छम २ छम आवाजमें ही आनंद मानते हैं यही दो खास कारण हैं ।

ज्ञान-अच्छा माई प्रेम, अब मुझे आजकलकी सामाजिक रीति रिवाजका पूरा-२ परिचय मिल गया ।

प्रेम-अजी मित्र, इनकी ही नहीं, इसके सिवाय और भी कई छुरीतिवां, वृद्ध विवाह, अन्मेष विवाह आदि समाजमें हैं ।

ज्ञान-अच्छा मित्र, अब समय बहुत हो चुका, दीवाली पर भिड़ेंगे ।

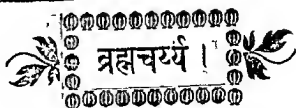
प्रेम-बहुत ठीक मित्र ! नयनिन्द ।

लेखक-दीपचन्द पांढवा-छिदवाडा ।

छपकर तैयार हो गया ।

प्रभावनाके लिये धोकचंद मगाड़ये

सामायिक पाठ ।



ऐसा कोई विषय नहीं है कि जिसपर हमारे साहित्य (प्राचीन साहित्य) ने प्रकाश न डाला हो । परन्तु प्रत्येक विषयका संगठन, समायोजन-कूट-अवस्थाके आधार पर हुवा करता है । सिद्धांत मूलक-युक्तियोंमें नवीनता नहीं आसकती है तौ न सही, समय और अवस्थाकी आवश्यकताओंका रूप तो आधुनिक मापा द्वारा व्यक्त किया जासकता है । आधुनिक साहित्यका यही काम है कि वह प्रत्येक विषय पर प्राचीन साहित्यको मननकर मौलिकता पूर्णभावसे छेखनी उठवानेका प्रयत्न करे । नहीं तो वर्तमान साहित्य, अनुवाद, अनुकरण, पुनरुक्ति और दुरुक्तिसे सिवाय और कुछ न होगा । पुरानी बातोंकी नवयुक्तगण किस्से, कहानियोंकी तरह मनो-अहंतासे सुन सकने हैं । किन्तु ऐसा कार्य नहीं कर सकते हैं । क्योंकि न तो ऐसे लेखकोंमें समायोजन-क्रियान्वित सुविधाएँ ही होती हैं और न वर्तमान काजीन दृश्य होते हैं कि जिसको देखकर लोग उत्साहित हों और उस विश्वांगो बिना कथमें परिणत निचे, चुनचाप रह ही न सकें । ऐगकहा काय है कि वह ऐसा प्रमाण ढाँचे कि जिससे पाठक अस्तिरा और अचोर होनायें । वर्तमान समयमें सेव दिने नते हैं, परन्तु उनका प्रभाव आसदपहानुसार इसी छिप नहीं पड़ता है कि ये इतरउतरकी विन्दुर ज्ञानोंस पूरा होते हैं ।



ब्रह्मचर्यके विषयमें "मौलिकता" की बात रूपा कर हम खुद गलती करनेपर विवश हुए हैं। परन्तु इस विषय पर हम स्वतंत्रता पूर्वक विचार करना चाहते हैं और संपन्न हैं कि प्राचीन मत पर कहीं २ आशे आशे ! इसी कारण हमने निवेदन किया है कि प्रत्येक विषय पर अर्वाचीन दृष्टिसे आन्दोलन करना आधुनिक साहित्यका प्रधान कर्तव्य है और सत्यासत्यका निर्णय करते हुए कर्तव्य पाठन करना हमारा काम है और यही साहित्य काम है कि जिसके लिए लिखने और पढ़नेकी सुष्टि हुई है।

प्रायः ब्रह्मचर्यकी परिभाषा सभीको अवगत है। वीर्यकी रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य कहलाता है। किन्तु क्रियाओं द्वारा ब्रह्मचर्य सुरक्षित रखना जासकता है यह बातें ब्रह्मचर्यके विषयमें कर्तव्यपथ प्रदर्शक हैं।

परन्तु ब्रह्मचर्यका साहित्य समके लिए एक ही प्रकारका नहीं होसकता है। यदि सब लोग ब्रह्मचारी हो जावेंगे तो संसार उजड़ जायगा। यदि कहाजाय कि बाल्यावस्थामें सबको ब्रह्मचर्यका पाठन करना चाहिए तो बया गृहस्थों और संन्यासियोंको ब्रह्मचर्यकी आवश्यकता नहीं है।

हम ब्रह्मचर्यकी परिभाषा नवीन ढंगसे करना चाहते हैं। ब्रह्मचर्यका अर्थ उस उपासनासे है कि जिसकी शक्ति प्रत्येक जीवको अपनी सत्ता स्थिर करा सकती है। अर्थात् ब्रह्मचर्य एक ऐसा आधार है कि जिसके सहारे ही से जीवन व्यतीत किया जासकता है। संसारमें आत्मिक उत्थति ही जीवनका उद्देश्य है। बाल्यकालकी

विद्या, गृहस्थकी सक्रियता और संन्यासकी रक्षा जीवकी उन्नतिके लिए ही आवश्यक है। पापोंसे दूर रहनेकी यही आवश्यकता है। वैसा करनेसे कोई सुख नहीं मिलता है और नैतिक ह्रास होता है। अज्ञानकी इसी लिए बुराई की जाती है कि वह व्यर्थ हम लोगोंको इधर उधर भटकता हुआ ठोकरें खिलवाता है। कमजोरीको हीन समझनेका यही कारण है कि उससे कोई कार्य सम्पन्न नहीं होता। सात्त्विक, दृढता और संयमके लिये हमारा चित्त इसलिये लालायित रहा करता है कि उससे सामाजिक उन्नति होती है। अतएव यदि ऐसे स्थान पर रहना हो कि जहाँ अच्छाई और बुराई दोनों हों तो एक ऐसी शक्ति चाहिये कि जो अच्छाईको ग्रहण करावे और बुराईकोसे वृथा उत्पन्न कराती हुई उनको दूर हटावे। विचार पूर्वक देखनेसे मालूम होगा कि यह गुण सिवाय ब्रह्मचर्यके और कहीं नहीं है। ऐसी अवस्थामें यदि कहा जाय कि ब्रह्मचर्यकी आवश्यकता केवल बाल्यकालमें ही है तो सर्वथा अनुचित होगा। ब्रह्मचर्यका दूसरा नाम जीवशक्त दैवीशक्ति भी रखना जासकता है। इस शक्तिकी आवश्यकता विद्यार्थीको भी है, गृहस्थको भी है, संन्यासीको भी है और स्त्रियोंको भी है। कुमारी कन्याके लिये भी वह प्रयोजनीय है और विवाहके लिये भी आवश्यक है। एक शब्दमें जो शक्त जीव मात्रका जीवन आधार है वह किसीसे किसी अवस्थामें भी दूर न होनी चाहिये। जिस समय ब्रह्मचर्य पूरा होगा उभी समय घोर ह्रास हो जायगा। सपानरी शृङ्खला, उपदेशोंका महत्त्व,



चरित्र गठन और मानसिक विकासोंमें शक्तिकी ज्योति नष्टमग्न रही है। उनके बिना यह सर झड़ भंग और अप्राकृतिक एवं विपरीत हो जायेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं।

वीर्यकी रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य कहलाता है किन्तु जो गृहस्थ पुरुष वीर्यकी रक्षा नहीं करता है और यदि वह ब्रह्मचारी रहेगा तो क्या जीवित ही नहीं रहेगा ! हजारों लाखों गृहस्थ पूर्ण ब्रह्मचारी होगये हैं। इस पर आश्चर्य करनेकी कोई बात नहीं है। प्राचीन ग्रन्थोंमें इसके बहुतेरे प्रमाण मिलते हैं। अब भी हजारों गृहस्थ एक एकीवचनके धारक पाये जाते हैं। परन्तु हम इससे ही सन्तुष्ट नहीं हो सकते हैं। हमारे पूर्वजोंने इस ध्यायक ब्रह्मचर्यके विषयको संकुचित करके थोड़ी सी मूढ़ की है।

संसारमें उत्पन्न होकर जीव नानाप्रकारकी अवस्थाओंमें होकर जीवन व्यतीत करता है। उसकी शारीरिक इन्द्रियाँ और मानसिक इन्द्रियाँ भी उन्हीं अवस्थाओंके अनुकूल रूप धारण किया करती हैं। साथ ही, समस्त शक्तियोंकी विविध अवस्थाओंमें विविध भावित संलक्ष्यता देती हुई जीवकी सहायक रह करती हैं। बाल्य-कालमें पितापुत्रके लिये हम लोग विद्यार्थी बहत्ते हैं। विवाह होनामे पर और नौकरी करनेपर क्या विद्यार्थी नहीं रहते हैं ? हम लोग क्रियात्मक विद्यार्थी नहीं रहते हैं ! यदि नहीं रहते हैं तो बाल्य होत है। यदि रहते हैं तो विद्यार्थी न बहत्ता कर भी विद्यार्थी ही होते हैं। गृहस्थी अवस्थामें और नौकरीकी अवस्थामें जो

भेद है वह भेद विद्यार्थी भावको अवस्थाके अनुसार केवल बदल देना है—निर्मूल नहीं करता है। निर्मूल होनेसे अवश्य ही हानि होगी। बाल्यका लमें जब लड़के मूलते हैं तो अध्ययनका तमांचा खाते हैं ? पढ़नेके बाद जब हम लोग “स्वतंत्र” हो जाते हैं और उस समय जब कोई भूठ करते हैं तो क्या दण्ड नहीं पाते हैं ? शारीरिक भूठ करनेपर श्वात्ताप, अपमान, क्षोभ, दुःख, चिन्ता और व्याकुलता आदिके मानसिक “तमांचे” झेला करते हैं। अस्तु, दण्ड सभी पाते हैं परन्तु अवस्थाके अनुसार दण्ड-विधि अन्य रूप धारण कर लिया करती है। अब यह सिद्धांत प्रमाणित होकर मान्य होगया होगा कि समस्त अच्छी और बुरी शक्तियाँ सर्वदा जीवके साथ रहा करती हैं और विविध नामोंसे व्यक्त हुआ करती हैं। इसी तरहसे जीवनका आधार ब्रह्मचर्य उसके लिए अनिवार्य है। परन्तु अवस्थाके अनुसार उसके कई भेद होते हैं। उन भेदोंकी परिमाणाएं भी पृथक्, १ हैं। जो बादमें जिस अवस्थामें हो वह उस अवस्थाका ब्रह्मचर्य धर्म पाठन करे। यदि उसमें त्रुटि होगी तो उसका दण्ड मिटेगा। नीचे अवस्थानुसार ब्रह्मचर्यके भेदों पर विचार किया जाता है।

जिसी परिदृश्यमें एक गुच्छे हुए स्थान पर एक ऐसा सफेद दान लिप्य मारा है कि जिससे किनारे ही मोले भांगे पाठक बहत्त गये। लिखा है कि कलियुगमें मनसा पाप नहीं होता है। ऐलककी रचमे मन्के साथ शरीरका क्रियात्मक सम्बन्ध नहीं है। इसमें अपने ऐसा लिप्य मारा है।



इस आज्ञाके अनुसार एक ब्रह्मचारी विद्यार्थी, सड़कों पर निकलने वाली स्त्रियोंके साथ मानसिक व्यवहार कर सकता है ? जिन लोकि करसकता है—मन पर कोई कानूनी बारीबाई नहीं की जासकती । परन्तु इससे इन स्त्रियोंका तो कुछ विगड़ता नहीं है किन्तु, इन जहर मिले मनके छड़छुओसे कुछ दिन बाद उन ब्रह्मचारीका गौर पतन होनाता है, यदि उसे यह मालूम होता कि इन प्रकारकी मानसिक कल्पनाएँ अपना प्रभाव बिना दिखलाये कभी न चुप रहेंगी तो वह बेचारा व्यर्थ अपने पैरमें कुल्हाड़ी न मारता । इस बातकी आदमों को धोर और मछीन स्वार्थ छिया बैठा है उस पर विचार करनेसे खेलकके ऊपर बेतरह कोष जाता है ।

वास्तवमें, क्या कलिगुणमें और क्या सतगुणमें क्या प्राप्त और क्या साधका सर्वदा जीवकी स्थिति मानसिक विचारोंके प्रसार रहती है । अपने विचारों पर विचार करके हाएक आदमी जानसकता है कि वह क्या है । यह भी आजमाया जासकता है कि मानसिक सुविचारोंमें प्रभाव होता है या नहीं । हमने इस सिद्धांतको स्वयं आजमाया है । एक प्रकारके विचारसे हम कुछ दिनोंतक मानसिक चिन्तामें कैसे फंसे रहे । जिस तरह हमारे ऊपर अच्छे विचारोंके साकार प्रभाव पड़े उसी तरहसे उस बुरे विचारका भी प्रभाव पड़ा और ऐसा पड़ा कि ग्राहि ग्राहि । अतएव हमें अच्छी तरह मालूम होगा कि मानसिक अवस्था ही हमारी सच्ची अवस्था है ।

बाल्यकालका ब्रह्मचर्य आदि और प्रारम्भिक

होनेसे कठिन बन है । बालक नहीं जानता है कि प्रसङ्गमें क्या सुख और क्या दुःख है । परन्तु वह सुन्दरताको देखकर यह ख्याल कर सकता है कि सुन्दरीका साथ अवश्य अपूर्व आनन्ददायक होगा । यही उसकी आदि अवस्था है । वीर्यकी प्रारम्भिक अवस्था जो एक तरक्का जोश उत्पन्न करती है उससे कठिनाता मालूम होती है । यदि किसी बालकने बीस अथवा पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण किया है परन्तु बीस २ में उसे प्रसङ्गी नलवती इच्छा हुई है और जब कभी स्वप्न भी हुए है तो वह निद्रावत ब्रह्मचारी है और इसी सिद्धांत पर विचार करनेसे गुरुकुलोंकी सृष्टि की गई । बाल्यकालका ब्रह्मचर्य निरालोक निर्दोष होना चाहिए । शारीरिक ब्रह्मचर्यके साथ मानसिक ब्रह्मचर्य भी आवश्यक है । बाल-ब्रह्मचारीको खाना पीना खूब सोच समझ कर देना चाहिए । पुस्तकालोकनमें सचेत होना चाहिए । जो 'बालक' प्रसङ्ग विषयसे अनजान रहेगा यही पूर्ण ब्रह्मचारी कहा नामगा ।

विवाहके उपरांत नवयुवक स्त्री-प्रसङ्गका विषय स्वयम् अनुभव करता है । जबानीकी नई उमङ्ग प्रसङ्गको आनन्ददायक बतलाती है । उस समय अपनी स्त्री पर स्नेह किया जासकता है । परन्तु, इस उधर कुछ टि टालना या उसका विचार भी करना व्यवहार है और उससे शक्ति नष्ट होती है । पत्नीजन मनुष्य की वीर्यपात करती है और व्यवहारी मनुष्य भी ऐसा ही करता है । यदि दोनों आदमी परिमितरूपसे समान भावसे वीर्यपात करें तो भी



व्यभिचारी मनुष्य अधिक निर्बल होजायगा। फलतः एक पत्नीव्रत गुरुक मनसा और कर्मणासे वीर्यपात करता हुआ भी ब्रह्मचारी है। गृह-स्वको सन्तानकी इच्छासे प्रसंग करना इसी कारण बतलाया गया है। प्रसंग करना कोई लाभदायक बात नहीं है। किन्तु पत्नी पाकर मनुष्यका प्रसंग करना धर्म है—पाप नहीं है। अर्थात्—एक कर्त्तव्यके पीछे ब्रह्मचर्य उसी मति स्पष्ट बिराममान है कि जिस प्रकार स्कूठ छोड़नेके बाद 'विद्यार्थिव'। अब आप ही कहें कि क्या गृहस्थी ब्रह्मचारी नहीं है? यहां पर ब्रह्मचर्यकी परिभाषा दूसरी है और बाल्य-वाटमें दूसरी थी।

बहुतसे बृद्ध प्रसंगशक्ति हीन होनाने पर भी मोहें मटकाया करते हैं। बिना कारण, बिना आवश्यकताके उनका यह निष्प्रयोजनीय और निंदनीय कर्म ब्रह्मचर्य नाशक है।

यह साधु भी ब्रह्मचारी नहीं है कि जो शरीर और मन पर पुरा कब्जा नहीं रखता और वीर्यको चरस आदि मादक द्रव्योंसे जकाता है।

यह विषय भी व्यभिचारीणी है कि जो जान चूमकर मन ही मन प्रसंगकी छालसा रखती है। और यह व्यभिचार, काविक व्यभिचारके समान इस कारण है कि उससे काविक व्यभिचार होनायगा। यदि न हो तो सतीशकी प्रवृत्ति शक्ति अल्प मन्द होनायगी। काविक व्यभिचार अधिक हानिकारक है और मानसिक उससे बंध। परन्तु हैं दोनों व्यभिचार ही। हां—सु-बर्त्ता भूटा ग्रामको ठीक होनाय तो वह गूला नहीं कहलाता है—पर बात ठीक है। मानवी

निर्वलताओंको खयाल रखना ही होगा।

जो कामलित नहीं है—जिसको वीर्य बहाना पसंद नहीं है जो साधना सहित इच्छाशक्तिको ब्रह्मचारिणी बनाये हैं—वह पूर्ण ब्रह्मचारी है।

अब इस लेखके उपसंहारमें ब्रह्मचर्यकी महिमा पर स्वतंत्र विचार प्रकट किये जाते हैं।

वास्तवमें ब्रह्मचर्य एक आध्यात्मिक विषय है। संसारी लोगोंकी दृष्टि उस पर नहीं पड़ती है—तो यह आश्चर्यकी बात नहीं है। जो लोग भावुक हैं, जो अपनी कोई विशेष सत्ता रखते, जो मक्त और श्रद्धालु हैं, जिन लोगोंके द्वारा कोई विशेष कार्य होनेवाला होता है, जो कवि हैं, जिनकी मति संस्कारोंके कारण शुद्ध और सात्त्विकी होगई है वही ब्रह्मचर्यको पहिचान सकते हैं। क्योंकि संसारमें एक यही शक्ति नाशके स्वरूप है जो यात्रीको कुशलता पूर्वक 'उस पार पहुँचा देती है और मार्ग' के नाना-प्रकारके प्रयोजन हवी भवोंसे साफ निकाल लेती है। फलके पत्तेकी तरह वर्षाके समय भी पानीसे बिना भोगा ही बचा रहने वाली यह देवी शक्ति है और आश्चर्य जनक सकल-ताओंकी सिद्धि देनेवाला यह अमोघ मंत्र है। अधिकारीके लिये ब्रह्मचर्यका पाठन स्वाभाविकताके कारण सरल है और इधर उधरके पढ़ने पुण्योंके लिए पराट पर पढ़नेके बराबर बतित है। ऐसे ही लोग साक्ष्य पूछते हैं—“क्या वह पूर्ण ब्रह्मचारी या” ? उनको यह बात कुछ अस्पष्टतासी दीयती है।

ब्रह्मचर्यके विषय पर व्याख्यान देनेवाले और छेम लिखनेवाले उनके मन्त्रधर्ममें ऐसा भी कह-

जाते हैं कि देखो अतीतकालमें ब्रह्मचर्य के कारण ही भीमसेन इतने बलवान् हुए, पराम इतने तेजस्वय हुए, भीष्मजी ऐसे महावीर, स्वामी शक्राचार्य ऐसे प्रचारक हुए, महावीर स्वामी ऐसे सच्चे उपदेशक हुए और सी दयानन्दजी ऐसे परिवर्तक हुए। यह सब तो किसी अशमें ठीक है। पर ब्रह्मचर्यके का ही यह सब नहीं हुआ। और न ब्रह्मके कारण प्र० राममुक्ति प्रसिद्ध हुए। अर्थात् एक आश्चर्यक और अनिवार्य आधार। उसपर बिना खड़े हुए तो कोई काम नहीं सकता। परन्तु केवल उसीसे कुछ नहीं हो जाता है। वह “योग्यता” है—उसे अधिष्ठाता ‘अधिकार’ समझना होगा। ब्रह्मचर्यशिक्षाकी ताह विविध ज्ञानकी पहली सीढ़ी। उपर्युक्त स्वनामधेय प्रातःस्मरणीय महात्मने, ब्रह्मचर्यके आधारपर सिर होकर योगसहायतासे मनमाने कर्म किये हैं। फलतः ब्रह्मके बिना इस प्रकारके कार्य होना अवश्य ही असंभव है। इस कारण, ब्रह्मचर्यका जितना भी यशसाया जाय थोड़ा है।

स तानोत्तिकी अवस्थाके सिद्ध अन्य सपत्त जीवनमें वीर्यकी रक्षा होना निवार्य है। वीर्य और ब्रह्मचर्यमें क्या अन्तर? ब्रह्मचर्य निराकार है और वीर्य साकार है। मारी रायमें वीर्यको ब्रह्मचर्यसे शुद्ध मानना ही चाहिए। अतएव, जिन लोगोंको प्रमेह रहे तो वे चाहें जो हों—अपनेको ब्रह्मचारी समझी मूख न करें। ब्रह्मचारी पत्नीकी तरहसी हठमें नहीं डोहता है। वह उर्वशी की मुदरीकी

सहम ही दूर कर सकता है। ब्रह्मचर्यमें प्रवृत्त है। यदि पूरा जाय कि संसारमें कितने पुष्ट है तो इसका कोई लम्बा चौड़ा उत्तर न होगा। ब्रह्मचर्य अपना वीर्यकी ‘रक्षा’ कई प्रकारसे की जा सकती है।

(१) सादा, मोनन करना, एक ही समय खाना, आधा पेठ खाना।

(२) भले सिवाय कोई तरह पदार्थ न पीना।

(३) मादक द्रव्योंसे बचाव रखना।

(४) अपने इष्टदेव, धर्म या इश्वरमें पूर्ण भक्ति रखना।

(५) संसारको गुरुद्वारा समझ बदलते रहना।

(६) परमात्माको सदा समझ होशमें रहना।

(७) शूद्राकी कथिता न पढ़ना, पुस्तक भी न पढ़ना।

(८) शूद्रार रक्ता कोई चित्र न देखना।

(९) स्त्रियोंको माताकी दृष्टिसे देखना। इससे महाशक्ति पुत्रकी तरह रुपाञ्ज रक्तेगी।

मूच्छा दण्ड मयाजक गानना।

(१०) मनन कभी हटि रखना।

(११) योगाभ्यास करते रहना।

(१२) समाजकी सेवा करना।

(१३) अमिमां आदि उत्तेजक भावोंसे दूर रहना।

(१४) प्रसन्नचित्त और आशावादी रहना।

(१५) ब्रह्मचर्यका प्रचार करना।

(अ) लेखों द्वारा (ब) व्याख्यानों द्वारा (स) गुरुकुलों द्वारा और (द) कर्म प्रदर्शन द्वारा।

(१६) स्त्रियोंको भी ब्रह्मचर्यका महत्त्व बतलाना।
[शिवनारायण वर्मा]



ઝન્હા-આંસુ

અને

માવાપોની નિર્દયતા ।

સંસારભૂમિપર ભજવાતા નાટ્ય પ્રયોગો-
માંથી જે પ્રકારનાં તત્વ જેવાં છે. એક તો ધર્મ
ભાવનાથી અને બીજી પાપ ભાવનાથી; આજ
પ્રમાણે સંસારમાં રહીને કોઈ કૃષ્ણની, સમાજની,
અને દેશની સેવા બળથી સ્વજનને સફળ બ-
નાવે છે ત્યારે કેટલાક આત્માઓ અવળા-પંથને
મંદી પોતાની મનુષ્ય દુરબળથી નિષ્ણ થઈ સ્વ-
સંસારોને મારીમાં 'મેળવે છે, આજે હું નાટ્ય
પ્રયોગ રૂપે જીન્દા-આંસુ સારતી દયાપાત્ર બ-
ક્તિઓના આત્મ કષ્ટપાતને તમારી સન્મુખ રજુ
કરું છું તો આશા છે કે કોઈપણ ભાઈ વાંચી
પોતાના સમાજમાં રહેલા અધમ રીવાજોને છિન્ન
ભિન્ન કરવા પ્રયાસ કરશે અને તેથી ખરાબ
શ્રદ્ધાને ભોગે થતાં આશાનાં ઘરો ફાલી તમેને
આશીર્વાદ આપશે.

બાળ વિવાહી બાલિકા.

ઉપાકાળના પવનની શીતળ લહેરીએ વાય
છે, પંખીડાં કંકરવ કરતાં જનસમાજને આનંદ
આપે છે. પાણી બરી આવતી પતીહારીએ અસ્ત-
પરસ્ત આત્મ કથાઓ કહી દિલને ઠોલાણી રદી
છે. સૂર્યદેવ પોતાને રથ પુર વેળથી ગસાવ
રતા છે, જણખર સાકાનવ વાગી રતા છે. સોન
ફૂનો સખ દોવાથી ગરમી જનુ પડે છે. આવા
સમયમાં એક સત્તર વર્ષની મુવતિ જગ ભરવને
સરિતા વડે દોડી રદી છે. સરિતા આ સમયે
ચુંબક હરની વડેતી આનંદ આપી રદી છે. પાણી
ભરવાને આવેલી. મુવતીએ બેઠક નીચે સુકી
મરિતા રેલીની સાથે નિદાળી અંતરને ઝકડો
નિઘ્રાસ નાખી સૂર્યદેવ મનુ નિદાળી બે દાય
લેડી, વિનવવા લાગી.

હે મરિતા રેલી! હવે તો તમારા અમલ
જગમાં આ અજાણીને વિખતિ આપે તો મારું.

ફિનિયાનાં કૃત્યોમાં પણ અવિચારપણાને
પોષાનાશાનવ સમાજમાં રહેવા કરતાં તો તમારાં
સદવાસાં પ્રાપ્ત થવું મરણ પણ ઉત્તમ છે.
છતાં પૂછે અનાથ રહેલી યોવનમર બાળા
હું મારાં જસો કેમ કાઢું. પિતાને ઘેરજ શું
મારી પૂછતિ છે? હે સૂર્યદેવ! તમારા પ્રબળ
કિરણોનિષ્કર જવાળા મારા ઉપર ફેંકા કે જેથી
હું બળીરમ થાઉં. સખીઓના દારય વિનોદ
પવિત્રી મતિ દોવા છતાંજે છુખ્યા કંકરની
સમા ખૂં એવા જીવનની દયાતિ હોય યાતો
ન હોય મને શું? હે દેવી, દયાકર, દયાંકર.
તારા પ્રેમ પ્રવાહનું એકજ મોણું લાવી મને
ધસડી બા, કે જેથી હું છુડું. તારી કૃપાથી
થયેલું મું ઉત્તમ છે. પરંતુ આ દયામાં રહેલું
જીવન વરે કુખર છે. હે દેવી, લગ્ન કર્યા
પછીથી ત્યાર મુધી મારી આંખોનાં નીર સુકા-
તાંજ નર્દ પુર્યો એક સ્ત્રી મરવાથી અગર
દયાતિ હો છતાંજે બીજી સાથે લગ્ન કરી શકે
છે, પરંતુ મારા માટે યોગ્ય પતિ પણ ન જો-
વાય, એટલે જીલમ કરેવામાં જો મારા પિતા,
જીઓ જૂના, હૃદય ત્રીરી લગાર તો નિદાળી કે
દમારો જમા કેટલો દીન બની રહેલો છે. પુરો
ચાહે તેમ જ, તેની દબને લેશ માત્ર દરકાર નથી,
પરંતુ હવે તો આર્યોવર્ણનું સંતોષ ગારવ
ચાહે તેવો પતિ પણ દેવ માની દનાર સર્વેવ
જો શોધાઈ, તેનું મક્ષણ પ્રાપ્તના ભોગે પણ
કરી દગ્ગળ બનાવીશું; પરંતુ જો દયાદીજ
માખાપો! નમારી શી દયા? તમે તમારી
દમાય પ્રત્યે એક પણ દરજ બજારી સહતા નથી.
દબને નથી મજાવી કે નથી કોઈ કળા (ભરવા
ચુંચવાઈ) સીખવાડી કે નથી દમારા માટે યોગ્ય
વસ્તી અપેક્ષ કરી. તમે તો દબોને જનમલારની
મુલામીજી જોખવાડી ર.

તમે તો તમેને માનપાત્રી (સ્વાર્થ દોષ
તો સખીજ) મોહાવે, મોદ ગારથી બીજાવેસ
પતંગમાં દમાર અને સીરે પુરી તે લાગતાં
જેજન આપેજા. વેરામ વેરાંજ જેવાં, પરંતુ



જેની સાથે મારે જીંદગીભર આંસુ લગાવે પડશે તેવા પતિના સાથે લગ્ન કરતાં સહેજ પશુ ચિન્તિત થઈ શકે છે? હમારો તો આશીર્વાદ છે, પરંતુ દેવ તો તમારા અવિચારી કૃપાળુ બાંધાયા વિના કેમ રહેશે !

આવી રીતે મૃત્યુની ભિક્ષા માં આલિષ્ઠ્ય જળી જરી થઈ વર પળી. વહાલા કા ! ચિન્તિત કે બા સમયે તમારા દીક્ષમાં હવા નથી આવતી ? પથર સમ દીક્ષ પીગળાઈ ઉનાં આંસુ શું સમાજના ઉદયની નિશાની ? નહિ કદાપિ નહિ.

ચોડીયામાં દીક્ષિતનાં જાળકોનાં સા વેચી-કાળોનાં બંધન લગનથી મજબૂત છે, જે પછી કુટુંબીજ નથી, પછી તો જે તોડે છે. વેચાઈ સારા છે, વેચાઈ સારા છે. જો દીકરે જેકું છે, એક જે ધર પશુ ગામમાં હજી સારું છે. માટે કન્યાનો વેચીશાળ કરીએ સારું છે. આવો સંજો મેળો પાડો મળવો મુકું છે, વળી પેસાદાર છે; કેટલું સમય બીડ પડે અવિચારમાં ભિખારી થવાની આશા છે) બીડાંમયે પશુ ખરા (રવાઈ સુધી પછી તો તું હોરે કયા દે. મીયાંમાઈના ન્યાય જેવો ન્યાયવાય છે) એવું એવું તો પોતાના માટે સારા વિચારો કર્યા પશુ કન્યાના હિતનો એક રિ ક્યો છે ? જાળ વિવાહ થાય છે, ત્યારથી હવેજ્ય વય થતાં સુધીમાં શરીરની કૃતિ બદલે છે એટલે કાણો થાય, કુમડો થાય, દીવાનો રૂપ થાય, વ્યસની થાય કે અમણ રહે એ કરેલા વેચીશાળથી લગ્ન કરવાનું પડે એવા જાળ વેચીશાળથી આવાં ભયંકર પુણ્ય આવે છે. કન્યાવાળાઓ ધરને જુએ છે જ વરલાલ અધીશાળનાં સ્વપ્નમાં (કેળુ ન મળતો કે નહિ) પોતાના જાળકોનાં જીવનનું કરી મુકે છે. એ તો બા ધર જોઈ ને ? વરને કયાં જોવો છે, વરકન્યા વેચીશ કરતી સ ભય તો ઉમરે સરખાં છે છે, પરંતુ લગ્ન કરવા સમયે જેહની લગુ અંતર

મા અને દીકરાના અંતર સમાન લાગે છે, ત્યારે માગણો સુખાય છે, પરંતુ કરેલા વેચીશાળો જે તને તો અરસપરસની આગર ભય, ધર અને કુળનો સત્યાનાશ થાય, એ ભરે, પરંતુ હાલકતી અન્યાય જરી આગર સાચવવી જોઈએ. એ છોડાયજ કેમ ? વરને વરસ તેર થયાં, આંદ કન્યાને પશુ તેર થયાં, વર નાનો રહે, અને કન્યા તો યુવાન થઈ એટલે લગ્ન કર્યાં સિવાય છુટકો નથી હોતો, એટલે જાળ પતિ સાથે કન્યાને પર-છાવી પોને પોતાની શરમમાંથી મુક્ત થયેલાં બાને છે. પહેલાં આગળનો જે સવાલ રહેતો હતો, તે હવે એકંદરે દેવ એટલે પોતે અરસી ચિંતામાંથી મુક્ત થયા, પુરી ચિંતા વરના બાપને રહી. તેને વહુને સંભાળવી રહી અને પુત્રને સંભાળવો રહ્યો. જે પુત્રની સંભાળ આજી રાજે તો તે બિચારો કુમળો જાળક અનેક બાધિનો કોડા થાય છે. જે કન્યાની ચિંતા આજી કરે તો કુનીયામાં હોકવાયકાનો મોટો ભય રહે છે. એટલે વર ભયમાં, કન્યા ભયમાં, અને તેનાં દિલ ચિંતકો પશુ ભયમાં ! અરેરે દેવ ! આવા દયાપત્ર સંજોમાં આવો સમાજ પોતાની શ્રેષ્ઠતા કયાંથી મેળવશે ? વહુ વરને જોઈ આંસુ સારે છે, વર વહુને જોઈ ભાગે છે, આવાં જળ વિવાહનાં નાટક કા સુધી મજબૂત ? હે દેવ ! જ્ય ન્યાં જે જે સમાજોમાં આતું પરિવર્તન હોય ત્યા ત્યાં ત્યાં આત્મજોમાં સદ્યુદ્ધિ પ્રેરને એની મરી પ્રાર્થના છે, અને જે જે આત્મ અનુમતેનાં માત્ર હોય તેમણે પોતાનાં પાપને ધૂઈ નાખતાં પોતાનું અનુરૂપ સમાજમાં મેલ ન કરે તેને માટે શ્રમ લઈ હજુએ વરકન્યાના વરસતું અંતર સારા પ્રમાણમાં રાખવા સુધેવે એમ કહ્યું હતું.

હવે વાંચક આગળ વધ, કારણકે પ્રભ ૨૩વા દિવસો છે, તેથી સરિતાનું પડેલું દેશ વાંચી મગીરી "હુ" ન વાંચ, માટે હવે ધર વર પળીએ અને આજેજ અરપશુ બીજો ગડમ જમીએ અને ત્યા જે માદગીના બીજાને જમી મધીયો બધાયેવ એક નારી વધતી અધિકાની ખમર લઈએ,

તોનો નમ્યાં મદ્યમાં
 પાણી વાતે રસ બરી
 પાણી સાંભળી પડે છે । તમારી જીવ ઉપર
 હંદામ દેનારી વાતો આનંદને લે અગિ
 સજામોતો દેખાયો, જગતમાં જોતે રવે વંરકની
 ચિંતા રહે છે, તેને શાંતિ ક્યંથી મળી હતી ?
 ધન દોલત કે વહુલા કે સાસુ સસરોરે એમ
 સ્થિત સુખો હોય તે પણ શા કામના થો એકજ
 પતિ વિના ખોટાં છે-અણુણ ખેરો સમાન
 રવાદ રહિત છે. હમારી આ દશા નાર મા-
 આપો ગારીયા, પ્રવાહને અતુરને આત્મ
 સમજો, સમજો, ડગલે અને પગલે વડના નિ-
 સાસા અને ટપકવાં ઉંદાં આંસુઓ ને રીગા-
 વેશ અને નરકના બાબોદાર જનાવરોમાં ફરજ
 હોય મોટાઈમાં બીજાઓનું બચી, અ પ-
 નાંદ માંખાં! તમારામાં અને હમાં શા
 ફરક છે, કસાઈ અણુખોલ પડ્યું છે કારે છે
 ત્યારે સમો તમારો અમલ રહેલી રસ પુત્રી-
 જોપર તમારા અવિચારવું શય અ હમોને
 થોડે થોડે રોગોનો છે. તમારી પુત્રી જીવતી
 ચીતાઓ પર તોપી તમે આનંદ ની તમારી
 પાપી રહી જોતે રોગો છે. આ સરના મોટો
 મોટી વાતો કરનારા પટેલો, તમારા હિરે ક્યાં
 વેચી નાંખી છે? લક્ષ્મીપૂત્રની પંચીચસવાં અને
 મોટાઈમાં મરચુલ રહેતાં તમારે જોતું છે,
 જુઓ-જુઓ તમારી જ પુત્રીઓની દશા યદ
 રહી છે, જુહિને ગોરવો સુકનાર નારી પટેલો
 જગો અને ગોરવો સુકેલી જુહિને જગમાંથી
 જરોદો, અને તમારા હાથે બધાતમા બધાને ન
 તોડતાં વધારે સારા કાવડાં બાંધી રી હજારો
 પુત્રીઓના આશીર્વાદ મેળવે, જગમને જુઓ
 કે તમે દુનિયાની સપૂત કચ્છીમાં રૂના
 છે અને તે કચરાપટ્ટોમાંથી નીકળે દુર્ગંધનો
 પવન હમોને લાગી રહ્યો છે. અનેથીજ હમે
 અજણ અજાન નિર્ગિવ જાનમાંથી હમાર
 જીવન ખતમ કરીએ છીએ.

એ પણ હેયુ ખાલી રી પર જાણોની

સારવારમાં રોગો. હવે આપણે પણ આપણી
 ફરજ જાનવાં બાહો રહી જતાં એ શબ્દોની
 નવાજેશ કરીએ.

અવિચારી માંખાંપો જગની લદાણી લેવાને
 લે. લે તેમજ બધે બચાવવાની આવર આવી
 નાની વંચમાં અવિચારી વેનીસાળો અને લમ
 શામટે કરે છે ?

વંચક, માંછીમાં જે ખાળા છે તેના વિશે
 કેટલુંક રહી જાય છે, તે કહીએ અને પછી
 આગળ વધીએ.

નાજીક કનાઓને લગને ક્યંથીથી જોડી ગોર
 ક્યું તે સહીથી વગર સુકુંતે સરમોના પીંજરે
 (સાસરે) પુરે છે.

જો ની વચ ખેતવા, કુલવા, વિગેરે નીકળે રમોને
 થોગ્ય હોય, તે રથને તે નાજીક કુમુખપર સંસાર
 રપી હજારો મણીની શરમા યુક્તથી ખીચારો
 ખાળાતું ખેલી કાણ ?

જે સમાજમાં રાતામુવતું એક પછી બિંદ
 આખવાનો અધીકાર ફરામહી માંખાંપો ન રોખે
 તેમજ કાઈ ભરવા યુધેવા કે સમાજવાની બધી
 વ્યવહારકુલજોતાથી અજણ રાખે અને ઘર કા-
 ચના અસલ ખોળાથી લાંબી રાખે તો આવા
 વર્તનથી આપણને નિર્વચણ જીવવાનો અધિકાર
 પણ શો ? જે સમાજમાં પુત્ર અને પુત્રી પ્રત્યે
 બિન ખાવા છે, અને તે બાળ રતોને કેળવણીથી
 દૂર રાખી બેપરવાઈમાં સમાજનું સ્તંભનાથ કરી
 રહ્યાં છીએ; પુત્રોને તો થોડું થોડું આપણને કમા-
 ણે અવકાશી સંસ્વાના રાજ્યથી સિક્કણ આપીએ
 છીએ પરંતુ પુત્રીઓને તો પસંદ ધરેલી લલિમ
 માંની કે-ખ-મ થો પણ વંચીત રોખીએ છીએ.
 આવી પશપાત યતિથી આપણો ઉદાર નિ સંમ-
 જતા હોઇએ તો તે આશા બધે છે. પુત્ર અને
 પુત્રી એકજ પ્રભુની બંધિત છે. લલિમ તો પુત્ર-
 ની દાસી છે, પુત્રીનું નરીજ સંધ પુત્રી અવતરે છે.
 તે તો સાક્ષાત લલમી છે. તે હમણે સક્તિને
 (લલમીને) કોઈ મારી, યુગજીવંત લલમી
 પ્રાપ્ત કરવા મથો રહેવાથી ખરી લલમી સુખાવો

કર્તવ્યભંગ થઇ વધારે ને વધારે નિર્ધન બની
અધોગતિનો માર્ગ લઇ દૂલા છીએ.

બિચારી બાળા માંદી પડે અને તે પણ પે-
સાના ઉપાસકોને ત્યાં પછી પુછપુછ થઈ સમાં
બાલાની દહ જામી હોય, સીરાપુરી ઉડતા હોય,
ખીજ દન્યાનાં માર્ગાં માટે ધાંધલ અને વાટાઘાટ
થતી હોય, તેની પુન્ય પ્રતિષ્ઠામાં ખીમાર બાળાનું
રક્ષણ પ્રશ્ન કરે છે, વૈધને બોલાવે છે. અને
ડોક્ટરની વાતો કરે છે, અને દવાના ઉકાળાના
લીટ તો ખીસામાં મૂકે ખીસામાંજ રહી જાય છે,
બાલા વાયક ! આ સમય બિચારો ધરધણી કરે
શું? વધારે ફરજ મંદાની આવજત કરવામાં
રહેલી છે કે વેરીશાળ કરવા માટે (ખીમાર
બાળાના મૃત્યુની રાહ જોવા પડ્યા) આવેલા
મહેમાનોની સારવારમાં ખોડ અને કંસાર ખવડા-
વવામાં તેનો નિષ્કર્ષ તો વાયક તમેજ કરશે.
આ મરશે તો ખીજ જડશે એ આવનાના શ્રો-
મંતો શ્રોમતો નહિ પરંતુ કંઠાશે છે, સાચો
શ્રોમંત તો એ છે કે જે પુન્યવત્તે પોતાનું બાળ
ગણે અને તેની હયાતિ હોય ત્યાં સુધી તેની
ખરાખર સારવાર કરે તેમજ એકજ ચક્તિનાં સર્વે
બાળકો છોએ, એકજ જગતવાડીનાં આપણ પુણે
છેએ અને સદ્ એકજ સુગંધીથી પરિપૂર્ણ છીએ.
વૈભવો પુન્યના છે તો તે પુન્યને કાપણેજ નહિ
દરવાં વધારે પુન્ય જમા કરવાની કોશીય કરીએ.

પુન્ય ઉપાર્જન કરવાનો માર્ગ માર્ગ દ્યા છે.
દયાથી મર્મ સાંપડે છે, અને એ અજમેલ મર્મ-
આવથી દરેક અપમાઓને સરખા માન્ય કરી દહ
છે. પણ આત્મા ન દુઃખાય તેવું વર્તન રાખવું
જોઈએ, હવે નીચના બેરોશીન દોડરવાનનો
પડતો છે. તે પડતીના માર્ગમંથા જયવા આગ
અત્યારે પ્રવલકીત (ઉચ્ચ) થઇ રહ્યો છે.

હવે ત્રીજા ને બાળ વિધવાએ પોતાનું કન્ય
કદી તખતી અ.પે.માં અગિયારેના ૧૪ નંબરો
છે, તેને ઉગારવા પ્રાર્થના કરો છે, તે બેટી ન
કદી સહાય કરજુ કે જે નાના અપરિણત વર્ષ
વાળા બાળકો માટે કમરે પડેલો પુત્રિયાનો

પાણી થી થાય તો તે કામળ મળે. પ્રણાં હૃદય
કને અર્ધ સાચવવામાં નિષ્ફળ થવું
ઉમર લઈ થયેલી બાળા પોતાની સ્થિતિ જા-
દશાથી ચિત્ત હોવાથી પોતાના (નુકસાન
નદી નજીવાથી) લાવણ્ય યુક્ત આવેલ
લોહ ચૂકની સમાન બાળ પતિને બેસી છંદ
ગીતો રવા માણે છે.

કુનિની જવાબદારી એછી નથી હોતી
ધરમાં (રક્ષાયક વહુ હોય એટલે પોતાના બાળ
કના દિ માટે તેમના માબાપો માંબો આડ
દાષ ધન પશ્ચાત્તાપ કરે છે. બાધા આબડીધાર્ષ
પ્રાપ્ત થંપા પુત્રને દળરો વ્યધિઓના મેમા-
બનાવી લાવું કળ પુત્ર વિનાનું કરી મુકે છે
એટલે પુઆ દાની કુનિયાને તમે છે. એક બાજુ
પુત્રનું દુઃખ ત્યારે ખીજ બાજુ બાળ વિધવાના
વિલાપો કુઃખ અને તેથી નરકના શાગીદારી
થવાય છે. અને તે આપણા અવિચારથી!
માટેજ બુદ્ધિ, આ ત્રણ અને હવે પછી લખા-
યેશે એણે પ્રવેશ ધ્યાનમાં લેશે.

સમાજના કાયદાઓમાં સુધારા કરો-કન્યા
અને વરુની વચ્ચેનું અંતરગાંધાર્મ્ય એછું
વરસ કુલું રહે તો સમાજનો ઉદ્ધાર
થાય. કન્યા વરસ ૧૦ ની થાય અને વરની
ઉમર જરુજર ૧૬ ની હોય ત્યારેજ શુદ્ધોદય
વપાસી વેરીયળો થાય તો છતાં, પતિએ અનાય
થવાનું ન રહે, અને કન્યા વરસ તેરની થાય
ત્યારેજ શન કરાનો પ્રતિજ્ઞ થાય તો સાત
સમાં જની મુગ્યાઓને મુગ્યાવું ન પડે અને
તેથીજ જગ વિધવાઓ પુત્ર દીન પમ ના રહે,
એમ માનું છું. સંતાન પ્રાપ્તિ એ કષ્ટરોડ પપા
છે, પુન્યને પ્રમાદ છે પરંતુ ઉમરેજ થયેલ
હોએમાં એકજ વરમના અંતરમાં પ્રાપ્ત થતા
વૈધન્ય કોષ્ટક વિધવાઓને સંતાન રૂપી રતો
પ્રાપ્ત થાય છે તેથી તેમના વૈધન્ય દશમાં આપું
દુઃખ અને છે.



વિવાધી છે અને લગ્ન મારે છે
વિધા લુપ્ત.

માસ્તર સાહેબ-શેઠ પધારે મારે આજે
કંઈ વધારે ઉમંગમા જણાવો છો.

શેઠ-સાહેબ, વૈશાખ માસમા રહે આજ
થી એક અઢવાડિયા પછી છોકરા લગ્ન છે.
તેથી છોકરાને તેડવાજ આવશે. માટે કૃપા
કરી એજામાં આજી એ મહીનાનાં આપ-
શેજી.

માસ્તર-રામ રામ ગમ-અરે આવાડા
૧૦ વરસના બચ્ચાના લગ્ન કરીની છદ્મી
પાયમાલ કરશે. બહુવર બગાડશે અને તેનું
સર્વસ્વ નાશ કરશે. શેઠજી મારી તેડા છે કે
તમે લગ્ન લાવવા મુલતવે રાખજો.

શેઠ-નારે સાહેબ, આજ નાખતી નથી ના
પાડીએ તો ન્યાય કહે કે અભિ આપ્યું
છે. ખર્ચ કરવા નથી મળતો એટલે નથી ના
કહે છે, માટે સાહેબ બધ રહે તેમથી.

માસ્તર-વાર શેઠ છોકરા રો છે કે
ન્યાયનો ?

શેઠ-મારો છે સાહેબ ?

માસ્તર-તમે છોકરાઓ પ્રાવરવાને તો
હજારો ઉપાયો કરો છો. તમે સમયે તો
તમારો ધર્મ છોડી પરધર્મમા ગ્રહણી બાધા
આપીશોથી પુત્ર મેળવવાની ઇચ્છા રખો છો,
માટે શેઠજી તમારો પુત્ર તમે ચુમા.

શેઠ-શું કરે સાહેબ, કન્યાને સ અગ્રીયાર
થવા છે, પરંતુ દેખાવમા તો વરસતર જેટલી
લાગે છે, તેથી કન્યાને બાપ રદીશકતો નથી,
માટે મારો ઉપાય નથી.

માસ્તર-ત્યારે શેઠજી વેત્રીશાળ બગ કરો,
તમે કુંવારી દસામા બગ નહિ. તો પરજી-
વીને મેકના છવન ફના કરશે. મારું હું તમારા
મલાને માટે કહું છું.

શેઠ-સાહેબ, વેત્રીશાળ બગ લાવ
આપો ન્યાય બદાર અને કન્યા-
ન્યાયન

વાળાઓ મને અભિમાનનું પુલળું મળી કન્યા
ન આપે એટલે સાહેબ બની રીતે સુઝવણ થાય,
માટે પ્રથમ પ્રથમ થાઈ દશે તે થશે.

માસ્તર-ત્યારે શું તમારો સમાજ ન્યાયી
નથી ? તેમજ તમારામાં આત્મબળ નથી ? તમે
કથરને મળી જોતી તરીકે જાણવાવો છો, મહા
વીરના પુત્રો કહેવાઓ છે, છતાં તમારા જીવન
નિરસ ગિર્નિવ અને આત્મહીન છે ગાદરીયા
પ્રવાહમાં તમારો આત્મા છે અને તેથીજ
તમારો ઉદય તમે મોતી રહ્યા છો ? શું તમારો
સમાજના અગેરાનોતો પણ આજ વિચાર છે ?

શેઠ-અરે મારવડ માહેબ, ત્યારે તો પચાત
છે કે હમારા યાત્રિ નાપકો કંઈ કરી શકતા નથી
અને પછી હમારે બહુ મરિને માન આપવું પડે છે.

વાંચક-ઉપરની વાતચીત પઠી અનુમાન
ચાય છે કે સમાજમાં બહુ પણ પાપ વૃત્તિઓને
પાંડુ વાગી ન જોતો હોય, ત્યારે અપભ્રમ પણ
પાપીજ બને છે. આવા પરિવર્તનમા તો યાત્રિના
નાપકોએ જીમ્મોજી બોમ આપવાનો છે. છતાં
જે આપી શકતા નથી. ઉપર જણાવેલ વેત્રીશા-
ળનું અંતર અને મર્યાદા આવા બાળકોને માટે
ઉપયોગ છે આવો સુધારો કરો જેવી આશા રાખું
હું ખરો, છતાં પણ તેની સાથે કેળવણી જોઈએ.
જેમ આન સિવાય તવવાર ન શોભે તેમ સમા-
જનું બધારણ કેળવણી વિના ન રહે-શુદ્ધ
સંસ્કારના આગ્રહ અને તે પણ સુશોભિત
નીવડે તો નિરસ પાત્ર થતો સમાજ યશને પામે
જેમ કહી હું વિરહું છું. બુનચુકની કામા માણ
છું, તે સાથે તમારી સંસ્કારીકાની સંદર સફળ
નીવડે તે માટે સુખવસ્થા કરવાનું મૌભાગ્ય ગ્રાસ
કરે તેવી પ્રજા પ્રત્યે પ્રાર્થના છે લેખક.

સીંઠ વીંઠ છંઠ

દીપમાલિકા વિધાન (દિવાલીપૂજા)

તીર્તી આવૃત્તિ તૈયાર હોઈ રે । મૂં. ૬૬ આના ।
મેનેજર, દિ. જૈન પુસ્તકાલય-સુરત ।



हैं जैसे कुछ सुधारक समझे बैठे हैं । उनका मुख्य इस विभिन्नतामें ही गर्भित है न कि उनकी एकत्वतामें । यदि स्त्री और पुरुष एक ही समान हैं तो इसमें कुछ हानि नहीं कि उन मेंसे कोई भी जातीय वा राष्ट्रीय उन्नतिके मार्गमें अग्रसर हों; परन्तु इस कारणसे कि वे एक दूसरेसे विभिन्न हैं क्योंकि वे प्रत्येक प्रश्नको विभिन्न नय-विभिन्न दृष्टिसे देखते हैं, क्योंकि स्त्री प्रायेण प्रश्नको ध्वनने स्त्री जैसे मस्तिष्क दृश्यसे विचारती है जो कि मनुष्यके दिष्ट और दिमागसे नितान्त विभिन्न है । वस्तु यह इसी कारणसे है कि दोनोंका सहयोग वह शक्ति रखता है जो एकत्वमें कभी भी संभव नहीं है । यह गान विद्याके सद्गुरु है जिसमें कि स्त्रियोंकी विभिन्नतासे ही व्यक्ती उत्तमता प्राप्त होती है । और यह ही वह विभिन्नता है जो कि शारीरिक स्थिति पर व्यक्त है और हार्दिक एवं मानसिक स्वभाव पर भी । उसी विभिन्नता पर मैं इस बातका दावा करूंगी कि स्त्रियोंका साथ साधारण कार्योंमें एवं राष्ट्रके जातीय और व्यवहारिक विभागमें अवसर होना चाहिये । स्वायत्त व्यवस्था (administration) के कार्य-क्रममें स्त्रियोंका सहयोग एक विशेष मूल्य रखता है । साक्षर बहू तो मैं यह सफासनी दूँ कि स्त्रीमें प्रत्येक समान ही नियोजक शक्ति (Initiative) नहीं है । मैं साधारण तौर पर कह रही दूँ न कि दोनों ओरके व्यक्ति विशेषोंको ही देखर । परन्तु यदि आप अधिष्टाता पुरुषोंको ले और अधिष्टाता स्त्रियोंकी दो आसरी मन्त्र होना-मना कि अधिष्टाता पुरुषोंमें अधिष्टाता स्त्रियोंमें

अधिक नियोजक शक्ति (Initiative) पायु व्यथा और सिद्धांतोंको कार्यमें परिणत करनेके मय पर आप सदैव यह देखेंगे कि व्यवस्था-नियोजक नियमोंपर स्त्रीके, मस्तिष्क का पूर्ण विषय है जो कि किसीको व्यवस्था संबंधी बातोंमें विशेष उपयोगी बना देता है । मुझे यहाँ इसके अमली प्रयोगका उदाहरण जैसे किंग्स्टेडमें प्राप्त है उपस्थित करने दी-जिए जकि स्त्रियोंके सुप्रद अस्मिताओं, बच्चोंकी शालाभं रोगियोंकी सेवा और अन्य स्थानोंकी नहां गवों और युवकोंका ध्यान रखना जाता हो व्यथा है । इन सब स्थानोंपर स्त्रियोंका व्यवस्थित ज्ञान विशेष मुख्यमान, पाया गया है । सिं उन बातोंको हूँद निताळती हैं जिनकारुण्यको विचार भी न था । यहाँ पर मुझे एकजगहकी याद आती है नहां पर एक बांसलुयामें बच्चे थे और जहांकी स्थिति बहुत हीसे पुरुषोंके हाथमें थी । परन्तु उस कठारा प्रबंधकारिणीमें एक स्त्री चुन ली गई । पहिलार्थ जो उसने दिया वह यह था कि वह अनाथ, विद्वान सुचिन्त किए ही समय समर्थपद्धतमें निरिक्षार्थ आने लगी । दूसरा कार्य तो यह किया कि उसने बच्चोंके जुने उत्तार कर देता कि उनके मौजे सिरे पर घुंरी तले सीके हुए हैं जिसके कारण कोमल बच्चोंकोड़ा बट्ट उठाना पड़ता था । उसने बच्चोंके लव बहने हेतु बहुतसे कार्य किए जिनको कि पुरस्कर्त्री दाताबाईसे नहीं कहिए न कि पुरस्कर्त्री दृष्टिके अभावमें न/दाता बाई जहां वं आप अनाथिक